जान-ए-आलम
जिद अली शाह

ज़ान-ए-आलम

वा जि द अ ली शा ह

लेखक
डा० ज्ञानदास माहेश्वरी
पी० सी० एस०
एम० ए० (राजनीति व इतिहास) पी० एच० डी०

प्रकाशक :
सी० एल० अग्रवाल एन्ड सन्स
बड़ा बाजार
अलीगढ़ ।

प्रथम संस्करण : १९८७

मूल्य : पिचहत्तर रुपया मात्र

मुद्रक :
बी० एम० इलैक्ट्रिक प्रेस
खाई डोरा,
अलीगढ़ ।

आमुख

डा० ज्ञानदास माहेश्वरी द्वारा लिखित "जान-ए-आलम वाजिद अली शाह" पुस्तक के सम्बन्ध में कुछ कहने से पहले मैं अवध के "शिया" राज्य बनाये जाने की राजनैतिक और मानसिक प्रक्रिया में प्रवेश करना उचित समझता हूँ। राजनैतिक कारण तो बहुत प्रसारित हो चुका है। गिरते हुए मुगल साम्राज्य को जिसके सम्राट सुन्नी संप्रदाय के थे, एक और करारी चोट देने के लिए और साथ ही साथ अवध के खजाने से कुछ और रुपया लूटने के इरादे से ईस्ट इण्डिया कंपनी ने मुगल सल्तनत के नवाब वजीर और अवध के सूबेदार नवाब गाजीउद्दीन हैदर को स्वतन्त्र ताजेदार बादशाह बना दिया। भारत में विशेष रूप से सुन्नी मुसलमानों का राज्य था, उन्हीं के विधि-विधान ही यहाँ चलते थे। शिया सम्प्रदाय को सरकारी तौर पर कोई मान्यता नहीं मिली थी। शियों को भी विरासत, शादी और तलाक के हनफी (सुन्नी) कानून ही मानने पड़ते थे। वे अपनी धर्माचरण विधि के अनुसार सार्वजनिक प्रार्थनायें भी नहीं कर सकते थे। इसी कारण वे अपनी वास्तविक धार्मिक आस्थाओं को उजागर न करके "तकय्या" में रहते थे। इस स्थिति में रहते हुए भी मुसलमानी शासन में बहुत से शियाओं ने राज-समाज में ऊँचे-ऊँचे ओहदे हासिल किये। मुगलों के समय से ही शियाओं के प्रति सुन्नी शासन में परिवर्तन आने लगा था। बुरहानुल्मुल्क नवाब सआदत अली खाँ के शासनकाल में शिया मत ने सुन्नी बाहुल्य लखनऊ और अवध पर और कोई विशेष छाप तो न छोड़ी फिर भी इतना फर्क आ ही गया कि शासन में सैयदों और फिजिलबाशों का जोर बढ़ गया। बुरहानुल्मुल्क के पिता सैय्यद वंश के थे और माता फिजिलबाश थी। सत्ता शिया प्रधान हो जाने से शिया समाज के लोगों को अपने ढंग से धर्माचरण करने की आजादी सहज मिल गयी। आसफुद्दौला और उनके बाद के नवाबों, बादशाओं को भी इमारतें बनवाने का शौक रहा, इसलिए शिया मत के धार्मिक मदरसे, इमामबाड़े और दरगाहें अधिक बनीं। शिया अलमदारी में यह मत दिनों दिन परवान चढ़ता रहा।

"जाने आलम" बल्कि "जाने जहाँ" से बढ़कर "सुल्ताने आलम" पुकारे जाने वाले नवाब वाजिद अली शाह, आखिरी ताजदारे अवध और चाहे जो भी रहे हों, पर पक्के शिया अवश्य थे। अपने पिता की तरह उन्होंने भी कभी शराब का जाम अपने होठों तक न आने दिया। निकाही मुताही शादियाँ और रखेल उन्होंने भले ही बेशुमार रखी हों मगर किसी परायी औरत का उन्होंने कभी बलात भोग नहीं किया। उनकी आत्मकथा "हज़नेअख्तर" की भूमिका में एक बात बड़े गर्व के साथ लिखी है कि जिस स्त्री पर उनकी लुब्ध दृष्टि पड़ जाती थी उसे वे पहले मुताह की रस्म के द्वारा अपनी बेगम बना लिया करते थे। महल की कई दासियों को इस दृष्टि से बादशाह की अंकशायिनी बनने का सौभाग्य प्राप्त हुआ।

डा० माहेश्वरी ने अपने इस शोधपरक ग्रन्थ में ठीक ही लिखा है कि "अवध के इतिहास में वाजिद अली शाह का व्यक्तित्व एक पहेली की भाँति उलझा हुआ सा है और जैसे-जैसे उसे सुलझाने का प्रयास किया गया वह और भी जटिल तथा उलझता ही चला गया।" मिर्जा वाजिद अली अपनी किशोरावस्था से ही दोहरे व्यक्तित्व के व्यक्ति बन चले थे। वह अत्यन्त प्रभावशाली थे और उनमें कलात्मक अभिरुचियाँ भी प्रचुर मात्रा में थी। उनके बड़े भाई मिर्जा मुस्तफा अली हैदर प्रारम्भ ही से अंग्रेजों और कम्पनी के मुखर विरोधी हो गये थे इसलिए कहा जाता है कि अंग्रेज शासकों ने

अमजद अली शाह पर इस बात का दवाब डाला कि वह उसे अपना उत्तराधिकारी न बनायें। वाजिदअली साहित्य, संगीत, नृत्य आदि कलाओं के रसिक थे। उन्हें दरबारी और सियासी हालात का भी आरम्भ ही से अच्छा ज्ञान हो चला था। भावुक विचारक होने के कारण उनके स्वभाव में एक प्रकार की गम्भीरता भी थी। उसी गम्भीरता ने उन्हें नवयुवावस्था से ही यह अनुभव करा दिया था कि इस देश के शासक अंग्रेजों के हाथ की कठपुतली हैं, वह अपने देश और राज्य की उन्नति के लिए चाहने पर भी कुछ नहीं कर सकते। उन्हें लखनऊ के दरबारी समाज, ओहदेदारों के वर्ग और दास-दासियों की अतिरंजित चाटुकारिता के कारण भी इस बात का भरपूर आभास हो चुका था कि यह सबके सब पैसों के गुलाम और शत-प्रतिशत स्वार्थी हो चुके हैं। अपने शासकों और देशवासियों के प्रति विश्वासघात करने में इन्हें तनिक भी झिझक नहीं होगी। दौरे जमाने का ज़मीर मर चुका था। आदर्शों के सपने भरे अपने मन को उन्होंने जानबूझकर भोग विलास के अथाह महापंक में धंसा दिया था। नवाबी शासन कालीन उर्दू शायरी में इस प्रकार की घृणित मनोवृत्तियों के अनेक उदाहरण भरे पड़े हैं। मिर्जा वाजिद अली शाह के मानस पटल पर उस वातावरण की भी छाप थी। धार्मिकता और विलास के दोहरे जाल में फंस कर वह क्रमशः आत्म प्रवंचना के शिकार बन गए थे। जब अमजद अली शाह ने ईस्ट इण्डिया कम्पनी के अधिकारियों की इच्छा से मजबूर होकर यह पत्र लिख दिया कि गद्दी का उत्तराधिकारी मिर्जा मुस्तफा हैदर के बजाय मिर्जा वाजिद अली होगा, तभी से उनके भोले मन में अच्छा शासक बनने की हिलोरें भी उठने लगी थीं। पिता के स्वर्गवास के बाद गद्दी के उत्तराधिकारी बनकर उन्होंने अपनी प्रजा के हित में जो अच्छे काम करने चाहे उनके विवरण भी डा० माहेश्वरी ने अपनी इस पुस्तक में ढूंढ-ढूंढ कर संजोये हैं।

विलासी बादशाह की हार्दिक प्रजावत्सलता ही उनकी इस अभूतपूर्व लोकप्रियता का कारण है जिससे वह आम जनता के द्वारा "ज़ान-ए-आलम" कहे जाते थे। उसी लोकप्रियता के संस्कार चार-पाँच पीढ़ियों के बाद आज तक हमारे मनों में उनके प्रति आदर और सहानुभूति जगाते हैं। पर यह मानना होगा कि वाजिद अली शाह एक असफल कलाकार शासक सिद्ध हुए। दूषित पर्यावरण के काल में उनकी कला प्रतिभा भी मजबूरन बौनी ही रह गयी और शासक के रूप में उनकी असफलताओं ने आत्म-प्रवंचना जनित पलायनवादिता के कारण उन्हें बुद्धिमान होते हुए भी निपट निर्बुद्ध बना दिया था। सच पूछिए तो वह पतनशील काल और समाज के शहीद थे।

डा० माहेश्वरी ने इस पुस्तक में वाजिद अली शाह के व्यक्तित्व और उनके शासन सम्बन्धी विवरणों को इतने श्रम से संजोया है कि पढ़ते-पढ़ते अक्सर मेरे मुँह से प्रशंसा के उद्गार आप ही आप फूट पड़ते हैं।

पुस्तक जितनी ही तथ्य और तर्कपूर्ण है उतनी ही रोचक भी। मुझे विश्वास है कि डा० ज्ञानदास माहेश्वरी की इस पुस्तक का अच्छा स्वागत होगा। मैं उन्हें अपनी हार्दिक शुभकामनायें अर्पित करता हूँ।

अमृतलाल नागर
१९. ९. ८६

चौक, लखनऊ—२२६००३
१९ सितम्बर, १९८६

(अमृत लाल नागर)

मेरे विचार

डा० माहेश्वरी जी की पुस्तक "जाने आलम-वाजिद अली शाह" से मैं अत्यन्त प्रभावित हुई हूँ। यद्यपि ईमानदारी से कहूँ तो मैं अस्वस्थता के कारण पूरी पुस्तक पढ़ नहीं पायी हूँ किन्तु जैसे किसी सुकंठी गायक की गायकी का षडज ही उसकी निष्ठा का प्रमाण दे देता है, मुझे लगा कि यह परिश्रम से प्रस्तुत की गयी कृति, न केवल आनन्दप्रद है, हमें वाजिद अली शाह के बहुर्चिचित, बहुनिंदित व्यक्तित्व का एक नवीन पक्ष दिखा, हमारी अनेक शंकाओं का निवारण भी करती है। वैसे तो हिन्दी की श्रीवृद्धि अनेक साहित्य मनीषी कर रहे हैं एवं नित्य नवीन पुस्तकें प्रकाशित हो रही हैं, मैं लेखक एवं प्रकाशक दोनों को ऐसे साहित्य के सृजन एवं प्रकाशन के लिए बधाई देती हूँ।

माहेश्वरी जी ने आधुनिक बौद्धिक परिप्रेक्ष्य में एक सर्वथा मौलिक व्याख्या प्रस्तुत की है। वाजिद अली शाह एक ऐसे व्यक्तित्व के धनी थे जो स्वयं लखनऊ की संस्कृति कला एवं साहित्य के प्रतीक बन गये थे। अवध की संस्कृति उनसे जुड़ कर रह गयी थी एवं सदा जुड़ी रहेगी। उनके जन्म से लेकर मृत्यु तक की सभी घटनाओं का डा० माहेश्वरी ने योजनाबद्ध ढंग से वर्णन कर यह सिद्ध कर दिया है कि लखनऊ का वह मस्तमौला बादशाह केवल तुनकमिजाज, कामुक, प्रमदाप्रेमी व्यक्ति ही नहीं था बल्कि साहित्य, सौन्दर्य एवं कला का अनुपम जौहरी भी था। ऐसा जौहरी जिसने अपनी कलात्मक रूचि से लखनऊ के पत्ते-पत्ते, बूटे-बूटे को अपनी मौलिक प्रतिभा से संवारा, यद्यपि इस प्रयास में उसे फिजूलखर्ची, चरित्रहीनता एवं विवेकशून्यता के लांछन भी सहने पड़े। यही नहीं "हम छोड़ चले लखनऊ नगरी" की करूण स्वरलहरी से उदास लखनऊ को और उदास बना, शाही तख्त का मोह भी त्यागना पड़ा।
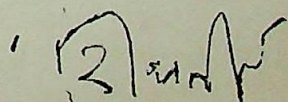
डा० माहेश्वरी की यह कृति जितनी भी मैं पढ़ पायी मुझे अनूठी इसलिए भी लगी कि इसमें इतिहास की शुष्कता कहीं दृष्टिगत नहीं हुई। उन्होंने फारसी और उर्दू में उपलब्ध तथ्यों एवं साक्ष्यों का हिन्दी रूपांतर कर, हिन्दी प्रेमियों के लिए एक सुखद सिंहद्वार खोल दिया।

एक प्रशासनिक अधिकारी के इस सुप्रयास की निश्चित रूप से प्रशंसा की जायेगी। उन्होंने सिद्ध कर दिया है कि एक सरकारी प्रशासनिक अधिकारी भी प्रशासन के कार्यसंकुल जीवन के बीच हिन्दी के पाठकों को पठनीय सामग्री देने में समर्थ है।

उनकी यह कृति मुझे खांड की रोटी लगी, जहाँ से तोड़िये वहीं से मीठी। मुझे इसके विषय में दो शब्द लिखने में अत्यन्त प्रसन्नता का अनुभव हो रहा है। मुझे आशा ही नहीं, पूर्ण विश्वास है कि नवाब वाजिद अली शाह जैसे विवादग्रस्त व्यक्तित्व से रहस्यमय यवनिका उठाने का जो सफल प्रयास लेखक ने किया है उससे अनेक-अनेक इतिहास एवं साहित्य प्रेमी पाठक लाभान्वित होंगे।

६६ गुलिस्ताँ कालौनी,
लखनऊ।
२८ मार्च, १९८७

शिवानी

(गौरापंत शिवानी)

मेरी धारणा

भारतीय जनमानस के लिए ज़ान-ए-आलम बड़े जाने-पहचाने हुए हैं। इतिहास की दुरबीन से उन्हें एक रसिया राजा के रूप में देखा जाता है लेकिन पास की पहचान यह है कि वह आज भी मनबसिया है और यही उनके संस्कार और उनकी शख्सियत का सबसे लाजवाब पहलू है। ललित कलाओं के संरक्षण और साधना के लिए तो उन्हें सरस्वती के वरद् पुत्रों में गिना जाना चाहिए। इस प्रकार अप्रशंसा तथा प्रशंसा के बीच कहीं उनका सच्चा अस्तित्व ढूँढना होता है।

वर्तमान में इतिहास के ऐसे ही संदर्भों का सही मूल्यांकन करना शोधकर्ताओं का प्रमुख उद्देश्य होना चाहिए। विदेशी सत्ता की कूटनीति से अवध के जनप्रिय शासक वाजिद अली शाह की उस कलंकित मधुर मूर्ति की स्पष्ट छवि को उजागर करने में श्रीवर ज्ञानदास माहेश्वरी जी ने स्तुत्य प्रयास किया है। इसके लिए लेखक ने हर दिशा से विषय का विशद अध्ययन भी किया है, इसमें संदेह नहीं।

इस पुस्तक में ज्ञानदास जी ने अनवरत श्रम और अनुकूल संकलन के साथ शाहे अवध की ब्यौरेवार जानकारी रोचक विवरणों के साथ प्रस्तुत की है। लेखक ने बादशाह के विलासी व्यक्तित्व के विकास के वो सभी सोपान सामने रखे हैं जो ज़ान-ए-आलम ने स्वयं अपनी कलम से मंजूर किये हैं। साथ ही उनकी न्यायप्रियता, लोकप्रियता एवं प्रशासन कुशलता जैसी प्रतिभाओं का परिचय भी भली भाँति प्रस्तुत किया है।

हिन्दी में ऐसी रचनाओं की कमी है। अतः यह ग्रन्थ निष्पक्ष रूप से ज़ान-ए-आलम को जानने का एक नया माध्यम होगा, ऐसा मुझे विश्वास है।

"पंचवटी"
८६ गोस नगर,
लखनऊ—२२६०१८

योगेश प्रवीण

(योगेश प्रवीण)
२४-४-१९८७
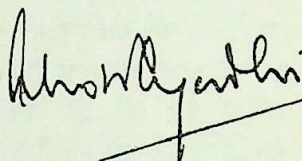
मेरा मत

मैं इसे केवल एक विडम्बना ही मानता हूँ कि सामान्य जन की बात तो दूर, लखनऊ से आत्मीय और निकट का सम्बन्ध रखने वाले भी इस शहर की संस्कृति और सभ्यता के क्रमिक विकास की पूर्ण और सही जानकारी नहीं रखते हैं और जब कभी उत्सुकतावश कुछ जानने की कोशिश भी की गई तो उपहास और सनक मिजाजी के ही किस्से सुनने को मिले। यह भी सत्य है कि जिस संस्कृति और सभ्यता ने दुनिया भर में अपनी ख्याति अर्जित कर ली हो उसकी बुनियाद महज इन भ्रामक और व्यंगात्मक कथानकों पर आधारित नहीं हो सकती है। विश्व की शायद ही कोई संस्कृति और सभ्यता हो जो किसी व्यक्ति विशेष के नाम पर जानी जाती हो। परन्तु नवाब वाजिद अली शाह एक ऐसे व्यक्तित्व का धनी है जिनके नाम के साथ लखनऊ और अवध की संस्कृति इस प्रकार से जुड़ गई है कि दोनों को एक दूसरे से अलग नहीं किया जा सकता है। पर यह बड़े खेद की बात है कि संस्कृति और सभ्यता के इस प्रतीक को महज मखौल का माध्यम बनाकर प्रसारित और प्रचारित किया गया है। वाजिद अली शाह के बारे में आज भी अनेकानेक भ्रांतियाँ और किस्से सुनाए जाते हैं जो आसानी से हृदय को स्वीकार नहीं हो पाते हैं। फिर भी उनकी सत्यता और वास्तविकता जानने का कोई ठोस और सफल प्रयास नहीं किया गया है।

मुझे यह जानकर अत्यन्त प्रसन्नता हुई कि डा० जी० डी० माहेश्वरी ने वाजिद अली शाह के सम्बन्ध में फैली भ्रान्तियों का निराकरण करते हुए उसके व्यक्तित्व एवं कार्यों का सही व निष्पक्ष मूल्यांकन करने का प्रयास किया है। वाजिद अली शाह पर डा० महेश्वरी द्वारा किए गए शोध कार्य जिसे अब पुस्तक के रूप में प्रकाशित किया जा रहा है, अपनी किस्म की सम्भवतः प्रथम पुस्तक होगी जिसमें उसके जन्म से लेकर मृत्यु तक की सभी घटनाओं का क्रमिक और योजनाबद्ध ढंग से वर्णन किया गया है। इस पुस्तक की विशेषता है कि इसमें वाजिद अली शाह के व्यक्तित्व और चरित्र के उन पहलुओं का विस्तार से निरूपण किया गया है जिनके द्वारा अवध और विशेषकर लखनऊ की संस्कृति और सभ्यता पनपी और विकसित हुई और जो निश्चय ही वाजिद अली शाह की एक अभूतपूर्व उपलब्धि है जिसे सदैव सराहा जाता रहेगा।

मात्र अध्ययन और अध्यापन के क्षेत्र में समर्पित अध्यापकों और शोधार्थियों के लिए भी पुस्तक लेखन और शोध कार्य में काफी परिश्रम और समय खपाने वाली एक दुरूह उपलब्धि होती है परन्तु एक प्रशासनिक अधिकारी के रूप में डा० जी० डी० माहेश्वरी द्वारा एक ऐसा ऐतिहासिक शोध ग्रन्थ तैयार करना न केवल उनकी अपनी विशिष्ठ उपलब्धि है वरन सभी प्रशासनिक अधिकारियों और कर्मचारियों के लिए गौरव, प्रेरणा और सम्मान की बात है। यह पुस्तक साहित्य और इतिहास के क्षेत्र में डा० माहेश्वरी की एक महत्वपूर्ण देन है जिसके लिए वे बधाई के पात्र हैं।

मुझे आशा ही नहीं अपितु पूर्ण विश्वास है कि डा० माहेश्वरी द्वारा नवाब वाजिद अली शाह जैसे विवादग्रस्त व्यक्तित्व पर पड़े परदे को उठाने का जो सफल प्रयास किया गया है, उससे इतिहास एवं साहित्य प्रेमी अवश्य लाभान्वित होंगे।

(अशोक प्रियदर्शी)
आई० ए० एस०
निदेशक सूचना एवं जनसम्पर्क विभाग, उत्तर प्रदेश
लखनऊ

२६-५-१९८७

प्रस्तावना

भारत का इतिहास अंग्रेजों ने एक विशेष दृष्टिकोण से लिखा जिसके द्वारा उन्होंने बहुत सी भ्रमात्मक बातें फैलायीं। विश्व के सम्मुख बहुत से लोगों को जो उनके विरोधी थे, विकृत रूप में प्रस्तुत किया। वाजिद अली शाह भी उनके ऐसे ही शिकारों में से एक थे। अत: स्वतन्त्र भारत के इतिहासकारों के लिये यह आवश्यक हो गया है कि भारत के इतिहास के ऐसे तथ्यों का पुन: निर्माण करें जिससे अंग्रेजों द्वारा फैलाई गई गलत फहमियों को मिटाया जा सके। जहाँ तक वाजिद अली शाह का प्रश्न है, भारतीय इतिहासकारों ने भी उसके साथ औचित्यपूर्ण व्यवहार नहीं किया बल्कि उसके गुणों की उपेक्षा करते हुए केवल उसकी कमजोरियों पर ही दृष्टि डाली।

समाज में आज भी वाजिद अली शाह के विषय में अनेकानेक भ्रांतियाँ फैली हुई हैं। उसके सम्बन्ध में जो किस्से सुनाए जाते हैं उनमें से अधिकांश या तो कपोल कल्पित हैं अथवा इतने अतिरंजित हैं कि उन पर सहज ही विश्वास करना हृदय को स्वीकार नहीं होता है। कुछ लोग कहते हैं कि उसकी तीन सौ साठ बीबियाँ थीं। उनमें से कुछ के साथ तो निकाह हुआ था और कुछ के साथ मुताह अर्थात जिनके साथ निकाह नहीं हुआ था वह रखैल थीं। उन बेगमों में प्रत्येक जाति रंग-रूप तथा आयु की स्त्रियाँ थीं। कोई ज्यादा उम्र की थी तो कोई बहुत कम उम्र की थी। कोई लम्बे कद की थी तो कोई छोटी। कोई गोरी थी तो कोई काली। तुर्क, ईरानी, बंगाली, अंग्रेज तथा हब्शिन भी उनमें पाई जाती थीं। कहा जाता है सुरा और सुन्दरी का जितना अधिक उपयोग वाजिद अली शाह ने किया, पिछली अनेक शताब्दियों में उतना किसी अन्य राजा अथवा बादशाह को मयस्सर नहीं हुआ। स्त्रियाँ उसकी दुर्बलता थीं। वह न केवल सुन्दर स्त्रियों एवं युवतियों से ही वासना की तृप्ति किया करता था वरन् वेश्याओं और नर्तकियों आदि से भी विलासिता की तृप्ति करता था। जो स्त्री उसे पसन्द आ जाती थी उस पर मर मिटता था। वह जिस स्त्री को एक बार अपनी बाहुपाश में लेने की इच्छा कर लेता था उसे लिए बिना नहीं छोड़ता था। जिस स्त्री पर वाजिद अली शाह आशिक हो जाता वह भी अपने को परम सौभाग्यशाली मानकर खुदा को सहस्त्रों धन्यवाद देती और उसकी बेगम बन जाने पर अपने पूर्व जन्म के पुण्यों को उदय जानकर गर्व का अनुभव करती थी। इन्हें बेगमें "पिया ज़ान-ए-आलम" कहा करती थीं। वाजिद अली शाह के पसन्द की एक विचित्र विशेषता यह बताई जाती है कि उसने सामाजिक स्तर और पेशे आदि का भेद अपनी प्रेमिकाओं के चयन में कभी नहीं किया। उसकी काम वासना इतनी तीव्र थी कि वह अपनी निर्धन सेविकाओं को भी नहीं छोड़ता था। वह आठ वर्ष की अल्प आयु में ही विषय भोग में लिप्त हो गया था। यह विचारणीय विषय है कि आठ साल की उम्र में उसमें काम अंग कैसे जाग गया? शादी के बाद भी वह खुले आम अन्य स्त्रियों से अपनी काम वासना की पूर्ति करता था। कहा जाता है कि उसने आसक्ति के पागलपन में एक दिन एक नर्तकी की अँगुली की अँगूठी उतारकर गर्म करके अपनी जाँघ में अंकित कर ली थी। उसके सम्बन्ध में कुछ भ्रांतियाँ तो इतनी अश्लीलता व विलासिता से भरी हुई हैं कि लगता है कि अंग्रेजों द्वारा उसके व्यक्तित्व पर पर्दा डालने के लिए अफवाहों के रूप में जानबूझ कर फैलाई गयी हों और जिनका वर्णन करने मात्र से लज्जा का आभास होता है।

वाजिद अली शाह के बारे में आम लोगों का यह ख्याल बन गया है कि वह बड़ा ऐयाश, घोर विलासी, कामुक, स्त्रैण और रंगीन मिजाज का था। रियासत के काम-काज

में उसका मन नहीं लगता था। कहा जाता है कि वाजिद अली शाह के जमाने में राज्य के वास्तविक स्वामी गवैये और ख्वाजा सरा (नपुंसक) लोग थे। नाच गाना उसके जीवन का अभिन्न अंग बन गया था। वाजिद अली शाह अक्सर अपने पावों में घुँघरू बाँधकर खास-खास लोगों को अपना नृत्य दिखाया करता था। बचपन में हरम की महिलाओं के सम्मुख छिपकर नाचना उसका खास शौक था। हुनरमंदों को वह पलक झपकते मालामाल कर दिया करता था। उसके यहाँ क्या सारंगी बजाने वाले, क्या तबलची और क्या नाचने वाले, सभी अपने फन के उस्ताद और अपनी मिसाल आप ही थे। उसके मन में इस बात का तनिक भी भेद भाव नहीं था कि गुणी जनों में कौन व्यक्ति किस जाति का है। उसके दरबार में जो व्यक्ति तबले का उस्ताद था वह जाति का डोम था। लखनऊ की अदालत आलिया (हाईकोर्ट) का सबसे ऊँचा मुन्सिफ (चीफ जस्टिस) वह व्यक्ति था जो शाही दरबार में सबसे अच्छी सारंगी बजाया करता था। उसके दरबार में दूर-दूर से पुरुष और स्त्री कलाकार आते और अपनी कला का प्रदर्शन कर मुँह माँगा पुरस्कार पाया करते थे। कैसर बाग में नित्य नए उत्सवों का आयोजन किया जाता था।

किसी हद तक उपरोक्त बातों को ठीक कहा जा सकता है मगर इनकी तह में जो असलियत है उसका पता लोगों को मुतलक नहीं है। यही कि शाह खुद ऐयाश नहीं था उसे जान बूझकर अइयाश बनाया गया था। वह खुद सल्तनत से उदासीन नहीं था बल्कि ऐसा बन जाने के लिए मजबूर किया गया था। वह कामुक अवश्य था पर कामान्ध नहीं था। अंग्रेजों ने ऐसी परिस्थितियाँ पैदा कर दी थीं कि वाजिद अली शाह शासन के कार्यों से उदासीन होकर नाच रंग एवं अन्य मनोरंजन में अपना समय व्यतीत करने को मजबूर हो गया। अंग्रेज वाजिद अली शाह को सल्तनत की ओर ध्यान देने से हटाना चाहते थे जिसमें वह कुछ हद तक सफल भी हुए। वाजिद अली शाह को बदनाम करने के लिए उसकी अइयाशी तथा कुशासन के सम्बन्ध में अंग्रेजों ने उसके विरुद्ध अनेकों मिथ्या कलंक और आरोप लगाए। सबसे पहले अंग्रेजों ने उसे सेना का संगठन करने से रोका, फिर राजकाज से उदासीन बनाया, फिर उसके चरित्र पर अनेकों मिथ्या दोषारोपण किए और अंत में उसे शासन से हटाकर अवध का विलय कर दिया। वाजिद अली शाह की असलियत पर अंग्रेज बराबर पर्दा डालते रहे।

यहाँ तक कि उसकी तस्वीर पर, जो हुसैनाबाद ट्रस्ट आर्ट गैलरी लखनऊ में रखी है किसी जमाने में एक पर्दा पड़ा रहता था। कहा जाता है कि एक बार विलायत से एक मेम साहिब इस तस्वीर को देखने आयीं। इस तस्वीर को गौर से देखती रहीं फिर गश खाकर जमीन पर गिर गयीं तब से इस तस्वीर पर पर्दा डाल दिया गया। इस तस्वीर की खासियत है कि आप जहाँ से भी देखेंगे यह तस्वीर आप ही की ओर देखते हुए नजर आएगी। जब वाजिद अली शाह की तस्वीर में यह आकर्षण आज भी है तो उस समय का क्या आलम होगा जब वह भरी जवानी में चारों ओर से हुस्न के बाजार से घिरा रहता था। उन दिनों जब वाजिद अली शाह अपनी पूरी जवानी पर था, उसका पुरुषोचित आकर्षण अपनी चरम सीमा पर था। उसकी आँखों में वह जादू था कि जो भी एक बार बार देख लेता दीवाना हो जाता। सूरत ऐसी कि पैगम्बर यूसुफ भी उसकी बराबरी न कर पाता। उसके बालों की लटों का घुमाव तातार को भी शर्मिन्दा करने वाला था। नाजों अन्दाज तो उसके गुलाम हो चुके थे। उसका चेहरा आइने के मानिन्द था। नज़रों से शरारत झलकती थी। रंग सेब की तरह लाल हो रहा था। आँखें कुव्वत का सामान थीं। होंठ ऐसे कि प्रेमिकाएं उन पर जान छिड़कती थीं। भवें कमान की

तरह तनी हुई, पेशानी पर चन्द्रमा की आभा थी। उसके गले के नीचे के बालों में ऐसे फंदे थे जिनमें फंसकर अनेकों दिल तड़पते थे। इस तरह उसकी सुन्दरता देखते ही बनती थी और प्रेमिकाओं को अपने चंगुल में फंसा लेती थीं। एक सज्जन उसकी तस्वीर को देखकर बोले कि नवाब वाजिद अली शाह ऐसा मर्दाना था कि अगर उसकी तस्वीर मात्र को कुछ देर गौर से देख ले तो हमल रह जाए। कहा जाता है कि एक दिन एक नया शादी शुदा जोड़ा आर्ट गैलरी देखने आया। लड़की इस तस्वीर को थोड़ी देर गौर से देखती रही कुछ देर बाद गश खाकर जमीन पर गिर गई। उसे उठा कर पंखे के नीचे लिटाया और पानी का छींटा देकर होश में लाया गया। कुछ देर आराम करने के बाद वह बोली एक बार फिर उस तस्वीर को दिखा दो। वह इस तस्वीर को पाँच मिनट गौर से देखकर आह भरती हुई चली गई। सबसे पहले देखने वाले की निगाह उसकी बाँयी ओर खुली छाती पर जाती है जो अंगरखे के बीच नजर आती है। स्तनाग्र की बनावट और शरीर का गोरा रंग मन को लुभावना लगता है। उसके बाद नजर आती है चेहरे के ऊपर तथा भरभरी आँखों की पुतलियों पर। मुख पर गम्भीरता व राजपूती काली-नीली मूँछें अपनी ओर खींचती हैं। कन्धों तक लहराती हुई जुल्फें चेहरे में निखार ला देती हैं। हाथ की उंगलियों में गोरेपन के साथ गुलाबी पन भी नजर आता है। यद्यपि उस तस्वीर से अब पर्दा हटा दिया गया है पर अंग्रेजों द्वारा उसके व्यक्तित्व के सम्बन्ध में जो अनेकानेक भ्रान्तियाँ फैलायी थी और उसके गुणों पर जो पर्दा डाला गया था और जो अब पुराना व खस्ता हो गया है, उसको भी हटाया जाना निहायत जरूरी है। प्रस्तुत पुस्तक में वाजिद अली शाह के व्यक्तित्व पर डाले गये पर्दे को हटाने का प्रयास किया गया है।

यह अपनी जगह सत्य है कि वाजिद अली शाह की विलासिता एवं अय्याशी की बातों को बहुत ही बढ़ा चढ़ा करअंग्रेजों द्वारा प्रचारित किया गया था ताकि उसके ऊपर से जनता का विश्वास उठ जाये। इसीलिए अंग्रेजों ने नवाब वाजिद अली शाह की छोटी से छोटी बात को जनता के सामने तोड़ मरोड़ के प्रस्तुत किया। यह कार्य "अवध के अपहरण" के सम्बन्ध में कर्नल स्लीमैन के रेजीडेन्ट काल से प्रारम्भ हुआ। कदम कदम पर अंग्रेजों द्वारा नवाब वाजिद अली शाह के शासन कार्य में हस्तक्षेप किया गया। नवाब को बदनाम करने तथा इनकी प्रतिष्ठा गिराने में, शाही खानदान को परेशान करने में, राज्य कर वसूलने में बाधा डालने तथा नवाब के शासन को निकम्मा बनाने में कर्नल स्लीमैन ने सक्रिय भूमिका निभाई। उसकी शासन व्यवस्था में अंग्रेजों के द्वारा उत्पन्न निरन्तर व्यवधान, कुचक्र एवं षडयन्त्रों से ही वह निराश हो गया और अपनी परेशानी छिपाने के लिए नाच-रंग और शेरो शायरी में डूबने लगा। अतः यह स्पष्ट है कि नवाब की विलासिता का प्रमुख कारण उसकी राजनैतिक उलझनें थीं।

नवाब वाजिद अली शाह लखनऊ के ऐसे नवाब थे जिनकी चर्चा उस समय के बच्चे बच्चे की जबान पर थी। उसने अपने जीवन में ऐश और मौज मस्ती की ऐसी मिसालें कायम की हैं कि वे इतिहास के पृष्ठों पर आज भी मौजूद हैं। आज भी जब कोई जरूरत से ज्यादा मौज मस्ती के मूड में होता है तो कहा जाता है कि क्या वाजिद अली शाह बन गए हो पर इसके विलासिता पूर्ण व्यक्तित्व से अलग हट कर वाजिद अली शाह के व्यक्तित्व के दूसरे पक्ष पर दृष्टि डालने से यह पता चलता है कि बुरहानुल मुल्क और सआदत अली खाँ के बाद सम्भवतः वाज़िद अली शाह ही ऐसा नवाब था जो न्याय प्रिय, धर्म निरपेक्ष और साहसी था। विभिन्न प्रमाणों के अनुसार वाजिद अली शाह बिना विवाह किए किसी स्त्री से सम्बन्ध नहीं रखता था। कभी किसी हिन्दू स्त्री पर गलत

नजर नहीं उठाई। उसने विवाह के बाद ही किसी स्त्री से सम्बन्ध स्थापित किया। जहाँ एक ओर नवाब वाजिद अली शाह का विलासी व्यक्तित्व सामने आता है वहीं उसका चरित्र एवं व्यक्तित्व बहुत ही उच्च कोटि का था। वास्तव में उसकी विलासिता की चर्चा अंग्रेजों की कूटनीति एवं षडयन्त्र का फल था। वाजिद अली शाह इतना विलासी नहीं था जितना उसके बारे में प्रसिद्ध था। उसका पालन पोषण नसीरुद्दीन हैदर के समय में हुआ था, जब लखनऊ में विलासिता पूर्ण जीवन सर्व व्याप्त था इसलिए उसका भी विलासी होना स्वाभाविक था।

वाजिद अली शाह को हम भारतीय राजनैतिक, सामाजिक तथा नैतिक सभ्यता का "सारस" कहकर पुकार सकते हैं। उसका निर्माण अरबिस्तान, ईराक तथा हिन्दुस्तान तीनों देशों की संस्कृतियों से मिलकर हुआ था परन्तु नवीन युग तथा नवीन सभ्यता के सम्बन्ध में वह अपने अस्तित्व को स्थिर नहीं रख सका। जिस प्रकार छोटी-छोटी गिलहरियाँ भीमकाय सारस जाति का अस्तित्व समाप्त कर देती हैं उसी प्रकार वाजिद अली शाह के मुँह लगे सेवक और ऐयाशों ने शराब और शबाब के दौर में उसे सदैव के लिए इतिहास के पन्नों में विवादास्प्रद बना दिया। फलस्वरूप भू-गर्भ में पाये जाने वाले सारसों के अस्थिपंजरों के समान आज उसके काल की सभ्यता के कंकाल या तो लखनऊ की पुरानी बस्तियों में पाये जाते हैं या इतिहास के बिखरे हुए उन पन्नों में देखने को मिलते हैं जिन्हें वर्तमान काल में समय की कसौटी पर चढ़ा कर, शिक्षाप्रद परिणाम निकाले जाने की आवश्यकता महसूस हुई। इतिहासकारों के विभिन्न मतों के आधार पर वाजिद अली शाह अभी भी एक रहस्य बना हुआ है जिसके सन्दर्भ में एक अनुसन्धान की आवश्यकता समझी गयी जिससे उसके सम्बन्ध में फैली उचित, अनुचित, सही-गलत सभी भ्रान्तियों का उन्मूलन किया जा सके। वाजिद अली शाह के सम्बन्ध में तोड़ मरोड़कर भ्रमात्मक बातें जानबूझ कर क्यों प्रस्तुत की जाती रहीं इस आशय को उजागर करने की आवश्यकता को ध्यान में रखकर अधोहस्ताक्षरी ने "वाजिद अली शाह और उसका काल" पर शोध प्रबन्ध तैयार किया जिस पर रुहेलखण्ड विश्वविद्यालय ने ३१, जुलाई १९८४ को पी० एच-डी० की उपाधि प्रदान की।

प्रथम स्वतन्त्रता आन्दोलन के भड़क उठने के कारणों के अध्ययन को नवीन दिशा देते हुए जिस रूप में वर्तमान इतिहासकार प्रस्तुत कर रहे हैं उनमें "अवध का विलय" प्रमुख कारणों में आता है और कुछ लोग तो आन्दोलन के आधारभूत कारणों में अवध के विलय को ही प्रमुख कारण मानते हैं। पूर्व के इतिहासकारों और वर्तमान इतिहासकारों में अवध के विलय के सम्बन्ध में तत्कालीन शासक वाजिद अली शाह के सम्बन्ध में व्यापक मतभेद और भ्रान्तियाँ व्याप्त हैं। जैसा कि ऊपर लिखा जा चुका है कि वाजिद अली शाह के प्रशासन, उसके व्यक्तित्व और उसके सम्बन्ध में प्रचलित विलासिता सम्बन्धी घटनाएं इस प्रकार इतिहास में छितरी हुई हैं कि वाजिद अली शाह के चरित्र की वास्तविकता अब तक स्पष्ट नहीं हो सकी। वाजिद अली शाह के व्यक्तित्व के निष्पक्ष अध्ययन के अभाव में अब तक उसे घोर विलासी, ललित कलाओं में फंसा रहने वाला चाटुकार, ख्वाजा सराओं और वेश्याओं से घिरा रहने वाला तथा अदूरदर्शी, अयोग्य प्रशासक और कामुक माना जाता रहा है।

वाजिद अली शाह पर प्रकाशित और अप्रकाशित अध्ययनों में उसके जीवन को क्रमिक रूप से प्रस्तुत करने का प्रभावयुक्त कोई भी एक समूचा अध्ययन उपलब्ध नहीं हैं। जो अध्ययन अब तक वाजिद अली शाह पर हुए भी हैं वे भी अंग्रेजों द्वारा प्रसारित और प्रचारित विचारधारा के आस-पास ही सिमट कर रह गये। अतः प्रस्तुत पुस्तक में

उसके महत्वपूर्ण ऐतिहासिक व्यक्तित्व व जीवन को प्रारम्भ से लेकर अन्त तक एक क्रम में प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है। साथ ही ऐतिहासिक और व्यक्तिगत घटनाओं के परिणाम स्वरूप होने वाली प्रतिक्रियाओं और परिवर्तनों को भी उसी क्रम और सन्दर्भ में प्रस्तुत किया गया है। प्रस्तुत पुस्तक में बहुत से अनछुए और नवीन स्रोतों से प्राप्त सामग्री का समावेश किया गया है। विशेष रूप से "फारेन डिपार्टमेंट पोलिटिकल कन्सल्टेशन" "पर्शियन लेटर्स" सनद आदि के अलावा "सीक्रेट कन्सल्टेशन" में उपलब्ध दस्तावेजों का अध्ययन किया गया है। इन पत्रों में अंग्रेजी शासन और उसके अधिकारियों की नीयत पर भी स्पष्ट रूप से प्रकाश पड़ता है। फारसी पाण्डुलिपियों खासकर वाजिद अली शाह द्वारा रचित फारसी व उर्दू की पुस्तकों के अनुवाद कर उनसे तथ्य एकत्र किए गए हैं। विशेष रूप से वाजिद अली शाह द्वारा रचित "परीखाना" "इश्कनामा" और "हिज्ने अख्तर" के अनुवादों का उल्लेख व उद्धरण दिए गए हैं। इन पाण्डुलिपियों से प्राप्त तथ्यों ने घटनाक्रम की बहुत सी कड़ियों को सही रूप से व्यवस्थित करने में सहायता प्रदान की है। वाजिद अली शाह के व्यक्तित्व और विलासिता की प्रक्रिया में किन-किन व्यक्तियों और परिवेश की कैसी-कैसी रीति रिवाजों आदि का प्रभाव पड़ा, इसके लिए विभिन्न घटनाओं और स्वाभाविक रूप से प्रभाव डालने वाले व्यक्तियों को भी स्पष्ट करने के प्रमाण इस पुस्तक में दिए गए हैं। अवध की तत्कालीन सामाजिक स्थिति और बालक वाजिद अली शाह के स्वाभाविक व देवीय गुणों जैसे नृत्य, संगीत आदि में उसकी जन्म जाति रुचि का भी उसी सन्दर्भ में उल्लेख करते हुए उसके व्यक्तित्व के विकास को क्रमिक रूप से वर्णन किया है। वाजिद अली शाह के सम्बन्ध में जिसने भी लिखा—यही लिखा कि वह बचपन से ही विलासी, काम वासना के प्रति आसक्त और लिप्त रहता था। किसी ने वासना के जाल में फंसने के कारण व कुचक्र का विस्तृत विवरण नहीं दिया। तरुण बालक, स्वाभाविक अबोधता और यौनाकर्षण की उत्सुकता के कारण अपनी आयु से कहीं अधिक आयु की स्त्रियों के वासना के जाल का शिकार किस प्रकार हो गया और उनका प्रतिरोध न कर सका, ऐसी घटनाओं का प्रमाणित उल्लेख इस अध्ययन में किया गया है। ऐसी घटनाओं का उल्लेख करते समय वाजिद अली शाह की पुस्तक "परीखाना" से उद्धृत और अनुवादित प्रसंग दिए गए हैं।

विलासिता के आरोपों से मंडित वाजिद अली शाह की मानसिकता कैसा स्वरूप धारण करती जा रही थी, इसकी घटनाओं को वाजिद अली शाह की 'निर्भीक स्वयं स्वीकृति" और विचारों को स्पष्ट रूप से प्रस्तुत करने की प्रवृत्ति के कारण प्राप्त उल्लेखों के द्वारा, उसकी काम वासना के प्रति लिप्ता, अनुराग, बैराग, विरिक्ति, क्षोभ, मोह सभी कुछ क्रमिक रूप से इस अध्ययन में निरूपित करने का प्रयास किया गया है। वाजिद अली शाह द्वारा निर्मित परीखाना का उल्लेख तो अनेक लेखकों ने किया है परन्तु प्रस्तुत पुस्तक में परीखाना के घटना चक्र का ब्योरेबार विश्लेषित वर्णन दिया गया है। वाजिद अली शाह ने अपनी अस्वस्थता की स्थिति में परियों के सम्बन्ध में जो विचार प्रकट किए हैं उनको भी इस पुस्तक में समाविष्ट किया है। प्रस्तुत पुस्तक में वाजिद अली शाह द्वारा स्वयं स्वीकारोक्ति को विशेष महत्व दिया गया है और अन्य स्रोतों से प्राप्त तत्सम्बन्धी सामग्री से तुलना की गयी है।

ऐसे व्यक्तित्व के धनी वाजिद अली शाह और उसके काल की घटनाओं को प्रस्तुत करने के अब तक जो थोड़े बहुत प्रयास हुए भी हैं, वे अवध के नवाबों और अंग्रेजों के सम्बन्ध, अवध का राजनैतिक पतन, नवाबों का इतिहास, नवाबों की विलासिता, वाजिद अली शाह के प्रशासन तथा उसकी सांस्कृतिक देन आदि पर केन्द्रित अध्ययन मात्र ही

हैं। वे उसके सम्पूर्ण चरित्र को स्पष्ट नहीं कर सके और किसी विशेष पहलू तक ही सीमित रहे। इन सबमें वाजिद अली शाह के जीवन से सम्बन्धित वास्तविक उल्लेख छितरा हुआ है जिससे उसका व्यक्तित्व सुलझने की अपेक्षा और अधिक उलझता गया है। प्रस्तुत पुस्तक में इन छितरे हुए परस्पर विरोधी तथ्यों का तटस्थ रूप से सूक्ष्म पर्यवेक्षण कर उसकी स्पष्ट विवेचना क्रमबद्ध रूप से करने का प्रयास किया गया है और यह सिद्ध करने की चेष्टा की गई है कि अवध का इतिहास, इतिहास का वह पृष्ठ बनकर अमर हो गया जिसमें हम एक ऐसे बादशाह का अवलोकन करते हैं जो यद्यपि प्रशासन के क्षेत्र में कुछ अस्पष्ट था, लेकिन उसने सांस्कृतिक क्षेत्र में एक ऐसी विरासत अपने पीछे छोड़ी है जिस पर भारत को गर्व है।
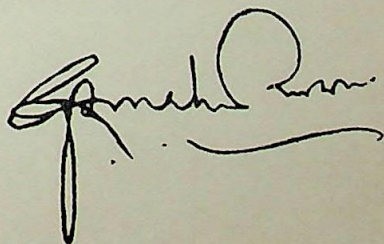
भारतीय संस्कृति के अभूतपूर्व योगदाता के रूप में वाजिद अली शाह अवध के इतिहास रूपी व्योम में उस झिलमिलाते हुए सितारों की भाँति है जो अपनी चमक से सुहृदय व्यक्तियों के नेत्रों में रंजकता प्रदान करता है। अवध नरेश के नाम के घुँघरू आज भी अवध की नर्तकियों के हृदय में समाहित हैं, उनकी पायल आज भी उस "अख्तर पिया" की याद में थिरक-थिरक कर खोए हुए गीतों की याद दिलाती है। अवध में अब भी जब पुरानी याद लिए कोई महफिल जुड़ती है तो वह बिना वाजिद अली शाह के स्मरण के पूर्ण नहीं होती। शान-ए-अवध वाजिद अली शाह वाकई अवध की पुरजोर शान है और लखनऊ की सरजमीं अपने उस चहेते बादशाह को जो उसके आगोश में खेला है, अपनी इमारतों के बुर्जों से उसकी बुलन्दियों की कहानियाँ कह रही है।

अवध के इतिहास में वाजिद अली शाह का शासन एक ऐसा अभूतपूर्व स्थान रखता है जिसकी तुलना इतिहास में मिलना दुर्लभ है। विद्रोह के इतिहास में वाजिद अली शाह का बलिदान निःसन्देह अध्ययन का एक रोचक प्रसंग है। वाजिद अली शाह इतिहास का वह नक्षत्र है जो धूमिल पड़ने पर भी अपनी चमक लिए हुए है। इतिहास के पन्नों पर उसका नाम अमिट है। उसकी स्वामिभक्ति का उपहार दम्भ के रूप में, स्वागत का उत्तर चेतावनी के रूप में, सहयोग का प्रति-उत्तर विलय के रूप में दिया जाना इत्यादि अंग्रेजी सरकार के ऐसे कारनामें हैं जिनको हम किसी भी प्रकार से उचित नहीं ठहरा सकते। यदि अवध का शासन वैसा ही होता जैसा रेजीडेन्ट की आख्याओं में उल्लेख है तो हमें पायल की झंकार के स्थान पर तलवारों की खनक सुनाई पड़ती, रमणियों के मधुर संगीत स्वरों के स्थान पर उनके चीत्कार सुनाई पड़ते, ललित कलाओं के विकास के स्थान पर साम्प्रदायिकता का विकार दिखाई पड़ता और अवध का सांस्कृतिक इतिहास विद्रोह का इतिहास होता। यदि ऐसा होता तो निःसन्देह बादशाह के पदच्युत होने के उपरान्त कलकत्ता प्रयाण के समय जनता की आँखों में अश्रु लहर न होकर हर्ष और उन्माद की लहर होती। ईस्ट इण्डिया कम्पनी की ख्याति पृथ्वी के गर्भ में प्रवेश न करके जन जागरण के हृदय में प्रविष्ट होकर जमती ही जाती, लेकिन ऐसा नहीं हुआ। सत्ता को प्राप्त करने के उपरान्त भी अंग्रेज चैन की साँस न ले सके। विद्रोह की चिंगारी ऐसी भड़की जिसने अस्थाई तौर पर सत्ता को चटखा कर रख दिया। यह भाग्य और दुर्भाग्य का खेल था और भाग्य निःसन्देह अंग्रेजों का साथ दे रहा था, इसलिए उनकी विजय भारतियों को मजबूर होकर स्वीकार करनी पड़ी। अंग्रेजों के राजनैतिक छलावे में शासन की व्यवस्था अस्त-व्यस्त हो जाना एक सामयिक प्रवंचना रही किन्तु उसके बावजूद भी वाजिद अली शाह ने एक कुशल राजनीतिज्ञ की भाँति जनता को राहत प्रदान की। उसका योगदान इतिहास कभी नहीं भुला पाएगा। इस पर भी

इतिहासकारों ने उसे अदक्ष, स्त्रैण एवं भोग विलासी ठहराने का प्रयास किया जो कभी तर्कसंगत प्रतीत नहीं हो सकता। आवश्यकता है कि हम इसके बारे में निरपेक्ष होकर नए दृष्टिकोण से विचार करें, इसी उद्देश्य को दृष्टिगत रखते हुए प्रस्तुत अध्ययन किया गया है। प्रस्तुत अध्ययन में तत्कालीन परिस्थितियों के अनुरूप ही उपलब्ध तथ्यों का विकार रहित और निष्पक्ष रूप से तुलनात्मक अध्ययन करते हुए व्याख्या की है। उल्लेखनीय है कि हिन्दी भाषा में वाजिद अली शाह एवं उसके समय की घटनाओं का प्रमाणिक एवं क्रमिक ब्योरा बहुत कम ही उपलब्ध है जिससे हिन्दी प्रेमियों और शोधार्थियों को एक बहुत बड़ी समस्या का सामना करना पड़ता है। अतः प्रस्तुत पुस्तक में हिन्दी भाषा में वाजिद अली शाह के जन्म से लेकर मृत्यु तक का जीवन क्रमबद्ध रूप से प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है।

वाजिद अली शाह और उसके काल की जानकारी प्राप्त करने के संबंध में कलकत्ता, लखनऊ, अलीगढ़ व रामपुर के पुस्तकालयों में उपलब्ध मूल स्रोत सम्बन्धी फारसी और उर्दू भाषा की पाण्डुलिपियों और पुस्तकों का अध्ययन किया गया। राष्ट्रीय अभिलेखागार, नई दिल्ली, में उपलब्ध "फारेन एण्ड पोलिटिकल डिपार्टमेंट—की आख्यायें (१८४७-१८५६) में से विभिन्न जानकारियाँ प्राप्त की गई। वाजिद अली शाह के वंशज डा० कोकब कदर सज्जाद अली मिर्जा, रीडर, उर्दू विभाग, अलीगढ़ मुस्लिम विश्व विद्यालय, अलीगढ़ का मैं आभारी हूँ जिन्होंने मुझे इस अध्ययन हेतु केवल पर्याप्त सामग्री ही उपलब्ध नहीं कराई वरन् वाजिद अली शाह के परिवार और व्यक्तिगत जीवन के सम्बन्ध में भी निःसंकोच होकर अनेकों महत्वपूर्ण जानकारियाँ दीं। डा० रमेश चन्द्र शर्मा, अध्यक्ष इतिहास विभाग, सैन्ट जान्स कालेज, आगरा व डा० एस० एस० अवस्थी अध्यक्ष इतिहास विभाग, वी० एस० एस० डी० कालेज, कानपुर द्वारा दिए गये बहुमूल्य सुझावों के लिए भी मैं उनका आभारी हूँ। स्वर्गीय डा० पी० आर० साहनी, अध्यक्ष, इतिहास विभाग, बरेली कालेज, बरेली के उपयोगी निर्देशन एवं पथ प्रदर्शन के प्रति मै अपनी कृतज्ञता व्यक्त करता हूँ। निश्चय ही यह अध्ययन उनके वात्सल्य भरे प्रयत्नों का परिणाम है जिसके लिए मैं उनका चिर ऋणी रहूँगा।

अवध गौरव पदम भूषण आदरणीय अमृत लाल जी नागर का मैं विशेष रूप से आभारी हूँ जिन्होंने आमुख लिखकर इस पुस्तक को गरिमा प्रदान की। ख्याति प्राप्त साहित्यकार पदमश्री श्रीमती गौरा पंत शिवानी, श्री अशोक प्रियदर्शी आई० ए० एस०, निदेशक, सूचना एवं जन-सम्पर्क विभाग, उत्तर प्रदेश लखनऊ व श्री योगेश प्रवीन का भी मैं आभारी हुँ जिन्होंने इस पुस्तक के सम्बन्ध में अपने विचार व्यक्त कर मेरा उत्साहवर्धन किया।

डा० ज्ञानदास माहेश्वरी

स्वामी बाग, आगरा

१ अक्टूबर १९८७

विषय-सूची

अध्याय—१
जीवन परिचय

"नवाब और फिर लखनऊ के नवाब" उच्चारण मात्र से नफासत, सलीके और तहजीब से युक्त एक बेमिसाल खाका उभर कर आँखों के सामने आ जाता है, परन्तु इतिहास की यह विडम्बना ही रही कि विदेशी लेखकों और इतिहासकारों ने अज्ञानता के कफन अथवा स्वार्थवश जानबूझकर अन्य तथ्यों की भाँति नवाब वाजिद अली शाह जैसी शख्सियत के भी समस्त गुणों को दफन करते हुए केवल उसके विलासी एवं कामुक जीवन को ही प्रचारित एवं प्रसारित करने का प्रयास किया है जो निःसन्देह उनके पक्षपाती दृष्टिकोण को दर्शाता है। यही कारण है कि परस्पर विरोधी गुणों और अवगुणों से पूरित ऐसे व्यक्तितत्व के जन्म के विषय में भी इतिहासकार एक मत न होकर भ्रान्तियां ही फैलाते रहे हैं। वाजिद अली शाह द्वारा सृजित पुस्तकों में भी इन भ्रान्तियों का उन्मूलन नहीं किया गया है अपितु स्वयं उसी के द्वारा भिन्न-भिन्न तिथियों के उल्लेख के कारण यह गुत्थी उलझती ही गयी।

"मिरातुल अवध" (फारसी पाण्डुलिपि) में वर्णित वाजिद अली शाह की जन्मतिथि दस जीकद, १२३७ हिजरी कई अन्य लेखकों से तालमेल खाती है परन्तु एक अन्य फारसी पाण्डुलिपि "जुबदत-उल-क़वाइफ़" में वाजिद अली शाह की जन्म तिथि १० रवी उल सानी १२४३ हिजरी, तदनुसार ६ नवम्बर, १८२७ ई० का उल्लेख किया गया है परन्तु गणना करने पर उक्त हिजरी तारीख की ईसवी तारीख ३१, अक्टूबर, १८२७ ई० निकलती है। "जुबदत-उल-क़वाइफ़" अन्य तथ्यों की संपुष्टि अवश्य करती है फिर भी उसकी यह तिथि त्रुटिपूर्ण प्रतीत होती है। सज्जाद हुसैन रिजवी ने अपनी पुस्तक "सवानेह शाह अवध" में भी "जुबदत-उल-क़वाइफ़" में वर्णित तारीख को ही समर्थन दिया है।

जय गोपाल साकिब द्वारा रचित "जुवदत-उल-क़वाइफ़" में यह त्रुटि अवश्य निकलती है परन्तु इसी लेखक ने वाजिद अली शाह की मृत्यु पर लिखे एक महाकाव्य में अपनी इस त्रुटि को दूर करने का प्रयास किया है कि वाजिद अली शाह की मृत्यु २८, सितम्बर, सन् १८८७ ई० तदनुसार ३ मुहर्रम १३०५ हिजरी अर्द्धरात्रि के समय हुई जब उसकी आयु ६७ वर्ष एक माह २३ दिन थी। इस प्रकार जय गोपाल साकिब द्वारा दी गई मृत्यु तिथि में से यदि वाजिद अली शाह की आयु को हिजरी सन् के अनुसार घटा दिया जाए तो उसकी जन्म तिथि दस जीकद १२३७ हिजरी अर्थात् ३०, जुलाई १८२२ ही निकलती है। इसी तारीख का वर्णन रतनसिंह जख्मी की पुस्तक "सुल्तान-उल-तवारीख़" (फारसी पाण्डुलिपि) और सैयद मसूद हसन रिजवी की पुस्तक "वाजिद अली शाह" में मिलता है। मुहम्मद नजमुल गनी रामपुरी ने अपनी महत्वपूर्ण पुस्तक

"तवारीखे अवध" में झब्बनलाल की पंक्तियों के आधार पर वाजिद अली शाह की जन्म तिथि १० जीकद १२३८ हिजरी निश्चित की है। सैयद कमालुद्दीन हैदर की पुस्तक "केसर-उल-तवारीख" में ईसवी सन् १८२१ का त्रुटिपूर्ण वर्णन हो गया है। इसी प्रकार कुछ इतिहासकारों ने विक्रमी संवत् १८७९ का त्रुटिपूर्ण उल्लेख कर दिया है। पर सभी उपलब्ध श्रोतों की समीक्षा से यही निष्कर्ष निकलता है कि वाजिद अली शाह का जन्म ३० जुलाई सन् १८२२ ई० को हुआ।

वाजिद अली शाह के जन्म पर उसका नाम मिर्जा कैसर जमां वाजिद अली शाह बहादुर रखा गया। वाजिद अली शाह के पिता सुरैया जाह अमजद अली शाह वड़े सादगी पसन्द और सूफी तबियत के आदमी थे। बचपन से उनकी माँ मलिका आफाक ने उन्हें सदाचार की शिक्षा दी थी। यहाँ तक कहा जाता था कि अगर उनका वस चलता तो वे अपने दरबार को सैयदों, मौलवियों और पंडितों से भर लेते। अमजद अली शाह इस हद तक मौलवी दिल इन्सान थे कि उन्हें हज़रत के नाम से पुकारा जाता था। उनके इसी नाम से लखनऊ का हजरत गंज आवाद हुआ था। इनकी बीवियों की संख्या भी बहुत कम थी। गिनती एक हाथ की उंगलियों के बराबर भी नहीं थी। लखनऊ की बादशाहत मिल जाने पर भी उनके मिजाज में कोई फर्क न आया। वह मुल्ला पहले और बादशाह बाद में थे। घुटनों तक की लम्बाई का हरा चोगा पहनते थे। उनके जीवनकाल में कई महत्त्वपूर्ण कार्य हुए जैसे लखनऊ से कानपुर तक कंकड़ बिछाकर पक्की सड़क बनाई गयी थी और गोमती नदी पर लोहे का पुल बनवाया गया था।

वाजिद अली शाह की माता का नाम नवाब ताजआरा वेगम था जो कालपी के नवाब हुसैन उद्दीन खान की पुत्री थीं। इनकी माता का 'मलका किश्वर' खिताब था। लखनऊ के नवाबी काल में मलिका किश्वर जैसी शर्मदार और सलीका पसन्द बेगम कोई और नहीं मिलती। उनकी शर्मिन्दगी और पर्दा नशीनी के लिए यह विख्यात था कि प्रातः उठने के बाद जब वह स्नान के लिए हौज में उतरती थीं तो वहाँ उन्हें उस ठण्डे और गुनगुने पानी से वह ही बूढ़ी सेविकाएँ नहलाती थीं जो उन्हें बचपन और कौमार्यावस्था से नहलाती आई थीं। इन विशेष सेविकाओं के अतिरिक्त किसी अन्य स्त्री ने उनके चेहरे और हाथों के अलावा और कोई शारीरिक अंग नहीं देखा था। एक विशिष्टता और भी रही जो किसी नवाबी वेगम में नहीं रही वह यह कि मलिका किश्वर ने कभी नपुंसकों की सेवा को पसन्द नहीं किया और सदैव महल के कनीजों के अतिरिक्त किसी की सेवा उन्हें पसन्द नहीं आयी। शानो-शौकत का आलम यह था कि मलिका किश्वर लखनऊ में ही मौसम के अनुसार अलग-अलग स्थानों पर निवास किया करती थीं। सर्दियों में छतर वाले मकान (छतर मंजिल) गर्मियों में चौलक्खी कोठी और वर्षा ऋतु में हवेली बाग में निवास किया करती थीं। जब कभी वह बाग बगीचों में सैर को निकलतीं तो सौ दो सौ सेविकाएँ उनके पीछे-पीछे चलतीं थीं। दोपहर के खाने पर जब वह बादशाह के साथ बैठती थीं तो महल के सदर फाटक पर सारे शहर को इस बात की इत्तिला देने के लिए एक तोप दागी जाती थी। एक बार जो पोशाक उनके जिस्म को छू लेती थी,

उसे दुबारा पहनने का सवाल ही नहीं उठता था। बेवा हो जाने के बाद भी उन्होंने सिर्फ सुहाग की नथ से ही परहेज किया, वरना बाकी सभी ज़ेवर उनके जिस्म की ज़ीनत बने रहे। मलका किश्वर के लिए यह बात मशहूर थी कि उन्होंने बिना सख़्त जरूरत के कभी अपने दरे-दौलत के बाहर कदम नहीं रखा था, लेकिन उन्हें क्या मालूम था कि अपने बेटे वाजिद अली शाह का तख्त-ओ-ताज वापस माँगने के लिए उन्हें एक दिन महारानी विक्टोरिया के पास लंदन तक जाना पड़ेगा।

सुरैया जाह अमजद अली शाह और मलिका किश्वर की औलाद वाजिद अली शाह के जन्म के समय कुछ ज्योतिषियों ने संदिग्धात्मक भविष्यवाणी की थी जिसमें ऐसा उल्लेख था कि बालक के कुछ नक्षत्र उसके लिये अशुभ प्रतीत होते हैं और इसकी किस्मत में जोगी होना लिखा है। साथ ही ज्योतिषियों ने इस स्थिति से बचाव का उपाय भी सुझाया कि यदि बालक को उसकी हर साल गिरह पर जोगी बनाया जाए तो यह बात टाली जा सकती है। ज्योतिषियों की बात मानते हुए वाजिद अली शाह को उसकी छठी के अवसर पर जोगियाने वस्त्र पहनाए गये थे और बाद में उसकी हर साल गिरह पर जोगियाना वेश पहनाया जाता था। यह रस्म महल के अन्दर प्रत्येक वर्ष मनाई जाती थी परन्तु इस अवसर पर कोई उत्सव नहीं मनाया जाता था। यह केवल महल के अन्दर की पारिवारिक बात थी जिसका आम लोगों में कोई जिक्र न था।

वाजिद अली शाह का प्रारम्भिक जीवन शाही परिवार के एक साधारण राजकुमार की भाँति आरम्भ हुआ था। उसने फारसी की प्रारम्भिक शिक्षा लेने के अतिरिक्त घुड़सवारी और निशाने बाजी का भी प्रशिक्षण प्राप्त किया था। उसकी शिक्षा दीक्षा के लिए उस समय के एक योग्य विद्वान कवि इमदाद हुसैन को प्रशिक्षक नियुक्त किया गया था। इस तथ्य का उद्‌घाटन स्वयं वाजिद अली शाह ने अपनी फारसी भाषा की पुस्तक "महलखाना शाही" में किया है जिसकी पुष्टि अन्य समकालिक लेखकों ने भी की है जिनमें सैयद अमीर अली खान तथा कमालुद्दीन हैदर आदि प्रमुख हैं। बाल्य काल से ही वाजिद अली शाह ने श्रृंगारिक काव्य रचनाओं का सृजन करना प्रारम्भ कर दिया था। उत्तरोत्तर उसका काव्य चिन्तन शीलता का रूप धारण करने लगा। वाजिद अली शाह को बचपन से ही नाच गाने का बेहद शौक था। संगीत के प्रति रुझान उसकी स्वाभाविक और जन्मजात प्रकृति थी। यहाँ तक कि वह अपना सबक भी ताल के साथ याद करता था।

उस समय के दूषित सामाजिक वातावरण के कारण अल्पायु में ही वाजिद अली शाह का स्त्रियों के प्रति आकर्षण सीमाएं लांघने लगा था। यही वजह थी कि पन्द्रह वर्ष की छोटी सी उम्र में ही माँ-बाप ने उसका विवाह कर देना उचित समझा। कई प्रस्तावों के बाद अन्ततः नवाब अली खान की पुत्री के साथ विवाह तय हुआ। विवाह की प्रारम्भिक रस्में (माझे की रस्म) १५ शाबान उल मुअज्जम १२५३ हिजरी तदनुसार १४, नवम्बर १८३७ ई० को सम्पन्न हुई। इस अवधि में एक तो होने वाली दुल्हन की

चची का स्वर्गवास हो गया और दूसरे वाजिद अली शाह के परिवार में असवर अली खान् नासिरुद्दौला बहादुर खल्फ़ अकबर हजरत फिरदौस मंजिल और वाजिद बुज़र्गवार मुमताजुद्दौला बहादुर का देहान्त हो जाने के कारण विवाह दो महीने के लिए टाल दिया गया। इस प्रकार जनवरी १८३८ ई० में वाजिद अली शाह का विवाह समारोह अत्यन्त सादे ढंग से सम्पन्न हुआ। वाजिद अली शाह के विवाह की प्रारम्भिक रस्में और विवाह के संबध में प्राप्त तिथियाँ संदिग्धात्मक प्रतीत होती हैं क्योंकि वाजिद अली शाह के विवाह के पाँच माह बाद ही उसके दादा मुहम्मद अली शाह को लखनऊ की बादशाहत मिली थी और यह तिथि ८ जुलाई, १८३७ ई० प्राप्त होती है जिस पर सभी इतिहासकार एक मत हैं। इस प्रकार अवश्य ही १८३६ ई० में प्रारम्भिक रस्में और जनवरी १८३७ ई० में विवाह की रस्म सम्पन्न हुई होगी। वाजिद अली शाह ने अपनी पुस्तक परीखाना में विवाह के पाँच माह बाद अपने दादा को लखनऊ की बादशाहत मिलने का वर्णन किया है। विवाह के उपरान्त वाजिद अली शाह की दुल्हन को "आज़म बहू" के नाम से पुकारा जाने लगा।

वाजिद अली शाह के विवाह के पाँच माह बीत जाने के बाद अवध के तत्कालीन बादशाह नवाब नसीरुद्दीन हैदर बहादुर जन्नत सिधार गये। ७ जुलाई, १८३७ ई० को बादशाह नवाब नसीरुद्दीन हैदर को जहर देकर मार दिया गया। बादशाह का कोई मान्य वारिस न होने के कारण एक संघर्षपूर्ण स्थिति के बाद वाजिद अली शाह के दादा मुहम्मद अली नसीरद्दौला बहादुर ८ जुलाई, १८३७ ई० को अवध के बादशाह घोषित हुए। बादशाहत हासिल करने की संघर्षपूर्ण स्थिति में १५ वर्षीय वाजिद अली शाह भी मारकाट के माहौल में अपने दादा के साथ उपस्थित रहा था। मुहम्मद अली शाह ने बादशाह बनने के उपरान्त हर किसी को उसकी स्थिति के अनुसार पुरस्कृत किया। वाजिद अली शाह के पिता अमजद अली शाह को उत्तराधिकारी घोषित किया गया लेकिन वाजिद अली शाह और उसकी पत्नी को कोई पुरस्कार न मिल सका।

वाजिद अली शाह लिखता है :

> **..."मेरी शादी होकर अभी पाँच माह गुज़रे थे कि नसीरुद्दीन हैदर बहादुर ने इस दुनियाऐ फ़ानी से मुँह मोड़ के आलमे बक़ा की राह ली। इसके बाद मेरे दादा नसीरुद्दौला बहादुर फिरदोस मंज़िल के तख़्त नशीन होकर एनाने हुकूमत संभाली और हर शख़्स को उसके रुतबे के मुताबिक़ इनामो ख़िताब मरहमत फ़रमाया और मेरे वालिदे मुहतरम हज़रत जन्नत मकां को वली अहद का ख़िलत सरफ़राज़ फ़रमाया। हर छोटे बड़े की माकूल तनख़्वाहों से इज़्ज़त बढ़ाई लेकिन मुझे और मेरी ज़ौजा को अपनी इनायत से मुस्तफ़ीद न फ़रमाया।" (परीखाना)**

वाजिद अली शाह को बादशाह की ओर से कोई ख़िताब व पुरस्कार न मिला तो भी वाजिद अली शाह को कोई गिला न हुआ। वह यह सोचकर ही खुश रहा कि

शायद उसे इसी लिए कुछ नहीं दिया गया क्योंकि उसके पिता अमजद अली शाह को उत्तराधिकारी घोषित किया गया है और उसके बाद सल्तनत के तख़्त का वारिस स्वयं वाजिद अली शाह को ही होना है। वाजिद अली शाह के पिता और अवध के उत्तराधिकारी अमजद अली शाह ने अपने पुत्र की ऐसी स्थिति को देखते हुए अपनी जेब से वाजिद अली शाह को पांच सौ रुपया प्रतिमाह और उसकी पत्नी आज़म बहू के लिए चार सौ रुपया माहवार धन देने की घोषणा कर दी थी।

वाजिद अली शाह ने इस स्थिति का उल्लेख करते हुए स्वयं भी लिखा है :—

"... मेरा मुशाहिरा मुकर्रर न होने की असल वजह यह थी कि हजरत फिरदोस मंजिल मग़फ़ूर बड़े आक़िल और नेक आदमी थे। इन्होंने यह सोचा कि हजरत जन्नत मकां के बाद मैं ही रियासत को संभालने का अहल हूँ। ग़ालिबन इसी वजह से उन्होंने अपनी तख़्त नशीनी के वक्त मुझे अपना मुरीदे इनायत बनाना पसन्द न किया। बस यही एक बात मेरी समझ में आती है।

यह हाल देखकर मेरे वालिद माजिद वली अहद बहादुर सुरैयाजाह हजरत जन्नत मकां ने अपनी जेबे ख़ास से मेरा पाँच सौ रुपया और मेरी बीबी का चार सौ रुपया महीना वज़ीफा मुक़र्रर फ़रमाया इस ख़्याल से कि मैं कहीं अफसुर्दा खातिर न हो जाऊँ।"

(परीखाना)

एक वर्ष बीत जाने के बाद जब वाजिद अली शाह और उसकी बेगम नवाब आजम बहू साहिबा को पुत्र रत्न की प्राप्ति हुई तब उसके दादा को अत्यन्त प्रसन्नता हुई। इस खुशी के अवसर पर उसको "नाजिमुद्दौला फखरुल मुल्क मुहम्मद वाजिद अली खां सूलते जंग" का खिताब दिया गया और उसके पुत्र को "मिर्जा नौशेरवां कद्र बहादुर" के नाम से पुकारा गया। कुछ ही माह के अन्तराल पर वाजिद अली शाह का खिताब बदलकर "मिर्जा खुर्शीद हशमत वाजिद अली" कर दिया गया है।

वाजिद अली शाह लिखता है :—

"...वालिद माजिद हजरत जन्नत मकां की वली अहदी का जमाना गुजर कर एक साल हुआ। इस अस्ना में मेरे यहाँ नवाब आजम बहू साहिबा के बत्न से एक फ़रजन्द अर्जमन्द तवल्लुद हुआ जिसका नाम मिर्जा नौशेरवां क़द्र बहादुर है। मेरे जद्दे आला हजरत फ़िरदौस मंजिल इस ख़बरे फरहद असर को फ़रमा कर बहुत खुश हुए। इस ख़ुशी में मुझे आला ख़िलत इनायत किया और "नाजिमुद्दौला फखरुल मुल्क मुहम्मद वाजिद अली खां बहादुर सूलते जंग" के खिताब दिए और मेरे फरजन्द को मिर्जा नौशेरवां क़द्र बहादुर के नाम से मुलक्क़िब किया।

मेरे फरजन्द दिलबन्द को चूँकि मिर्ज़ा नौशेरवां क़द्र बहादुर का ख़िताब मिला था इसलिए इसके दो तीन माह बाद मेरा ख़िताब बदलकर "मिर्ज़ा ख़ुर्शीद हशमत वाजिद अली" के नाम से मुखातिब फरमाया **(परीखाना)**

"जुबदत-उल-क़वाइफ़" में दोबारा प्रदान की गई इस उपाधि का वर्णन मिलता है, इस फारसी पाण्डुलिपि के अनुसार यह खिताब 'खुर्शीद हश्मत मिर्जा मुहम्मद वाजिद अली बहादुर' दिया गया था।

वाजिद अली शाह का दूसरा पुत्र १२५५ हिजरी में महले साबका के गर्भ से उत्पन्न हुआ जिसका नाम उसके पिता ने मिर्जा फलक कद्र बहादुर रखा। वाजिद अली शाह लिखता है :—

"...मिर्ज़ा नौशेरवां क़द्र बहादुर के पैदा होने के बाद १२५५ हिजरी में फरजन्द-ए दोयम महले साबका के बत्न से तवल्लुद हुआ जिसका नाम मेरे जद्दे अमजद ने मिर्ज़ा फलक क़द्र बहादुर तजवीज फ़रमाया। इस वक्त मेरी उम्र १७ वर्ष थी।" **(परीखाना)**

वाजिद अली शाह ने अपनी १७ वर्ष की आयु में ही औरतों के प्रति अपनी हविश को पूरा करने के लिए योजनाबद्ध रूप से कार्य प्रारम्भ कर दिया था परन्तु इस कार्य में ऊँच-नीच का भय उसे अपने माता-पिता की ओर से सदैव बना रहा। इसी क्रम में संगीत और शायरी के प्रति भी उसका रुझान बढ़ता ही गया। उसे केवल वे ही औरतें और सेविकाएं प्रिय होती थीं जिन्हें संगीत का ज्ञान हो अथवा जो संगीत के प्रति रुचि रखते हुए उसे सीखने का प्रयास करती हों। अट्ठारह वर्ष की आयु में उसने गजलों के दो दीवान और तीन मसनवियों की रचना की थी। वाजिद अली शाह लिखता है :—

"...यह वाक़या उस वक्त का है जब मेरी उम्र सिर्फ १८ वर्ष की थी। इसी जमाने में मुझे फ़ने शेर का शौक हुआ। ग़ज़लों के दो दीवान मुरत्तिब किए और तीन मसनवियाँ मौज़ू कीं।"

(परीखाना)

वाजिद अली शाह जब औरतों के इश्क़ व शेरो शायरी आदि में लिप्त था उन्हीं दिनों तीसरा पुत्र मिर्जा केवान कद्र बहादुर उसकी पत्नी के गर्भ से उत्पन्न हुआ जिस पर उसके पिता को काफी प्रसन्नता हुई। यही पुत्र बाद में वाजिद अली शाह के प्रारम्भिक राज्यकाल में उत्तराधिकारी घोषित किया गया था। वाजिद अली शाह लिखता है :—

"...मेरे महल के बत्न से इसी जमाने में मेरा फ़रजन्द सोम तवल्लुद हुआ। मेरे जद्दो अमजद हजरत फिरदोस मंजिल ने देखा तो बहुत मसरूर हुए और मिर्जा केवान क़द्र खिताब मरहमत फ़रमाया।"

(परीखाना)

वाजिद अली शाह की रंगरेलियाँ बढ़ती ही जा रही थीं। एक के बाद एक औरत जिन्दगी में आती और कुछ दिनों तक उसकी हविश में रहती और फिर कोई दूसरी औरत पहले वाली औरत का स्थान ले लेती। जो भी औरत वाजिद अली शाह के जीवन में आती उसे पूरा संरक्षण प्रदान करने का उचित प्रवन्ध उसके द्वारा किया जाता था। वाजिद अली शाह जब उन्नीस वर्ष का हुआ तो उसकी पत्नी के गर्भ से एक पुत्री उत्पन्न हुई जिसका नाम मुर्तजा बेगम रखा गया। लेकिन दुर्भाग्य से चालीस दिन जीवित रहने के उपरान्त उसकी मृत्यु हो गई। इस घटना के कुछ ही दिनों के बाद वाजिद अली शाह के दादा बादशाह मुहम्मद अली शाह का निधन हो गया और वाजिद अली शाह के पिता हजरत सुरैया जाह नवाव अमजद अली शाह अवध राज्य के बादशाह बने। वाजिद अली शाह लिखता है :—

> **"...जब मेरी उम्र उन्नीस बरस की हुई, मेरी ज़ौजा के बत्न से पहली लड़की पैदा हुई जिसका नाम मुर्तज़ा बेगम तजवीज़ किया गया था लेकिन ख़ुदा की मर्ज़ी ही ऐसी थी कि वह सिर्फ चालीस दिन जी कर रिहलत कर गई। इन्हीं दिनों की बात है कि जनाब क़िवला वालिद साहिब हज़रत सुरैया जाह अमजद अली शाह तख़्त नशीने सल्तनत हुए...।"** (परीखाना)

इस अवधि में नवाव निशात महल के गर्भ से मुर्शिद जादा नाम का पुत्र उत्पन्न हुआ। अमजद अली शाह ने बच्चे की मां को खिलत तहनियत और एक नथ भेंट की तथा वाजिद अली शाह के पुत्र को "मिर्जा सिपहर कद्र" का खिताब दिया। नवाव सुलेमान साहिवा से वाजिद अली शाह को पुत्री की प्राप्ति हुई जिसे अमजद अली शाह ने सिपहर आरा कुबरा बेगम का खिताब दिया। वाजिद अली शाह लिखता है :—

> **"...नवाब निशात महल साहिबा के बत्न से मुर्शिद जादा तवल्लुद हुए उसके दादा साहिब ने उसकी वालदा को ख़िलत तहनियत और नथ इनायत फ़रमायी और मेरे फरज़न्द को मिर्जा सिपहर कद्र ख़िताब इनायत किया। नवाब सुलेमान महल साहिबा से लड़की पैदा हुई इसको इसके दादा साहिबा ने सिपहर आरा कुबरा बेगम के ख़िताब से मुमताज़ फ़रमाया।** (परीखाना)

वाजिद अली शाह की वहन का विवाह उसके चचेरे भाई सरफराज़ के साथ हुआ था। इनके सन्तान तो उत्पन्न होती परन्तु दुर्भाग्यवश वह जीवित न रह पाती थी। यही कारण था कि वाजिद अली शाह की पुत्री सिपहर आरा कुबरा बेगम को मलिका किश्वर की राय पर अमजद अली शाह ने उन लोगों को गोद दे दिया। उस बच्ची की परवरिश की सारी जिम्मेदारियाँ उन्हीं लोगों को दे दीं। कभी-कभी उस बच्ची को वाजिद अली शाह के घर लाया जाता और एक रात के बाद अगले दिन उसे वापस ले जाया जाता था। पुत्री का इस प्रकार नज़रों से दूर रहना वाजिद अली शाह और बच्ची की माँ सुलेमान महल साहिबा को अच्छा न लगता था। इस बच्ची के वियोग में

वाजिद अली शाह कभी-कभी तो बहुत परेशान हो जाया करता था। अपने माता-पिता की जैसी इच्छा थी उसके विरुद्ध भी वह कुछ नहीं कर सकता था। उनकी हर बात को स्वीकार करना और मानना वह अपना फर्ज समझता था, उसको अमल करता था। इस प्रकार वाजिद अली शाह के चरित्र का यह पक्ष स्पष्ट होता है कि माता-पिता की कठोर से कठोर आज्ञाओं का उल्लंघन करना वह अनुचित समझता था। इस संदर्भ में वह लिखता है :—

> **"...बच्ची की जुदाई में बाज वक्त मैं परेशान सा हो जाता था लेकिन मेरे वाल्देन की मर्जी ही ऐसी थी। मैं क्या कर सकता था उनकी अताअत बहरहाल मुझ पर फ़र्ज थी वह जो कहें उसकी तामील मुझ पर लाजिम थी।"** (परीखाना)

वाजिद अली शाह को कुछ समय बाद नवाब खास महल साहिबा के गर्भ से एक पुत्र की प्राप्ति हुई। अमजद अली शाह ने इस खुशी में ग्यारह तोपों की सलामी करवायी, विशेष लोगों द्वारा मुबारक बाद दिये गये और एक विशेष महफिल का आयोजन किया गया। इस महफिल में तरह-तरह की पोशाकों से सजधज कर परियाँ उपस्थित हुईं। यह उत्सव ईद के त्यौहार की तरह धूम-धाम से मनाया गया। इस पुत्र को "मिर्जा बेदार बख़्त" का खिताब दिया गया। इसकी परवरिश बहुत रुचि के साथ अन्नाओं द्वारा करवायी जाती रही।

कुछ अवधि के उपरान्त एक सेविका फर्खुन्दा खानम से वाजिद अली शाह की पुत्री ने जन्म लिया जिसे अमजद अली शाह ने अपनी स्वीकृति प्रदान करते हुए उसको "शम्स आरा बेगम साहिबा" का खिताब दिया परन्तु फर्खुन्दा खानम साहिबा को महल का स्तर न मिल सका।

इज्जत परी के गर्भ से वाजिद अली शाह की एक पुत्री का जन्म हुआ। अमजद अली शाह ने उसका नाम मेहर आरा बेगम रखा। मिर्जा फरीदो कद्र बहादुर अपनी बहन मेहर आरा बेगम से केवल दो रोज छोटे थे।

माशूक परी के परीखाने में प्रवेश पाने के तीन माह बाद ही वाजिद अली शाह को सूचना मिली कि वह गर्भवती होने वाली है। इस खबर को सुनते ही वाजिद अली शाह ने खुदा का शुक्रिया अदा करते हुए उसे महल का स्तर प्रदान कर दिया। मुहर्रम की नौ तारीख को पुत्र का जन्म हुआ। अमजद अली शाह ने बच्चे को मिर्जा फरीदो कद्र बहादुर का खिताब दिया और वाजिद अली शाह को खिलत भेंट कर उसे प्रसन्न किया। माशूक परी को नवाब माशूक महल साहिबा का खिताब दिया।
वाजिद अली शाह लिखता है :—

> **"...बुज़ुर्गों बरतर की मेहरबानी से माहे मुहर्रम की नौ तारीख को फ़रजन्द फ़र्खुन्दफाल पैदा हुआ। मेरे वालिद माजिद हज़रत जन्नत मकां ने मिर्ज़ा फरीदो क़द्र बहादुर के ख़िताब से सरफ़राज़ फ़रमाया।**

साथ ही मुझे भी एक ख़िलत फ़ाख़रह मरहमत फ़रमाकर मेरी इज्ज़त बढ़ाई और माशूक परी को नवाब माशूक़ महल साहिबा के ख़िताब से नवाज़ा । **(परीखाना)**

एक दिन कासिदे लैलो निहार ने यह खबर वाजिद अली शाह को सुनाई कि महक परी गर्भवती है । वाजिद अली शाह ने उसे उसी समय 'इफ़तेखारुनिसां' का खिताब दिया और परदे में बिठाया । निश्चित अवधि के उपरान्त पुत्र रत्न की प्राप्ति हुई । इस पुत्र के जन्म पर अमजद अली शाह ने विशेष खुशी का इजहार करते हुए ग्यारह तोपों की सलामी दिलवाई और बालक को 'मिर्जा बिरजीस कद्र बहादुर' का खिताब दिया । वाजिद अली शाह ने अपनी ओर से नाच गाने की एक विशेष महफिल सजवाई और नृत्य कला का बहुत सुन्दर प्रदर्शन लोगों के मनोरंजन हेतु प्रस्तुत किया गया । वाजिद अली शाह लिखता है :—

"...इसी मसर्रत आमेज़ ज़माने की बात है कि एक रोज़ क़ासिदे लैलो निहार ने एक गुले ताज़ा की आमद की इत्तिला दी और मैंने कानों में यह ख़बर सुनकर ख़ुदा का शुक्र अदा किया और महक परी को परदे में बिठाया और इसको इफ़तेख़ारुन्निसां के ख़िताब से मुलक़्क़ब किया । अइयामें हमल गुज़रने के बाद लख़्ते जिगर फ़रज़न्द अरजमन्द तवलुल्लद हुआ । इसके दादा ने बेपनाह ख़ुशी का इज़हार किया और ग्यारह तोपों की सलामी दिलवाई और लड़के को मिर्ज़ा बिरजीस क़द्र बहादुर का ख़िताब इनायत किया । इधर मैंने एक जश्न का एहतमाम किया । माहोशन शीरीं अदा ने रक़्सोसुरूर का ख़ूब मज़ाहिरा किया । इस जश्न में हर एक परी ने अपने आपको दुल्हन की तरह सजाया । जब परियां नाचती थीं तो उनकी एक-एक गत पर वाह-वाह की आवाज़ बुलन्द होती थी ।"

दिल को खुश कर देने वाला एक समाचार वाजिद अली शाह को फिर मिला कि फजा हबशन गर्भवती है । वाजिद अली शाह ने दरगाह-ए बारी ताला में शुक्रिया अदा किया और फजा हबशन को पर्दे में बैठा दिया । इससे पुत्री उत्पन्न हुई जिसका नाम अमजद अली शाह ने जहांआरा बेगम साहिबा रखा ।

इसी मध्य हूर परी से भी एक पुत्र उत्पन्न हुआ मगर वह केवल चालीस दिन ही जीवित रह सका उसे वाजिद अली शाह ने खिलत मातम देकर नाच गाने की आज्ञा प्रदान कर दी ।

अचानक ही वाजिद अली शाह पर दुखः आ पड़ा । उसे खबर दी गई कि उसके पिता और अवध के बादशाह अमजद अली शाह का स्वर्गवास हो गया है । अपने पिता से उसे बेहद लगाव था । वाजिद अली शाह उस दिन बहुत रोया और दुखः की पीड़ा से अपने होशोहवास खोने लगा । वह क्या सारा लखनऊ ही इस नेकदिल बादशाह की

मौत से गमगीन हो गया था। वाजिद अली शाह इस वक्त के हालात के बारे में लिखता है :—

"...जिस वक्त मेरे वालिद हज़रत जन्नत मकां राहिये मुल्के बक़ा हुए इस जान काहे ग़म से दुनिया अंधेरी हो गयी। दस्ते आम से तमाम मुलाज़मीन ने दामने सब्र पाश कर डाला। गुलज़ार लखनऊ जो दर हक़ीक़त बागेइरम को भी शर्माता है, गुलज़ारे ख़िज़ां रसीदा मालूम होने लगा। तेवरे राहत आश्याने दिल से रुख़सत हो गया। आहवान आराम इन्सानों के हमें जान रम कर गये। सदफ चश्म अश्कों के मोतियों से पुर हो गये। हर सीने से दस्ते मातम की जर्बें पड़ने लगीं। दौरे आह से ज़ेरे आसमान एक और नया आसमान उफ़्तादा हो गया। अश्कों का सैलाब तूफाने नह की याद ताज़ा कर रहा था। ख़ासकर यह बन्दा जो जन्नत मकां से बेहद मोहब्बत रखता था उनकी जुदाई का सदमा बर्दाश्त करने की ताब न रखता था।" (परीख़ाना)

१३ फरवरी, १८४७ ईसवी की सायं लगभग पांच बजे अमजद अली शाह की मृत्यु के उपरान्त उसी दिन रात में नौ बजे के लगभग वाजिद अली शाह को अवध की बादशाहत का तख्त मिलने का अवसर मिला। इस प्रकार २६ वर्ष की अवस्था में ही वाजिद अली शाह अवध का बादशाह बन गया था। इस मौके पर उसने "अबूल मुजफ्फर नसरुद्दीन सिकन्दर जाह बादशाहे आदिल कैसर जमां सुलताने आलम वाजिद अली शाह बहादुर बादशाह" का खिताब ग्रहण किया।

प्रारम्भ से ही राज्य कार्य में उसने अत्यधिक रुचि ली और प्रशासन के हर क्षेत्र में क्रान्तिकारी परिवर्तन लाने का प्रयास किया परन्तु अंग्रेजों द्वारा फैलाए कुचक्रों के जाल को छांटने में असमर्थ रहा और इसी उलझन में बीमार हो गया। यही नहीं वाजिद अली शाह को बिल्कुल नाकारा बनाने के लिए हकीमों द्वारा गम्भीर रोग की चेतावनी दी गई। मानसिक रूप से वह अपने आपको शारीरिक रोगी समझने लगा। वाजिद अली शाह ने स्वयं भी लिखा है :—

एक मरज जाता रहा तो दूसरा पैदा हुआ।
क़ल्ब के हिलने का मुझको आरजा पैदा हुआ॥

इसी मध्य वाजिद अली शाह को एक और दुख मिला कि माहरुख नन्हीं बेगम का देहान्त हो गया। ऐसी सूरत में धैर्य कर लेने के अलावा और कोई उपाय भी न था। इस घटना के कुछ ही दिनों बाद जैबुनिसा खानम की तपैदिक के रोग से मृत्यु हो गई। इसकी बेटी जहांआरा बेगम अभी छः मास की छोटी बच्ची ही थी। वाजिद अली शाह ने इस अबोध बालिका का लालन-पालन अपनी माता यानी बालिका की दादी के सुपुर्द कर दिया, जहां उसको उचित प्रकार रखा गया। कुछ ही रोज के बाद नवाब

महल साहिबा के गर्भ से एक पुत्र के उत्पन्न होने की खुशखबरी वाजिद अली शाह को सुनने को मिली जिसे ग्यारह तोपों की सलामी दी गयी और बालक का नाम मिर्जा सुल्तान कद्र रखा गया । वाजिद अली शाह इन दिनों बीमार चल रहा था कि इस बालक का एक वर्ष की अल्पायु में ही देहान्त हो गया । वाजिद अली शाह ऐसी हालत में बहुत पीड़ा का अनुभव करने लगा था । इस अवसर पर कर्नल रिचमंड भी मित्रता के भाव के साथ वाजिद अली शाह से मिलने गया था । वाजिद अली शाह लिखता है :—

> **"...मैं इस ज़माने में बीमार था यह ख़बर सुनकर कर्नल रिचमंड साहिब ने बड़े साहिब पुरसे की रस्म अदा करने के लिए लखनऊ आए और अज़राहे दोस्ती व इतहादे क़लबी तसल्ली व दिलासा दिया । मैं खुद अपनी बीमारी के बाइस अफ़सुर्दा था । अब सुल्तान क़द्र के इन्तकाल के ग़म ने अलग आ घेरा । मुझे रात-रात और दिन-दिन न मालूम होता था ।"**

बीमारी से हताश हो रहा वाजिद अली शाह बहुत उदास और चिन्तित रहने लगा था । ऐसी ही स्थिति में एक दिन उसने अपनी माता के सम्मुख अपनी पुत्रियों के विवाह के सम्बन्ध में मन में उठ रही परेशानी को व्यक्त किया । वह भविष्य के प्रति बहुत संशकित हो चला था । विवाह की इसी चिन्ता से मुक्ति के उद्देश्य से अपनी माता से परामर्श कर प्रत्येक के लिए पैगाम भेजा ।

नवाब मासुनुद्दौला बहादुर ने अपने फुफेरे भाई तालिक कदर से नवाब इज्जत महल साहिबा की पुत्री मिर्जा मेहर आरा सुगरा बेगम के साथ सम्पन्न कर दिया । उस समय इस पुत्री की आयु केवल ५ वर्ष की थी ।

मिर्जा अबुल कासिम खां के अपने ममेरे भाई से नवाब सुलेमान महल साहिबा से उत्पन्न पुत्री सिपहर आरा बेगम का रिश्ता निश्चित किया ।

रुकनद्दौला बहादुर पुत्र स्वर्गीय सआदत अली खां के नवासे की निस्बत जहांआरा बेगम से की गयी जिसका लालन पालन उसकी मां की मृत्यु के कारण उसकी दादी कर रही थीं ।

यह सभी रिश्ते शाह मन्जिल जो नदी के किनारे बनी हुई थी, में सम्पन्न किए गये । यहां नृत्य और गायन की सभाएं व कवि सम्मेलन, मुशायरे आदि का याद रखने योग्य आयोजन किया गया था ।

बीमारी के कारण वाजिद अली शाह को बेगमों और अन्य रखी हुई स्त्रियों द्वारा तिरस्कार और उपेक्षा का भागी बनना पड़ा, जिससे वह बहुत ही दुखी रहने लगा था पर इसके दुख का अन्त इतनी जल्दी समाप्त होने वाला ना था । किस्मत में अभी और भी बुरे दिन देखने थे । कुछ रोज बाद उसे सुजाक का घातक रोग हुआ । हालत यहां तक पहुँची कि उसका उठना बैठना भी मुश्किल हो गया । शारीरिक पीड़ा सहन शक्ति से परे होती जा रही थी ।

बीमारी की स्थिति में ही वाजिद अली शाह को एक अन्य दुःखदायी घटना ने विचलित सा कर दिया। उसके पुत्र और उत्तराधिकारी मिर्जा फलक कद्र की तपैदिक के रोग के कारण मृत्यु हो गयी। इस परेशानी को भी खुदा की देन समझकर उसे सहन करना पड़ा। वाजिद अली शाह लिखता है :—

"... ऐन मेरी अलालत के ज़माने में मिर्ज़ा फ़लक क़द्र के इन्तक़ाल की ख़बर वहशत असर सुनी यह फर्जन्द मेरा वली अहद था और मर्ज़ दिक़ में मुबतिला था। आख़िर इसी मर्ज़ में जहाने फ़ानी से रुख़सत की। मैं क्या बताऊँ मर्ज़ की शिद्दत से मेरी कमर झुक गयी। इस अालम में ग़म का आसमान मुझ पर फूट कर गिर पड़ा लेकिन अब सब्रो शुक्र के सिवाय किया भी क्या जाए।" (परीखाना)

मिर्जा फलक कद्र के आठ वर्ष की अल्पायु में ही स्वर्गवास हो जाने के कारण उत्तराधिकारी का पद रिक्त हो गया। शाबान माह की पन्द्रह तारीख जिस दिन इमाम हमाम की पैदाइश हुई थी, १२६५ हिजरी को मिर्जा केवान कद्र बहादुर को उत्तराधिकारी और फरीदो कद्र बहादुर को वाजिद अली शाह ने जनरल घोषित किया। वाजिद अली शाह लिखता है :—

"...मिर्ज़ा फ़लक क़द्र बहादुर जन्नत आशियां ने जब ख़िलअते वली अहेदी को छोड़कर आठ साल की उम्र में बक़ा की राह ली और वली अहदी खाली रही तो मातम दारी के बाद मैंने छोटे भाई मिर्ज़ा केवान क़द्र बहादुर को वली अहेदी का ख़िलअत और नूरचश्म मिर्ज़ा फ़रीदो क़द्र बहादुर को जनरैल का ख़िलअत इनायत किया। जिस दिन यह ख़िलअत दिए गये वह पन्द्रह माहे शाबान यानी इमाम हमाम की पैदाईश का दिन था, खुदा मददगार है।"
(परीखाना)

१२६५ हिजरी के ही जिलहिज्ज महीने की २६ तारीख को वाजिद अली शाह की तीन वर्षीया पुत्री जहांआरा बेगम साहिबा का निधन होने से वाजिद अली शाह को फिर दुःख झेलना पड़ा।

दिन व दिन शारीरिक क्षीणता, परिवार में दुर्घटनाएँ, महल के षडयन्त्र तथा राजनैतिक कुचक्रों में वाजिद अली शाह को यकायक झकझोर कर रख दिया। वह अन्दर से घुटन और धैर्य की परीक्षा से घबराने लगा था और चिन्ताओं ने उसे पलायन वादी प्रवृत्ति की ओर धकेलना प्रारम्भ कर दिया था।

वाजिद अली शाह की तबियत कुछ दिनों से अस्वस्थ चली आ रही थी। पहले तो पेट की शिकायत रही, फिर दिल धड़कने की बीमारी ने शरीर पर अपना अधिकार जमा लिया। इसी रोग ने बढ़ते-बढ़ते अनेक रूप धारण कर लिए। फलतः वाजिद अली शाह मानसिक दोषों का शिकार भी बन बैठा।

इन मानसिक दोषों का प्रभाव यह हुआ कि प्रत्येक व्यक्ति से, यहाँ तक कि कभी-कभी अपनी छाया से भी वह भयभीत होने लगा। दिन-रात उसे ऐसा मालूम होता था कि संसार का हर आदमी उसकी जान का दुश्मन बना हुआ है तथा अवसर पाते ही हानि पहुँचाने की चेष्टा में संलग्न है।

इसी भ्रम के फलस्वरूप वाजिद अली शाह को यह भी आशंका होने लगी कि किसी समय उसका कोई सगा सम्बन्धी ही विष न दे बैठे। इसके निराकरण के लिए उसने यह व्यवस्था करा दी कि जब कभी कोई खाने की वस्तु उसके सामने लाई जाती तो उसमें से हर वस्तु को पहले थोड़ा-थोड़ा कुत्ते को खिलाकर यह देख लिया जाता था कि उसमें कोई हानिकारक पदार्थ तो नहीं मिला है। इसी प्रकार पेय पदार्थों को प्रस्तुत करने से पूर्व थोड़ा सा पेय किसी खिदमतगार को पी लेना आवश्यक था।

बात खाने-पीने तक ही सीमित रही हो, यह नहीं था। मतिभ्रम इतना बढ़ा कि जब रात्रि में वह शयन करने के लिए अपने पलंग पर लेटता तो उसे यह भय होने लगता कि कहीं कमरे की छत ही टूट कर न गिर पड़े। अपनी इस आशंका के कारण वह कभी पलंग पर बैठे हुए तथा कभी जागते हुए ही सम्पूर्ण रात व्यतीत कर दिया करता था।

आमतौर पर वाजिद अली शाह की दिनचर्या इस प्रकार रहा करती थी कि प्रातः दस बजे सोकर उठना, फिर नित्य कर्मों से निवृत होकर लगभग डेढ़ बजे नाश्ता, फिर कुछ देर आराम के वाद खास-खास दरबारियों के साथ मनोविनोद, चार बजे के लगभग दोपहर का भोजन, फिर अन्य रास रंग, रात्रि को बारह बजे दुबारा भोजन और अन्त में दो एक घण्टे नृत्य गायन आदि का आनन्द लेने के उपरान्त दो बजे लगभग शयन। परन्तु जब से इस नई बीमारी का दौर-दौरा आरम्भ हुआ, तब से इस दिनचर्या में व्यतिक्रम उपस्थित हो गया था। न जाने किस प्रकार वाजिद अली शाह के हृदय में यह बात बैठ गई थी कि वह बहुत जल्द इस दुनियाँ से कूच करने वाला है। इन आशंकाओं तथा दुश्चिन्ताओं के कारण उसका तीन मन वजनी भारी शरीर दिनोदिन दुर्बलता को प्राप्त होने लगा। यद्यपि उस दुर्बलता के चिन्ह अन्य लोगों पर प्रकट नहीं होते थे।

वाजिद अली शाह की इस नई बीमारी के कारण सभी आत्मीय एवं दरबारी लोग अत्यन्त चिन्तित हो उठे। लखनऊ के बड़े-बड़े हकीम वैद्य तथा अन्य चिकित्सकों को बुलाया गया। बहुत दिनों तक तो उन लोगों की समझ में कोई बीमारी नहीं आई। एक दिन में ही यदि बीमारी समझ में आ जाती तो इसमें कोई सन्देह नहीं था कि कोई बुद्धिमान मनुष्य उन्हें महामूर्खों की पंक्ति में अग्रिम स्थान देते हुए कदापि नहीं हिचकिचाता। अस्तु, अलग-अलग अनुसंधान करते हुए जब उन्हें एक अर्सा व्यतीत होने को हुआ तब एक दिन सभी सम्मिलित रूप से विचार-विमर्श करने को बैठे। उसके बाद जो संयुक्त रूप से घोषणा की गई, वह एक प्रकार की थी...... "जाने आलम को 'मालीखूलिया' की बीमारी है। हालाँकि इस बीमारी को जड़ से उखाड़ फेंकने में एक

लम्बा अर्सा लगेगा, फिर भी हम सब यह कोशिश करेंगे कि इस तकलीफ को जल्द से जल्द रफा कर दिया जाय। अपनी ओर से हम लोग किसी प्रकार की ढील नहीं आने देंगे।''

चिकित्सकों की संयुक्त घोषणा से वाजिद अली शाह ने चैन की एक साँस ली। उसने सोचा कि कुछ देर से ही सही, मगर बीमारी तो रफा हो ही जाएगी। उन दिनों अवध के शाही खजाने से बेशकीमती कुश्ते कीमियां और रस भस्म बनाने के लिए जो रकम बीमारी खर्च खाते में डाली गई, वह अन्य दिनों की अपेक्षा कई हजार गुना ज्यादा थी। चिकित्सकों का समुदाय उस रकम को प्राप्त कर, बादशाह के स्वास्थ्य सुधार की मंगल कामनायें करता हुआ अपने-अपने स्थान को चला गया।

हकीमों तथा वैद्यों ने वाजिद अली शाह को एक से एक बढ़िया कुश्ते और कीमियां खिलाना आरम्भ कर दिया। कहने को उन औषधियों में ऐसी-ऐसी बेशकीमती चीजें डाली गयी थीं, जो अव्वल तो मिलती ही नहीं हैं और मिलती भी हैं तो बड़े सौभाग्य तथा परिश्रम के बाद ही। परन्तु वह सब दवायें वाजिद अली शाह को कुछ भी फायदा पहुँचाने में सर्वथा असमर्थ सिद्ध हुईं।

इसी बीच एक दिन वाजिद अली शाह की तबियत कुछ ज्यादा खराब हो गई। दिल की धड़कन और घबराहट का दौरा कुछ इस तरह बढ़ा कि बेहोशी के एक हल्के से झटके ने तमाम दरबार एवं हरम में एक अजीबोगरीब बेचैनी उत्पन्न कर दी। कुछ लोगों को तो यहाँ तक भ्रम हो चला कि शायद आलम पनाह इस झटके को बरदाश्त न कर पायेंगे। सब लोगों की शक्ल पर हवाइयां उड़ने लगीं। किसी ने लखलखा सुंघाया तो कोई चेहरे पर गुलाब जल के छींटे मारने लगा। जब छटाक भर नारंगी का शर्बत कंठ के नीचे उतारा गया तो वाजिद अली शाह की तबियत किसी कदर संभलती हुई नजर आने लगी।

वाजिद अली शाह जिस रत्न जड़ित पलंग पर अपने शयन कक्ष में लेटे हुए थे, वह ठोस सोने का बना था। उसे बादशाह के पूर्वज नवाब सआदत अली खाँ ने बनवाया था। पलंग के ऊपर मखमली गद्दे, उसके ऊपर बेशकीमती ईरानी कालीन, उसके ऊपर जरदोजी की रेशमी चमकदार चादर बिछी हुई थी। सिरहाने दो तीन कामदार मखमली तकिये रखे थे। होश आ जाने पर वाजिद अली शाह उन्हीं का सहारा लिए बैठा हुआ था।

वाजिद अली शाह का शयन कक्ष ईरानी कालीन, रेशमी पर्दों तथा झाड़-फानूसों आदि के द्वारा बड़ी खूबसूरती से सजा रहता था। सामने वाली दीवार पर तीन-चार नंगी तस्वीरें लटकी रहती थीं जिन्हें चित्रकार की तूलिका ने ऐसा सजीव बना दिया था कि उन पर दृष्टि पड़ते ही यह भ्रम होने लगता मानो चित्र में बैठी हुई वे सुन्दरियां अपनी ओर से प्रेमालाप करने के हेतु उत्सुकता प्रकट कर रही हैं। एक कोने में ताजा खुशबूदार फलों से भरी हुई टोकरी रखी रहती थी। इत्र की सुगन्धि से सम्पूर्ण स्थान

सुवासित होता रहता था। एक कोने में नक्काशीदार चाँदी का पेचवान, जिसकी चिलम सोने की थी, रखा रहता था। पेचवान की लम्बी नाली वाजिद अली शाह के पलंग तक पहुँची हुई थी। इस प्रकार शयन कक्ष की प्रत्येक वस्तु में एक ऐसा उन्माद भरा आकर्षण था जो प्रत्येक हृदय को पल भर में अपनी ओर खींच लेता था।

यद्यपि इस कमरे में पुरुषों का आना वर्जित था, तथापि जब से आकाये आलम के दुश्मनों की तबियत नासाज रहती चली आ रही थी, तब से खास-खास दरबारियों का वहाँ उपस्थित रहना आवश्यक हो गया था। परन्तु जाने आलम के स्वस्थ होते ही, वे सब एक-एक करके बाहर निकाल दिए गये। इस समय केवल वह ही लोग उस कमरे में उपस्थित थे, जिनके बिना आलम पनाह को एक क्षण व्यतीत करना भी दूभर दिखाई देता था।

"राजा"—वाजिद अली शाह की जुबाने मुबारक से अचानक ही यह मन्द स्वर फूट पड़े। इस शब्द को सुनते ही कमरे में उपस्थित सभी दरबारी चैतन्य हो गये, विशेषकर गुलाम रजा की सावधानी दर्शनीय थी।

"आका हुजूर"—गुलाम रजा ने अपने दोनों हाथ जोड़कर तनिक और आगे की ओर बढ़ते हुए कहा।

जब वाजिद अली शाह को यह ज्ञात हो गया कि गुलाम रजा उनकी बात को ध्यानपूर्वक सुन रहा है, तो उन्होंने बहुत ही धीमे स्वर में फिर इस प्रकार कहा— "रजा तुम देख रहे हो कि मावदौलत की बीमारी किसी कदर कम होने पर नहीं आ रही है।"

"खुदा आपको सलामत रखे आलम पनाह"—गुलाम रजा ने उसी मुद्रा में अत्यन्त शिष्टतापूर्वक उत्तर दिया—"अल्लाह के फजलो करम से जिल्ले सुबहानी बहुत जल्दी ही इस तकलीफ से निजात पा जायेंगे। तमाम तबीबों को यह सख्त हिदायत कर दी गई है कि वह किबलए आलम की तकलीफ को दूर करने में जरूरत से ज्यादा मुस्तैदी के साथ काम लें और पूरी-पूरी कोशिश के साथ अच्छी से अच्छी दवायें तजवीज करें।"

"मगर अब उनके लिए कुछ नहीं हो सकता"—वाजिद अली शाह ने निराश स्वर में फिर कहा—"उन बेचारों की कोई खता नहीं है।" माब्दौलत को अब ये इत्मीनान हो चला है कि यह बीमारी तबीबों से ठीक नहीं हो सकती है इसके लिए तो कोई दूसरा ही इन्तजाम करना होगा।

गुलाम रजा की आँखों में इस बार आँसू छलक आये। ऐसा प्रतीत होता था कि अपने स्वामी की अस्वस्थता एवं निराशा को देखकर उसका हृदय पीड़ा से विदीर्ण हुआ जा रहा है। कुछ देर मौन रहने के उपरान्त उसने गद्‌गद् स्वर में कहना आरम्भ कर दिया—"जब से आलाये हजरत के दुश्मनों की तबीयत खराब हुई है, तब से हम सभी लोग हर बक्त परेशान रहते हैं, न दिन को खाना खाया जाता है और न रात को नींद

ही आती है। अगर कोई तरकीब होती तो हम लोग हुजूरे आलम की तकलीफ को अपने ऊपर लेकर, अपनी जान तक हुजूर के कदमों में निसार कर चुके होते। मगर जहाँ इन्सान की पेश नहीं जाती वहाँ उसे मजबूर होकर खामोश रह जाना पड़ता है। फिर भी गुलाम की अर्ज यह है कि हुजूर किसी नजूमी को जायचा (जन्मपत्री) दिखा लें। बहुत मुमकिन है कि इस वक्त कोई सितारा ही गर्दिश में चल रहा हो।"

वस्तुतः वाजिद अली शाह की बीमारी द्वारा उसमें निराशा उत्पन्न होनी ही थी। हर कदम पर जानबूझ कर पैदा की गई रुकावटों ने ही उसे रोगी बना दिया था। मां के आग्रह पर उसने राज कार्य में रुचि लेना कम कर दिया। दिल को बहलाने के लिए मनोरंजन के कार्यक्रमों तथा नृत्य संगीत कला आदि में व्यस्त रहकर ही वह अपना जीवन व्यतीत करने लगा।

वाजिद अली शाह ने अपना प्रथम उत्तराधिकारी मिर्जा कमर कद्र बहादुर को घोषित किया था परन्तु वह अल्पायु में ही स्वर्ग सिधार गया। "सलातीने अवध" में उल्लेख है कि मिर्जा कमर कद्र मुहम्मद आबिद अली वस्तुतः वाजिद अली शाह का दूसरा पुत्र था। पहले पुत्र की मानसिक विकृता को देखते हुए उसे उत्तराधिकारी बनाना उचित नहीं समझा गया था इसीलिये दूसरे पुत्र को उत्तराधिकारी बनाया गया परन्तु इसे भी तपेदिक का रोग हो गया। इसी मध्य चेचक निकल आने से इसकी हालत दिन व दिन ज्यादा खराब होने लगी। ऐसी स्थिति में २६, मई १८४९ ई० को इसे शाह मंजिल लाया गया जहाँ ४, जून १८४९ ई० को इसकी मृत्यु हो गयी। इस समय उसकी उम्र मात्र १० वर्ष ५ माह ही थी। पहले तो वाजिद अली शाह से यह दुखभरी खबर छुपाने का प्रयास किया गया परन्तु जब वाजिद अली शाह को इस दुखद घटना की जानकारी हुई तो वह अत्यन्त दुखी हुआ।

मिर्जा जाफर के अनुसार सौ सवा सौ वर्षों में अवध के किसी उत्तराधिकारी की मृत्यु नहीं हुई थी इसलिये इस घटना को बहुत ही अशुभ माना गया था। इसके उपरान्त ही कैमा कद्र उत्तराधिकारी घोषित हुआ। संभवतः यह भी अवध के हित में दूसरा अपशकुन ही था क्योंकि कैमा शनीचर तारे का नाम होता है।

वाजिद अली शाह के बड़े पुत्र नौशेर वाँ कद्र का विवाह नवाब इकरामुद्दौला हुसैन खाँ की पुत्री के साथ २८, फरवरी १८५१ ई० को सम्पन्न हुआ। यह विवाह मात्र एक तमाशा ही था क्योंकि यह पुत्र मानसिक रूप से विकृत और बहुत कमज़ोर था। नवाब इकरामुद्दौला ने केवल वाजिद अली शाह का समधी बनने की इज्जत पाने के लिये ही अपनी पुत्री का जीवन बर्बाद कर दिया था। इस अवसर पर नाच गाने में बहुत पैसा बर्बाद किया गया था। मई, १८५१ ई० में ही वाजिद अली शाह के एक अन्य पुत्र सज्जाद अली खाँ का विवाह वाजिद अली शाह की सगी बहन की लड़की के साथ सम्पन्न हुआ। इसी क्रम में १८, जून १८५१ ई० को वाजिद अली शाह की तीसरी लड़की का विवाह शहजादे सुलतान आलम से सम्पन्न हुआ। तैमूरिया खानदान के इस शहजादे के इस विवाह से पूर्व भी कई विवाह हो चुके थे।

तत्कालीन वजीरे आजम सैय्यद अली नकी खाँ की बड़ी लड़की के साथ वाजिद अली शाह का विवाह ७, जून १८५१ ई० को बड़ी धूमधाम के साथ सम्पन्न हुआ। इस नई बेगम को वाजिद अली शाह के उपनाम "अख्तर" के कारण अधिक प्रियता प्रदर्शित करते हुये अख्तर महल का खिताब दिया गया था।

१२, अगस्त १८५१ ई० को वाजिद अली शाह के पिता स्वर्गीय अमजद अली शाह के धर्मगुरू इमामुद्दौला नवाब जफर अली खाँ की हैजा की बीमारी हो जाने से मृत्यु हो गई। यही कारण था कि १७, अक्टूबर १८५१ ई० को उत्तराधिकारी कैंमा कद्र तथा १८, अक्टूबर १८५१ ई० को जनरल फरीदो कद्र वाजिद अली शाह के चौथे पुत्र के विवाह समारोह धूम-धाम से नहीं मनाये गये। कैंमा कद्र का विवाह नवाब सरफराजुद्दौला की पुत्री से हुआ था और फरीदो कद्र का विवाह वाजिद अली शाह की ही चौथी पुत्री से सम्पन्न हुआ था। यह विवाह दूध बचाकर करने की प्रथा के अनुसार मान्य था।

वाजिद अली शाह मात्र जीवन के दिन बिताने के लिए निराश अवस्था में कुचक्रों और षडयन्त्रों के जाल में फँसते हुये भी विलासिता की सामग्री जुटाने में लगा रहा। आखिर वह दिन आ ही गया जब अंग्रेजों के षडयन्त्र सफल हुए और वाजिद अली शाह से अवध की बादशाहत छिन गई। ७, फरवरी १८५६ ई० को अवध के सिंहासन से उसे हटा दिया गया। यद्यपि वाजिद अली शाह ने अपने को निर्दोष सिद्ध करने के सभी उपाय अपनाये परन्तु वह उनमें सफल न हुआ। खून खराबे के बिना ही उसने शान्ति पूर्ण स्थिति में बादशाहत हाथ से निकल जाने दी।

वाजिद अली शाह को लखनऊ से बेहद लगाव था। वह लखनऊ को छोड़ने को तैयार न था। सभी सलाहकार न्याय माँगने के लिए वाजिद अली शाह पर दवाब डाल रहे थे कि वह कलकत्ता और लन्दन जाकर बादशाहत दुबारा पाने के लिए प्रार्थना करे। इन दिनों वाजिद अली शाह अत्यन्त उदास रहने लगा था यहां तक कि उसने बेगमों से मिलना जुलना भी बन्द कर दिया था। मिर्जा सिकन्दर हश्मत, जनाबे आलिया मलका किश्वर और नवाब खास महल आदि सभी की यही राय थी कि लखनऊ छोड़ दिया जाए। १० फरवरी १८५६ ई० को पहली बार ड्योढ़ी पार करके नवाब खास महल पर्दा छोड़कर यही कहने वाजिद अली शाह के पास आयीं। बड़ी परेशानियों के बाद वाजिद अली शाह को लखनऊ छोड़ने की अनुमति प्राप्त हो सकी।

१३, मार्च १८५६ ई० को वाजिद अली शाह बड़े भरे हुए मन से रात के लगभग नौ बजे लखनऊ से विदा हुआ। कानपुर और बनारस होते हुए ६ मई, १८५६ ई० को कलकत्ता के बेलगाछिया स्थान पर पहुँचा। १३ मई को मटिया बुर्ज में अपने स्थायी निवास की भांति प्रवेश किया। यात्रा के दौरान वाजिद अली शाह का स्वास्थ्य इतना ढीला पड़ गया कि लन्दन तक जाने का विचार त्याग देना पड़ा।

१६, जून १८५६ को मलका किश्वर ने जहाज द्वारा लंदन के लिए प्रस्थान किया। जाने से पूर्व वह नवाब खास महल से मिलने गईं जबकि उन दिनों उन दोनों में बोलचाल

बन्द थी। दोनों एक दूसरे से गले से लिपट कर खूब रोयीं। बादशाह ने भी भीगे हुए नेत्रों से उन्हें "खुदा हाफिज" कहते हुए विदा किया। १६, जून को कलकत्ता से चलकर २० अगस्त, १८५६ को सौथेम्पटन बन्दरगाह पहुँची जहाँ उनका भव्य स्वागत किया गया। ३० अगस्त को रेलगाड़ी द्वारा लन्दन रवाना हुई। एक वर्ष तक वहाँ वार्ता चलती रही। इसी दौरान १८५७ के गदर की खबर वहाँ पहुँची और सारी वार्ता बेकार हो गई।

१५ जून १८५७ ई० यानी ७ शव्वाल १२७३ हिजरी को वाजिद अली शाह को फोर्ट विलियम में कैद कर दिया गया। उसके साथ केवल सात-आठ व्यक्तियों को रहने की आज्ञा प्रदान की गई। राज्य बन्दी होते हुए भी वाजिद अली शाह को कोई विशेष सुविधा नहीं दी गई। वाजिद अली शाह के लिए यह नई विपत्ति थी जिसकी कि उसने कभी कल्पना तक न की होगी।

इधर तो वाजिद अली शाह कारागार की यातनाएँ भुगत रहा था और उधर २१ जनवरी, १८५८ ई० विफल और दुखी राजमाता मलका किश्वर ने भारत वापसी के लिए प्रस्थान कर दिया। पेरिस पहुँचते-पहुँचते उनका स्वास्थ्य बहुत खराब हो गया। २४ जनवरी १८५८ ई० को दिन के एक बजे अर्थात् जमादी उस्मानी १२७३ हिजरी को ५४ वर्ष की उम्र में पेरिस में ही मलका किश्वर की मृत्यु हो गयी। जनरल मिर्जा सिकन्दर हश्मत और उत्तराधिकारी को जब लन्दन में यह दुख भरी खबर मिली तो वह तत्काल ही पेरिस आ गये। लन्दन में २ मार्च १८५८ ई० को जनरल मिर्जा सिकन्दर हश्मत की भी मृत्यु हो गई और उन्हें पेरिस लाकर उनकी माँ मलका किश्वर के बगल में दफन कर दिया गया।

७, जुलाई, १८५६ को वाजिद अली शाह को अंग्रेजी सरकार ने कैद से मुक्त कर दिया। "सलातीने अवध" के अनुसार वाजिद अली शाह को ६, जुलाई, दिन शनिवार, १८५६ ई० को मुक्त किया गया था।

सितम्बर माह में उत्तराधिकारी भी अपने सहयोगियों सहित लन्दन से भारत आ गया परन्तु कुछ ही अवधि के उपरान्त उसकी भी मृत्यु हो गयी।

कैद से मुक्ति के उपरान्त वाजिद अली शाह का जीवन घोर निराशा और नीरसता में डूब गया। भाई, उत्तराधिकारी और माँ की मृत्यु हो चुकी थी। लगभग आधा परिवार अवध की क्रान्ति में नष्ट हो गया था। अब न तो सम्मान ही रह गया था न ऐश्वर्य ही। बस उम्र की ढलती अवस्था में औरतों और साहित्यकारों का साथ ही उसका सहारा रह गया था। वाजिद अली शाह सभी सीमाओं को लांघता हुआ इसी में रम गया और जिन्दगी के शेष दिन काटने लगा।

वाजिद अली शाह की मृत्यु ७५ वर्ष की आयु में सन् १८८६ ई० में हुई (वाजिद अली शाह और अवध राज्य का पतन, परिपूर्णानन्द वर्मा-२६७) जब कि "बोस्ताने अवध" के अनुसार १ सितम्बर, १८८७ ई० को वाजिद अली शाह की मृत्यु हुई और उसे

सिब्तेनाबाद के इमामबाड़े (मटियाबुर्ज) में ही दफन किया गया। (वाजिद अली शाह-जी० डी० भटनागर पेज-१५५)। जगदीश सहाय ने "अवध में नवाबी शासन का इतिहास" (पृष्ठ-१९४) में वाजिद अली शाह की मृत्यु २१ सितम्बर, १८८७ ई० उल्लिखित की है। जयगोपाल साकित्र के अनुसार वाजिद अली शाह की मृत्यु २८, सितम्बर सन् १८८७ ई० तद्नुसार ३, मुहर्रम १३०५ हिजरी अर्द्धरात्रि के समय हुई, जबकि इसकी आयु ६७ वर्ष एक माह २३ दिन थी। यही तिथि अधिक उपयुक्त प्रतीत होती है।

सन् १८५९ ई० से लेकर मृत्यु तक वाजिद अली शाह का जीवन विलासिता की लिप्तता में व्यतीत हुआ परन्तु साहित्य के दृष्टिकोण से वाजिद अली शाह ने काफी योगदान किया। इस अवधि में उसने कई पुस्तकें और मसनवियों की रचना की तथा अन्य सम्कालिक साहित्यकारों को प्रोत्साहित किया। वाजिद अली शाह ने अपनी इस विलासिता और उसके कारण को स्वयं भी स्पष्ट करते हुए लिखा है :—

अजब हूँ मैं शायरे खस्ता हाल।
सिवाय मुहब्बत के नहीं कुछ खयाल ।।
इधर की हो दुनिया उधर ग़म नहीं।
क़यामत जभी है कि जब हम नहीं ।।

———

अध्याय—२

उत्तराधिकार से पूर्व अवध का इतिहास

वाजिद अली शाह ने जिस राज परिवार में जन्म लिया था उसका अभ्युदय हुए अभी कोई लम्बी अवधि नहीं बीती थी पर समय और राजनैतिक फेरों के कारण व्यवस्थायें चूर-चूर हो चुकी थीं। यह अवश्य था कि यहाँ एक भिन्न प्रकार की सभ्यता का विकास हो चला था। विशेष तौर पर लखनऊ जो अवध राज्य की राजधानी था, दौलत, ऐयाशी, व्यवहार आदि में अपने सलीके और अनोखे अन्दाज के कारण विशिष्ट महत्व रखने लगा था, परन्तु लखनऊ और अवध का अतीत इतना कायर कभी नहीं रहा जैसा कि अंग्रेजों ने चित्रित किया है। अंग्रेजों ने अवध पर अधिकार करने के लिए जो बहाने ढूंढ़े थे उसमें अवध को मात्र विलासिता का केन्द्र दिखाया था और लखनऊ व अवध की सभ्यता का बहुत ही भ्रामक चित्रण प्रस्तुत किया था। वास्तविकता यह है कि हिन्दुस्तान में पूर्वी सभ्यता और संस्कृति का आखिरी नमूना अवध था। अवध के नवाबी शासन का इतिहास जानने से पूर्व अवध की स्थापना के सम्बन्ध में दिये जाने वाले तर्कों तथा तथ्यों पर दृष्टि डालना आवश्यक है।

'अवध' शब्द का शाब्दिक अर्थ है जिसका वध न हो सके, अर्थात् अवध्य, इसके महत्व को दर्शाता है। इस क्षेत्र का नाम अवध कब से पड़ गया, इस सम्बन्ध में कोई विशेष संतुष्टि करने वाले तथ्य प्राप्त नहीं होते हैं। अवध गजेटियर में अवध शब्द को संस्कृत के "अजुद्ध" शब्द से लिया गया माना है। यहाँ "अजे" शब्द का अर्थ ब्रह्मा के एक नाम से माना गया है। इसी गजेटियर में अयोध्या का अर्थ "प्रतीज्ञा" बताया गया है और चूंकि राजा रामचन्द्र चौदह वर्ष के वनवास की प्रतीज्ञा के पश्चात वापस लौटे थे तभी से यह क्षेत्र अवध कहलाने लगा। डा० बिलसन के अनुसार अवध शब्द का निर्माण क्षत्रियों का युद्ध स्थल होने के कारण "युद्ध" शब्द से हुआ है। इस प्रकार यही सही प्रतीत होता है कि अयोध्या शब्द का अपभ्रंश "अवध" हो गया है। डा० बिलसन का यह मत भी उपयुक्त प्रतीत होता है कि यह क्षेत्र "बैस" तथा "विसैन" क्षत्रियों का युद्ध स्थल रहा है और उनके अधिकांश युद्धों का सूत्रपात सम्भवतः यहीं हुआ। इसीलिए "युद्ध" से "अयोध्या" बन गया और "अयोध्या" से "अवध"। परन्तु डा० बिलसन का यह कथन कि युद्ध से सीधे अवध बन गया, भाषा विज्ञान की दृष्टि से सत्य प्रतीत नहीं होता है। सर्व प्रथम गोस्वामी तुलसीदास ने अवध को अयोध्या के अर्थ में प्रयुक्त किया है। हिन्दी विश्व कोष के अनुसार अवध शब्द का निर्माण अयोध्या से हुआ। ऐतिहासिक दृष्टि से अवलोकन करने पर ऐसा प्रतीत होता है कि अयोध्या शब्द का पालि और प्राकृत भाषाओं में "उज्झह" "अउज्झह" "अवज्झा" के रूप में प्रयोग किया गया और यही शब्द ग्यारहवीं सदी के अन्त तक मुस्लिम

आक्रमणकारियों द्वारा "अयोध्या" तथा "अवध्या" के रूप में उच्चारित किया गया और लोधी वंश के शासन (१४५१-१५२५) में इनके अपभ्रंश "अउध" और "ओध" हो गये। सम्राट अकबर के समय में (सोलवीं शताब्दी) यह शब्द स्पष्ट रूप से अवध तथा औध के रूप में प्रयुक्त होने लगे। सम्राट अकबर ने ही अवध को एक शहर के स्थान पर एक प्रान्त का दर्जा दिया और इसका विस्तार पूर्व में बनारस और बलिया से लेकर पश्चिम में मुरादाबाद, इटावा गाजियाबाद तक, उत्तर में नेपाल की तराई, दक्षिण में कानपुर तथा प्रतापगढ़ तक हो गया था। सत्रहवीं शताब्दी में इस प्रान्त के पश्चिमी भाग पर बगंश पठानों का कब्जा हो गया। अठारहवीं शताब्दी के प्रथम भाग में फरुखाबाद में स्वतन्त्र सत्ता कायम हो गई और अवध के पश्चिम उत्तर भाग पर भी रुहेलखण्ड नामक एक स्वतन्त्र राज्य की स्थापना पठानों ने कर ली। इस प्रकार अवध की पश्चिमी सीमा केवल हरदोई जिले तक रह गई। अठारहवीं शताब्दी के मध्य में अवध के नवाब सफदर जंग ने फरुखाबाद तथा इलाहाबाद का सूबा भी अवध में शामिल कर लिया। परन्तु उसके बाद ही शुजाउद्दौला की बक्सर में पराजय के बाद इलाहाबाद और फतेहपुर अवध से निकल गया और उसी के समय में बनारस, गाजीपुर तथा बलिया भी अवध से निकल गया। अठारहवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में आसिफउद्दौला ने रुहेलखण्ड, इलाहाबाद तथा फतेहपुर को पुनः अवध में मिला लिया। अवध के अपहरण के पूर्व अर्थात् वाजिद अली शाह के समय तक अवध के पूर्व में गोरखपुर, बस्ती, आजमगढ़, जौनपुर और दक्षिण में इलाहाबाद, कड़ा (फतेहपुर), दोआब, पश्चिम में मैनपुरी, कानपुर, रुहेलखण्ड का सम्पूर्ण क्षेत्र अवध से निकलकर अंग्रेजों के अधीन आ गया था।

वाजिद अली शाह के समय में उसके अधिकार क्षेत्र में अवध का क्षेत्रफल तेइस हजार नौ सौ तीस वर्गमील था। दक्षिण पूर्व से उत्तर पश्चिम तक इसकी लम्बाई दो सौ सत्तर मील और उत्तर से दक्षिण तक की चौड़ाई एक सौ साठ मील एवं आबादी मात्र पचास लाख के लगभग रह गयी थी।

अवध की जनता तथा वहाँ की सामान्य स्थिति का वर्णन करते हुए प्रोफेसर एडविन आर्नल्ड कहता है कि वहाँ की आकर्षक स्थिति ही अवध के विलय का कारण बनी। सिकन्दर की योग्यतायें कभी भी ऐतिहासिक रूप न ले पाती यदि दारा की पुत्री सुन्दर न होती, ठीक इसी प्रकार लार्ड डलहौजी अवध पर कदापि आक्रमण न करता यदि अवध धन-धान्य से परिपूर्ण न होता। २० हजार वर्ग मील की उपजाऊ भूमि तथा पश्चिम की तराई का क्षेत्र वनों से भरपूर था। विशाल नदियों के अतिरिक्त छोटी-छोटी नदियों के जाल इत्यादि ऐसी विशेषतायें थीं जिन्होंने वहाँ की धरती को अलौकिकता प्रदान की थी। चीड़, सागौन के वृक्षों के अतिरिक्त लवण, शोरा, सोडा तथा गेहूँ, जौ, बाजरा, गन्ना, कपास, अफीम, धान, नील आदि की खेती के सर्वथा योग्य थी। वहाँ के निवासी ब्राह्मणों की उच्च सन्तति के थे, जिनसे बंगाल की सेना सुसज्जित होती थी तथा शुजाउद्दौला के समय माल गुजारी के रूप में दो करोड़ रुपये प्राप्त होते थे।

यहाँ की उपजाऊ भूमि के २० फिट की गहराई पर जल पाया जाता था, और कुछ स्थानों पर १३ फिट के नीचे जल निकल आता था। इस प्रान्त की मुस्कान सुन्दर हरियाली से होती थी। आम और महुआ के वृक्षों के बहुमूल्य समूह से सुसज्जित था। किनारों के आस पास बाँसों को आरोपित किया गया था जिसमें वायु के चलने पर उनके आपस में टकराने पर अति सुन्दर प्रतीत होता था, उनकी जड़ें इतनी घनी थीं जिन पर कोई आक्रमण नहीं कर सकता था। अंजीर और सन्तरे की सुगन्ध और बाग बगीचों के पुष्पों के झुन्ड अवध में अत्यधिक मात्रा में थे।

एडविन आर्नल्ड उल्लेख करता है कि अवध राज्य मुसलमानी नहीं था, ऐतिहासिक दृष्टि से यह एक हिन्दू राज्य था और केवल मुसलमान राजा इसका अध्यक्ष था जो कि इच्छित आवश्यकताओं की पूर्ति करता था। अवध के वास्तविक एवं अत्यन्त शक्तिशाली स्वामी शिष्ट एवं कुलीन हिन्दू थे जो सम्पूर्ण रूप से मुसलमानों के अधीन नहीं हुए और जब उन्होंने मुगलों को पतित किया तो वह पहले से अधिक स्वतन्त्र रहने लगे। यह जिन्हें ताल्लुकेदार अथवा शिष्ट कुलीन कहा जाता था, पैत्रिक भूमि के स्वामी थे और सदा ही राजकुमारों की भाँति अधिकार अपने राज्य पर लागू करते थे। सैद्धान्तिक रूप से वह नवाब के अधीन थे और उसी को अपनी जागीरों के सम्बन्ध में कर के रूप में कुछ धन दिया करते थे परन्तु वह वास्तव में तभी दिया करते थे जब उन्हें सरलता होती थी एवं उसकी अदायगी में उन्हें कोई लाभ हुआ करता था अन्यथा अदायगी नहीं करते थे।

वह अपनी एक छोटी सी सेना रखते थे और उसी से ही अपने पड़ौसियों से लड़ते थे। यह बदमाशों की टुकड़ियाँ रखते थे जो लूटमार करके उनकी सेवा करते थे। लूटमार की स्थिति इतनी गम्भीर थी कि काश्तकार रात्रि के समय हल चलाकर बीज बोया करते थे। छोटे ताल्लुकेदारों को बड़े ताल्लुकेदार लूटते थे और बड़े ताल्लुकेदार एक दूसरे से संघर्ष करते थे जिससे सम्पूर्ण जनपद उनकी चपेट में आ जाता था। नवाबों के षड्यन्त्र, अंग्रेजों की सहायता और चतुराई के द्वारा इतना धन उस लूटमार में एकत्रित करते थे ताकि वह नृत्यकाओं एवं गायकों आदि पर खर्च कर सकें।

अवध की राजधानी लखनऊ का संस्थापक कौन था, उसकी बुनियाद कब और कैसे पड़ी, उसका नाम यह क्यों पड़ा, इस सम्बन्ध में कोई निश्चित जानकारी उपलब्ध नहीं है परन्तु यहाँ विभिन्न कथाओं के आधार पर लखनऊ की स्थापना का इतिहास ढूंढने का प्रयास किया गया है। प्राप्त सूचनाओं के अनुसार नगर की बुनियाद काफी समय पूर्व ही पड़ गई थी। अयोध्या के राजा रामचन्द्र लंका जीतकर राज्य सिंहासन पर बैठे तो उन्होंने अपने छोटे भाई लक्ष्मण को जो जागीर दी उसमें गोमती नदी के किनारे आकर लक्ष्मण ने निवास किया और उसी के नाम पर यह स्थान लक्ष्मणपुर कहलाया। एक अन्य कथा के अनुसार महाराजा युधिष्ठर के पौते राजा जन्मेजय ने ऋषि मुनियों एवं तपस्वियों को यह क्षेत्र रहने को दिया था जिसमें स्थान-स्थान पर मन्दिर, देव स्थान

और आश्रम बनाये गये और यह सभी भगवान ध्यान में लीन रहने लगे। कुछ समय के बाद इसी क्षेत्र पर हिमालय की तराई की आपस में मिलती जुलती नस्ल की दो जातियों ने अधिकार कर लिया। यह जातियाँ "भर्र" और 'पासी" के नाम से जानी जाती हैं। दस सौ तीस ईसवी में सैयद सालार मसूद गाजी और बारह सौ दो ईसवी में बख्तियार खिलजी का इन्हीं जातियों से युद्ध हुआ था। भर्र और पासियों के अलावा ब्राह्मण और कायस्थ भी इस क्षेत्र में पहले से मौजूद थे। इन्हीं लोगों ने लक्ष्मण के निवास स्थान पर एक छोटा सा शहर बसा लिया जिसका नाम लक्ष्मणपुर ही रहा तथा यह लोग यहाँ अमन चैन से रहने लगे।

सम्राट अकबर से पहले इस बात का कुछ पता नहीं चलता कि लक्ष्मणपुर का नाम अब और कैसे बदलकर लखनऊ हो गया। १५४० ई० में हुमायूं शेरशाह से पराजित होकर जौनपुर से सुल्तानपुर, लखनऊ, पीलीभीत होता हुआ भागा था। इस समय यह उल्लेख मिलता है कि इस शहर के लोगों ने इन्सानी हमदर्दी और अतिथि परायणता के विचार से दल के केवल चार घण्टे के विश्राम में ही दस हजार रुपया और पचास घोड़े भेंट किये थे। यह इस बात का प्रमाण है कि उस समय में भी यहाँ काफी आबादी थी और वे लोग बहुत खुशहाल थे। इसी अवधि में आने वालों में मीनाशाह का परिवार और शाहपीर मुहम्मद भी थे। शाहपीर मुहम्मद ने लक्ष्मण के निवास स्थान जो एक टीले के रूप में परिवर्तित हो चुका था, पर ही निवास किया और वहीं उसका देहान्त हो गया। इसलिये लक्ष्मण टीले को शाहपीर टीला भी कहा जाने लगा। इसी स्थान पर औरंगजेब ने आकर एक बढ़िया मजबूत, खूबसूरत और शानदार मस्जिद बनवाकर खड़ी कर दी थी। अकबर ने अवध प्रान्त के सूबेदार या शासक की राजधानी लखनऊ ही निश्चित की थी। सर्वप्रथम शेख रहीम नामक मनसबदार को यह जागीर मिली और वे बड़ी शान शौकत व धूम-धाम के साथ लखनऊ आकर रहने लगे। इन्होंने लक्ष्मण टीले या मुहम्मद टीले को अपना निवास स्थान बनाकर पंच मौहल्ला और शेखान दरवाजा बनवाया और वे लखनऊ में ही नादान महल नामक मकबरे में दफन हुए। शेख अब्दुल रहीम ने भी मच्छी भवन नामक एक मशहूर इमारत बनबाई। जिस शिल्पी ने इसे बनाया वह लखना नामक एक अहीर था। कहा जाता है कि उसी शिल्पी के नाम से शहर का नाम लखनऊ पड़ा। कुछ लोगों का यह विचार है कि लक्ष्मणपुर का अपभ्रंश होते-होते लखनऊ शब्द बन गया। परन्तु यह भी सत्य है कि इस बस्ती को शेख अब्दुल रहीम के बाद ही लखनऊ नाम से पुकारा गया। अब्दुल रहीम के खानदान को ही आगे चलकर शेखजादों के नाम से जाना गया। इसके बाद पठानों के परिवार जो रामनगर के पठान मशहूर हुए, आबादी के दक्षिण में आकर बस गये। "शुयूख नबहरा" के नाम से जाना जाने वाला शेखों का एक गिरोह पूरब में आकर बस गया। इन सब पर शेखजादों का परिवार ही हावी रहा। इसी परिवार में कई व्यक्ति अवध प्रान्त के सूबेदार मुकर्रर हो गये थे। उनके मच्छी भवन की मजबूती की इतनी शोहरत थी कि जनता की जबान पर था "जिसका मच्छी भवन उसका लखनऊ।"

इसके अतिरिक्त एक नई बात और भी मिलती है—नखलऊ उच्चारण की। आज भी देहातों में लखनऊ का उच्चारण नखलऊ ही किया जाता है। उर्दू में नखल का अर्थ है—हराभरा पेड़ अथवा बगीचा। ऐसा कहना असम्भव नहीं है कि मुसलमानों ने आरम्भ में लखनऊ के आस पास हरे भरे बगीचों को देखकर इसे नखल अथवा नखलऊ कहना शुरू किया फिर धीरे-धीरे यह नखल शब्द उच्चारण की सुविधा के अनुसार नखलक हो गया और फिर नखलक से नखलऊ हो गया। कुछ समय बाद नखलऊ के "न" में परिवर्तन "ल" में होकर लखनऊ कहा जाने लगा।

अकबर के समय से यहाँ की आबादी बढ़ने लगी थी और प्रायः शेखजादों में से ही सूबेदार नियुक्त किये जाते थे। यहाँ के शासन के लिए प्रायः दिल्ली के प्रतिष्ठित व्यक्ति नियुक्त किये जाते थे जो अपने घर पर ही बैठे रहते तथा कभी-कभी ही मालगुजारी की वसूली के लिए दौरा करते। इस कारण यहाँ की तरक्की की कोई गुंजाइश नहीं थी, फिर भी शेखजादों के कारण लखनऊ को काफी लाभ हुआ। अकबर का ध्यान लखनऊ पर भी था। यह उल्लेख मिलता है कि उसने यहाँ के ब्राह्मणों को बाजपेय यज्ञ के लिए एक लाख रुपये दिये थे।

नूर उद्दीन जहाँगीर ने अपने युवराजत्व काल में ही मच्छी भवन से पश्चिम की ओर मिर्जा भवन की बुनियाद डाली थी। अकबर के समय यहाँ का सूबेदार जवाहर खाँ था जो दिल्ली में ही रहता था। उसका नायब काजी महमूद बिलग्रामी लखनऊ में आया और उसी ने अकबरी दरवाजा बनवाया तथा उसी ने लखनऊ को एक महत्वपूर्ण मण्डी बनाने का सफल प्रयास किया। इसी समय योरोपियन लोगों का आना जाना भी प्रारम्भ हो गया। एक फ्राँसीसी व्यापारी ने अस्तबल बनवाकर घोड़ों के व्यापार में अत्यधिक धन कमाया और कई आलीशान मकान बनवा लिए। उसी स्थान को फिरंगी महल के नाम से जाना गया। औरंगजेब के समय में मुल्ला निजामुद्दीन के आकर बसने से लखनऊ ज्ञान विज्ञान का केन्द्र और शरण स्थल बन गया। इस ज्ञान पीठ की ऐसी प्रगति हुई कि मुल्ला निजामुद्दीन का तैयार किया हुआ पाठ्यक्रम जो "सिलसिला-ए-निजामियां" कहलाता है, एशिया भर के पाठ्यक्रम में शामिल हुआ। इसमें ज्ञान सम्बन्धी विशेषताओं के साथ कुछ बरकतें भी शामिल समझी जाती हैं। बहुत दूर-दूर से विद्यार्थी लखनऊ में आकर शिक्षा ग्रहण करते थे। शाहजहाँ के शासन काल में १६३१ ई० में योरोपीय पर्यटक लैकेट ने भारत भ्रमण के दौरान लखनऊ का जिक्र किया है— "यह शानदार मण्डी है"। मुहम्मद शाह रंगीले के काल में सूबेदार गिरधा नागा ने विद्रोह किया परन्तु बाद में उसे ही सूबेदारी का खिलत दिया गया। इसका काल गुजरने पर भी लखनऊ में शेखजादों का ही दबदबा बना रहा। कोई कितनी ही ऊँची सनद लेकर आया हो कितना ही शक्तिशाली और दुस्साहसी क्यों न हो, शेखजादों के हल्के में कदम नहीं रखता था। शेखजादों ने मच्छी भवन के पास ही शेखान दरवाजा बनवाया। शेखान दरवाजे के मेहराब द्वार (फाटक) से गुजर कर ही शेखजादों के इलाके में प्रवेश करना पड़ता था। इस दरवाजे पर शेखजादों ने नंगी तलवार लटका रखी थीं

और सभी प्रवेश करने वालों को हुक्म था कि उस नंगी तलवार को झुककर सलाम करने के बाद ही प्रवेश करें। इस हुक्म की तामील सभी करते थे। जो शासक दिल्ली से नियुक्त होकर आते थे और शेखों से मिलने जाते तो उन्हें भी जबरदस्ती उस तलवार के आगे सिर झुका देना पड़ता था।

नवाबों के शासन का सूत्रपात १७३२ ई० से नवाब सआदत खां बुरहान-उल-मुल्क के दिल्ली दरबार से अवध का सूबेदार नियुक्त होने के साथ हुआ। अन्य बादशाहों तथा सूबेदारों की तरह बुरहानुल मुल्क को न तो अच्छे महलों में रहने का शौक था और न उन्हें इश्कबाजी तथा विलासिता का जीवन पसन्द था। वह छ: बर्ष लखनऊ में रहने के उपरान्त नादिर शाह के हमले के समय दिल्ली रवाना हो गया। सआदत खां के बाद उसके दामाद अबुलमन्सूर अली खां "सफदर जंग" को अवध के सूबेदारी की खिलत मिली। सफदर जंग की बहादुरी के डंके पूरे हिन्दोस्तान में पिटे। सफदर जंग के बेटे नवाब शुजाउद्दौला ने अंग्रेजों से परास्त होने के पश्चात अपनी राजधानी फैजाबाद बना ली। फैजाबाद फारसी के फैज + आबाद से बना है जिसका मतलब है लाभ अथवा उपहार की आबादी। फैजाबाद शहर को शानो शौकत तथा खूबसूरती का शहर बनाने का प्रयास किया परन्तु उसके पुत्र आसिफुद्दौला ने फिर अवध की राजधानी लखनऊ को ही बना कर उसका निर्माण सुचारु रूप से प्रारम्भ किया। आसिफुद्दौला के बारे में मशहूर था कि "जिसको न दे मौला, उसे दे आसफुद्दौला"। आसफुद्दौला के बाद मिर्जा वजीर अली (नवाब आसिफ जहा) ने अवध पर शासन किया और यह नियमित रूप से लखनऊ में रहा। गाजीउद्दीन हैदर ने सर्वप्रथम अंग्रेजों के हाथों बिक कर बादशाह का खिताब हासिल कर लिया और इसी के समय से लखनऊ विलासिता का केन्द्र बन गया और अवध के नवाब अब दिल्ली के सूबेदार न होकर स्वतन्त्र बादशाह घोषित हो गये। गाजीउद्दीन हैदर के उत्तराधिकारी नवाब नसीरुद्दीन हैदर विलासिता की प्रतिमूर्ति थे। उनके काल में लखनऊ की विलासिता उनके अलावा कुलीन परिवारों और यहाँ तक कि आम जनता की रग-रग में समा गयी।

वाजिद अली शाह के जन्म के समय गाजीउद्दीन हैदर की सरकार थी। गाजीउद्दीन हैदर अवध के प्रथम बादशाह थे जो सन् १८१४ ई० में नवाब बने और फिर १८१९ ई० में दिल्ली के दरबार से मुक्त होकर स्वतन्त्र बादशाह घोषित किए गये। सन् १८१९ ई० में नवाब साहिब "हिज एक्सीलेंसी" से "हिज मैजेस्टी" बन गए। अब वह नवाब वजीरुल मुमालिक बहादुर नहीं थे बल्कि बादशाहे अवध अव्वल गाजीउद्दीन हैदर थे और इस नाम के लिए उन्हें डेढ़ करोड़ रुपया तथा कुछ जागीर देनी पड़ी थी। अवध के तत्कालीन रेजीडेंट सर जान बेली ने उन्हें अपने हाथों से हीरे जवाहरात जड़ा सोने का ताज पहनाया था। बादशाह गाजीउद्दीन हैदर की तख्त नशीनी के समय तीस हजार के मोती उनके सिर से निछावर कर लुटा दिए गये थे। लाल बारादरी में हुई यह ताजपोशी इतिहास प्रसिद्ध है। १८ अक्टूबर, १८२७ ई० छोटी दिवाली के दिन बादशाह गाजीउद्दीन हैदर की मृत्यु हो गई।

बादशाह गाजीउद्दीन हैदर के मरने के बाद उनका बेटा मिर्जा सुलेमानजाह उर्फ नसीरुद्दीन हैदर गद्दी पर बैठा। यह दासी पुत्र था और इसका पालन पोषण ऐसे वातावरण में हुआ था कि यह अत्यन्त विलासी और अंग्रेज परस्त शासक बना। नसीरुद्दीन हैदर पच्चीस वर्ष की उम्र में तख्ते विरासत पर विराजमान हुये थे और उन्होंने पूरे दस साल तक हुकूमत की। इस बादशाह के कमजर्फ और नासमझ होने के तमाम किस्से मशहूर हैं लेकिन उसके सीने में भी कहीं इंसान था जिसे वक्त और हालात ने कभी उभरने नहीं दिया। वास्तव में नसीरुद्दीन बड़ा दयालु और धर्मभीरु था उसके समय में दीन दुखियों और रोगी अपाहिजों की खुशहाली पर बड़ा ध्यान दिया जाता था। नसीरुद्दीन हैदर ने अपनी शान शौकत और अपने भोग विलास में अवध का सारा खजाना खाली कर दिया था। गोरों की सोहबत ने बादशाह को बिल्कुल विलायत परस्त बना दिया था। सआदत अली खाँ द्वारा जमा किया गया १४ करोड़ रुपया पानी की तरह बहा दिया गया और अब अवध के खजाने में सिर्फ कुछ लाख रुपया ही बाकी रह गया था। अंग्रेजों ने उसे अपने इशारों पर खूब नचाया। नसीरुद्दीन हैदर के अंग्रेज मुसाहिबों ने उसके पहलू में अंग्रेज हसीनाओं और हलक में अंग्रेजी शराब उतार कर उसकी आँखों पर अंग्रेजियत के पर्दे डाल दिए थे और उसका हिन्दुस्तानी नूर छीन लिया था। यहाँ तक कि अंग्रेज गोरी औरतों को अपनी बेगम बनाकर "विलायत महल" का खिताब दिया। दरबार को वेस्टर्न स्टाइल, अंग्रेजी शाहाना लिबास, जलवाखाने में विलायती फर्नीचर, इतालवी वस्तुकला, फ्रांसीसी शराब, योरोपियन बैंड की धुन, बरतानियाँ डिशें और फिरंगी बीवियां उनका शौक बन गई थीं। अंग्रेजी तर्ज की जिन्दगी जीने और योरोपियन स्टाइल का रहन-सहन अपनाने के लिए उसने बड़ी से बड़ी कीमतें अदा की थीं और यही वजह थी कि अंग्रेजियत का भूत उस पर ऐसा सवार हुआ कि बस जान लेकर ही गया। ७ जुलाई १८३७ ई० की रात बादशाह को जहर पिलाकर हमेशा के लिए सुला दिया गया।

नसीरुद्दीन हैदर के हरम में तमाम बेगमें थीं पर उनमें से किसी की गोद हरी नहीं हो सकी थी। वारिस का न होना शाही खानदान के लिए जितनी बदनसीबी थी, ब्रिटिश हुक्मरानों के हक में उतनी ही खुशनसीबी। इसलिए तख्ते सल्तनत के अगले वारिस के लिए बादशाह से ज्यादा बेचैनी उनकी मां बादशाह बेगम को थी जो अंग्रेजों की कट्टर दुश्मन थीं। उन्होंने स्थिति को देखते हुए अगले वारिस ही कुछ ऐसी योजना बनाई जो अवध के इतिहास में अपने ढंग की अनोखी मिसाल है। कहा जाता है कि बादशाह बेगम की एक बांदी का नाम सुखचैन था जो कुछ दिनों नसीरुद्दीन हैदर की खिदमत में रही थी और जब उसका पांव भारी हो गया तो मलिकाए आलिया ने उस कनीज को अपने संरक्षण में ले लिया। १४ सितम्बर, १८२० ई० को सुखचैन बांदी ने रफीउद्दीन हैदर को जन्म दिया, माँ बनते ही सुखचैन को अफजल महल बना दिया गया। बादशाह बेगम साहिबा इस बच्चे को प्यार से "मुन्नाजान" कहकर पुकारती थी। बादशाह बेगम ने दरबार ले लेकर सारे शहर में इस बात की मंजूरी करा ली थी कि मुन्ना जान बादशाहे

दोयम अवध की ही संतान है । बादशाह बेगम को जब खबर मिली कि नसीरुद्दीन हैदर ने जहर पीकर ७ जुलाई, १८३७ ई० को आँखें मूँद ली हैं तो उसने तख्ते सल्तनत को आबाद करने की गरज से बावजूद तमाम विरोध के मुन्ना जान को पाये हुकूमत पर बैठा दिया । जिस रात नसीरुद्दीन हैदर का इंतकाल हुआ उसके सुबह पौ फटते-फटते "जान" की ताजपोशी हो चुकी थी । ताजपोशी के इस हंगामे ने रेजीडेंट जनरल लू साहिब, नवाब रोशन उद्दौला, वजीरे खास और दरबारी वकील गुलाम याहिया खां के होश उड़ा दिए । बहरहाल विरोधियों और मुखालिफों ने मुन्नाजान के सिर से ताज उतार लिया और बादशाह बेगम और बेताज के बादशाह मुन्ना को अंग्रेजी फौज की निगरानी में लखनऊ बेली गारद में कैद कर लिया । मुन्नाजान की इस ताजपोशी को अपराध घोषित किया गया और उसे अवैध बादशाह करार कर दिया ।

मृतक बादशाह नसीरुद्दीन हैदर के वृद्ध चाचा और वाजिद अली शाह के दादा नवाब नसीरुद्दौला मुहम्मद अली शाह, नवाब सआदत अली खां के ही बेटे थे और इस तरह प्रथम बादशाह के भाई थे । लेकिन इनकी तख्तनशीनी की कोई संभावना न थी । जब ताज इनके सिर पर आया इनकी उम्र ६७ बरस हो चुकी थी । ८ जुलाई, १८३७ ई० को अवध के तीसरे बादशाह के रूप में इनकी तख्तनशीनी हुई । वह अवध के इतिहास में कयामत का दिन था । जब एक ही रात में बड़ी-बड़ी घटनाएँ घट रही थीं । महल में नसीरुद्दीन हैदर की लाश पड़ी थी, लाल बारादरी में नाबालिग अवैध बादशाह मुन्ना जान को तख्त से उतारा जा रहा था । इलाका फरहतबख्श में बादशाह बेगम की पलटन, मुँडिया में अंग्रेजी फौज मारकाट मचाए हुए थी । इसी अफरा तफरी के आलम में मरने वाले बादशाह के बूढ़े चाचा को राजनैनिक दाव पेंच के अन्तर्गत बीमारी की हालत में तड़के तीन बजे मसइल सुलतान में लाकर तख्त पर बिठाया गया और उनके सिर पर ताज रख दिया गया । लखनऊ का जनसमूह मुन्नाजान के पक्ष में था । इस वक्त बादशाह के साथ उसके अधेड़ उम्र के बेटे अमजद अली शाह, जवान पौत्र मिर्जा वाजिद अली शाह भी थे जो उस मारधाड़ में चोटें खा रहे थे । गरज यह कि इस बादशाहत के लिए उन्हें आग और खून का दरिया पार करना पड़ा । जिस शाही तख्त पर बादशाह को बिठाया गया था उसका एक-एक रत्न कम्पनी सरकार के सिपाही लूट चुके थे । तख्तनशीनी के साथ ही नवाब को "अबुल फतेह मुइयुद्दीन सुल्ताने जमा नौ शेरवाने आदिल बादशाह मुहम्मद अली" का खिताब मिला । बादशाह मुहम्मद अली शाह के गद्दी पर बैठने से राजकाज और शासन में सुधार हुआ एक नए युग का आरम्भ हुआ । मुहम्मद अली शाह ने केवल ५ वर्ष शासन किया । १६ मई, १८४२ ई० को बादशाह का देहान्त हो गया, उसके बाद सुरैया जाह अमजद अली अवध की गद्दी पर बैठा जिसके ६ मास के भीतर ही अवध की हालत चिन्ताजनक और प्रशासनिक अव्यवस्था पैदा हो गयी । सुरैया जाह अमजद अली ने अपने ज्येष्ठ पुत्र मुस्तफा अली हैदर को अयोग्य समझकर अपने दूसरे पुत्र मिर्जा वाजिद अली शाह को अपने उत्तराधिकारी काल में अनेक उपाधियों से विभूषित किया । वह अपने जीवन काल में ही

वाजिद अली शाह की सेवाओं का उपयोग करने लगा था जिसका वर्णन वाजिद अली शाह ने अपनी कविताओं में भी किया है। "इश्क नामा" नामक पुस्तक में उसने लिखा है "पिदर की नियामत थी मुझको सुपुर्द।" इस स्थिति में प्रतिदिन प्रातः काल से ही लगभग तीन घन्टे तक प्रार्थना पत्र सुनना, पढ़ना, राजकीय आदेशों का लागू करना, नगर के समाचार पत्र सुनना और अनाज एवं अन्य वस्तुओं के मूल्यों को ज्ञात करने में व्यस्त रहता था। मुहम्मद नजमुल गनी ने इस तथ्य का उद्घाटन अपनी पुस्तक "तवारीखे अवध" भाग पांच में किया है। वाजिद अली शाह ने भी अपनी पुस्तक "परीखाना" में नियमित रूप से बादशाह की सेवा में उपस्थित रहने का वर्णन किया है। वाजिद अली शाह के जन्म के समय कोई यह कल्पना भी नहीं कर सकता था कि यही शिशु २५ वर्ष के बाद अवध का बादशाह बनकर सुल्ताने-आलम वाजिद अली शाह के नाम से प्रसिद्ध होगा क्योंकि वह न तो अपने भ्राताओं में सबसे ज्येष्ठ था और न ही उसके पिता और दादा प्रत्यक्ष रूप से उत्तराधिकारी की पंक्ति में आते थे। इसका सिंहासन पर अधिकार करने का कोई हक नहीं था क्योंकि यह बात प्रसिद्ध थी कि मुस्तफा अली उसका ज्येष्ठ भ्राता था।

जब अमजद अली शाह ने ६ जून, १८४२ ई० को वाजिद अली शाह के उत्तराधिकारी होने की घोषणा की और मुस्तफा अली को अंगीकार नहीं किया तो बादशाह का यह कार्य जनता की आशा के विपरीत था। इसके अतिरिक्त वह अपने दादा मुहम्मद अली का प्यारा था और जनता में लोकप्रिय था। महल में सभी उसे बादशाह का ज्येष्ठ पुत्र समझते थे। मुस्तफा अली कभी-कभी अपने पिता के विरुद्ध बादशाह मुहम्मद अली शाह से शिकायत करता था। जब एक बार अमजद अली शाह को मासिक वेतन मिला तो उसने अपनी पलटन में दो बार में वितरण कराया। मुस्तफा अली ने इस तथ्य की जानकारी बादशाह मुहम्मद अली को दे दी जिस पर बादशाह ने अपने वित्त मंत्री महाराजा बालकृष्ण से इस धन के वितरण के सम्बन्ध में दोहरी प्रक्रिया का स्पष्टीकरण मांगा था। यह उन मुख्य कारणों में प्रमुख था जिसके कारण मुस्तफा अली और उसके पिता अमजद अली शाह में खिचाव उत्पन्न हो गया था। इसी खिंचाव के कारण ही अमजद अली शाह ने मुस्तफा अली के बजाय अपने दूसरे पुत्र वाजिद अली शाह को उत्तराधिकारी बनाना अधिक उपयुक्त समझा। यद्यपि वाजिद अली शाह ने लखनऊ में चार चांद लगा देने में कोई कसर न उठा रखी फिर भी अवध जिसके लिए कहा गया था कि यह अ+वध जिसको नष्ट नहीं किया जा सकता, वाजिद अली शाह के समय में अवध का वध हो गया और अवध अंग्रेजी सरकार के दमन चक्र का शिकार हो गया जिसकी परिणति अवध के विलय में हुई।

———

अध्याय—३

सिंहासनारूढ़ होना

वाजिद अली शाह अपने उत्तराधिकार काल में रसास्वादन में ही लिप्त रहा। यह सच है कि ढोल, मृदंगों आदि की संगीत लहरी, कामिनियों के पगों की थिरकन और नूपुरों की ध्वनि, कवियों और शायरों के दरबार आदि से लिप्त विलासिता भले ही मनुष्य को कुछ समय के लिए काल्पनिक संसार में विचरण करा सकने में सफल हो जाय परन्तु वास्तविकता की कठोरता का उपचार कभी नहीं हो सकती। इतिहासकार यह मानते चले आये हैं कि वाजिद अली शाह ने अपना समस्त समय विलासिता की उपासना में व्यतीत किया जिसका परिणाम उसी के लिए घातक सिद्ध हुआ। वह अवध की वस्तुस्थिति से पूर्णतया अनिभिज्ञ रहा और मनुष्य के मस्तिष्क की साधारण प्रतिभा का विस्तार करने में भी सफल न हो सका। उसे केवल प्रेमिकाओं के चेहरे ही याद आते थे जिनको वह सुसज्जित करना चाहता था और उन्हीं की सजावट के लिए उसने लखनऊ को भवनों और उद्यानों का शहर बनवाया। संभवतः उसे अपने राज्य की तस्वीर न कभी देखने को मिली थी, न कभी इच्छा होती थी और न ही कभी समय मिलता था। यद्यपि तत्कालीन राजनीति के झरोखों से, कम्पनी राज्य की चाल कोई भी दूरदर्शी बादशाह देखकर स्वयं को परिस्थिति के अनुकूल समायोजित कर सकता था और अवध की धूमिल होती हुई तस्वीर को चमकाकर सुरक्षित रख सकता था लेकिन यह अवध का दुर्भाग्य ही था कि उसका भविष्य विलासी बादशाह के हाथों में हस्तान्तरित हुआ जो उत्तरार्ध में सम्भलते-सम्भलते भी उलझता चला गया और अन्त में कम्पनी राज्य के साम्राज्यवादी शिकंजे में जकड़ लिया गया।

वाजिद अली शाह पर अनेकों भ्रमात्मक लांछन लगाये जाते हैं परन्तु यह भी सच है कि जब वाजिद अली शाह ने गद्दी पायी तब वह जवान था, शरीर में बल और हृदय में उत्साह दोनों ही प्रचुर मात्रा में विद्यमान थे। उसके पूर्व के अवध के शासकों में से शायद ही कोई ऐसा पैदा हुआ हो जो वाजिद अली शाह जैसी गुण-गरिमा का धनी रहा हो। उसके पितामह के पूर्व के शासक विलासी और कम्पनी सरकार के कठपुतली थे। वाजिद अली शाह के पितामह मौहम्मद अली शाह और पिता अमजद अली शाह दोनों ही अयोग्य शासक सिद्ध हुये क्योंकि वे अंग्रेजों के बढ़ते हुये प्रभाव को रोकने में असफल रहे थे, विशेषकर इसलिए कि एक तो अवध का शासन अंग्रेजों की कृपा से ही उन्हें मिला था, दूसरे इसलिये भी कि जब वह गद्दी पर बैठे तब तक काफी बृद्ध हो चुके थे, ऐसी अवस्था में उनमें न तो शारीरिक शक्ति शेष रह गयी थी और न बौद्धिक। वाजिद अली शाह के तख्तनशीन होने से पूर्व कई अयोग्य शासकों के कारण अवध सल्तनत की शक्ति क्षीण हो चली थी और इसके विपरीत अंग्रेजों ने काफी शक्ति संचित कर ली थी।

वाजिद अली शाह विलासी नहीं था यह कहना भी सत्य नहीं होगा। अन्य राजकुमारों की भाँति वह भी युवराजत्व काल में ही अपनी विलासिता की तृप्ति कर चुका था। सिंहासनारूढ़ होने के बाद अँग्रेजों द्वारा रचे गये राजनैतिक षडयन्त्रों, रेजीडेन्सी के निरन्तर हस्तक्षेप, दरबारी कुचक्र आदि से उसकी कलाकार भावना को आघात पहुँचा और वह निराश हो गया। इसी परेशानी को भुलाने के लिए वह नृत्य, शेरो-शायरी आदि का सहारा लेने लगा। वाजिद अली शाह इसमें इतना डूबता गया कि अवध की विलासिता और नैतिक पतन चरम बिन्दु पर पहुँचा गया और अय्याशी की पराकाष्ठा से अवध का पौरुष कांतिहीन हो गया।

वाजिद अली शाह के पिता अमजद अली शाह की मृत्यु १३ फरवरी, १८४७ ई० को सायंकाल ५ बजे, वक्षस्थल में भयंकर पीड़ा एवं रक्त स्राव के कारण हुई। अब्दुल हलीम ''शरर'' ने उल्लेख किया है कि अमजद अली शाह की मृत्यु कैंसर रोग के कारण हुई परन्तु मिस सिडनी का मत है कि अमजद अली शाह की मृत्यु कोई प्राकृतिक रूप से नहीं हुई। संभवतः किसी ने उसे विष दे दिया था अथवा किसी डाक्टर के द्वारा दिलवा कर मरवा दिया गया था। यह कार्य उसकी मृत्यु से लाभान्वित हो सकने वाले किसी व्यक्ति ने ही किया होगा।

अमजद अली शाह की मृत्यु का समाचार पाते ही अंग्रेज रेजीडेंट ने राज महल की ओर आकर अंग्रेजी सेना के ब्रिगेडियर को आदेश दिया कि वह चार तोपों के साथ पैदल सेना शीघ्र रवाना कर दे। बर्ड नामक रेजीडेंट की अनुपस्थिति में उसके सहायक कैप्टन होलिंग्स को रक्षा हेतु वाजिद अली शाह के साथ राजमहल तक जाने का आदेश हुआ। राजकुमार के आने के उपरान्त अंग्रेज सैनिक भी बारादरी पहुँच गये। जिस समय राजकुमार सीढ़ी से प्रवेश करने लगा तो अत्यधिक भीड़ के कारण जंगला टूट गया।

कर्नल रिचमण्ड को जैसे ही अमजद अली शाह की मृत्यु का समाचार मिला तो वे तुरन्त डा० लेगिन के साथ अमीनुद्दौला के महल सराय पहुँचे जहाँ बादशाह का शव रखा हुआ था। नौरोज अली खाँ ने मुँह से दुशाला उठाकर दिखाया कि उसकी मृत्यु हो चुकी है।

अमजद अली शाह की मृत्यु के कारण सम्पूर्ण राजमहल शोक गंगा में डूबा हुआ था। महल की स्त्रियों के प्रलाप स्पष्ट सुनाई पड़ रहे थे। यद्यपि सान्त्वना देने वालों की कमी नहीं थी परन्तु फिर भी वाजिद अली शाह अपने आंसुओं के प्रवाह को रोक न सका और हतभाग्य सा उदास एक स्थान पर बैठ गया। कुतुबुद्दौला ने उसका हृदय थामने का प्रयास किया लेकिन वह उस प्रवाह को रोकने के लिये कुछ न कर सका।

वाजिद अली शाह ने स्वयं उल्लेख किया कि जिस समय मेरे पिता की मृत्यु हुई उस समय प्रत्येक सेवक एक अन्धकार मय वातावरण का अनुभव कर रहा था, पीड़ा के कारण अपना मानसिक सन्तुलन खो सा बैठा था। उन्होंने धैर्य के अभाव में अपने

वस्त्र तक फाड़ डाले थे। मेरे हृदय में पितृ शोक से इतना आघात पहुँचा कि आँखों में बाढ़ के समान प्रवाह था जो तूफान का स्मरण करा रहा था। इन सेवकों को अपने जन्नत मकां (पिता तुल्य मालिक) से विशेष अनुराग था। इसी कारण उनके मृत्यु शोक को सहन न कर सके थे। वह आगे उल्लेख करता है चूँकि शोक संवेदना के कारण मेरे आँसू ही न रुके थे इसीलिए बारादरी के भीतर वाले निवास में विश्राम किया। इस रात्रि में परियां एवं युवतियाँ उसके पास नहीं थीं इसलिए मुहम्मद मोतमिद अली खाँ के द्वारा एक दो मुद्रिकायें प्रत्येक परी एवं बेगम से निशानी हेतु मँगाली थीं, जिसका हार बनाकर अपने गले में डाल लिया था।

शोक संतप्त वाजिद अली शाह के नेत्रों में अभी तक आँसुओं का अविरल प्रवाह स्पष्ट दिखाई पड़ रहा था। विषाद की अग्नि समय की गति के अनुसार मन्द न होकर बढ़ती जा रही थी कि अचानक बड़े साहब द्वारा भेजा गया एक अंग्रेज चपरासी इस समाचार के साथ कि छोटे साहब अनुपस्थित हैं, इसलिए आप कैप्टन होलिंग्स के साथ बड़े साहब के समक्ष प्रस्तुत हों, उसी शोकावस्था में उसने प्रस्थान किया। उसके लिए निश्चित ही यह आश्चर्य चकित करने वाला समय था।

शांति पूर्ण स्थिति में शोकग्रस्त वाजिद अली शाह ने दिनांक १३ फरवरी, १८४७ ई० को रात्रि के नौ बजकर पैंतीस मिनट पर अपनी प्रार्थना आदि पूरी कर सिंहासन पर अपना स्थान ग्रहण किया। बहुमूल्य रत्नों से जड़ित नौकाकार पात्र में मजादुद्दौला के द्वारा शाही राजमुकुट लाया गया। वाजिद अली शाह स्वयं उल्लेख करता है कि "रेजीडेन्ट के द्वारा मेरे सिर पर शाही ताज रखा गया—मैं सिंहासनारूढ़ हुआ और रेजीडेन्ट द्वारा घोषणा की गयी कि आज से वाजिद अली शाह सिंहासनरूढ़ हुए।" इस रस्म के पश्चात् मुख्य मन्त्री (वजीर) अमीनुद्दौला ने अभिवादन करके भेंट दी और फिर उच्च कोटि के पदाधिकारियों एवं कर्मचारियों द्वारा भी भेटें प्रदान की गईं। वाजिद अली शाह स्वयं उल्लेख करता है कि प्रशासन के अधिकारीगण उपस्थित थे। सबने भेटें प्रदान की और साथ ही तोपों की सलामी भी दी गयी। मैं क्षण भर सिंहासन पर बैठा रहा—उस समय रेजीडेन्ट के अतिरिक्त सभी शान्तिपूर्वक खड़े रहे—मैंने पाँच विभिन्न स्थानों पर हस्ताक्षर किए—ब्रिटिश तोप खाने द्वारा शाही सलामी दी गई—उसके बाद नृत्य एवं गायन तथा अंग्रेजी बेंड की ध्वनि आकाश में गूंजने लगी—अंग्रेज पैदल सेना को शस्त्र भेंट किए गये।"

वाजिद अली शाह के इस कार्यक्रम के समापन के पश्चात रेजीडेन्ट ने दो तोपों और पैदल सेना की चार कम्पनियों के अतिरिक्त सभी सैनिकों को आदेश दिया कि वह छावनी की ओर वापिस जायें। उपरोक्त पैदल सेना को राजभवन की सुरक्षा हेतु दो तोपें इसीलिए दी गयीं ताकि मृतक बादशाह अमजद अली शाह के जनाजे के समय सलामी दी जा सके। जब एक ओर वाजिद अली शाह सिंहासनारूढ़ होने के शुभ अवसर पर रंगरेलियाँ मना रहे थे, तो दीवाने आम के दरोगा ने नव नियुक्त बादशाह को इन शब्दों से सम्बोधित किया—"एक यात्री इस नश्वर संसार (सराय) में अल्प

समय के लिए आया था, अब वह अपने वास्तविक स्थान को जाना चाहता है इसलिए वह अपनी दीर्घ यात्रा के व्यय की पूर्ति के लिए कुछ द्रव्य की सहायता चाहता है।" बादशाह ने इसका अभिप्राय समझकर अपने मृतक पिता के जनाजे की रीतियों के लिए एक लाख रुपया स्वीकृत किया।

१४ फरवरी, १८४७ ई० को मृतक अमजद अली शाह के जनाजे की रस्म (अन्त्येष्टि संस्कार) अदा करने में लगभग ५ घण्टे लगे और उसे उसकी इच्छानुसार हजरतगंज में मेडूखान रिसालदार की छावनी में दफन किया जिस पर एक अति सुन्दर समाधि स्थान (मकबरा) वाजिद अली शाह ने निर्मित करवाया जिसमें दस लाख रुपया का व्यय किया गया और उसका नाम "सिवतैनाबाद का इमामबाड़ा" रखा गया।

मृतक बादशाह अमजद अली शाह को उसकी आयु के अनुसार ४६ तोपों की सलामी अँग्रेजी तोपों के द्वारा दी गयी थी। रेजीडेन्ट अपने सहायक यूरोपियन अधिकारियों के साथ था। लखनऊ के बाजारों और गलियों में मातम मनाया जा रहा था किन्तु किसी प्रकार की कोई अव्यवस्था नहीं थी क्योंकि वजीर की सतर्कता के कारण शांतिपूर्ण प्रबन्ध किया गया था।

१५ फरवरी, १८४७ ई० को प्रातःकाल के समय वाजिद अली शाह उपस्थित मन्त्रियों, अधिकारियों से युक्त दरबार में पहुँचा और उसने प्रथम आदेश के द्वारा सम्पूर्ण राजकीय कर्मचारियों को पुनः स्थापित किया। वाजिद अली शाह से पूर्व जब कोई बादशाह सिंहासनारूढ़ होता था तो राजकीय आदेश के द्वारा सम्पूर्ण राजकीय कर्मचारियों को पदच्युत करके अपने आदेशानुसार उनके स्थान पर अन्य व्यक्तियों को सेवकों एवं कर्मचारियों के रूप में रखता था परन्तु वाजिद अली शाह ने पुरानी परम्परा एवं नियमों के विरुद्ध कार्य करके किसी भी सरकारी कर्मचारी को पदच्युत नहीं किया, बल्कि उन्हें पुनः स्थापित किया। कुछ राजकीय कर्मचारियों को उपाधियाँ प्रदान की गयीं और उनके वेतन में बढ़ोत्तरी की गयी। केवल सेना के कुछ अयोग्य अधिकारियों को पदच्युत करके अनुभवी व्यक्तियों को नियुक्त किया गया। यदि किसी कारणवश किसी कर्मचारी से कोई कार्य ले भी लिया गया तो भी उसका वेतन एवं सम्मान यथावत् रखा गया।

१६ फरवरी, १८४७ ई० को वाजिद अली शाह ने अपने मृतक पिता अमजद अली शाह की मृत्यु उपरान्त होने वाली रीतियों एवं रस्म पूर्ण करने के पश्चात दरबार का आयोजन किया। नवाब अमीनुद्दौला, महाराजाधिराज बालकृष्ण और राज्य के अन्य अधिकारियों के पदों को स्थाई किया गया।

वाजिद अली शाह ने दरबार के समस्त राजकुमारों एवं अधिकारियों को आदेश दिया कि हर रविवार को प्रातःकाल के समय दरबार के प्रत्येक दरबारी एवं कर्मचारी उपस्थित हुआ करेंगे। वह स्वयं भी विशेष समय पर आया करेगा। नौ बजे ही नवाब

अमीनुद्दौला, मुनव्वरउद्दौला, शब्बीरउद्दौला एवं कार्यालय के विशेष अधिकारी एवं कर्मचारी उपस्थित होने लगे।

वाजिद अली शाह ने अपनी ताजपोशी के उपरान्त महा राज्यपाल की पूर्व अनुमति द्वारा उपाधि ग्रहण की—"अबुल मुजफ्फर नासिर उद्दीन सिकन्दर जाह, बादशाहे आदिल कैसर जमां सुल्ताने आलम मिर्जा वाजिद अली शाह बहादुर बादशाहे अवध" इस उपाधि से विभूषित होकर उसने २००० रुपये तोपखाने और पदाति सैनिक टुकड़ियों को उपहार के रूप में दिये और इतना ही धन उन सैनिक टुकड़ियों को भी दिया गया जिन्होंने सिंहासनारूढ़ होने की रात्रि के समय और उसके बाद दो दिन तक राजभवन पर पहरेदारी का कार्य किया। इसके पश्चात उसने लेफ्टीनेन्ट निकलसन और २३ वीं विदेशी पदाति सैनिक टुकड़ी के अधिकारी हिलयर्ड जो उपरोक्त कम्पनियों के साथ थे, प्रत्येक को वहुमूल्य शाल और एक रूमाल तथा रेजीडेंन्सी के चौबदार फजल हुसैन को भी एक शाल उपहार के रूप में दिया।

वाजिद अली शाह के सिंहासनारूढ़ होने के समय उसके पाँच पुत्र और तीन पुत्रियाँ थीं। सबसे बड़े राजकुमार मिर्जा नौशेरवाँ कद्र आठ वर्षीय बहरा और कुछ गूंगा था तथा उसके मस्तिष्क में कुछ दुर्बलता सी प्रतीत होती थी। उसकी शारीरिक कमियों के कारण लखनऊ के रेजीडेन्ट कर्नल रिचमण्ड ने एक पत्र १७ मार्च, १८४७ ई० को महाराज्यपाल (गवर्नर जनरल) को लिखा जिसमें अवध के सिंहासन का भविष्य में कौन उत्तराधिकारी हो इस सम्वन्ध में विचार विमर्श किया गया था। भारत सरकार के कार्यवाहक सचिव ने लखनऊ के रेजीडेन्ट को एक पत्र के द्वारा निर्देश दिए कि वाजिद अली शाह को स्वयं भविष्य में उत्तराधिकारी के सम्वन्ध में इच्छा व्यक्त करने के लिए आमन्त्रित किया जाय। इस पर रेजीडेन्ट ने वाजिद अली शाह का उत्तराधिकारी के प्रश्न की ओर ध्यानाकर्षण किया और वाजिद अली शाह ने अत्यन्त सूझबूझ के साथ अपने सात वर्षीय दूसरे पुत्र फलक कद्र को उत्तराधिकारी के पद पर नियुक्त किया और उसे सम्मानित चोंगा (खिलत) भेंट किया। मिर्जा फलक कद्र की चेचक निकलने के कारण ४ जून, १८४६ ई० को मृत्यु हो गयी। उसके बाद ईद के उत्सव पर छः वर्षीय मिर्जा केवान कद्र को सम्मानित चोंगा सेनापति के पद पर विभूषित करते हुए भेंट किया। इसके अतिरिक्त महाराज्यपाल ने रेजीडेन्ट को निर्देश दिए कि यदि वाजिद अली शाह की मृत्यु अल्पायु में हो जाए तो अवध की सरकार को एक अँग्रेज रेजीडेन्ट और एक स्थानीय सभा के द्वारा प्रशासन करना चाहिये।

———

अध्याय—४

विलासिता का दौर

सौन्दर्य, सौष्ठव और सौम्यता से परिपूर्ण वाजिद अली शाह का एक ऐसा व्यक्तित्व था जिसमें विषयाशक्ति, इन्द्रिय-लोलुपता, कामुकता और ऐयाशी का आलम अपनी पराकाष्ठा और सम्पूर्णता पर था। कामवासना की समस्त सीमाओं को लांघ जाने वाला वाजिद अली शाह विलासिता का पर्याय सा बन गया था। अनेकानेक भ्रान्तियों और काल्पनिक कथाओं से मढ़ी उसकी अपने निराले अन्दाज की विलास लीला का वास्तविक वर्णन अवश्य ही कौतूहल पूर्ण एवं रोचक होगा।

वाजिद अली शाह ने अपने शैशव व युवावस्था की कामुकता सम्बन्धी घटनाओं का विवरण वगैर किसी लज्जा के अत्यन्त निर्भीकता के साथ अपनी पुस्तक "परीखाना" में किया है। साधारणतः हर व्यक्ति में अपनी कुछ न कुछ गोपनीयतायें होती हैं, विशेषकर कामवासना से सम्बन्धित कार्य तो प्रायः लुक छिपकर ही किये जाते हैं, उन्हें गुप्त रखने का पूरा प्रयास किया जाता है और उनकी स्वीकारोक्ति का साहस तो कोई कर ही नहीं पाता है। ऐयाशी के रंग से सराबोर वाजिद अली शाह के काव्य अध्ययन से यही निष्कर्ष निकलता है कि उसमें व्यक्तिगत गोपनीयता का नितान्त अभाव था। वाजिद अली शाह ने अपनी विलास लीला का न केवल खुले आम प्रदर्शन ही किया अपितु अपनी पुस्तकों में गोपनीयता को स्पष्ट रूप से उजागर करते हुए अपने व्यक्तित्व को विलक्षण एवं प्रशंसनीय बना दिया है। वह इश्क को खुदा की इनायत बताते हुए लिखता है :—

> **"..... ख़ुदा बन्दे आलम ने हर आदमी को इश्क़ की लज़्ज़त इनायत फ़रमायी है और हर जीरुह को इस गुलशने हमेशा बहार में नशोनुमा बख्शी है। चुनाचें मेरा ख़मीर भी इसी आबोगुल से उठा है और यह दर्दे जिगर रोज़े अब्वल से मेरे हिस्से में आया है......"**

> **"तस्वीरे यार दिल में है गो मुँह पे वो नहीं,**
> **अख़्तर ख़ुदा का शुक्र सनमख़ाना रह गया।"**

चारित्रिक दुर्वलताओं के चित्रण में इन्द्रिय लोलुपता का वर्णन कहीं-कहीं तो इतना अश्लील हो गया है कि लज्जा का आभास होने लगता है। फिर भी यह अपनी जगह स्पष्ट है कि वाजिद अली शाह को कामुक तो कहा जा सकता है पर कामान्ध नहीं।

नासिरुद्दीन हैदर के समय में लखनऊ का वातावरण सामाजिक विदूषण की सभी सीमायें लाँघ चुका था। अवध में ऐयाशी का आलम भादों की गोमती की तरह उफन

रहा था ऐसे भोग विलास के वातावरण में पैदा होने वाले वाजिद अली शाह के आस पास का वातावरण अत्यन्त दूषित था यहाँ तक कि सेविकायें भी उसके साथ स्वछन्दता पूर्वक छेड़छाड़ करती थीं। इन्हीं सेविकाओं ने वाजिद अली शाह में बाल्यकाल से ही काम वासना के प्रति जिज्ञासा और आकर्षण के बीज अंकुरित करने प्रारम्भ कर दिये थे। यही कारण था कि उसके प्रेम प्रसंगों में यह विचित्रता विशेष रूप से उल्लेखनीय रही है कि उसने प्रेमी प्रेमिका की आयु की समानता और समरसता को ताक पर रख दिया था। उसके विषय भोग से लिप्त जीवन की एक विशेषता यह भी रही कि वह इतनी कम उम्र में ही काम वासना का शिकार हो गया था जो कल्पना के परे है।

यह अविश्वसनीय ही लगता है कि वाजिद अली शाह अभी आठ वर्ष की अबोध आयु में ही था कि रहीमन नामक ४५ वर्षीय सेविका ने बालक में कामवासना को जागृत करने के प्रयास प्रारम्भ कर दिये थे। वह बालक वाजिद अली शाह से आनन्द लेने लगी थी। वाजिद अली शाह ने स्वयं स्वीकार किया है कि जब वह बालक ही था तभी रहीमन से भयभीत होकर भागने का प्रयास किया करता था परन्तु फिर भी वह छेड़छाड़ किया करती थी। दस वर्ष की आयु तक रहीमन का यह सिलसिला जारी रहा। रहीमन का जिक्र करते हुए वह लिखता है—

> **"जब मेरी उम्र आठ बरस की थी रहीमन नाम की एक औरत— उम्र कोई पेंतालिस साल—हर वक़्त मेरी ख़िदमत में हाज़िर रहती थी। एक दिन जब मैं सो रहा था उसने मुझ पर काबू पा लिया और मुझे छेड़ने लगी। चूँकि मैं अभी बच्चा था इसीलिए मैंने मारे डर के भागने की कोशिश की लेकिन इस औरत ने मुझे रोक लिया और यह कहकर डराया कि मेरे उस्ताद और तालीक़ से मुझे सजा दिलायेगी। मैं परेशान था कि मैं किस मुसीबत में फँस गया उस रोज़ के बाद से उसका यह मामूल हो गया कि मेरे साथ छेड़छाड़ किया करती।**
>
> **मैं जब दस बरस का हो गया तब भी रहीमन का दस्तूर इसी तरह जारी था। उसके बाद ख़ुदा जाने वह कहाँ चली गई मुझे कुछ याद नहीं।"**

इस प्रकार रहीमन के साथ आनन्द लेते-लेते उसमें स्त्री सानिध्य की प्रवृत्ति बढ़ने लगी और दस वर्ष की आयु में ही उसे सुन्दर स्त्रियों के यौवन आकर्षित करने लगे। वाजिद अली शाह की माता की एक खिदमतगार बहुत भड़कीले कपड़े पहनती थी और वैसी ही चतुर एवं चालाक औरत थी। उसने भी बालक वाजिद अली शाह में काम वासना को जगाकर उससे मौज लेना शुरू कर दिया था। इस औरत की आयु पैंतीस-चालीस के बीच की थी। वाजिद अली शाह उसके प्रति आकर्षित हो गया। एक रात जब बालक वाजिद अली शाह अपने निवास में सो रहा था तो उस औरत ने उसके करीब आकर उसको दबाया। वाजिद अली शाह क्रोधित होने के बजाय इस औरत की

ऐसी हरकत का मन ही मन आनन्द लेता रहा। ग्यारह वर्ष की अवस्था के बालक वाजिद अली शाह से इस तरह आनन्द लेने वाली इस औरत का नाम अमीरन था। अमीरन ने वाजिद अली शाह की तरुणावस्था में ही काम वासना के अंकुर प्रस्फुटित कर दिये और वाजिद अली शाह में काम-वासना की तृप्ति की इच्छा तीव्र होने लगी।

"तबियत ने पैदा किये और रंग,
पसन्द आये दिल को हसीनों के ढंग।"

वाजिद अली शाह अमीरन नाम की इस औरत का जिक्र करते हुए लिखता है—

"एक रोज़ जब देखा कि सारा घर खाली है उस औरत ने जब कि मैं बिस्तर पर महवेख़्वाब था रात के वक़्त मेरे नज़दीक आकर मुझे अपने हाथों से दबा लिया। मेरी तबियत भी पहले से कुछ माइल थी इसलिए उसकी बेतकल्लुफाना हरक़त पर मुझे गुस्सा न आया बल्कि अपने को महवेख़्वाब जाहिर किया ताकि इसके जज़बात ठण्डे न पड़ जायें। इस तरह मैं दिल ही दिल में उसके दिली जोश और बलबलों का लुत्फ उठाता रहा। अगरचे मैं उस वक़्त उसके बेजा नाज़ नखरों को खातिर में न लाया लेकिन ग्यारह बरस की उम्र तक वह मेरी मरकज़े ख़्याल बनी रही।"

जब वाजिद अली शाह की उम्र ग्यारह वर्ष की हो गयी तो खूबसूरत औरतों के मुहब्बत भरे जज़बात उसे बहुत अच्छे लगने लगे और उसकी तबियत भी हसीनाओं से मुहब्बत करने और उनके नाजो नखरे समझने के लिए बेताब होने लगी। उसने अपनी इस अवस्था का वर्णन करते हुए लिखा है—

"जब मेरी उम्र ग्यारह वर्ष की हुई तो मैं हर हसीन औरत को मुहब्बत भरे जज़बात से देखता और कोशिश करता कि वह मेरे मतलब को समझे। इस तरह मैं अपनी हर मन्ज़ूरे नज़र औरत की दिल रुबा अदाओं से लुत्फ अन्दोज़ होता।"

इन्हीं दिनों सलोने मुख, घुँघराले बाल, सुडौल, सुन्दर और आकर्षक बन्नो नाम की औरत जो रनिवास में ही माता की सेविका थी, से वाजिद अली शाह की नजरें लड़ गयी और प्यार हो गया। बन्नो नामक यह सेविका विवाहिता थी जिसकी आयु तेइस बरस थी। बन्नो के प्यार में गिरफ्तार होने का जिक्र करते हुए वाजिद अली शाह लिखता है—

"...... मैं चन्द दिनों से उसके दामें मुहब्बत में गिरफ़्तार था और वस्ल का ख़्याल दिल में समाया हुआ था। चूँकि वह औरत फ़हमीदा और अस्मतमाआब थी इसलिए बड़ी तरकीब से मुझे ख़ुश करके टाल देती थी। हर रोज़ महज़ ताल्लुक ख़ातिर की बिनह पर इसके पास बैठकर बातें करता और अपना दिल बहलाया करता और इस अरते बातो रस्म ओ राह ओ दोस्ती का मक़सद बेलौस मुहब्बत के सिवा कुछ न था।"

वन्नो की छोटी वहिन हाजी खानम की उम्र लगभग वाईस वर्ष थी। यह जानते हुए भी कि उसकी गोद में एक बच्चा है, वाजिद अली शाह का दिल हाजी खानम पर भी आ गया और हाजी खानम के प्रति उसकी आसक्ति बढ़ने लगी और वह गुप्त रूप से उससे शमा और परवाने की भाँति प्रेम करता रहा। वाजिद अली शाह ने हाजी खानम से पहली मुलाकात का जिक्र करते हुये लिखा है—

"……बरसात का मौसम था। मैं अपनी दादी मरियम मकानी के पास बैठा हुआ था। एक औरत जिसकी उम्र बाइस वर्ष की थी सूरत से शोख़ व तर्रार मालूम पड़ती थी, एक ख़ास दिलरुबाना अन्दाज़ से आयी और दादी साहिबा को अदब से झुककर सलाम किया।

मैंने पहली ही नज़र में उसके इश्क़ का तीर दिल पर खाया और उसी वक़्त मेरा सीना उल्फ़त की आग से यूँ जलने लगा जैसे हम्माम लकड़ियों की आग से जलता है। सब्र का यारा नहीं रहा। हकीक़त यह है कि इस गुले बहार आफ़री का दिल से शैदा हो गया और दिल ही दिल में कहने लगा या अल्लाह क्या ही अच्छा होता अगर मैं इस हूर शमाइल और परी पेकर के गुलशने शबाब का तायरे हज़ार दास्तां होता।"

इस पहली मुलाकात ने ही वाजिद अली शाह का चैन छीन लिया और वह हाज़ी ख़ानम को पाने के लिए बेताव हो गया—

"गरज़ उसकी उल्फत असर कर गयी,
मुहब्बत मेरे दिल में घर कर गयी।

—×—

गरज़ के पड़ी जब के पहली नज़र,
निशाना हुआ तीरे ग़म का ज़िगर।

—×—

पलक काम करने लगे तीर का,
किया काम अबरू ने शमशीर का।"

इस तरह वाजिद अली शाह ने उस मुलाकात के बाद की सुबह अपने दिल पर गुजर रही परेशानी को जाहिर करते हुए लिखा है—

"……किसी तरह रात गुज़री और दिन निकल आया लेकिन बेबसी का वही आलम था इसलिए अन्दर ही अन्दर मेरी हालत खराब हो रही थी लेकिन मैंने अपने इस दर्दे निहा का किसी को इल्म भी न होने दिया।"

समय बीतते हाजी खानम को भी वाजिद अली शाह के दिली हालत के बारे में मालूम हो गया। वाजिद अली शाह कई तरह की कड़ी निगरानियों की वजह से सीधे हाजी खानम से मुलाकात नहीं कर पा रहा था इसी कारण उसने इमामी खानम नामक एक सेविका जो साहिबे खानम की आतवा थी, के माध्यम से प्रणयवार्ता जारी रखने का सिलसिला कायम किया। इमामी खानम की उम्र चालीस वर्ष थी और उसका रंग भी सांवला था। कुरूप होते हुए भी उसे अपनी सुन्दरता पर बहुत गर्व था। उसका यह प्रयास रहता था कि हाजी खानम के बजाय वह स्वयं वाजिद अली शाह से प्रेम सम्बन्धों को स्थापित कर ले। इमामी खानम कभी-कभी इस प्रेमी युगल को पृथक-पृथक धमकियां देकर डराया भी करती थी। यह दोनों भी इमामी खानम को ख़ुश रखने का प्रयास करते थे। वाजिद अली शाह ने इमामी खानम का जिक्र करते हुए लिखा है—

"...... इमामी ख़ानम बेहद बदशक्ल औरत थी मगर इमामी ख़ानम को ख़ुद अपने बारे में ख़ुश फ़हमी थी। हमारी हमराज़ होने का नाजाइज फायदा उठाते हुए मुझ पर गमज़े इश्क़ डालने लगी लेकिन मैं इसके किसी फरेब में न आया।

वह शैतान की खाला अपने दिल में यह समझे थी कि मैं वाक़ई इसके तीरे अदा का घायल हूँ लेकिन वह इस बात से बाख़बर न थी "मा दर्चे ख़यालीमों फ़लक दर्चे ख़याल"। मैं अपने बुज़ुर्गों का बड़ा लिहाज़ करता था खासकर इस किस्म के मामलात में एहतियात से काम लेता था।"

हाजी खानम के प्रति वाजिद अली शाह अपनी आसक्ति का वर्णन करते हुए लिखता है—

"...अलगरज़ एक लम्हा भी ऐसा नहीं गुज़रता जिसमें हाजी ख़ानम की मुहब्बत की आग से मेरा सीना न फुका जाता हो। वह भी मुझ पर बुरी तरह गिरवीदा थी। अमूमन ऐसा भी हुआ है कि जब अपने घर जाती तो मेरी जुदाई के ग़म में दिन रात रोती रहती। इधर मेरा भी कुछ ऐसा ही हाल हो जाता लेकिन मफ़ाकरत का यह रंज मुझे ज्यादा न खींचना पड़ता था इसलिए कि वह किसी न किसी बहाने अपने घर से जल्दी वापस आ जाती।

हम दोनों लैला मजनू जब किसी जगह बैठते तो आपस में बड़ी पुरलुत्फ़ गुफ़्तगू होती और प्यार मुहब्बत की बातों से अपने दिल बहलाया करते लेकिन जिस तरह हाजी ख़ानम की बातों में शीरीनीं होती इसी तरह बाज़ वक़्त वह तल्ख़ कलामी पे भी उतर आती थी जिससे मेरे दिल को ठेस पहुँचती। कभी-कभी वह अपने शौहर का भी ज़िक्र करती थी। इस मौके पर मैं रंजीदा हो जाता

लेकिन इस क़ैफ़ियत को देखकर रुये सुख़न बदल देती और खुलूसे मौहब्बत की बातें करके मेरे दिल का गुबार दूर कर देती ।"

प्रेम प्रसंगों की ऐसी स्थिति में ही वाजिद अली शाह एक अन्य सेविका इलाही खानम के प्रति प्रेमासक्त हो गया । इलाही खानम की आयु लगभग तेरह-चौदह वर्ष की थी और वह फैजाबाद की रहने वाली थी । जब इलाही खानम विदा होने लगी तो उसने वाजिद अली शाह को एक अँगूठी और हाथी दांत की दो चार कंघियां निशानी के तौर पर दी ।

वाजिद अली शाह जब इसी प्रकार के अनेकों प्रेम प्रसंगों में उलझकर उनका भरपूर आनन्द ले रहा था तभी सोलह वर्ष की अवस्था में उसके माता पिता ने उसका विवाह एक साधारण समारोह में नवाब अली नकी खाँ की पुत्री के साथ सम्पन्न कर दिया । वैसे तो कई जगह के रिश्ते तय हुए पर किसी न किसी कारण टूटते गये ।

कुछ समय दुल्हन के साथ आनन्द मय जीवन व्यतीत करने के उपरान्त दुल्हन को "आजमवहू" की उपाधि से विभूषित किया गया । वाजिद अली शाह ने इस अवधि के प्रारम्भ के पाँच मास तक अपनी पत्नी के साथ एक रसता का ऐसा प्रेम प्रवाह बनाये रखा जैसा वास्तव में पति पत्नी में होता है । वह लिखता है—

"मुझमें और मेरी मनकुहा बीबी में शुरू के पाँच महीने तक मुहब्बत का वह अतवात कायम रहा जो मियाँ बीबी में होता है ।"

अपने स्वभाव और आदतों के वशीभूत वाजिद अली शाह विवाह के चन्द दिनों के बाद ही अन्य स्त्रियों की सुन्दरता के आकर्षण से मोहित होने लगा और उनसे कामवासना की तृप्ति के प्रति आसक्त रहने लगा । आजमवहू को जब उसकी इस निर्लज्जता का आभास हुआ तो वह उसकी दुराचारी प्रवृत्ति के कारण अप्रसन्न रहने लगी । आजमवहू की इस खिन्नता पर भी वाजिद अली शाह अपने विषयी जीवन में सुधार न ला सका । वह अपने महल की सेविकाओं के साथ गुप्त रूप से हँसी मजाक किया करता जो उसकी पत्नी को खटकते थे। इसी कारण आजमवहू ने चन्द सेविकाओं को निकाल दिया । इस पर भी वाजिद अली शाह अपने चंचल स्वभाव से विवश दिन रात ऐसे ही विचारों में डूबा रहता था । इस स्थिति का वर्णन करते हुए उसने स्वयं लिखा है—

"......इस दौरान में अपने महल की नौकरानियों और ख़ादिमाओं से मैं छुप-छुप कर हँसी मजाक किया करता था लेकिन मेरी यह हरकत मेरी बीबी को नागवार होती थी । चुनाचे उन्होंने चन्द नौकरानियों को निकाल दिया और मेरी निगरानी के लिए माकूल इन्तजाम किया । लेकिन मैं अपनी शोख़िए तबियत से मजबूर था । दिन रात इसी किस्म के ख़यालात में मुज़तरिब रहता था ।"

जब वाजिद अली शाह की आयु सत्तरह वर्ष की हुई तब उसका यौवन पूर्णता प्राप्त कर चुका था। उफान खाती इस जवानी में उसकी यही हसरत और तीव्र इच्छा रहती थी कि वह अपना अधिकतर समय सुन्दरियों के मध्य ही व्यतीत करे। उसकी इस इन्द्रिय लोलुपता में कुछ ऐसे अवरोध थे जिनके कारण वह खुले आम स्वतन्त्रता के साथ अपनी वासना की तृप्ति नहीं कर सकता था। इस स्थिति से निपटने के लिए उसने यह योजना बनाई कि खूबसूरत औरतों को सेविकाओं के रूप में रखकर गुप्त रूप से उनके साथ काम वासना की तृप्ति की जाये। वह लिखता है—

"......मेरी उम्र सत्तरह बरस थी। चूँकि अभी मेरे अख़वाने शबाब का जमाना था और मुझमें जवानी का जोशो ख़रोश और तबीयत पुरशोर थी इसलिए मुझमें यह ख़्वाहिश पैदा हुई कि शबाब का यह अहदे ख़ूबसूरत व जोश जमाल औरतों की मुहइयत में गुजारूँ लेकिन कुछ ऐसी रुकावटें थीं कि मैं आज़ादाना तौर पर अपनी ख़्वाहिशात को पूरा न कर सकता था आखिर मैंने यह तरकीब सोची कि तस्कीने कल्ब के लिए औरतों को खादिमाओं की हैसियत से मुलाज़िम रखकर खुफ़िया तौर पर इनसे इश्क़ो मुहब्बत के मरासिम बढ़ाऊँ। इस राहत अफ़ज़ा तजवीज़ से दिले बेकरार काबू में आया।"

नसीरुद्दीन हैदर के यहाँ जलसावालियों में सेविका रह चुकी एक सुन्दर स्त्री मोती खानम को वाजिद अली शाह ने सेविका के रूप में रखा और उससे प्रेम करने लगा। यह कोई गुप्त बात नहीं थी कि मोती खानम को उसने अपने मजे और इच्छाओं की तृप्ति के लिए सेविका के रूप में रखा था, उसका यह कारनामा आजमबहू को अच्छा न लगा। आजमबहू के द्वारा मोती खानम की सेवायें समाप्त कर दी गयीं और वाजिद अली शाह की स्थिति प्रायः नजरबन्द जैसी कर दी गई। वाजिद अली शाह लिखता है—

"......चुनाचें इसी ख़याल को पेशे नज़र मैंने मोती खानम नामक एक औरत को नौकर रखा। छरहरा बदन, गन्दमी रंग, बड़ी खूबसूरत आँखें, लम्बी भवें, तबीयत में चालाकी, मिजाज़ में गर्मी, चेहरे पर कुछ-कुछ चेचक के दाग़ थे। यह कोई ढ़की छिपी बात न थी कि मैंने मोती खानम को अपने आराम और अपने दिल की मुरादें पूरी करने की खातिर मुलाज़िम रखा था लेकिन मेरा यह अमल मेरे महल को सख़्त नाग़वार गुज़रा और उन्होंने बड़ा ऊधम मचाया जिसका नतीजा यह हुआ कि मोती खानम अपनी मुलाज़मत से बरतरफ कर दी गई और मैं जनाब वालिद साहब किबला का मातूब (गिरी नज़र) होकर नजरबन्द कर दिया गया।"

वाजिद अली शाह अपनी प्रेमिकाओं के वियोग में अपना समय काटने लगा। उसकी इस विरहावस्था का रंग उसकी काव्य रचनाओं में झलकने लगा। इस पर भी

उसके हृदय को शान्ति न मिलती थी और हमेशा वह अपने जीवन को वेकार सा समझता रहता। जब उसके पिता अमजद अली शाह को यह मालूम हुआ तो वह बहुत क्रोधित हुआ और उसने यह आदेश दिया कि मोती खानम को वाजिद अली शाह के हवाले कर दिया जाये। साथ ही यह भी कहलवा भेजा कि वाजिद अली शाह उसके सामने न आया करें। इस प्रकार उसने वाजिद अली शाह का सलाम लेना तक बन्द कर दिया। वाजिद अली शाह को अपने पिता के ऐसे कदम से बहुत अफसोस हुआ और उसने अपने पिता की रजामन्दी के खिलाफ कदम न उठाते हुए मोती खानम को अलग कर देने के लिए इजाजत माँगी और मोती खानम को हमेशा के लिए अपने से दूर कर दिया। इस समय उसकी उम्र अठारह वर्ष की थी। मोती खानम की मुहब्बत की याद में वाजिद अली शाह ने दो दीवान और तीन मसनबिया लिखी। वाजिद अली शाह गुमसुम सा रहने लगा और उसकी इस चिन्ता के बारे में कई वार पूछे जाने पर भी उसने कोई उत्तर नहीं दिया। वाजिद अली शाह अपनी महल से भी अपने सम्बन्धों को ठीक न कर सका और आजम बहू के किसी भी प्रश्न का उत्तर नहीं देता था। आजम बहू बहुत ही समझदार औरत थी। उसे यह समझते देर न लगी कि वाजिद अली शाह की ऐसी स्थिति उसकी खुद की गलतियों का परिणाम है और उसने यह भी अनुभव किया कि वाजिद अली शाह की नाराजगी हासिल करके कोई कार्य करना उचित नहीं होगा। यहाँ तक कि आजम बहू ने वाजिद अली शाह के सम्मुख उसे प्रसन्न करने के लिए ऐसा प्रस्ताव रखा जिसके अनुसार उसने वाजिद अली शाह की खुशी के लिए मोती खानम को साथ रखने की अनुमति दे दी और कहा कि इस बात पर रंज नहीं करूँगी। वाजिद अली शाह ने अपने अनुकूल उसके ऐसे प्रस्ताव को सुनकर प्रसन्नता व्यक्त करते हुए लिखा—

> **"......अल्लाह ताला ने चूँकि मां बाप की अताअत को दुनिया के जुमला उमर से अफ़जल करार दिया है इसलिए मैंने इस औरत को अलैहदा कर दिया और हज़रत किबला की ख़िदमते अकदस में अर्ज़दाश्त पेश की कि ये बन्दे बेदाम बतौर फ़रमान बाज़िबुल अज़हान आपका ताबे है और ये मेरी मजाल नहीं कि मैं आपकी रज़ामन्दी के खिलाफ कोई एक़दाम करूँ। मेरी अर्ज समाअत फ़रमाने के बाद इरशादे आली हुआ कि तुम मोती ख़ानम को खुशी से अलग कर सकते हो।**
>
> **उसके बाद मैंने मोती ख़ानम को अपने से ज़ुदा कर दिया। उस दिन के बाद से कभी भूल कर मैंने इस औरत का ख़याल न किया। अगरचे वालिद साहब मरहूम दाखिले जन्नत हो चुके हैं और उसके बाद मैं रियासत का ख़ुदमुख़तार बादशाह हुआ जो मेरा जी चाहे कर सकता था लेकिन जो वादा कर चुका था उसको पूरा करना है।**

यह वाक्या उस वक़्त का है जब कि मेरी उम्र सिर्फ अठ्ठारह बरस की थी इसी ज़माने में मुझे फ़ने शेर का शौक हुआ और उस औरत यानी मोती ख़ानम की मौहब्बत में गज़लों के दो दीवान मुरत्तिब किये और तीन मसनबियां मौंजू की लेकिन अपने दिल की बेचैनी को किसी पर ज़ाहिर न होने दिया। हकीक़त यह है कि इस आतिशे गम में इतना जला कि मुझमें जान नाम को रह गयी थी।"

इसी अवधि में बत्तीस वर्षीय एक गाने वाली औरत मुसम्मी साहिबे खानम से वाजिद अली शाह को इश्क हो गया। मुसम्मी साहिबे खानम बहुत सुन्दर गाती थी और ताश भी खेलना जानती थी। हालाँकि यह औरत तीन बच्चों की माँ थी फिर भी वह वाजिद अली शाह की सूरत देखे बगैर सो नहीं पाती थी। यहाँ तक कि वह वाजिद अली शाह की तलाश में बेचैन रहती और दौड़ी-दौड़ी फिरती थी। वाजिद अली शाह लिखता है—

"......इसी ज़माने में एक गाने वाली औरत मुसम्मी साहबे ख़ानम पर मेरी नज़र पड़ी। इसकी उम्र कोई बत्तीस या कुछ ज्यादा थी। यह बहुत उम्दा गाती बजाती थी और गंजफा भी खूब खेलती थी। वह दो या तीन लड़कियों की मां थी। वह मेरे लिए इश्क़ में मुब्तला हो गयी। नौबत यहाँ तक पहुँची कि वह मेरी सूरत को देखे बगैर कभी रात को सो नहीं सकती थी। हर वक़्त मेरे ही पास बैठी हुई ताश खेलती रहती या गाने बगैरह में वक़्त गुजार देती। मेरी ताज़ा तरीन गज़लें बड़े शौक से गाया करती थी उनमें से एक गज़ल का मतला है—

"पड़ा है पांव में अब सिलसिला मोहब्बत का
बुरा हमारा हुआ हो भला मोहब्बत का।"

"......मैं रोज़ाना इसे रुपया दो रुपया दिया करता था जो कि वह दिल से कबूल किया करती थी। मेरे लिए पान के बीड़े बनाया करती थी। इत्तफाक से मैं कुछ देर के लिए इसे दिखाई न देता तो वह बेताब हो जाती और हर तरफ मेरी तलाश में दौड़ी दौड़ी फिरती। मैं कभी बाहर होता तो दरवाजे के रौज़न से मुझे पहरों देखती रहती। कभी कोठे पर चढ़कर मुझसे आँखें लड़ाया करती थी मुख्तसिर ये कि मुझे देखे बगैर एक लम्हा भी वह गुजार न सकती थी।"

आजम बहू को वाजिद अली शाह के इस नये प्रेम प्रसंग के बारे में सब कुछ मालूम था परन्तु भय के कारण कुछ न कहती थी। वाजिद अली शाह लिखता है—

"......अगरचे मेरे महल को मेरे और साहबे ख़ानम के बाहमी इश्क़-ओ-मुहब्बत की ख़बर थी लेकिन हिन्दी की इस कहावत कि "दूध का जला छाछ भी फूँक कर पिये" वह कुछ न कह सकती थी।

इस तरह वह राज़ी व रज़ाये इलाही होकर चुप थी। बाज़ वक़्त मेरी खुशनूदगी के लिए साहबे ख़ानम की खातिर तवाज़ो और मदारद भी किया करतीं।"

साहवे खानम वाजिद अली शाह के प्यार में इस हद तक पागल हो चुकी थी कि एक दिन उसने सितार की सिंदरी गर्म करके अपनी बांई जाँघ को दाग लिया फिर उस पर पट्टी बाँधकर वाजिद अली शाह के पास लंगड़ाती हुई आयी और अपने घाव के लिए मरहम माँगने लगी। इस घटना के बाद वाजिद अली शाह और साहबे खानम में लैला मंजनू की तरह का प्रेम सम्वन्ध स्थापित हो गया। वाजिद अली शाह लिखता है—

"......साहबे ख़ानम मेरी मुहब्बत में इस कदर दीवानी हो गयी कि एक रोज़ उसने सितार की सिन्दरी खोलकर आग में गर्म की। जब वह अंगारा सी सुर्ख़ हो गयी तो अपनी बाँई रान को दाग़ दिया। इस तरह सितार की सिन्दरी उसकी रान के गोश्त में धँस गयी। इसके बाद वह ज़ख़्म को मरहम पट्टी करके बाँये पांव से लंगड़ाती हुई मेरे पास आयी जब मैंने देखा कि साहिबे ख़ानम लँगड़ाती हुई आ रही है तो मैं परेशान सा हो गया कि ये ख़ुदा इसको यह क्या हो गया है। जब वह मेरे करीब आयी तो बड़े दर्द अंगेज़ लहज़े में कहने लगी अफ़सोस मुझे आपने मरहम भी इनायत न फ़रमाया। मैंने कहा तुम्हें मरहम की ज़रूरत क्यों पेश आयी। इस पर उसने जवाब दिया कि मैं अपनी रान के ज़ख़्म पर लगाने के लिए माँग रही हूं। आप अगर नामुनासिब न समझें तो ज़रा सा मरहम इनायत फ़रमायें ताकि मेरा जख़्म मुन्दमिल हो जाये। मैंने तजस्सुस और तहइयुर की नज़र से देखा तो वाकई इसकी बाँई रान में गहरा जख़्म था जिससे उसकी बात का यक़ीन हो गया और उस वाक़िये के बाद हम दोनों का रब्ते मुहब्बत लैला मंजनू की तरह क़ायम हो गया। ये सिलसिला एक साल तक रहा।

"यहाँ तक दिलो जां से मफतूह था मैं,
कि लैला थी वो और मंजनू था मैं।"

एक रोज आजम बहू ने वाजिद अली शाह से पूंछ ही लिया कि आजकल उसका इश्क क्या रंग ला रहा है। इस पर वाजिद अली शाह ने बड़ा रूखा सा उत्तर दिया कि जैसा भाग्य में है वही होगा तुम्हें इससे क्या। फिर बात बदलते हुए वाजिद अली शाह ने अपनी महल से फरमाया कि आजकल तुम मेरे लिए किसी औरत का इन्तजाम कर देतीं तो क्या ही अच्छा होता। आजम बहू बहुत समझदार औरत थी और वाजिद अली शाह के मिजाज को अब खूब पहचानने लगी थी। वह इस नतीजे पर पहुँच चुकी थी कि वाजिद अली शाह का काम उसकी बगैर इच्छा के नहीं चल सकता। ऐसा निष्कर्ष

निकाल कर उसने अन्य स्त्रियों को सेविका के रूप में बुलाना प्रारम्भ कर दिया। वाजिद अली शाह लिखता है—

> "जब मेरे महल को मेरे और साहबे ख़ानम के रब्तोज़ब्त की ख़बर हुई तो एक दिन मुझसे पूंछा कि आपका मौजूदा शग़ले-ए-इश्क़ आपके हस्बे मर्ज़ी हुआ या नहीं। मैंने जवाब दिया तुम्हें दूसरों के मामलात से क्या तआल्लुक। मेरी क़िस्मत में जो कुछ है वही होगा। अलबत्ता मैं इस वक़्त तुम्हारा अहसान मन्द होता जब कि तुम किसी औरत को मेरी मुलाक़ात के लिए मुन्तख़िब करतीं। मेरी बीबी बेहद अकलमन्द और मिजाज़ शनास औरत है लिहाज़ा वो फौरन इस नतीजे पर पहुंच गई कि अब मेरी इताअत व रज़ा के वग़ैर काम नहीं चल सकता। चुनाचे उन्होंने फौरन दूसरी औरतों को मुलाज़मत के लिए बुलाना शुरू कर दिया।"

आजम वहू के ऐसे निर्णय से वाजिद अली शाह को खुशी हुई और शीघ्र ही उसकी इच्छा भी पूरी हुई। नई-नई सेविका के रूप में आयी उम्दा खानम से उसे प्रेम होने लगा। उम्दा खानम गोरे रंग की सत्ताईस वर्षीय औरत थी। यहाँ से पूर्व वह नसीरुद्दीन हैदर के यहाँ अच्छे पद पर सेविका रह चुकी थी। वाजिद अली शाह लिखता है—

> "......मेरे महल के यहाँ उम्दा बेगम नाम की एक औरत आकर मुलाजिम हुई। यह बड़ी अच्छी खातून थी। इनकी उम्र कोई सत्ताइस साल की थी। गोरा रंग, तनासुब अतना, ताश खेलने में माहिर थी।
>
> जब मैंने उम्दा बेगम को देखा तो वह मुझे बहुत पसन्द आयी। रफ़्ता-रफ़्ता उनकी मुहब्बत ने मेरे दिल में जगह पैदा करली। उन्होंने भी मेरी मुहब्बत का जवाब अपने नाज़ो अन्दाज़ से देना शुरू किया। पोशीदा तौर पर उनका इश्क़ मुझसे कई गुना ज्यादा था।"

जब साहिबे खानम और उम्दा बेगम को अपनी-अपनी स्थिति का आभास हुआ तो दोनों ही एक दूसरे से जलने लगीं। वाजिद अली शाह ने साहबे खानम से ही सम्बन्ध तोड़ना उचित समझा क्योंकि वह एक विवाहिता औरत थी और वादशाह के यहाँ सेविका थी।

वाजिद अली शाह की उम्र लगभग बीस बरस की हो चली थी और उसके मन की चंचलता भी उम्र के साथ जोर पकड़ती जा रही थी। संगीत में निपुण स्त्रियों के प्रति उसका आकर्षण अन्य की अपेक्षा अधिक ही रहता था। ईशा अल्लाह खाँ नामक प्रसिद्ध कवि की तीन नवासियां उसके पिता की सेविका के रूप में कार्य करती थीं। तीनों

ही संगीत कला में अत्यन्त निपुण और बड़े मधुर कण्ठ से मर्सिया पढ़ा करती थीं। बड़ी—हैदरी बेगम, मँझली—मोहमदी बेगम और छोटी का नाम नन्ही बेगम था। नन्ही बेगम की उम्र उस समय लगभग सत्तरह बरस थी। नन्हीं बेगम के प्रति वाजिद अली शाह आसक्त हो गया। इस आसक्ति का कारण यह था कि नन्हीं बेगम की सूरत पाराहवाली सरफराज के नाम से ख्याति प्राप्त एक देहात की रहने वाली वैश्या से मिलती जुलती थी जिसे वाजिद अली शाह ने अपने पितामह के शासन काल में मिर्जा सिकन्दर बहादुर हश्मत के विवाह समारोह में देखा था। बचपन से ही संगीत के प्रति रुचि रखने वाले वाजिद अली शाह में सरफराज वैश्या के प्रति आकर्षण उत्पन्न हो गया था परन्तु भय के कारण वह कुछ न कर सका था। नन्हीं बेगम की सूरत सरफराज वैश्या से मिलती जुलती होने के कारण वह वाजिद अली शाह के मन को भा गयी परन्तु नन्हीं बेगम उसकी ओर से लापरवाह रही और सदा ही वाजिद अली शाह को टाल दिया करती थी। वाजिद अली शाह लिखता है—

> "नन्हीं बेगम की शक्लो सूरत हूबहू एक औरत से मिलती जुलती थी जो पाराहवाली सरफ़राज़ के नाम से मशहूर थी। सरफ़राज़ एक तवायफ थी जो कि देहात की रहने वाली और पाराह की ठेकेदार भी थी। मैंने इसे फिरदौस मंजिल हज़रत मोहम्मद अली शाह के जमानये हुक़्मरानी में अपने बिरादरे ख़ुर्द मिर्ज़ा सिकन्दर हश्मत बहादुर की तकरीबे शादी में देखा था। इस वक़्त इसकी उम्र तकरीबन १७–१८ बरस की थी और मेरी उम्र भी करीब-करीब इतनी ही होगी। चूँकि इस जमाने में वह मौसीकी में काफी शोहरत रखती थी और मैं भी बचपन से रक्सो सरूर से काफी दिलचस्पी रखता था इस वास्ते मैं इसके ग़मज़े इश्क़ का असीर हो गया लेकिन इसके दिल में मेरे लिये न कोई चाह हुई और न ही मैं अपने बुजुर्गों के डर से उसके नाम कोई पैग़ाम भेज सका। नन्ही बेगम मुझे बड़ी भली लगी लेकिन नन्हीं बेगम ने मेरी इस इनायत की कोई परवाह न की।
>
> कभी मुझे तन्हाई का ऐसा मौका मिल जाता जहाँ नन्हीं बेगम भी मौजूद होती तो मेरे कुछ कहने से कब्ल ही वह वहाँ से रफू-चक्कर हो जाती और शरारत से मुझसे कहती कि मैं देर से आपका इन्तजार कर रही थी आप फलां वक़्त कहाँ थे खैर छोड़िये ये बातें किसी और मौके पर होगी।"

वाजिद अली शाह ने उम्दा बेगम के कारण ही साहिबे खानम को दूर कर दिया था जिससे साहिबे खानम को बाद में अपने किये पर काफी पछतावा हुआ। वाजिद अली शाह ने साहिबे खानम के सम्मुख यह प्रस्ताव भी रखा कि वह उसकी दोनों

पुत्रियों को स्वीकार कर लेगा यदि यह अपने पति से तलाक ले ले परन्तु साहिबे खानम अपनी जिन्दगी सुधारे जाने की इस शर्त को स्वीकार न कर सकी।

साहिबे खानम के बाद उम्दा बेगम से प्रेम सम्बन्ध काफी बढ़ने लगे लेकिन साथ ही वाजिद अली शाह का हृदय नन्हीं बेगम का प्यार हासिल करने के लिए बेचैन रहने लगा। उसे इस बात का भय था कि कहीं नन्हीं बेगम और उम्दा बेगम परस्पर द्वेष न करने लगें। दोनों एक दूसरे की स्थिति को अन्ततः जान ही गई परन्तु उम्दा बेगम वाजिद अली शाह से बेहद मुहब्बत करती थी इसलिए अधिक परेशानी पैदा न कर सकी। यदि कभी-कभी स्थिति बिगड़ भी जाती तो भी आजम बहू ने उन दोनों को घर से जाने की आज्ञा प्रदान न की। वाजिद अली शाह लिखता है—

> "......साहिबे ख़ानम से तर्के तालुक़ात के बाद उम्दा बेगम से मरासिमे मुहब्बत ज़्यादा बढ़ गये थे लेकिन चुपके-चुपके मैं नन्हीं बेगम के तीरे इश्क़ का भी घायल था। मैंने कोशिश की थी कि उम्दा बेगम का इश्क़ नन्हीं बेगम पर ज़ाहिर न हो और नन्हीं बेगम मेरी मरकजे तवज्जे बनी रहे। इसकी इत्तिला उम्दा बेगम को न होने पाये लेकिन ये दोनों एक दूसरे को ख़ूब पहचान गयीं। उम्दा बेगम इस बेपनाह मुहब्बत की वजह से ज़्यादा गड़बड़ न कर सकी और उसने मुलाज़मत तर्क करने का इरादा भी जाहिर किया मगर मेरी महल ने उनकी दर्ख़ास्त तक न मंजूर की और न उन्हें घर जाने की इजाज़त दी।"

अपने प्रेम प्रसंगों में उलझा हुआ, दुनियां की सभी बातों से अनभिज्ञ वाजिद अली शाह अपने इस निराले रंग में डूबा हुआ था कि तभी इस बेखुदी और आशिक मिजाजी में मस्त वाजिद अली शाह को उसके पिता अमजद अली शाह ने अपना उत्तराधिकारी घोषित कर दिया। इस समय में वह एक बार पिता की खिदमत में सलाम हाजिर करने के अलावा केवल उम्दा बेगम के इश्को-मुहब्बत में डूबा रहता था। यहाँ तक कि उसने उम्दा बेगम को अपनी महल बनाने का विचार भी बनाया। वह लिखता है—

> "......जनाब वालिदे माजिद हज़रत जन्नत मकां अमजद अली शाह बादशाह ने आबाई तख़्ते सल्तनत पर जुलेसे इज़लास फ़रमाया। मैं ख़ुदा के फज़्लो करम से मंसबे वली अहदी से सरफ़राज़ हुआ। इसके बाद से मुझे यह ख़याल होने लगा कि उम्दा बेगम साहिबा को महल बनाया जाये। उनसे मुझे इस दर्जा मुहब्बत हो गयी कि सिवाय एक पहर सोने और जनाब वालिद साहब की ख़िदमत में सलाम को हाजिर होने के मैं एक लम्हा भी उनको दूर न होने देता था। हम दोनों का इश्क़ लैला मजनू और शीरी फ़रहाद की तरह था।"

वाजिद अली शाह के उत्तराधिकारी होने के बाद नन्हीं बेगम के हृदय में भी यह इच्छा बलवती होने लगी कि किसी न किसी तरह इस दौलत मन्द दीवाने वाजिद अली शाह की बेगम बनकर क्यों न जिन्दगी सुधार ली जाये। उम्दा बेगम के ख्यालों में डूबे वाजिद अली शाह को नन्हीं बेगम प्रभावित न कर सकी।

उम्दा बेगम के प्रति वाजिद अली शाह की आसक्ति शान्त न हुई जब कि खास महल के दिल में उम्दा बेगम के प्रति ईर्ष्या वाजिद अली शाह पर स्पष्ट हो चुकी थी परन्तु पूर्व की घटनाओं पर सोचते हुए वह चुप रह गई। अवसर मिलते ही वाजिद अली शाह ने उम्दा बेगम को महल का स्तर देते हुए "खुर्द महल" की उपाधि से विभूषित कर अपनी इच्छा की पूर्ति की। उम्दा बेगम को काफी धन दौलत दिया गया लेकिन डेढ़ ही माह में वाजिद अली शाह का हृदय उस पर से हट गया। वह लिखता है—

"......उम्दा बेगम से अफ़जूनी मुहब्बत का यह नतीजा हुआ कि ख़ास महल के दिल में भी रक़ाबत की आग भड़कने लगी और ज़मीनों आसमान उनकी नज़रों में अंधेरे हो गये लेकिन हिन्दी ज़ुबान की इस मस्ल के मुताबिक—"दरिया में रहकर मगर मच्छ से बैर अक़्ल मन्दों का काम नहीं" वह कुछ न कर सकी।

इधर जवाहरात और पश्मीना से भरी हुई कश्तियों, चाँदी के ज़रुफ और कीमती आशियां उम्दा बेगम साहिबा के वास्ते तैयार किये जाने लगे। फिर मेरी वली अहदी के बाद उम्दा बेगम साहिबा मेरी महल हो गई और "ख़ुर्द महल" नवाब उम्दा बेगम साहिबा के ख़िताब से मुमताज़ हुई। डेढ़ माह तक नवाब ख़ुर्द महल का सितारा तक़दीरे मेहरेजहां ताब की तरह सिपहरे इक़बाल पर रोशन रहा इसके बाद यह कहावत सही साबित हुई कि—

"चार दिन की चांदनी फिर अंधेरी रात"

इस अवधि में नन्हीं बेगम जो उम्दा बेगम से ईर्ष्या करती थी इस प्रयास में लगी रही कि किसी न किसी तरह वाजिद अली शाह का दिल जीत कर वह उसकी बेगम बनने का अपना इरादा पूरा कर ले। अन्ततः एक दिन वह छतर मंजिल के एक बुर्ज पर चढ़ गयी और वहाँ से गोमती में कूदकर आत्म हत्या करने का प्रयास किया परन्तु वाजिद अली शाह ने उसे हाथ से पकड़कर रोक लिया और इस तरह वह अपने मकसद में कामयाब न हुई लेकिन सिर्फ पन्द्रह दिनों की अवधि में ही वाजिद अली शाह का दिल इससे भर गया। वाजिद अली शाह लिखता है—

"......नन्हीं बेगम चाहती थी कि मैं किसी तरह नवाब उम्दा बेगम के दामे मुहब्बत से छूट कर इसे अपना महल बना लूँ। बिल आख़िर मैं इसके मक्र के जादू से महफ़ूज न रह सका। इसने मेरी महल बनने की ख़्वाहिश में मुख़्तलिफ हरबे इस्तेमाल किये और मुझे आमादा कर लिया।

एक दिन छतर वाले मकां (जो बाद में छतर मंजिल के नाम से मौसूम हुआ) वाक्ये कनारे दरिया-ए-गोमती की तरफ वाले बुर्ज पर चढ़ गयी और उसके बाद वह अपने को दरिया में गिरा देना चाहती थी लेकिन मैंने लपक कर उसका हाथ थाम लिया और कहा कि ऐसी हरकत ऐन जहालत व बददिमाग़ी के सिवा कुछ नहीं। ये निहायत बेजा हरक़त है इससे सिवाये उकवा में रुसवाई और दुनियां भर में बदनामी के कुछ हासिल न होगा। इस तरह मैंने उसको इस ख़तरनाक इरादे से बाज़ रखा। इसी दौरान में इसकी लड़की का इन्तक़ाल भी हो गया।

गरज ये कि ख़ुर्द महल नवाब उम्दा बेगम साहिबा के महल होने के डेढ़ माह बाद नन्हीं बेगम को मैंने महल बना लिया। निशात महल नवाब नन्हीं बेगम साहिबा का इन्हें ख़िताब दिया और थोड़े से ज़री जवाहर और कुछ मलबूसात देकर इन्हें एजाज़ बख़्शा। सिर्फ पन्द्रह रोज़ तक मुश्किल से इनकी क़िस्मत का सितारा चमका।"

वाजिद अली शाह बाल्यकाल से ही नाच गाने का वेहद शौकीन था परन्तु वाजिद अली शाह यह भली भाँति समझता था कि इस शौक के लिए दौलत का होना वहुत जरूरी होता है। यह दौलत वाजिद अली शाह को तभी मिले जव उसे अवध का उत्तराधिकारी घोषित किया जाय। उसे नाच गाने का शौक पूरा करने के लिए हर साधन उपलब्ध होने लगे और अतिरिक्त सुविधायें तथा पद की शक्ति का लाभ भी अव वह उठा सकता था। वाजिद अली शाह का सपना साकार हो रहा था और वह पूरे जोर शौर के साथ अपने अरमान पूरे करने में जुट गया। वाजिद अली शाह की पसन्द की एक विचित्र विशेषता यह रही है कि उसने सामाजिक स्तर और पेशे आदि का भेद अपनी प्रेमिकाओं के चयन में कभी नहीं किया। यदि कोई भेद किया भी तो सदैव ही प्राथमिकता संगीत और नृत्य के प्रति स्त्रियों की रुचि और उसमें निपुणता को दी। शारीरिक सुन्दरता को दूसरे स्तर पर रखा।

वर्षा ऋतु के लुभावने मौसम में जब कि घटायें छायी हुई थी और हल्की-हल्की फुहार सारी प्रकृति को गुदगुदा रही थी ऐसे ही माहौल में एक रोज नृत्य और गायन की महफिल अपने पूरे रंग में सजी हुई थी जिसमें हर कोई डूवा हुआ था। वाजिद अली शाह ऐसी ही एक महफिल का लुत्फ ले रहा था। वह लिखता है—

"........बरसात का मौसम था। एक रोज़ आसमान पर स्याह बादल छाये हुए थे। हल्की फुहार पड़ रही थी। हवा के झोंके रूह में ताज़गी पैदा करते हुए दिलो दिमाग को गुंचए शिगुफ्ता की तरह हिला रहे थे। तायराने समा फरोश गुलिस्ताँ की शाख़-शाख़ पर बैठे हुए महवे ज़मज़मा परवाज़ी थे जिनकी पुरकशिश आवाज

दिल पर अजीब ताउसर छोड़ रही थी। जरनियार ताऊस हर तरफ रक़्स में मसरूफ़ थे। अब्र पारे बाग़ की रवीशों पर पानी छिड़कते हुए गुज़र जाते थे। महफिले ऐशो तरब सजी हुई थी। मेरे मुतावस्सील जितनी औरतें थी सब की सब मुझे अपने हल्के में लिए बैठीं थीं। नाच गाने का एक कयामतखेज हंगामा बरपा था। मोरछल बरदार मुरस्सा मोरछल मेरे ऊपर झूल रहे थे। हर शक़्स पर जोशो सरमस्ती का एक अजीब आलम तारी था बकौल शायर के……

"बहिश्त आंजां कि आजारे नबाशद
किसे शबा किसे कारे नबाशद।"

इसी सभा में उसके भाई मिर्जा सिकन्दर हश्मत ने सौन्दर्य के सभी लक्षणों से युक्त एवं जवानी से भरी हुई अट्ठारह वर्षीय एक कमसिन वैश्या वजीरन का वर्णन कुछ इस तरह किया कि वाजिद अली शाह उसे प्राप्त करने के लिए व्याकुल हो गया। मिर्जा सिकन्दर हश्मत बहादुर वाजिद अली शाह की नीयत को भांप गया और बहाना बनाते हुए वजीरन के नृत्य को फिर कभी के लिए टाल दिया। वाजिद अली शाह दिल मसोस कर रह गया। वह लिखता है—

"……चूंकि मेरे इख़्तियारात बाक़ी न रहे थे इसलिए अपने दिल पर जब्र करके ख़ामोश हो रहा लेकिन इस औरत की एक दिन की जुदाई एक बरस मालूम होने लगी।"

दूसरे ही दिन मिर्जा सिकन्दर हश्मत इस नाजनीन को लेकर हाजिर हुआ। जिस तरह वजीरन अपने नाजो अन्दाज के साथ वाजिद अली शाह के सम्मुख आयी उसका वर्णन करते हुए वह लिखता है—

"……रंग कुन्दन की मिसाल दमक रहा था। अजीब नाज़ो अन्दाज़ के साथ, दिलों को कुचलती हुई कदम उठा रही थी और अतलस का पाजामा और उस पर सुर्ख़ रंग की मिसाला टकी पेशबाज़ पहने हुए थी। अपने साजिन्दे के साथ हँसी मज़ाक की बातें करती और एक अदाये ख़ास से मुस्कराती अठखेलियां करती चली आ रही थी। उसकी उम्र अठ्ठारह बरस की या उससे कुछ ही ज्यादा होगी।"

वाजिद अली शाह वजीरन को देखते ही उस पर मर मिटा और उसी समय अपने खयालात वजीरन पर जाहिर करने के लिए बेचैन होने लगा मगर इसी दौरान वजीरन ने अपना नृत्य और गायन प्रारम्भ कर दिया। वह लिखता है—

"जैसे ही उससे मेरी आँखें चार हुयीं, इश्क़ का एक तीर मेरे दिल के पार हो गया। इस ख़याल से कि एक हमचश्मों का जलसा है इसलिए ज़ुबान से कुछ कह न सका। दोनों हाथों से अपना दिल

थामे और चुपके-चुपके कराह के रह गया। मुझ पर बेख़ुदी का वह आलम था कि मुमकिन था कि मैं फरते शौक़ में दास्ताने मुहब्बत छेड़ बैठता लेकिन शर्म दामनगीर हुई। मैं कुछ इसी किस्म की दिली कैफ़ियत में डूबा हुआ था कि वजीरन ने अपना नाच गाना शुरू कर दिया......"

"हुस्न क्या कम था जो आइने की खोली कलई,
एक हैरानी ज़्यादा हुई हैरानों पर।"

जब यह सभा अपने पूरे शबाब पर थी वाजिद अली शाह की आँखों से अश्रुधारा वह निकली। जब उसकी सहन शक्ति जवाब देने लगी तो उसने सभा समाप्त करने के आदेश दे दिये। वह लिखता है—

"......वह तो इधर सरगमे रक़्स थी और उधर मेरी आँखों से आँसुओं का तार बँधा था। आखिर मुझमें ज़ब्त की ताक़त न रही और मैंने इसी बेख़ुदी के आलम में महफ़िल बर्खास्त करने का हुक्म दे दिया।"

अगले दिन जब वजीरन से मुलाकात हुई तो उसके नजरों के तीर से घायल वाजिद अली शाह का दिल उसको पाने के लिए तड़पने लगा। वह लिखता है—

"......दूसरे दिन इसी तरह इस परी तमसाल ने वज़्म में आकर अपने इश्वाओं नाज़ का मुज़ाहिरा किया और मुझ फ़ुरक़त नसीब को अपने तीरे अदा से ऐसा घायल किया कि मुझमें ताक़त न रही और मेरे लिए सोना और खाना पीना तक हराम हो गया। इसकी नाजुक मिज़गा ने मेरे दिल को यूँ दो टुकड़े कर दिया कि वो मुरग़े बिस्मिल की सूरत तड़पने लगा।

वाजिद अली शाह के निवास में दरोगा के पद पर पैंतालीस वर्षीय नजमुलनिसां उन दिनों नियुक्त थी। नजमुलनिसां का पुराना नाम प्यारे साहब था और वह नवाब खास महल की चाची तथा मदारुद्दौला की निस्वती बहिन थी। नजमुलनिसां स्वयं भी परवाने की तरह वाजिद अली शाह को दिल से चाहती थी। बहुत ही सलीके मन्द, सभ्य और समझदार नजमुलनिसां वाजिद अली शाह की मित्र की भाँति रहती थी और हर समय वाजिद अली शाह की खुशी का खयाल रखती थी। वाजिद अली शाह के रुपयों पैसों का हिसाब किताब तक वही रखती थी। वाजिद अली शाह के दिल की बात और इच्छायें वो आँख के इशारे या अन्य हरकतों से जल्दी ही भाँप जाती थी और उसी प्रकार का कार्य कर वाजिद अली शाह को खुश करने का प्रयास बिना कहे ही किया करती थी। नजमुलनिशां की सिफारिश पर ही वाजिद अली शाह ने अठ्ठारह मोरछल बरदार शोख तर्रार और नाजो अन्दाज में अनोखी औरतों को सेविका के रूप में रखा था। वाजिद अली शाह लिखता है—

"......नजमुलनिसां बेगम मरहूमा मेरे महल में ओहदाये दरोग़नी पर मामूर थी। चालीस पैंतालीस साल के सन् की औरत थी। बाइख़लाक़ और समझदार और दोस्त नवाज़ वाक़ये हुई थीं। सुबहान अल्लाह मरते दम तक परवाने की तरह मुझ पर अपनी जान छिड़कती रहीं। मेरे मिजाज़ से इस क़दर वाकिफ हो गईं थीं कि मैं अपने मुँह से अभी बात निकालने भी न पाता वो फ़ौरन तामील कर देतीं। मेरा रुपया-पैसा सब उन्हीं के पास होता था जिसकी वह अपनी जान के बराबर हिफाज़त करती थीं। वह अपने आराम का इतना ख़्याल न रखतीं जितना मेरी ख़ुशनूदगी का। हद दर्जे ख़ुश मिजाज़ व ख़ुश पोशाक़ औरत थीं। ज़रा सा पुरतकल्लुफ लिबास में वह परी मालूम होती थीं। उनका रंग गंदुमी था जिसमें कुछ-कुछ सुर्खी नुमाया थी और रुख़सार पर स्याह तिल था। क़ामत मौज़ूँ और आजाए जिस्म उम्र के लिहाज़ से मुनासिब थे। बड़ी होशियार और अक़लमन्द थीं।

उनके ख़ानदान में उनका पुराना नाम प्यारे साहब था वो जब मेरे महल में ओहदए-दरोगिनी पर फायज़ हुईं तो दरोग़ा नजमुल-निसां बेगम साहिबा के ख़िताब से सरफ़राज़ हुईं। रात दिन मेरे अतराफ़े हाल की तरह रहतीं। जो बात मेरे दिल में होती वह मेरी आँखों के तेवर से समझ जातीं थीं। दरोग़ा नजमुलनिसां बेगम साहिबा ने अट्ठारह मोरछल बर्दार ऐसी औरतों को नौकर रखवाया था कि शोख़ियो तर्रारी नाज़ो अन्दाज़ में हर एक औरत अलग-अलग ख़ुसूसियत की हामिल थी। अगर ये कहा जाये कि हर एक यगानये रोज़गार थीं तो बेजा न होगा।"

वाजिद अली शाह जब वजीरन के बिरह की पीड़ा से जल रहा था और अपने इन हालात को किसी के सम्मुख जाहिर नहीं करता था तो उसकी इस स्थिति को भांपते हुए कि वाजिद अली शाह के दिल में कोई न कोई गम उसे खाये जा रहा है, एक रोज नजमुलनिसां ने उसकी ऐसी हालत के बारे में काफी कुरेद-कुरेद कर पूछने का प्रयास किया और उसकी हसरत को पूरा करने का वायदा किया। वाजिद अली शाह लिखता है—

"—मुख्तसिर ये कि नजमुलनिसां बेगम साहिबा ने जब ये देखा कि मेरी जान ख़तरे में है और मुझ में सबरो जब्त की मुतलक़ ताब नहीं तो मुहब्बत के जोश में एक दिन मेरे कदमों पर गिर गईं और यूँ गोया हुईं-ऐ मेरे जाने आलम मेरी जान आप पर तसद्दुक आखिर ऐसी कौन सी बात है जिसके बाइस आपको अपनी जान की परवाह तक नहीं है। क्या वजह है कि बन्देगाने अक़दस का चिराग़ राहत

हवाए ग़म के झोकों से झुलसा गया है। अल्लाह की क़सम है अगर रात का दिन और दिन की रात या इधर की दुनियां उधर हो जाये तो भी आपकी ये लौंडी आपकी अताअत से कोताही न बरतेगी।"

इसी प्रकार अमीनुद्दौला इमदाद हुसैन खां की सिफारिश पर मीर मोहम्मद मेंहदी नामक एक सैयद को दरोगा के पद पर नियुक्त किया गया था। मीर मौहम्मद मेंहदी वाजिद अली शाह से बेतकल्लुफ होकर अपना रुतबा बढ़ाना चाहता था इसी वजह से उसने भी इस अवसर को उपयुक्त समझते हुए वाजिद अली शाह की परेशानी का कारण पूछा और उसकी इच्छा पूरी करने का वायदा किया।

ममुष्य की चारित्रिक विशेषतायें कभी-कभी चौंका देने वाली होती हैं वह भी तब जब कुछ ऐसे विरोधाभास के लक्षणों से प्रकट हो रही हों, जो स्वाभाविक व्यक्तित्व के प्रति बन रही धारणा को यकायक झकझोर देती हों और मनुष्य के अन्तःकरण की भावना को सही रूप से समझने के लिए पुनः विचार करने को बाध्य करती हों। विलक्षण चरित्र के ऐसे जटिल व्यक्तित्व के धनी वाजिद अली शाह के सम्बन्ध में कोई पूर्व धारणा निश्चित कर लेना असम्भव ही है। अम्मन और इमामन नामक दो बहनें जो देखने में आकर्षक थीं, नजमुलनिसां के साथ वाजिद अली शाह की दिल से सेवा किया करतीं थीं। इनकी माता का नाम मज्जू और पिता का नाम नत्थू था। वाजिद अली शाह का इन दोनों के प्रति अपनत्व इस हद तक बढ़ गया कि उनकी उपयुक्त सेवा और स्नेह के कारण उसने इन दोनों को अपनी मुँह बोली बहन बना लिया। वाजिद अली शाह उन पर अगाध विश्वास किया करता था और उनकी सलाह के बग़ैर कोई कार्य नहीं करता था। जब उसके हृदय की पीड़ा तीव्र होने लगती तब गजलें और गीत मीठे स्वरों में गाकर यह दोनों ही उसे ठण्डा किया करती थीं। वाजिद अली शाह ने इसी जमाने में ठुमरियां लिखना प्रारम्भ किया था जिन्हें यह दोनों बहनें गाकर सुनाया करती थीं। बाजिद अली शाह अम्मन और इमामन का हवाला देते हुए लिखता है—

"..... इन्हीं दिनों दो गाने वाली औरतें मेरी मुलाजमत से सरफ़राज़ हुईं—एक का नाम अम्मन था, दूसरी का नाम इमामन। ये औरतें मेरी सरकार में मुलाज़िम होने से कब्ल रईस फरुखाबाद के यहां अपने पेशे के तुफ़ैल में बड़ा एजाज़ हासिल कर चुकीं थीं। खुदा मालूम क्योंकर वहां से निकलकर मेरी सरकार में सरफ़राज़ हुईं। इन्हें सरवर महल वालियां का ख़िताब दिया गया। ये दोनों हक़ीकी बहनें थीं। अम्मन और इमामन दिल से मेरे साथ मुहब्बत रखतीं थीं। हमेशा दरोगा नजमुलनिसां बेगम साहिबा के साथ मिलकर सच्चे दिल से मेरी ख़िदमत गुज़ारी करतीं। मैंने अम्मन और इमामन को बहन बना लिया था। उन लोगों ने भी जिस सलीके और जज़्बए ख़िदमत से मेरे दिल में ऐसी जगह पैदा कर ली कि मैं इन तीनों औरतों—अम्मन, इमामन और दरोगा नजमुलनिसां के मशवरे के

बगैर कोई काम न करता था। मेरी यही हमदमों हमराज़ औरतें मुहब्बत भरे गीत और आशिकाना गज़लें गाकर दिल की आग को ठण्डा करतीं थीं। इसी ज़माने से मैंने ठुमरियां मौज़ूं करने की मशक शुरू की। इन्हीं में से एक ठुमरी के बोल हैं—

"सुन ओ गुसंइयां सैइयां रहे वाहो देस"

वाजिद अली शाह का हृदय रूपी सागर अब और भी अशांत रहने लगा था। नजमुलनिसां अम्मन और इमामन धीमे-धीमे वाजिद अली शाह के ऐसे हालात का कारण समझ गयीं और उधर मीर मोहम्मद मेंहदी भी वाजिद अली शाह से उसकी परेशानियों का कारण मालूम करता रहा। नजमुलनिसां और वह दोनों मुँह बोली बहनें वजीरन को लाने का पूरा प्रयास करने लगीं। यह भी एक अनुकूल संयोग ही था कि वजीरन भी कामुकतावश वाजिद अली शाह की ओर आकर्षित होने लगी थी। अवसर पाते ही नजमुलनिसां वजीरन के घर पहुँच गयी। वजीरन की मां बीजान नजमुलनिसां को वजीरन से बात करने का कोई अवसर न दे रही थी। नजमुलनिसां केवल इतना ही जान पायी कि वजीरन भी वाजिद अली शाह को चाहने लगी थी। नजमुलनिसां को कोई सफलता न मिली और वह वापस आ गयी। वाजिद अली शाह अपनी बेवसी और गम को बर्दाश्त करने के लिए बिस्तर पर औंधे मुँह पड़ा रहता था। वाजिद अली शाह की ऐसी हालत को देखकर यह तीनों उसे ढ़ाढ़स देतीं और हिम्मत बढ़ाती थीं और यह कहती थीं कि जैसे भी होगा वह वजीरन को वाजिद अली शाह के सम्मुख लाने में सफल हो जायेंगी। उसे यह भय भी था कि कहीं वजीरन की मां बादशाह से शिकायत न कर दे और सारा बना बनाया काम बिगड़ जाये। वाजिद अली शाह अपनी ऐसी स्थिति का वर्णन करते हुए लिखता है—

"......रफ्ता-रफ्ता इन तीनों औरतों ने अपनी हद दर्जे रफ़ाक़त को काम में लाकर मेरे दर पर्दा इश्क़ का हाल मालूम कर लिया। एक दिन दरोगा नजमुलनिसां बेगम मरहूमा किसी बहाने बीजान के घर गई। अन्जान तौर पर वजीरन के दिली जजबात का जायजा लेना शुरू किया तो उन्हें महसूस हुआ कि वजीरन भी मेरे इश्क़ में बुरी तरह मुबतिला है। इसके पांव मेरे इश्क़ की जंजीर में जकड़े हुए हैं जिसके बाइस वह सर्द-सर्द आहें भरती है।

मैं इधर बेबस छिपे हुए सदमों और रंजोमलाल से बिस्तरे ग़म पर पड़ा हुआ था और बार-बार मेरे दिल से जांसोज आहें निकलती थीं इसलिए कि इस सरचश्म-ए-इश्क़ की याद में मेरा दिल माहिए बेआब हो रहा था।

मेरा यह हाल देखकर दरोगा नजमुलनिसां बेगम साहिबा मरहूमा और अम्मन और इमामन मुझ फ़ुरक़त नसीब व सोख़्तए जां के पांव

पर गिर गईं और आबदीदा होकर कहने लगीं कि हुजूर को यूं आहोज़ारी से काम न लेना चाहिए। क्या आपने ये शेर नहीं सुना—

"मुश्किले नेस्त के आसां न शवद,
मर्दे बायद के हिरासां न शवद।"

ख़ुदा की मर्ज़ी हुई तो हुजूर की परी चेहरा माशूक़ा व ज़ोहरा जमाल बुत तनाज़ को लाकर हुजूर के आग़ोश में बैठा देंगे।"

वाजिद अली शाह की नाजुक स्थिति को देखते हुए नजमुलनिसां से रहा न गया और वह एक बार फिर वजीरन के घर पहुँच गयी। वजीरन से अभी बात भी न हो पायी थी कि वजीरन की माँ शोर मचाने लगी और कहने लगी कि नजमुलनिसां उसके घर न आया करें। उसने यह भी धमकी दी कि यदि ऐसा न हुआ तो वह दरवार में फरियाद करेगी। नजमुलनिसां को बहुत नाउम्मीद होकर वजीरन के घर से वापिस आना पड़ा। उसने वाजिद अली शाह को बजीरन की माँ के साथ हुई वातचीत को वहुत डरते-डरते सुना दिया जिसे सुनकर वाजिद अली शाह ने क्रोधित होते हुए मीर मोहम्मद मेंहदी को वुलवाया और उससे कहा कि जव तक वजीरन मेरे पास नहीं लायी जाती तव तक मेरे लिए खाना पीना हराम है। यह भी सम्भव है कि मैं जान से हाथ धो बैठूं। वाजिद अली शाह के ऐसे आदेश से कि चाहे जान पर खेलना पड़े बजीरन को उसके पास लाया जाये, सभी सोच में पड़ गये। उनका वाजिद अली शाह से यही कहना था कि बादशाह से इस राज को आखिर कव तक छुपाया जा सकता है। इसी तरह लगभग एक माह बीत गया परन्तु कोई ऐसी तरकीव न निकली जिससे बजीरन को हासिल किया जा सके। अपनी बेबसी और नाकामयाबी से हताश होते हुए वाजिद अली शाह ने तमन्चे के द्वारा अपनी आतमहत्या का प्रयास भी करना चाहा लेकिन नजमुलनिसां के समझाने और आश्वासन देने पर उसने ऐसा न किया। उसी समय शेख गुलाम अली घोड़े पर बैठ कर बजीरन के घर गया और उधर वाजिद अली शाह ने बजीरन के स्वागत के लिए अपने भवन को सजाना शुरू कर दिया। वाजिद अली शाह लिखता है—

"……एक दिन मैं अपने मकान बादशाह मंजिल की छत पर एक तमन्चा लेकर चढ़ गया और अन्दर से इसके दरवाज़े बन्द कर लिए और चाहता था कि तमन्चे की गोली से अपने को हलाक़ करूं इतने में दरोगा नजमुलनिसां बेगम आकर दरवाज़े से अपना सर मारने लगीं और साथ ही कहने लगीं कि ऐ जाने आलम मैं आपको ख़ुदा और रसूल का वास्ता देती हूं मेरी बात सुनिये मैंने अन्दर से जवाब दिया क्या बात कहना चाहती हो कहो फिर उन्होंने कहा कि अगर अब की दफा मैं उसको न ला सकी तो आपका दिल जो चाहे कीजिऐ अब जब कि आपका मुद्दा पूरा हो रहा है ऐसी हालत में ख़ुद को हलाक़ करना कहाँ की दानाई है।

मैंने उसकी बात मान ली और अपने इरादे से बाज़ रहा फिर उसी लम्हा शेख़ गुलाम अली तेज रफ़तार घोड़े पर बैठकर वजीरन के घर गया मैंने इधर अपने मकान को मुखतलिफ व आरस्ता किया। नहर के बीचों-बीच जिसके अतराफ़ फ़व्वारे छूटे हुए थे सेज बिछवायीं।"

वाजिद अली शाह बड़ी वेचैनी से इन्तजार कर ही रहा था कि वजीरन उसके सामने उपस्थित हो गई। वाजिद अली शाह ने अपने सारे होश खोते हुए जोश में उसे गोद में उठा लिया। वे पूरी रात साथ-साथ रहे और एक दूसरे पर जान निछावर करते रहे। सुबह के वक्त मीर मोहम्मद मेंहदी ने आगाह किया और इस तरह वाजिद अली शाह ने वजीरन को खुदा हाफिज कहा। यह सिलसिला लगभग एक माह तक चलता रहा। वाजिद अली शाह लिखता है—

......रात भर उसके शम्मा-ए-हुस्न पर परवाने की तरह कुर्बान होता रहा और तमाम रात बाहमी शिकब-ओ-शिकायत और राजीनयाज़ में गुज़री।

जब सुबह नमूदार हुई सदा-ए-नोबत व आवाज़े मुर्गों अल्लाह हो अकबर का गुलगुला बेदार हुआ जिसके बाइस मेरा तायरे रूह एन हंग़ामोविसाल गोया ज़िबह हो गया। इस वक़्त यकायक दरवाज़े के पीछे से मीर मोहम्मद मेंहदी ने कहा रात का अन्धेरा छूट गया अब सुबह का उजाला हर तरफ फैल रहा है मुनासिब यही है कि अब हुज़ूर रुख़सत फरमा दें। मीर साहब की इस आगाही से मेरे चेहरे का रंग उड़ गया और सब्र की ताकत भी जवाब देने लगी। इसी आलम में उठकर मैंने उसे ख़ुदा हाफिज़ कहा।

बराबर एक माह तक कुछ ऐसा ही सिलसिला जारी रहा एक दिन मैंने इस जाने ख़ूबी को रोक लिया और अमीनुद्दौला की उस मुख़लिसाना ख़िदमत के सिलसिले में लबाद-ओ-मन्दील के साथ पाँच पारचे का ख़िलअत इनायत किया।

वजीरन वाजिद अली शाह के इश्क में पूरी तरह डूब चुकी थी। एक दिन की घटना है कि ज्वर की पीड़ा सहती हुई लगभग बेहोश हालत में वह वाजिद अली शाह के भवन पर आ गयी। इस घटना का वर्णन करते हुए वाजिद अली शाह लिखता है—

"......इस बुत तनाज का एक और किस्सा सुनिए। एक रोज वह अपने मकान में थी जो कसाई वाले पुल पर था। उसको बड़ा तेज बुख़ार चढ़ा हुआ था। बुख़ार की शिद्दत से आँखें मुंदी हुई सी थीं। इधर मेरा यह हाल था कि अन्दर ही अन्दर उसकी याद में दीवाना हो रहा था जैसे ही मैंने उसका ख़्याल किया ख़ुदा की कसम क्या

देखता हूँ कि वह बुख़ार की उसी शिद्दत में मेरे पास आ गयी। इस वक़्त वह सफेद चादर ओढ़े हुए और नंगे पांव थी और इसी हालत में एक कोस का फासला तय करके मेरे पास आयी थी। मैंने पूछा तुम्हें इस हालत में यहाँ तक आने की क्या जरूरत थी। उसने कहा गालिबन इस वक़्त आपने मुझे याद किया था इतना कहकर बेहोश हो गयी। सोचने की बात है कि ऐसे वाकयात पुराने क़िस्सों में पाये जाते हैं लेकिन मैंने ख़ुद अपनी आँखों से देखा।"

अन्ततः वाजिद अली शाह ने वजीरन को अपने भवन में ही रख लिया। वजीरन की माँ को अमीनुद्दौला ने कैद कर लिया था जिसे वाजिद अली शाह के कहने पर ही २-३ माह बाद रिहा किया गया और उसे २००० रुपया दिलवाया गया। वजीरन की माँ अपनी बेटी के पास रहने को तैयार न हुई और न ही अपने नाजायज पेशे को छोड़ सकी जिसके कारण वजीरन अपनी माँ से क्रोधित हो गयी। वजीरन को वाजिद अली शाह ने बड़े स्वागत के साथ अपना लिया था और उसको काफी धन दौलत और सेविकायें उपलब्ध कराई गईं और साथ ही साथ उसको अच्छा खिताब भी दिया गया। उसका आखिरी खिताव "मल्क-ए-आलम नवाब निगार महल साहिबा" था।

वजीरन बहुत ही खुश मिजाज और मिलनसार औरत थी। भवन में हर किसी से मेल जोल बढ़ाना उसे अच्छा लगता था और वह सभी से घुल मिल गयी थी। वाजिद अली शाह नहीं चाहता था कि वजीरन भवन की अन्य स्त्रियों के साथ मेल जोल बढ़ाये लिहाजा वाजिद अली शाह के मना करने पर भी जब वजीरन अपने स्वभाव में बदलाव न ला सकी तो वाजिद अली शाह को यह नागवार गुजरा और एक साल बाद ही उसका दिल वजीरन से हट गया। वाजिद अली शाह लिखता है—

"...... एक साल तक उनका सितारा-ए-इकबाल जगमगाता रहा उसके बाद चंद ख़ास बजुहात की बिनह पर मंद पड़ गया उनके मिज़ाज में इस क़दर तलब्बुल आ गया था कि रात की कही हुई बात सुबह को फरामोश कर जाती थी। मैं नहीं चाहता था वह मेरे दूसरे महलात से मेलजोल पैदा करें लेकिन उन्होंने कोई परवाह नहीं की और सबसे रब्तो दोस्ती बढ़ाती रहीं उनके इस अमल ने मुझे बड़ा दुख पहुँचाया।"

वाजिद अली शाह के मस्तिष्क पर दीवानापन हावी होता जा रहा था। सुन्दर स्त्रियों और परियों जैसी सूरतों के प्रति आकर्षण और उत्तेजना तूफान की तरह उसमें उमड़ने लगी थी। जब उसकी उम्र बाइस साल की थी तब वह दरोगा नजमुलनिसां के द्वारा सेविका के रूप में रखी गयीं उन अट्ठारह मोरछल बर्दार शोख नाजनीनों के साथ रंगरेलियां मनाने में लगा हुआ था। यह औरतें बहुत चालाक थीं क्योंकि वाजिद अली शाह को अपनी मोहब्बत का वास्ता देकर पैसे ठग लेतीं थीं और बाहर जाकर उन्हीं से ऐश करतीं थीं। वाजिद अली शाह लिखता है—

"......मैं दो साल तक मुख़्तलिफ मकरो फ़रेब से काम लेकर हर एक से मोहब्बत करता रहा। लेकिन ये औरतें बड़ी बद अतवार वाके हुई थीं। आठ दिन यहां रहकर जो कमा लेती थीं आठ दिन में अपने घर पर गैरों पर खर्च कर देतीं थीं और कमाल ये कि मेरी मोहब्बत का दम भरती थीं और मेरी हमदम व दमसाज़ बनतीं थीं।"

बशीर नाम का एक नपुँसक उन्हीं दिनों वाजिद अली शाह के सेवक के रूप में भर्ती किया गया जो एक बहुत महत्वाकांक्षी था। अपने फायदे के खातिर वह भवन की सभी औरतों की बुराई भलाई में लगा रहता था। एक रोज जब महफिल सजी हुई थी, हैदरी खानम नामक हुजूरवालियों में से एक ने जब बाहर जाने की इजाजत मांगी तो बशीर ने यूँ चुगली कर दी कि यह जो धन वाजिद अली शाह से ले जाती हैं उसी से बाहर जाकर अपने आशिकों को खुश करती हैं। यहां तक कि नजमुलनिसां की नियत ठीक नहीं है और वह भी यह चाहती हैं कि वाजिद अली शाह की सारी धन दौलत लुट जाये।

वाजिद अली शाह ने बशीर के ऐसे तर्क को बेबुनियाद बताया। उसे विश्वास था कि यदि वह हुजूरवालियों में से किसी को भी कहेगा तो वह अपना सिर काटकर दे देगी। बशीर के काफी समझाने पर भी कि वाजिद अली शाह अभी औरतों के फरेब को नहीं जानते हैं, तब भी वाजिद अली शाह ने उसकी बात का इत्मीनान नहीं किया और यही विश्वास जाहिर किया कि यदि वह कह देगा तो कोई बाहर नहीं जायेगी। वाजिद अली शाह लिखता है—

"......उसकी तकरीर सुनकर मैंने कहा कि यह सब मेरी जां निसार हैं। अगर मैं इन्हें सिर्फ इशारा करूँ तो इसी वक़्त अपना सिर काटकर मेरे सामने पेश करें।

हुमा को ज़ाग की सोहबत से कोई फायदा नहीं पहुँच सकता और ज़ाग हुमा के साथ रहे तो हुमा का नुकसान है।"

वाजिद अली शाह को बशीर का कथन तब विश्वसनीय लगने लगा जब उसने उन औरतों को वहीं रहने के लिए कहा जिस पर सभी कोई बहाना बनाने लगीं। वाजिद अली शाह को बहुत दुख पहुँचा। जब किसी औरत ने वाजिद अली शाह की मुहब्बत की परवाह न की, तो उसे यह अनुभव होने लगा कि इन औरतों को पालना सांप के पालने की तरह है। हुजूरवालियों में से ४-५ को छोड़कर सभी को वाजिद अली शाह ने भवन से निकलवा दिया इनमें से कुछ ऐसी भी थीं जो अपने प्यार की अमिट छाप छोड़ गयीं। वाजिद अली शाह लिखता है—

"......जब मैंने जाकर हुजूरवालियों से अपने यहां रह जाने के लिए कहा तो उन्होंने हीलों बहानों से काम लेना शुरू किया और आज कल कहकर टालने लगीं। हैरत अट्ठारह-अट्ठारह औरतों

में से एक औरत ने भी मेरा और मेरी मुहब्बत का कुछ लिहाज़ न किया। इसी दम उस जलसे से मेरा दिल उदास हो गया और इस नतीजे पर पहुँचा कि बे-मुरब्बत औरतों की सर परस्ती करना सांप को पालने के बराबर है। मुनासिब है कि मैं उनसे किनाराकश हो जाऊँ लिहाजा उन सबको घर से निकाल दिया। मुख्तसर यह कि यह सारा दफ़्तर वीरान हो गया। मगर हुजूरवालियों में से दो तीन औरतों की मुहब्बत का दाग़ दिल पर रह गया।"

वाजिद अली शाह सुन्दरियों की संगत में रहने का आदी हो चुका था। हुजूरवालियों को निकाल देने के एक महीने बाद ही उसके दिमाग में फिर वही औरत परस्ती की लत जोर पकड़ने लगी और वह विचार करने लगा कि किसी न किसी तरह अन्य स्त्रियों से मुहब्बत शुरू करके अपने दुख को कम किया जाये। वह लिखता है--

"......हुजूरवालियों से तर्क मुलाकात किए एक महीना हो गया था इसलिए मैं यह सोचने लगा कि हसरतो याद का यह सदमा कब तक बर्दाश्त करूँ। बेहतर यह है कि दो चार माशूकों को बुलाऊँ ताकि हुजूरवालियों का ग़म रफ़ा हो।"

बड़ी तलाश के बाद अन्ततः वाजिद अली शाह की नजर एक औरत पर पड़ी जिसे उसने यासमीन परी नाम दिया। वाजिद अली शाह की हरचन्द कोशिश के बावजूद वह अल्लहड़ औरत उसकी मुहब्बत में गिरफ्तार न हो सकी। वाजिद अली शाह लिखता है—

"......बड़ी जुस्तजू व तलाश और काफी दौड़ धूप के बाद एक औरत दस्तयाब हो सकी जिसको यासमीन परी के नाम से मुलक़्क़िब किया गया। मैंने बहुत कुछ चाहा कि ख़ुद उस औरत को अपने दामे मुहब्बत में गिरफ्तार कर लूँ लेकिन उसके अल्लहड़पन की वजह से मैं अपने मकसद में कामियाब न हो सका।"

वाजिद अली शाह ने थोड़े ही अन्तराल के बाद एक औरत को घर बिठा लिया और उसका नाम सुलेमान परी रखा। फिर चन्द रोज बाद ही एक दूसरी औरत जो उसके घर अपनी मर्जी से रहना चाहती थी उसे भी इज्जत परी का नाम देकर अपने घर रख लिया।

वाजिद अली शाह संगीत के प्रति बहुत अनुरक्त था। बगैर संगीत के किसी सभा में उसका दिल नहीं लगता था। यही वजह थी कि जिस औरत को गाना बजाना नहीं आता था वह उसे बिल्कुल अच्छी नहीं लगती थी। उसका हृदय बार-बार यही कहता कि कोई न कोई गाने बजाने वाली औरत उसे हासिल हो और उसकी नजरें संगीत से अनभिज्ञ औरतों से दूर होने लगी।

लखनऊ में नृत्य और संगीत में हैदरी और दिलबर नाम की तवाइफें बहुत मशहूर हो चलीं थीं। दोनों का वाजिद अली शाह से सम्पर्क स्थापित हो गया। हैदरी

थोड़ा बहुत नाच गाना जानती थी और उसकी उम्र लगभग ग्यारह वर्ष की रही होगी। दिलवर वाजिद अली शाह को भेंट की गयी जिसे सुल्तान परी नाम दिया गया। सभी परियां वाजिद अली शाह की खिदमत में किसी न किसी माध्यम के द्वारा ही प्रस्तुत हुई थीं। कुछ ही दिनों बाद अमीरन डोमनी की बेटी नज्जा वाजिद अली शाह के सम्मुख प्रस्तुत की गयी जिसका नाम हूर परी रखा गया। हूर परी नृत्य और गायन में बहुत निपुण थी।

वाजिद अली शाह के सम्मुख एक बार एक औरत को बहला फुसलाकर और साथ ही डरा धमका कर प्रस्तुत किया गया। यह औरत नृत्य और गायन में अत्यन्त निपुण थी और दूर-दूर तक इसकी कला के चर्चे मशहूर हो चुके थे। वाजिद अली शाह ने उस औरत से बातचीत के दौरान वास्तविक स्थिति को जान लिया और इस औरत से भवन में ही रहने की इच्छा व्यक्त की। इस औरत ने स्पष्ट जवाब दिया कि उसे यहाँ धोखे से लाया गया है और वह यहाँ रहना नहीं चाहती। वाजिद अली शाह ने उसे घर जाने की इजाजत दे दी। वाजिद अली शाह के ऐसे सभ्यतापूर्ण व्यवहार से वह औरत बहुत प्रभावित हुई और उल्टे स्वयं ही यह प्रार्थना करने लगी कि वाजिद अली शाह उसे परियों में शामिल कर लें और महल में ही रख लें। वाजिद अली शाह ने उसे स्वीकार करते हुए महरुख परी का खिताब दे दिया।

उस समय के शासन में एक रिवाज बना हुआ था कि मुलाजिम अय्याश शासकों को खुश रखने के लिए धोखा फरेब देकर औरतों को उनके सम्मुख प्रस्तुत करते थे। वाजिद अली शाह को यह रिवाज गैर मुनासिब महसूस होता था। इस घटना से उसे यह स्पष्ट हो गया कि मुलाजिमों की ऐसी ही देखा देखी में यह औरत मेरे सम्मुख प्रस्तुत की गयी।

वाजिद अली शाह एक रोज जब अपने पिता के पास जा रहा था तो एक औरत उसकी बग्घी के सामने आ गयी और प्रार्थना करने लगी कि उसकी लड़की को जबरदस्ती उसके (वाजिद अली शाह) पास भेजा गया है। वाजिद अली शाह ने इस औरत को घर लाकर महरुख परी से सत्यता जान ली और महरुख परी के समझाने पर वह पाँच सौ रुपये लेकर खुशी से राजीनामे पर दस्तखत कर चली गयी।

वाजिद अली शाह को पुनः वजीरन को अपने करीब लाने की इच्छा हुई। वह उसकी खूबसूरती को सराहता था और उसकी स्वाभाविक रुचि के अनुरूप ही वह नृत्य और गायन में बहुत निपुण थी परन्तु उसके मस्तिष्क में एक सन्देह व्याप्त था कि वजीरन का ताल्लुक उसके भाई मिर्जा हश्मत बहादुर से भी हैं। इस सन्देह को उसने अवसर पाते ही स्पष्ट रूप से वजीरन के सम्मुख व्यक्त कर दिया और अपने अनुसार उत्तर मिलने पर वर्जारन को अपने भवन में रखने का विचार कर तदनुसार कदम उठाने का अवसर ढूँढने लगा।

एक रोज वाजिद अली शाह सजधज कर दरोगा नजमुलनिसां बेगम तथा दो अन्य सेवकों को साथ लेकर अजीमुल्ला के घर पहुँचा। दिमाग में कुछ फितूर रखने वाले

पचास वर्षीय अजीमुल्ला वाजिद अली शाह को देखते ही खड़े हो गये तब वाजिद अली शाह ने अजीमुल्ला से पूछा कि वह कहाँ है। सितार की बड़ी शानदार महफिल जमाई गई जिसमें खूबसूरत चेहरा उपस्थित हुआ जिससे वाजिद अली शाह मिलना चाहता था। वह सुन्दर औरत वाजिद अली शाह से मिलने पर विचित्र मानसिक स्थिति के कारण कभी हँसने लगती थी, कभी रोने लगती थी। वाजिद अली शाह बरसात के मौसम के कारण नजमुलनिसां के साथ अपने भवन वापस हो गया और वहां सजायी हुई संगीत की सभा में व्यस्त हो गया।

वाजिद अली शाह को हर रोज अच्छी से अच्छी गाने वालियों की आवाज सुनने का शौक बना रहा और संगीत के धुरन्धरों की तलाश हर समय रहती थी जिससे कि परियों को संगीत और गायन कला में निपुणता हासिल हो सके। वाजिद अली शाह लिखता है—

> **"......मैं ऐशो इशरत के जलसे तरतीब देने और नित नई गाने वालियों को फ़राहम करने के ख़याल से कभी ग़ाफ़िल नहीं रहता था। यही बजह है कि साजिन्दों और मौसीकी के फ़न के माहिरों की हर वक़्त तलाश जारी रहती थी ताकि परियों की तालीम जारी रहे और वह इस फ़न में माहिर हो जायें।"**

एक दिन अम्मन और इमामन नामक बहिनों ने वाजिद अली शाह को सलाह दी कि परियों की संगीत शिक्षा के लिए वे योग्य और उपयुक्त प्रशिक्षक उपलब्ध करा सकती हैं। वाजिद अली शाह ने उनकी परीक्षा के लिए संगीत सभा का आयोजन कर अम्मन और इमामन के बताये गये प्रशिक्षकों को बुलवाया और स्वयं भी सितार लेकर बैठ गया। अम्मन और इमामन के आग्रह पर वे उपस्थित हुए। इनमें इन दोनों बहनों का पिता नत्थू खाँ तथा अन्य करीबी सम्बन्धी ही थे। इन्होंने प्रवेश होते ही सबसे पहले वाजिद अली शाह के दर्शन कर उसे प्रणाम किया और फिर संगीत की तान छेड़ दी। वाजिद अली शाह ने भी सितार बजाना प्रारम्भ कर दिया। इस प्रकार की संगीत की संगत से वाजिद अली शाह बहुत ही प्रसन्न हुआ। वाजिद अली शाह लिखता है—

> **"......अम्मन और इमामन दोनों बहनों ने एक रोज़ कहा कि हमारे बाज़ रिश्तेदार इस फ़न में बड़े बेमिसाल हैं। मैंने यह सुनकर अम्मन और इमामन को उन रिश्तेदारों की हाज़री का हुक्म दिया। चुनाचें एक दिन महफिल चौदवीं रात के चाँद की तरह मुनक़्क़िद करवाई और ख़ुद मैं खास मकान के बुर्ज की चिलमने चढ़वाकर अम्मन और इमामन के साथ सितार लेकर बैठ गया और उन आने वालों का इन्तज़ार करने लगा। थोड़ी देर बाद वे लोग आ गये यह कुल चार आदमी थे उन चारों ने आते ही मुजरे के बाद सुरूर शुरू कर दिया। इधर पर्दे के पीछे से मैं सितार की आवाज़ बरसरे महफिल पहुंचा रहा था। इस वक़्त बेख़ुदी का कुछ ऐसा आलम**

तारी था कि दरो दीवार और माहों अन्जुम तक शशदर मालूम होते थे। हाज़रीन में से हर एक की जबान से कलमाते तहसीन अदा हो रहे थे। उन लोगों का गाना इतना असर अंगेज था कि मैंने अपना सर चिलमन पर रख दिया।"

इस दिन के वाद से वाजिद अली शाह ने चारों को अपनी सेवा में रख लिया। नत्थू खां और गहमन जान को हूर परी और सुल्तान परी को प्रशिक्षित करने के लिए नियुक्त किया। इसी प्रकार सावत अली और छज्जू खान को अन्य परियों की शिक्षा के लिए नियुक्त किया गया। प्रत्येक दिन एक सभा का आयोजन किया जाता था जिसमें दक्षता को नियमित रूप से प्रदर्शित किया जाता था। वाजिद अली शाह नत्थू खां के संगीत से इतना प्रसन्न था कि स्वयं भी उसके शिष्यों के साथ गायन वादन की कला का रियाज करता था। वह इस कला से इतना प्रभावित था कि उसने अपनी लगन और मेहनत से अपने फन में इस हद तक महारत हासिल कर ली थी कि वह नत्थू खां से भी आगे वढ़ गया था। इस संदर्भ में वह स्वयं लिखता है—

"......ख़ुद मैं भी नत्थू खां के शार्गिदों के साथ गाया करता था। थोड़ी मुद्दत में मैं इस काबिल हो गया कि अपने उस्ताद को पीछे कर दिया।"

वाजिद अली शाह के समय में यह वहुत साधारण वात थी कि रईस जादे और शाही परिवार के राजकुमार नवयुवतियों से घिरे रहते थे। उनके चारों ओर हुस्न का वाजार सजा रहता था। यह लोग इनमें से कुछ युवतियों और नर्तकियों को अपनी विलास लीला और वासना की तृप्ति के लिए किसी निश्चित स्थान पर निवास की सुविधा भी प्रदान करते थे। ऐशो-इशरत के शौकीन, हुस्न के पुजारी और आशिकी की जिन्दा तस्वीर वाजिद अली शाह के स्वभाव के अनुकूल ऐसे प्रचलन ने उसे बहुत प्रभावित किया। अपने निराले अन्दाज और सलीके के अनुसार उसे भी इस परिपाटी का निर्वाह करना बहुत ही भला लगा। इस कार्य को उसने सुनियोजित ढंग से प्रारम्भ किया। अधिक से अधिक सुन्दर युवतियों और मधुर कण्ठ से गाने वाली गायिकाओं को एकत्र करने की अभिलाषा वाजिद अली शाह में उत्तराधिकार प्राप्त करने के पूर्व से ही विद्यमान थी। धनागम और साधनों की उपलब्धता के साथ ही उसने इस अभिलाषा को पूर्ण करने का प्रयास प्रारम्भ कर दिया। वह संगीत में निपुण स्त्रियों को एकत्र कर अत्यन्त प्रसन्नता का अनुभव करता था। उसने अनेक सौन्दर्य से युक्त स्त्रियों, युवतियों, नर्तकियों और वेश्याओं आदि को एकत्र कर उन्हें "परी" नाम का संबोधन दिया। इन परियों के निवास के लिए एक विशेष भव्य-भवन का निर्माण करवाया जिसमें भोग विलास की सभी आवश्यक वस्तुऐं व सुविधायें उपलब्ध थीं। ऐश्वर्य से युक्त परियों के इस निवास स्थल को उसने अपनी स्वाभाविक साहित्यिक रुचि के अनुसार ही "परीखाना" नाम देना पसन्द किया और परियों को उनके नये नामों से सम्बोधित करना आरम्भ किया जैसे सब्ज़ परी, लाल परी आदि। परियों को नृत्य और संगीत

की शिक्षा देने के लिए उसने नृत्य प्रशिक्षकों एवं संगीतकारों को नियुक्त किया। परीखाने की साज सज्जा सुन्दर एवं आकर्षक रूप से की गयी थी। इसके अन्तःपुर में संगमरमर का छोटा सा तालाव बनवाया गया जिसके किनारों पर चीनी मिट्टी के गुलदस्ते, पीछे लकड़ी की चौकियों और हीरे जवाहरातों से मढ़े हुए पलंगों को सजाकर वैभवपूर्ण आकर्षण उत्पन्न किया गया था। वाजिद अली शाह परीखाने की साज सज्जा पर व्यक्तिगत ध्यान दिया करता था। इस भवन की चौकसी के लिए तुर्की औरतों की एक टुकड़ी को नियुक्त किया गया था जिसके प्रशिक्षण का उपयुक्त प्रबन्ध वाजिद अली शाह ने स्वयं करवाया था। इन पहरेदार स्त्रियों के अतिरिक्त और उनकी आज्ञा के बिना कोई भी व्यक्ति परीखाने के अन्दर प्रवेश नहीं कर सकता था। यह परीखाना प्रमुख रूप से नजमुलनिसां की देखरेख में अपने कार्यों का सम्पादन किया करता था। दरोगा नजमुलनिसां अम्मन और इमामन के अतिरिक्त गुलाम रजा, गहमन, छज्जू, सावत अली आदि कुछ प्रमुख लोग ही प्रशिक्षण एवं सभी आयोजन के प्रबन्ध कार्य हेतु अधिक समय तक परीखाने में ही रहते थे। वाजिद अली शाह स्वयं भी संगीत की शिक्षा ग्रहण करने का प्रयास बड़े मन से किया करता था। वाजिद अली शाह परीखाने का वर्णन करते हुए लिखता है—

> **"......इस अरसे में एक छोटा सा मकान फ़ने मौसीकी तालीम के लिए मैंने मख़सूस कर दिया जिसकी आराहशों ज़ेबाइश में इंतहाई तक़ल्लुफ़ से काम लिया गया और इस ख़ानेरश्के हरम को "परीखाने" के नाम से मौसूम किया। ये मकान सरासर परियों और गाने वालियों के कब्जो तर्सरुफ़ में था। मकान के सहन में सफेद संगमरमर का फर्श करवाया गया और इस फर्श पर चीनी के निहायत उम्दा और खूबसूरत गुलदस्ते सजाये गये। थोड़े-थोड़े फासले से लकड़ी की चौकियां और पलंग रखे गये। बाहर के दरबाजे पर तुर्की औरतों का पहरा था जिसकी बजह से किसी ग़ैर को अन्दर आने की मजाल न थी। अलबत्ता दरोगा नजमुलनिसां, बेगम अम्मन और इमामन परीखाने की परियां और गाने वाले बे-रोकटोक आ जा सकते थे।**
>
> **परीखाने में गुलाम रज़ा, गहमन जान, छज्जू खां और साबित अली रोज़ाना दो तीन पहर तक मौजूद रहते और उनकी सोहबते निशात से महफिल गर्म रहती थी। इसी तरह परियों की भी तालीमों तरबियत हो जाया करती। मैं भी मौसीकी का इल्म हासिल करने में हमातन मसरुफ़ था।"**

वाजिद अली शाह की उम्र के बढ़ने के साथ ही रोज नयी से नयी गाने बजाने वाली औरतों को हासिल करने की इच्छा बढ़ती जा रही थी। उसने अपने सभी सेवक-सेविकाओं को यह अवगत करा दिया था कि वे उसकी इच्छा को पूरा करने के प्रयास में निरन्तर लगे रहें। उसने एक नये शब्द को इस खास मकसद से लाई जाने वाली

औरतों के लिए इस्तेमाल करना शुरू किया--शब्द था "मारुज़ा हाज़िर है" जिसका तात्पर्य होता था कि स्त्री विशेष उसके भवन में रहने के लिए उपस्थित है। जब कभी "मारुज़ा" शब्द का इस्तेमाल किया जाता तब उसका उपरोक्त अर्थ ही लगाया जाता था। वाजिद अली शाह लिखता है—

"......जैसे-जैसे ज़माना गुज़रता गया मेरा ये शौको ज़ौक और बढ़ता गया और मेरी ये ख़्वाहिश हुई कि गाने और नाचने वाली जितनी भी औरतें दस्तेयाब हो सकें अच्छा है। चुनाचे हर शख़्स पर मैंने अपनी ख़्वाहिश का इज़हार कर दिया था इसके लिए एक नया लफ़ज "मारुज़ा" बजा किया गया। फर्ज कीजिए किसी के तवस्सुत से कोई गाने नाचने वाली औरत आयी तो कहा जाता कि "फलां मारुज़ा हाज़िर है" जिसका मतलब यह होता है कि ये औरत मेरे घर पड़ने को आयी है। आइन्दा किसी इबारत में मारुज़ा का लफ़ज आये तो उसका मतलब वही लिया जाये जो मैंने अभी बयान किया है अगर किसी जगह अर्ज़ी और अर्ज़दाश्त के अलफ़ाज आयें तो उनके मायने वही होंगे जिन मायनों में ये अलफ़ाज इस्तेमाल किये जाते हैं।"

वाजिद अली शाह की हमराज नजमुलनिसां तथा अम्मन और इमामन ने एक राय होकर अर्ज किया कि एक मारुजा तैयार है। इस औरत की इन तीनों ने संयुक्त रूप से इस कदर तारीफ की कि वाजिद अली शाह उसे पाने के लिए बेचैन हो गया। वाजिद अली शाह ने उस औरत के खानदान के बारे जब जानकारी हासिल की तो उसे ज्ञात हुआ कि यह औरत वजीरन की भान्जी है तो वाजिद अली शाह की व्याकुलता और बढ़ गयी। उसे यह भी बताया गया कि मुन्ना नामक इस औरत का हृदय भी वाजिद अली शाह के प्रति आसक्त है और वह वाजिद अली शाह की परियों में शामिल होना चाहती है। जब वजीरन को इस बात की खबर हुई कि वाजिद अली शाह के घर मुन्ना आ रही है तब उसे बहुत ईर्ष्या हुई। वजीरन ने तरह-तरह की बातों से वाजिद अली शाह को मुन्ना की तरफ से डराने का प्रयास किया। इसका परिणाम उल्टा ही निकला और वाजिद अली शाह मुन्ना को पाने के लिए और अधिक उतावला हो गया।

अन्ततः वाजिद अली शाह मुन्ना को पाने में कामयाब हो गया परन्तु मुन्ना उसके साथ केवल एक रात ही रह सकी क्योंकि मुन्ना की बिरादरी ने मुन्ना को उसके इस जुर्म की सजा देने के लिए कैद कर लिया। वाजिद अली शाह मुन्ना के लिए पुनः व्याकुल होने लगा। उधर मुन्ना भी वाजिद अली शाह के लिए तड़पती थी। आखिरकार मीर मोहम्मद मेंहदी द्वारा जी जान से की गई कोशिशों से मुन्ना आजाद हो गयी और वाजिद अली शाह के घर ही रहने लगी। वाजिद अली शाह की आसक्ति इसके प्रति-दिन व दिन बढ़ती ही गयी। जब वाजिद अली शाह के घर मुन्ना रहने लगी तो वजीरन

ने वाजिद अली शाह से अपना सम्बन्ध तोड़ लिया और अलग-अलग लोगों से अपना सम्बन्ध बनाती रही। अन्ततः वह एक ५० वर्षीय शैदी अहमद के घर रहने लगी।

मुन्ना ने वाजिद अली शाह के घर रहते हुए जब नृत्य और गायन की सभायें और परियों के समूह को देखा तो वह उसे सहन न कर सकी और ईर्ष्या की आग में जलने लगी। ईर्ष्या की इस आग को ठण्डा करने के लिए वह तरह-तरह की तरकीबें सोचने लगी। मुन्ना का नया नाम वाजिद अली शाह ने इमत्याज परी दिया था। एक दिन मुन्ना ने वाजिद अली शाह से अपने घर जाने की इजाजत मांगी जिसे वाजिद अली शाह ने मंजूर कर लिया। महल से जाने के बाद जब दो दिन तक वापस नहीं लौटी तो वाजिद अली शाह ने चिन्तित होते हुए नजमुलनिसां को उसके घर भेजा। नजमुलनिसां द्वारा यह सूचित करने पर कि मुन्ना वापस आने को तैयार नहीं है तो वाजिद अली शाह क्रोधित हो गया। वाजिद अली शाह ने तत्काल ही मोहम्मद हुसैन खां को आदेश दिया कि मुन्ना को बल पूर्वक उसके घर से लाकर मेरे सम्मुख उपस्थित किया जाये।

वाजिद अली शाह के आदेशों से मुन्ना की इच्छा के विरुद्ध उसे परीखाने में उपस्थित कर दिया गया। परीखाने में मुन्ना का मन नहीं लगता था वह अप्रसन्न रहने लगी। वाजिद अली शाह ने दो चार दिन उसकी ऐसी स्थिति और दुखःमय समय व्यतीत होता देखकर एक बहुमूल्य मुद्रिका प्रदान करते हुए घर जाने की अनुमति दे दी।

वाजिद अली शाह नृत्य और संगीत का अपने अनोखे ढंग से आनन्द लेते हुए जीवन व्यतीत कर रहा था। इन दिनों उसका हर दिन ईद की तरह और रातें शब्बेरात के उत्सव की तरह गुजरती थीं। एक दिन अकबरुद्दौला बहादुर के माध्यम से एक मशहूर तवायफ चुन्नी वाजिद अली शाह की संगीत सभा में उपस्थित हुई। वाजिद अली शाह देखते ही उस पर आसक्त हो गया। चुन्नी नामक इस वेश्या ने भी वाजिद अली शाह के परीखाने में रुक जाने का फैसला ले लिया और अपने सारे जेवरात उतार कर अपनी मां को दे दिये। इस पर भी जब उसकी मां तैयार न हुई तो दो हजार रुपये चुन्नी ने अपनी नजर उतार कर अपनी मां को दे दिये। फैजा चूने वाली नाम की उसकी मां खुशी-खुशी तैयार हो गयी और राजीनामा लिखकर दे गई। वाजिद अली शाह ने चुन्नी को दिलरुबा परी का खिताब दिया और परियों में शामिल कर लिया। वाजिद अली शाह लिखता है—

> **"......इम्त्याज़ परी को दूर करने के बाद मैं दूसरी परियों के रक्सो सरोद में अपने औक़ात निहायत पुर लुत्फ़ तरीके पर गुज़ार रहा था। दिन ईद और रात शब्बेरात थी। एक रोज़ अकबरुद्दौला बहादुर के तवस्सुत से चुन्नी नामी तवाइफ़ मेरी महफिल में मुज़रे के लिए हाज़िर हुई। जैसे ही मैंने उसे देखा उस पर सौ जान से आशिक़ हो गया। मैंने चुन्नी को दिलरुबा परी के ख़िताब से मुलक़्क़ब किया।"**

वाजिद अली शाह के इस कारनामे की खबर कि फैजो अपनी बेटी चुन्नी को छोड़ना नहीं चाहती थी, उसके पिता बादशाह अमजद अली शाह को चुगलखोरों द्वारा पहुँचा दी गई। अमजद अली शाह ने दिलरुबा परी को अपने सम्मुख उपस्थित होने का आदेश भेजा। वाजिद अली शाह इस बात से बहुत घबराया हुआ था। दिलरुबा परी ने उसे दिलासा दी कि भय की कोई बात नहीं है। मीर मेंहदी के साथ वह बादशाह के सम्मुख पहुँची और उसने यह स्पष्ट किया कि वह अपनी मर्जी से वाजिद अली शाह के पास रह रही है और उसकी मां ने राजीनामा लिख दिया है। बादशाह ने राजीनामे की जांच के बाद यह हुक्म दिया कि इस औरत को सुरक्षा और सम्मान के साथ वाजिद अली शाह के भवन में पहुँचा दिया जाये। वाजिद अली शाह को बहुत तसल्ली हुई और वह दिलरुबा परी का अहसानमन्द हो गया। दिलरुबा परी नृत्य तथा गायन की कला में निपुण थी। वाजिद अली शाह की मुहब्बत दिन व दिन इसके प्रति बढ़ती ही रही। वाजिद अली शाह लिखता है—

> **"......दरअसल इस औरत ने मुझ पर इतना बड़ा एहसान किया कि उसके बारे गिरां से मेरा सर नहीं उठता। इस औरत की उम्र कोई तेईस बरस की थी। गन्दमी रंग, कुशादा पेशानी, मुतनासिब अजां, नाच गाने के फ़न में भी यक़ता थी। जब वह मेरे पास रह गयी तो परियों की तालीम में अपना ज्यादातर वक्त सर्फ़ करने लगी। जैसे-जैसे दिन गुजरते जाते थे मेरे दिल में इसकी मोहब्बत की इफ़रात बढ़ती जाती थी।"**

नवाब खास महल भी परीखाने के कार्यों को बड़े उत्तरदायित्व और प्रसन्नता के साथ किया करती थीं। परियों के लिए तरह-तरह की पोशाकों को तैयार कराने का कार्य नवाब खास महल को ही सौंपा गया था। इस कार्य पर वाजिद अली शाह का कई लाख व्यय होता था।

गन्ना नाम की पेशेवर औरत जो अपना पेशा छोड़ चुकी थी वाजिद अली शाह के प्रति आकर्षित हो गयी। शेख गुलाम अली और ख्वाजासरा फिरोज के माध्यम से उसने वाजिद अली शाह तक अपनी प्रार्थना भिजवाई कि उसे परीखाने में शामिल कर लिया जाये। जब वाजिद अली शाह को यह जानकारी मिली कि गन्ना अपने एक रिश्तेदार से विवाह कर चुकी है तो उसका परीखाने में रहना तब तक के लिए नामुनासिब समझा जब तक कि तलाक न ले ले। गन्ना को जब वाजिद अली शाह की इच्छा मालूम हुई तब उसने तलाक ले लिया। वाजिद अली शाह को अब इसे रखने में कोई परेशानी नहीं हुई और उसे सरफराज परी का खिताब देते हुए परियों में शामिल कर लिया। गन्ना की उम्र लगभग २७ वर्ष और चेहरे पर चेचक के दाग होते हुए भी उसकी आंखें और भवें खूबसूरत थीं। वह मध्यम लम्बाई की आकर्षक औरत थी। गन्ना खुशमिजाज और सुन्दर वस्त्रों को पहनने की शौकीन औरत थी जिसे वाजिद अली शाह बहुत प्यार करता था।

वाजिद अली शाह के यहां सेविका के रूप में मर्सीया पढ़ने वाली हैदरी बेगम एक नेक औरत थी जिसकी वाजिद अली शाह दिल से कद्र करता था। नजमुलनिसां बेगम के माध्यम से वह एक रोज वाजिद अली शाह के घर आयी थी जिसे बाद में वाजिद अली शाह भुला भी चुका था। हैदरी बेगम की यह इच्छा थी कि उसे भी महल का स्तर दे दिया जाये परन्तु वाजिद अली शाह को उसका यह प्रस्ताव स्वीकार नहीं था। एक दिन हैदरी बेगम ने कांच पीस कर खा लिया तो अपने पिता के भय के कारण वाजिद अली शाह ने उसे नौकरी से निकाल कर उसके घर भेज दिया।

एक बार अम्मन और इमामन ने एक ग्यारह साल की सुन्दर कन्या वाजिद अली शाह को नजर के रूप में भेंट की। यह बड़ी-बड़ी आंखों और गुलाबी रंग की खूबसूरत कमसिन लड़की थी जो संगीत की शिक्षा ग्रहण करना चाहती थी। वाजिद अली शाह ने उसकी शिक्षा का प्रबन्ध कर दिया और सरदार परी का खिताब दिया।

जब सभी लोग कोई न कोई औरत वाजिद अली शाह के सम्मुख प्रस्तुत कर उसे प्रसन्न रखने का प्रयास करते रहते थे तब भला नवाब खास महल पीछे क्यों रहतीं। नवाब खास महल ने भी एक नाचने गाने में अत्यन्त निपुण स्त्री को वाजिद अली शाह के सम्मुख प्रस्तुत किया जिसे अजायब परी का खिताब दिया।

एक दिन नेमतखाना के दरोगा ख्वाजासरा फिरोज के माध्यम से प्यारी नाम की औरत वाजिद अली शाह की सेवा के लिए प्रस्तुत हुई। इस औरत को भी वाजिद अली शाह ने परियों में सम्मिलित कर लिया और नृत्य और संगीत की शिक्षा उपलब्ध करवायी। इसे शहंशाह परी का खिताब दिया गया। वाजिद अली शाह के सम्मुख ख्वाजासरा मुहम्मद हुसैन के माध्यम से प्यारे साहब नाम की लड़की जो जहानी डोमनी की पुत्री थी, प्रस्तुत हुई जिसे उसने बहुत पसन्द किया और घर बैठा लिया। प्यारे साहब के लिए भी संगीत और नृत्य के प्रशिक्षण की व्यवस्था करवा दी और उसे माशूक परी का खिताब दिया गया।

अम्मन और इमामन के माध्यम से एक औरत वाजिद अली शाह के सम्मुख प्रस्तुत की गई। वाजिद अली शाह ने इस औरत को भी संगीत और नृत्य के प्रशिक्षण की सुविधा दिलवा दी और उसे महक परी का खिताब दिया। महक परी बाद में बेगम हजरत महल के नाम से विख्यात हुई और इसी का नाम अवध के इतिहास में स्वर्णाक्षरों से सुशोभित है। यही बरजीश कद्र बहादुर जो कि अवध के विलय के बाद प्रथम स्वतन्त्रता संग्राम में अवध का बादशाह घोषित हुआ था, की माँ थी।

चन्द दिनों के बाद ही मोहम्मद हुसैन अली के जरिये बन्दीजान इलाही नाम की औरत वाजिद अली शाह की खिदमत में पेश हुई, उसे दिलदार परी का खिताब देते हुए परियों में सम्मिलित कर लिया गया और संगीत तथा नृत्य का प्रशिक्षण भी उपलब्ध कराया गया है। उसी दौरान नजमुलनिशां के माध्यम से हसीनी नाम की एक लड़की केवल संगीत का प्रशिक्षण प्राप्त करने की इच्छा लेकर उपस्थित हुई। बछिया नाम की

तवाइफ की पुत्री हसीनी को वाजिद अली शाह ने हुजूर परी का खिताब देकर परियों के समूह में शामिल कर लिया।

नवाव निशात महल से पुत्र रत्न की प्राप्ति के सिलसिले में खुशी मनाने की गरज से एक महफिल सजायी गई थी। इस महफिल में मशहूर गाने वजाने वालियों को मुजरे के लिए तलव किया गया था। इसी अवसर पर "अच्छी" नाम की एक तवाइफ भी उपस्थित हुई। "अच्छी" देखने में अति सुन्दर थी। उसे देखते ही वाजिद अली शाह अपने होश खो वैठा। वैसे तो वाजिद अली शाह के पास आने वाली अनेकों सुन्दर स्त्रियाँ थीं लेकित "अच्छी" की वात ही निराली थी। वह खुदा की चमत्कारिक कारीगरी का नायाब नमूना थी। उसकी आँखें हर पल आमंत्रण सा देती थीं। आवाज हृदय को आन्दोलित करती थी, चलती ऐसे थी कि बिजली कौंध रही हो। कोमल शरीर, नाजुक अन्दाज, लम्बा कद, गला सुन्दर और गुथा हुआ शरीर। वह अपनी एक-एक अदा से उपस्थित लोगों के दिलों को गुदगुदा रही थी। इन्तहा ये कि उपासक भी अगर उसे देख लेते अपनी प्रार्थना करना भूल जाते। वह हँसती तो मालूम पड़ता कि जैसे फूल झड़ रहे हों। वाजिद अली शाह उसको अपनी गुलजार मंजिल के वालाखाने में वैठा देख रहा था।

वाजिद अली शाह के अपूर्व आकर्षण पर "अच्छी" भी फिदा हो गयी थी। इस महफिल में उसकी हसरत भरी निगाहें वाजिद अली शाह पर लगी रहीं। नाचते-नाचते वह वाजिद अली शाह के पास आ जाती और उसका हाथ थाम लेती थी। वाजिद अली शाह उस पल उससे छेड़ छाड़ कर देता था। आखिरकार महफिल तो उठ गई लेकिन "अच्छी" वाजिद अली शाह की मुहब्बत का तीर खा चुकी थी। तीन चार माह के दौरान वाजिद अली शाह की "अच्छी" से चन्द मुलाकातें ही हो सकीं। "अच्छी" अपनी माँ से बहुत डरती थी जिसके कारण वह अपनी मोहब्बत के इजहार से मजबूर थी लेकिन दिल ही दिल वाजिद अली शाह से बहुत मुहब्बत करने लगी थी। धीमे-धीमे उसने अपनी माँ से लड़ना झगड़ना भी शुरू कर दिया और बेबसी की ऐसी हालत में रोने भी लगती थी। कभी-कभी मीर अकवर अली के माध्यम से वाजिद अली शाह के लिए पयामे मोहब्बत भी भेजती थी। एक बार वाजिद अली शाह ने मुजरे के लिए उसे बुलाया लेकिन अपने माता पिता के भय और उनके द्वारा लगायी पाबन्दियों के कारण "अच्छी" को घर बैठाने का साहस न कर सका। अंततः मीर अकवर अली के माध्यम से "अच्छी" वाजिद अली शाह को प्राप्त हो गयी। अच्छी ने अपने ऊपर छः हजार रुपया निछावर कर अपनी माँ को दे दिये।

यासमीन परी प्रशिक्षण प्राप्त करने पर वाजिद अली शाह को बेहद अच्छी लगने लगी थी। पहले से ही वाजिद अली शाह उसे बहुत पसन्द करता था परन्तु उसकी वचकाना हरकतों के कारण उसे दूर कर रखा था। संगीत की शिक्षा के वाद वह वास्तव में एक परी वन गई थी और उसमें वाजिद अली शाह के प्रति मोहब्बत भी उमड़ने लगी थी। उसकी इस स्थिति को समझ कर वाजिद अली शाह अत्यन्त प्रसन्न हुआ।

जब यासमीन परी नाच गाने में व्यस्त होती तो वाजिद अली शाह उसकी दिल खुश अदाओं में खो जाया करता था। यासमीन परी और वाजिद अली शाह की मोहब्बत का यह सिलसिला एक साल तक चलता रहा परन्तु बाद में कुछ ऐसी परिस्थितियाँ उत्पन्न हो गई कि उनका यह सम्बन्ध टूट गया। दरअसल हुआ यूँ कि वाजिद अली शाह का रुझान सरफराज बेगम की ओर अधिक हो चुका था। यासमीन परी इस सम्बन्ध को सहन न कर सकी और ईर्ष्या की आग में जलने लगी। तब सम्बन्ध विच्छेद के अलावा कोई अन्य उपाय न रहा।

माशूक परी को संगीत का प्रशिक्षण प्राप्त करते हुए अभी तीन माह ही बीते थे कि वाजिद अली शाह को यह सूचना मिली कि वह मां बनने वाली है। वाजिद अली शाह ने माशूक परी को महल का स्तर देते हुए परदे में कर दिया। पृथक निवास के साथ गहने, धन और कुछ तोहफे भी उसे दिये गये।

इसी अवधि में वाजिद अली शाह को यह भी ज्ञात हुआ कि इज्जत परी मां बनने वाली है उसे भी पर्दे में करते हुए इज्जत महल साहिबा का खिताब और धन दौलत दिया गया।

अचानक ही दरोगा नजमुलनिसा के मरने पर वाजिद अली शाह को बहुत अफसोस हुआ और काफी देर तक रोता भी रहा था। इस घटना के सम्बन्ध में वह बहुत ही दार्शनिक विचार व्यक्त करते हुए लिखता है—

> **"......चूँकि यह दुनियां फ़ानी है और इसकी हैसियत महज़ पानी के एक बुलबुले की सी है लिहाज़ा हर जानदार को एक दिन दारुए मर्ग नागहानी का मज़ा चखना है।**
>
> **यही वजह है कि दाना आलमो ने आक़लाने बालिग नज़र इस दुनियां को नक्श बर आब से ज्यादा तसव्वुर नहीं फरमाया और इसको एक चलती फिरती साया से तश्बीह दी। ऐसा इसलिए समझा है कि हम जिस को साया समझ बैठे हैं वहाँ थोड़ी देर में कड़ी धूप सर पर आ जाती है।**
>
> **दरोगा नज़मुलनिसां बेगम साहिबा यकायक पैके क़ज़ा का निशाना बन गयीं और मुझ फ़िराक़ जुदा को महज़ूरो पुर मलाल छोड़ गयीं। जब मैंने यह ख़बर वहशत असर सुनी तो हाथों के तोते उड़ गये और मैं दीवाना सा होकर अज़ ख़ुद रफ़्ता हो गया और बिस्तरे ग़म पर गिरके ज़ारो क़तार रोने लगा। इसके अलावा मैं कर भी क्या सकता था। मजबूरी व लाचारी की हालत में दिल पर सब्र का पत्थर रखकर बैठा रहा और मरहूमा के लिए दुआयें ख़ैर करता रहा।"**

नवाब निशात महल साहिबा के माध्यम से करीम बख्श वाली के नाम से मशहूर तवाइफ जिसकी उम्र लगभग अट्ठारह वर्ष थी परियों में सम्मिलित हुई जिसे अमीर परी का खिताब दिया गया। यह संगीत विद्या में पहले से ही निपुण थी फिर भी निरन्तर प्रयास और कोशिशों की कमी से उसकी निपुणता पर बुरा प्रभाव न पड़े इसलिए उसके संगीत प्रशिक्षण को जारी रखा गया।

ख्वाजासरा फिरोज और नवाब खास महल साहिबा ने सुखवदन वाली के नाम से मशहूर एक औरत, वाजिद अली शाह को प्रस्तुत की जिसे उसने बेहद पसन्द किया और उसके नाच गाने से प्रभावित होकर वजीर परी का खिताब देते हुए परीखाने से प्रशिक्षण उपलब्ध करवाया।

एक दिन वाजिद अली शाह ने अंग्रेजी शानो शौकत से भरपूर महफिल सजायी जिसमें उसने अंग्रेजी खाने का प्रबन्ध करवाया। यह महफिल अपने आप में निराली और अत्यन्त ही सुन्दर थी। इस महफिल में हर एक परी कुर्सी पर हाथ में छुरी कांटा लिए बैठी थी। वाजिद अली शाह अलग कुर्सी पर बैठा था और उसके सिर पर मोतियों का ताज और पोशाक दिल को खुश करने वाली थी। बेहद कीमती गहनों से सजा हुआ वह अंग्रेजी बाजे की आवाज में परियों की तरह-तरह की अदाओं और उनकी गायकी का आनन्द ले रहा था। यह शाबान महीने की १५ तारीख थी। इसी महफिल में एक फूल सा चेहरा वाजिद अली शाह ने देखा जिसकी आँखें बेहद खूबसूरत थीं और वह बिल्कुल किताबों में वर्णित हसीनाओं की तरह थी। वह इतनी खूबसूरत थी कि वाजिद अली शाह को उसकी तारीफ में अल्फाज नहीं मिलते थे। उस पन्द्रह साल की नाजनीन की उपस्थिति ने सभी हसीनाओं के हुस्न को धुंधला कर दिया था। इस बेमिसाल हसीना का नाम उमराव उम्दा खानम वाली था। उमराव ने बेहिचक वाजिद अली शाह के सम्मुख इजहारे मौहब्वत कर दिया। उसने वाजिद अली शाह से प्रार्थना की कि कोई ऐसी तरकीब कीजिए कि मेरी मुहब्बत को दुनियां याद करे। उसने यह भी कहा कि अब उसके धैर्य की सीमा टूटती जा रही है और दिल आपसे दूर नहीं रहना चाहता है। वाजिद अली शाह ने उमराव के इस प्रभावित करने वाले तर्क को सुनकर प्रसन्नता का अनुभव करते हुए अपनी आंखों को हाथों से ढक लिया जिसका तात्पर्य उमराव को स्वीकार कर लेना था। वाजिद अली शाह को अपने पिता का भय लगा हुआ था इस कारण कोई युक्ति ढूंढने के लिए उसने अपने राजदारों के सम्मुख इस प्रश्न को रखा। सैयद इबराहीम अली खाँ बहादुर ने उमराव से मुताह कर लिया था। इस समस्या के समाधान में मीर मोहम्मद मेंहदी की सहायता ली गयी जिसकी कोशिशों को सफलता मिली और उमराव को तलाक मिल गया। इस प्रकार उमराव वाजिद अली शाह को प्राप्त हुई और उसे सिकन्दर बेगम साहिबा का खिताब दिया गया।

उमराव बहुत शर्मदार औरत थी उसने कभी भी वाजिद अली शाह को अप्रसन्न करने वाले कार्य नहीं किये थे। एक दिन मुजरे के बहाने उम्दा खानम शाही भवन में आ गयी और अवसर पाते ही बादशाह अमजद अली शाह के सम्मुख प्रार्थना करने लगी

कि उमराव उसकी लड़की है जिसे वाजिद अली शाह ने जबरदस्ती अपने भवन में रखा हुआ है। इस तथ्य को प्रमाणित करने के लिए बादशाह ने आदेश दिया कि उमराव को उसके सम्मुख प्रस्तुत किया जाये। वाजिद अली शाह भयभीत हो गया और सिफारिश के लिए अपनी मां के पास गया जो उसकी मदद न कर सकीं। उमराव डरते-डरते बादशाह के पास चली गयी। उधर वाजिद अली शाह का बुरा हाल था कभी रोने लगता, कभी पागलों की तरह हँसने, कभी टहलने लगता और कभी दरवाजा बन्द कर बैठ जाता था।

बादशाह के सम्मुख दोनों को पेश किया गया वहाँ साहस करते हुए उमराव ने प्रार्थना करते हुए कहा कि यदि उसे अमल शनियां के लिए कहा जायेगा तो इस मक्कार उम्दाखानम के साथ उसे जाना पड़ेगा। उसके तर्क को सुनकर बादशाह ने आदेश दिया कि उमराव अपने पति के पास चली जाये। साथ ही उम्दाखानम को चेतावनी दी कि यदि भविष्य में उसने कभी इस तरह का दावा किया तो उसे दण्डित किया जायेगा।

वाजिद अली शाह पूरी रंगीनियों में डूबा हुआ था कि अचानक ही इमामन जो उसकी मुँहबोली बहन थी, की मृत्यु के समाचार ने उसे दुखी कर दिया। वाजिद अली शाह के उत्तराधिकारी बनने के प्रारम्भ के दिनों में ही एक औरत को सेविका रूप में भर्ती किया गया। सांवले रंग की यह शोख औरत जाति से कहारी थी। वाजिद अली शाह ने इसे अपनी हवस का शिकार बनाना चाहा जिसका उस औरत पर इजहार भी कर दिया। वह इस शर्त पर तैयार हो गयी कि उसे मेहरीगीरी का पद प्रदान कर दिया जाय जिसे वाजिद अली शाह ने स्वीकार कर लिया और साथ ही "देहतर उंनिसां खानम साहिबा" का अच्छा सा खिताब भी दिया। वाजिद अली शाह दिनों दिन इससे ज्यादा से ज्यादा मोहब्बत करने लगा।

वाजिद अली शाह के घर पड़ने का प्रस्ताव उसने अस्वीकार कर दिया था। वाजिद अली शाह के धमकाने पर कि वह उससे सम्बन्ध तोड़ लेगा तो वह रोने लगी। जब वाजिद अली शाह को अत्यन्त क्रोध चढ़ आया तो उसकी सेवायें समाप्त करने का आदेश दे दिया। इस पर उसने अपनी वह हालत बना ली कि वाजिद अली शाह को अपने आदेश वापस लेने पड़े। वाजिद अली शाह उसे समय-समय पर धन दौलत देता रहता था क्योंकि वह स्वयं भी उसे बहुत चाहता था। यही औरत वाजिद अली शाह को दोनों समय का भोजन कराया करती थी।

नवाब खास महल साहिबा ने वाजिद अली शाह को सत्तरह-सत्तरह वर्ष की आयु वाली दो सुन्दर युवतियाँ भेंट कीं जिनमें से किसी को भी वाजिद अली शाह की मुहब्बत नसीब नहीं हुई यहाँ तक कि इन दोनों को उसके सम्मुख बैठने की भी इजाजत न थी। शाह बख्श और अल्ताफ बख्श नाम की इन औरतों को केवल उनको सुपुर्द कार्यों से ही सरोकार था। इन्हें संगीत का प्रशिक्षण भी प्राप्त नहीं हुआ था।

मोहम्मद हुसैन अली के माध्यम से शीरी हव्सन नाम की औरत वाजिद अली शाह के भवन में रखी गयी जिसे खवासों (सेविकाओं) के जमरे (समूह) में रखा गया।

इस शीरी हब्सन के माध्यम से दो अन्य औरतें वाजिद अली शाह के भवन में रख ली गयीं। फजा हब्सन और लैला हब्सन नाम की इन औरतों को भी सेविकाओं के समूह में स्थान दिया गया।

बादशाह नसीरुद्दीन हैदर की बेगम बादशाह महल का निधन होने के पश्चात जब उनकी सम्पत्ति जब्त कर ली गयी तो उस सम्पत्ति में छः सेविकायें भी थीं जिन्हें अमजद अली शाह ने वाजिद अली शाह को दे दिया। इनमें से दो को वाजिद अली शाह ने अपनी सेवा के लिए रख लिया और बाकी चार की शादी करा दी। सेवा में रखी गयी इन सेविकाओं को फर्खुन्दा बख्श और शाह बख्श के नाम से पुकारा जाने लगा। बाद में फर्खन्दा बख्श से एक पुत्री उत्पन्न हुई जिसके कारण उसे फर्खुन्दा खानम साहिबा का खिताब दिया गया परन्तु बदकिस्मती से फर्खुन्दा बख्श की पुत्री शम्स आरा बेगम जीवित न रही और फर्खुन्दा बख्श महल के स्तर को प्राप्त न कर सकी।

वाजिद अली शाह का परीखाना उन दिनों अपने पूरे शबाब पर था। उसका हर क्षण नृत्य और संगीत की सभाओं और परियों के मध्य आनन्द पूर्वक व्यतीत होता था। यह आनन्द सभायें इन्द्र की सभा को भी मात देने वाली थीं। जब एक परी से दिल भर जाता तो वह दूसरी परी के साथ मौज मनाता था। इस तरह वह हर पल विलासिता का लुत्फ़ ले रहा था। हर एक परी ने अपनी किसी न किसी अदा से उससे प्यार किया था, उनमें से कई को वाजिद अली शाह ने महल का स्तर प्रदान किया। वाजिद अली शाह को इस दौरान केवल तीन दुख हुये थे जिसमें नजमुलनिसां की मौत, इमामन की मौत और एक पुत्री की मृत्यु थी। इन दुखों के अलावा उसे किसी भी घटना ने व्याकुल नहीं किया था और जिन्दगी ऐशो आराम से गुजर रही थी।

वाजिद अली शाह का इस तरह का जीवन एवं दैनिक क्रिया कलाप उसकी बेगमों को पसन्द न थे। विशेष कर नवाब खास महल साहिबा के दिल में अन्दर ही अन्दर ईर्ष्या की आग भड़कने लगी थी। वह कभी कभी लड़ाई झगड़े की नौबत तक पैदा कर देती थी। वह व्यक्तिगत रूप से परियों के रहन-सहन पर आक्षेप करने लगी थी। अन्य बेगमात भी जो पर्दे में रहती थीं, वाजिद अली शाह के दर्शन भी न कर पाती थीं। वे सभी बेगमें वाजिद अली शाह से नाराज़ रहने लगी थीं। वाजिद अली शाह ने परियों की देखरेख का कार्य महल की बेगमों से लेकर दरोगा मुहम्मद हुसैन अली खां को दे दिया और इसके साथ ही उसे मुहम्मत मोतीमिद अली खाँ का खिताब दिया।

वाजिद अली शाह को आकर्षण उत्पन्न करने वाले नये-नये विचार प्रायः सूझते रहते थे जिन्हें वह अपनी सामर्थ्य और कुशलता से पूरा करने का सफल प्रयास किया करता था। इसी प्रकार उसके मस्तिष्क में यह विचार आया कि वह अपने भवन को पहरेदारों से सुसज्जित करें। पिता अमजद अली शाह के नियंत्रण के कारण धनाभाव की बजह से इस कार्य में रुकावट आ रही थी। इस पर भी वाजिद अली शाह ने तीस औरतों और पचास तुर्क सिपाहियों की नियुक्ति की जिन्हें उसने अपने अनुसार ऐसा

प्रशिक्षण उपलब्ध करवाया कि ये सिपाही अंग्रेजी सिपाहियों की तुलना में कहीं बेहतर थे। इनकी कवाइद उसने फारसी भाषा में करवाने का प्रयोग किया था और कवाइद के शब्दों का चयन भी स्वयं ही किया था। वह इन सिपाहियों की कवाइद के समय स्वयं भी उपस्थित हुआ करता था। सिपाहियों को आकर्षक पोशाकें भी उपलब्ध करायी गयीं थीं। इस कवाइद के लिए उसने हाजी मोहम्मद शरीफ को नियुक्त किया था जो बेहद लगन, परिश्रम और ईमानदारी से अपने कार्य को करता था। इसका प्रशासन बहुत अच्छा था और प्रत्येक सिपाही अनुशासित रहता था।

एक बार यासमीन परी, माहरुख परी और सरदार परी ने जियारत पर जाने की इच्छा जाहिर की, ऐसी यात्रा पर जाने देने के लिए वाजिद अली शाह तैयार न हुआ। सामने बुलाकर पूछे जाने पर भी जब इन तीनों ने अपनी इच्छा को दोहराया तो वाजिद अली शाह ने क्रुद्ध होते हुए उनको सम्मुख न आने के निर्देश दे दिये और पृथक निवास की व्यवस्था कर दी। अगली बार पुनः इन तीनों ने करवलाए मुअत्तला जाने की अपनी इच्छा व्यक्त की जिसे वाजिद अली शाह ने स्वीकृति भी दे दी और साथ ही सफर खर्च के लिए चार हजार रुपये का प्रबन्ध भी कर दिया परन्तु बाद में इन तीनों ने जाने से मना कर दिया। वाजिद अली शाह इसी दिन से इन तीनों से नाराज रहने लगा और सम्बन्ध तोड़ लिए। अब वे केवल प्रशिक्षण के सिलसिले में ही भवन आतीं थीं। इन तीनों ने यद्यपि काफी प्रयास किये कि वाजिद अली शाह उन पर मेहरबान हो जाये लेकिन उस पर कोई प्रभाव न पड़ा।

वाजिद अली शाह सरदार परी से अधिक खफा न था क्योंकि वह अभी तेरह वर्ष की अल्पायु में ही थी और आदमी से दूर भागती थी। वाजिद अली शाह को यकीन था कि आने वाले समय में जब वह जवान हो जायेगी अवश्य ही मेरी ओर आकर्षित होगी। यासमीन परी और माहरुख परी से उसकी नाराजगी कम नहीं हुई। एक बार यासमीन परी और सरफराज परी के सम्बन्ध में उसे सूचना मिली कि वे गर्भवती हो गयीं हैं। उन दोनों को परदे में कर दिया गया। यह भ्रमात्मक समाचार था। जब वास्तविकता मालूम हुई कि वे गर्भवती नहीं हैं तो पुनः उन्हें उसी पूर्व स्तर पर कर दिया गया और केवल प्रशिक्षण कार्य तक ही उनको सीमित कर दिया गया।

नवाब खास महल साहिवा ने वाजिद अली शाह की सेवा में एक औरत प्रस्तुत की जिसे नूर अफशां परी का खिताब बख्शा गया। यह औरत वाजिद अली शाह से इजाजत लेकर ज्यारत आययात को चली गई।

वाजिद अली शाह को सूचना मिली कि हूर परी गर्भवती हो गयी है परन्तु यासमीन परी और सरफराज परी के भ्रमात्मक समाचार के कारण पांच महीने के गर्भ होने पर ही हूर परी को पर्दे में जाने के लिए कहा गया। वह साफ मना करती रही और रोने चिल्लाने लगी। उसके ऐसे हठ के कारण वाजिद अली शाह परेशान हो गया। अन्ततः सात महीने के गर्भ होने पर उसे पर्दे में कर दिया गया। समय आने पर उससे

पुत्र रत्न की प्राप्ति हुई परन्तु दुर्भाग्यवश यह बालक अधिक दिन जीवित न रह सका। इस घटना के बाद पुनः हूर परी को नाच गाने की इजाजत दे दी गई।

सरफराज परी को पाकर वाजिद अली शाह अत्यन्त हर्षित हुआ था। प्रारम्भ से ही सरफराज के हुस्न का शिकार होकर वह दीवानों की तरह उसके पीछे लगा रहता था यहां तक कि अपने स्वाभिमानी व्यक्तित्व के विपरीत वह सभी नाज नखरे उठाता था। सरफराज परी ने उसकी ऐसी हालत बना दी थी कि वाजिद अली शाह को वह खाते-खाते जो भी अपनी झूठी वस्तु दे देती उसे वाजिद अली शाह खुशी-खुशी खा लेता था और हर पल सरफराज परी को ताकते रहने के प्रयास में लगा रहता था। सरफराज परी के नखरे बढ़ते ही जाते थे और वह बड़ी लापरवाही से वाजिद अली शाह की इस पागलपन की सीमा तक पहुँची दीवानगी की उपेक्षा कर जाती थी। जब सरफराज नृत्य में व्यस्त रहती थी तो उसे देखते-देखते वाजिद अली शाह भावुकता वश रो पड़ता था। जब वह प्रशिक्षण में लगी होती थी तो उसकी अदाओं से वह होशो हवाश खो बैठता था। जब सरफराज सो जाती वह जागता रहता था। इस पर भी सरफराज वाजिद अली शाह पर दूसरी परियों से अधिक चाहत रखने का आरोप लगाकर उसके दिल को दुखाकर मन ही मन आनन्दित होती रहती थी। सरफराज परी दिन में तीन बार अपने वस्त्र बदलती, हर वक्त इत्र की खुशबू से सराबोर रहती, दांतों पर मिस्सी चढ़ाये रहती और होठों पर लाली सजाये रहती थी। कभी सीधे बाल बना लेती, कभी घुंघराले कर उन्हें संवार लेती थी। उंगलियों में मेंहदी सजी रहती और खूबसूरत अंगूठियां डाले रहती। उसने वाजिद अली शाह की यह हालत कर दी कि वह बैठती तो वाजिद अली शाह खड़ा रहता। जिधर वह चलती उधर ही वाजिद अली शाह उसके पीछे हो लेता यहां तक कि वाजिद अली शाह उसके पैर तक दबाने को तत्पर रहता था। इस प्रकार वाजिद अली शाह सरफराज पर पूरी तरह से आसक्त हो चुका था।

एक दिन दरोगा नजमुलनिसां बेगम, नवाब खुर्द महल उम्दा बेगम साहिबा और नवाब निशात महल नन्हीं बेगम साहिबा ने परस्पर विचार विमर्श करके वार्ता करने के लिए शहंशाह मंजिल के एक कमरे में वाजिद अली शाह को बुलवाया। इन सभी ने सरफराज परी से वाजिद अली शाह से हद दर्जा बढ़ते हुए इश्क के बारे में बातें शुरू कीं। बात-बात में वे विचित्र विचित्र हरकतें करतीं जैसे कभी होंठ काटती, कभी दांतों तले उंगलियां दबा लेतीं और इस तरह के वाक्य बोलतीं जिनका अर्थ उलझा हुआ सा होता। वाजिद अली शाह उनकी ऐसी हरकतों से बेचैन हो गया और उनके सही उद्देश्य को जानने की इच्छा करने लगा। वाजिद अली शाह ने जब उन्हें स्पष्ट कहने के लिए अपने सिर की कसम दी तो नजमुलनिसां ने बयान किया कि जिस सरफराज परी पर आप बेहिसाब जान छिड़कते हैं उसके सम्बन्ध में कई अजीबो गरीब अफवाहें सुनी जाती हैं।

ऐसा सुनते ही वाजिद अली शाह उनसे विस्तार से हर बात सुनाने का आग्रह करने लगा और कहने लगा कि मुझे अधूरी बात कहकर उलझन में क्यों डाल रही हो। उसके ऐसे आग्रह पर नजमुलनिसां और तीनों बेगमें इस प्रकार कहने लगीं कि "हम आप पर बलिहारी जातीं हैं" वाक्य से प्रारम्भ करते हुए उन्होंने कहा कि औरत की फितरत में कोई न कोई कमजोरी अवश्य होती है। औरत में मुरब्बत नहीं होती। आप यदि क्रोधित न हों तो निवेदन इतना ही करना है कि सरफराज परी दिखावे में तो आपसे बहुत चाहत दिखाती है परन्तु वास्तविकता यह है कि वह आपकी तनिक भी परवाह नहीं करती है।

उनके ऐसे शब्दों को सुनते ही वाजिद अली शाह का रंग फक पड़ गया। उसने दोनों हाथों से अपना दिल थाम लिया और पीड़ा का एहसास करने लगा। द्रवित होते हुए वह उन तीनों की ओर मुखातिब होकर कहने लगा कि तुम सभी जानती हो कि मैंने कभी सरफराज परी की खिदमत में कमी नहीं आने दी है तो भला वह मेरे प्रति ऐसा व्यवहार क्यों करेगी ? मुझसे बेवफाई करने को क्यों अमादा है ? तत्पश्चात यह विचार करते हुए कि सम्भवतः मेरे सरफराज परी के प्रति अधिक रुझान के कारण यह बेगमें ईर्ष्या वश ऐसा कह रही हों उसने उल्टे उन तीनों से सवाल किया कि आखिर उसे अब क्या करना चाहिए ? इन तीनों ने वाजिद अली शाह को आश्वासन किया कि कुछ दिनों के समय में ही वे सरफराज परी को बेवफाई की हरकतों को स्पष्ट रूप से दिखा देंगी। वाजिद अली शाह लिखता है—

> **"……ये अल्फाज जब मैंने सरफराज़ परी के बारे में सुने तो मेरा रंग फक़ हो गया और दोनों हाथों से दिल को थामे हुए तड़पने लगा और आब्दीदा होकर कहा कि तुम सब शाहिद हो कि मैंने सरफ़राज़ परी की परस्तिश में कभी कोताही नहीं की। ऐसी सूरत में आख़िर वह क्यों मुझसे बेवफ़ाई पर आमादा है। मैंने ख़ुद इन्हीं से पूँछा कि अच्छा ये बताओ कि मुझे क्या तदबीर इख़्त्यार करनी चाहिए। इन लोगों ने कहा चन्द रोज़ आप ताम्मुल फ़रमायें हम इन्शा अल्लाह इसकी सारी बेवफ़ाई के सलूक आपको दिखा देगें।"**

परियों की बेवफाई के सम्बन्ध में एक प्रार्थना पत्र वाजिद अली शाह के मुँह लगे गौहर अली ने भी प्रस्तुत किया। इस प्रार्थना पत्र को देख कर वाजिद अली शाह को दुख भी हुआ और क्रोध भी आया। इस प्रार्थना पत्र में स्पष्ट किया गया था कि परियों की जैसी स्थिति है और उनकी जैसी हरकतें हैं वे इस सेवक से देखी नहीं जा रही हैं। जानकारी हासिल करने पर सारी स्थिति स्पष्ट हो जायेगी। वाजिद अली शाह लिखता है—

> **"……यह अर्जी पढ़कर मुझे बड़ा गुस्सा आया कि परियां इस क़दर ज़बरदस्त तरदीद और माज़रत के बाद फिर उन्हीं हरकतों**

पर उतर आयी हैं गरज़ कि मेरे दिल पर पुराना दाग़ था वह फिर से ताज़ा हो गया।"

ऐसी घटनाओं से वाजिद अली शाह के दिमाग में बेचैनी व्याप्त रहने लगी। इसी उलझन में उसने समूचे परी समूह, वेगमों आदि को शहंशाह मंजिल में एकत्रित किया और हृदय की घुटन के कारणों को उन सब के सम्मुख स्पष्ट कर दिया। वाजिद अली शाह ने सभी को अपनी मोहब्बत का वास्ता देते हुए जिन शब्दों में उनसे अपनी परेशानी के कारणों को स्पष्ट किया वे इस प्रकार थे—

"......ऐ मेरी हम नशीनों! मैंने तुममें से किसी को भी ज़बरदस्ती अपने घर में नहीं रखा। कोई मेरे इश्क़ में मुब्तिला होकर आयी है, कोई मुझे ख़्वाब में देखकर फ़रेफ़तां हुई है, किसी ने मुझे बाज़ार में गुज़रते देखकर दिल पर चोट खाई और किसी ने ख़ुद मेरे घर में मुझसे अपनी मुहब्बत का आग़ाज़ किया है, किसी ने रक़्स में अपने को खो दिया और कोई गाने बजाने में सब कुछ भूल बैठी है लेकिन चन्द रोज़ से बड़ी परेशान कुन खबरे सुनने में आ रहीं हैं ख़ुदा न ख़्वास्ता ऐसी सूरत न पैदा हो कि मैं तस्वीरे हसरत बनके रह जाऊँ। बस ये चन्द जुमले मैंने कहे और इसके साथ ही बेइख़्तयार होकर रोने लगा और सरफ़राज़ परी की तरफ मुँह करके कहा ख़ुदा जानता है कि मेरी हर राहत तुम्हारे इख़्तयार में है। मैंने तुम्हें कैद करके नहीं रखा है तुम्हारा जो जी चाहे कर सकती हो। मैं तुम्हारी हर तमन्ना पूरी करने को तैयार हूं। तुम्हारी जो ख़्वाहिश हो बे-ताम्मुल ज़ाहिर करो मैं उसको पूरा करूँगा। मुख़तसर ये कि तुम सब महलात का ताबे लेकिन ख़ुदा हूं के लिए कोई ऐसी हरक़त न करना जिससे नमक हरामी का दाग़ तुम्हारे दामनो पर नुमाया हो।"

वाजिद अली शाह के ऐसे बयान से सभी सकपका कर रह गईं और तरह-तरह की कसमें खाकर उसे विश्वास दिलाने लगीं कि उन्होंने किसी प्रकार की कोई बेवफाई की हरकत नहीं की है। इन कसमें खाने वालियों में सबसे प्रमुख सरफराज परी और हूर परी थीं। वाजिद अली शाह के नेत्रों से आँसुओं के श्रोत रिस रहे थे। यद्यपि इस समय क्षणिक शान्ति उसे अवश्य मिली फिर भी वह चिन्तित रहने लगा। वह लिखता है—

"......ये तक़रीर सुनकर सब औरतें कसमें खाने लगीं और यूँ गोया हुईं कि हमारी आँखें फूट जायें जो हमने तुम्हारी ख़ुशनूदी ख़ातिर के अलावा कोई और काम किया हो। ख़ासकर सरफ़राज परी और हूर परी सबसे ज्यादा कसमें खा रहीं थीं। मेरे आंसू थमते ही न थे। आख़िर मेरे दिल में सुलगती हुई आग़ बुझ गई लेकिन फ़िक्र मन्द रहा।"

वाजिद अली शाह की बातें सुनकर सभी परियां यही कहने लगीं कि आपने केवल सुनी सुनाई बातों पर विश्वास कर लिया है । सभी अपनी-अपनी वफा का वास्ता देने को तरह-तरह की बातें करने लगीं और मर मिटने तक की बातों से विश्वास दिलाने का प्रयास करने लगीं । इन बातों को सुनकर फिर वाजिद अली शाह ने कहा कि यदि मेरी कही बातें सच निकलती हैं तो यह सरासर नमक हरामी है । परियों द्वारा ऐसी खबरों की सूचना का माध्यम पूछे जाने पर वाजिद अली शाह ने स्पष्ट रूप से नजमुलनिसां और अन्य महलात का नाम बता दिया । इसके बाद इन लोगों में काफी खिंचाव उत्पन्न हो गया । परियों द्वारा अपने इल्जामों से साफ इन्कार कर देने के बाद वाजिद अली शाह ने उन सभी को माफ कर दिया । वह यदि सब्र से काम लेता तो यह संभावना बनी रहती कि परियों की बेवफाई कभी न कभी उसे प्रकट हो जाती । वाजिद अली शाह इसके बाद परियों के प्रति सशंकित रहने लगा । वह लिखता है—

" .. इन लोगों के इन्कार के बाद मैंने सब का क़सूर माफ किया लेकिन मेरे दिल से इसकी खटक न गयी । अफसोस कि मैंने कुछ दिन और सब्र से काम न लिया वरना क्या अजब कि मैं अपनी आँखों से सब कुछ देख लेता ।"

इस अवसर पर जब कि वाजिद अली शाह अपने परी समूह से बातचीत कर रहा था गौहर अली तथा अन्य खास सेवक भी उपस्थित थे । सरफराज परी और हूर परी ने क्षमा तो अवश्य मांगी पर साथ ही यह प्रार्थना भी की कि अगर कोई ऐसा व्यक्ति है जिसने उन लोगों को बेवफाई करते हुए देखा हो वह हाथ पकड़कर बता दे तभी वे अपनी गलती स्वीकार करेंगी और जब तक स्वयं वाजिद अली शाह उनकी गलतियों और नागवार हरकतों को न देख लें तब तक किसी की बातों पर यकीन न करें । यदि कोई व्यक्ति इस तरह झूठी बातें कह कर वाजिद अली शाह को परेशान कर रहा है तो उसे भी सजा मिलनी चाहिए । ऐसी बातें सुनकर वाजिद अली ने गौहर अली की सेवायें समाप्त कर दीं । इतना सब कुछ हो जाने पर भी वाजिद अली शाह को दिमागी सुकून न हुआ और इसी व्याकुलता की स्थिति के कारण कुछ ही समय में वह रोग ग्रसित हो गया । वाजिद अली शाह लिखता है—

"......फिर भी मेरी तसकीन न होती थी और तरह-तरह के ख़्यालात और अंदेशे मेरी जान खाये जाते थे जिसका नतीजा यह हुआ कि मैं चंद रोज बाद ख़फ़कान का मरीज़ हो गया और बाज़ वक़्त दिन-दिन भर इख़तलाज से मेरा दिल धड़कता रहता था ।"

इन दिनों वाजिद अली शाह परियों के नाच गाने में दिल बहलाकर अपने रोग की पीड़ा को कम कर लिया करता था परन्तु फिर भी उसके दिल से उदासी नहीं जाती थी । उसका कोई ऐसा दोस्त या हमराज नहीं था जिस पर विश्वास कर वह अपने दुखड़े को सुनाकर थोड़ी तसल्ली हासिल कर पाता । जिन व्यक्तियों पर वह विश्वास करता था उनकी बेवफाई के कारनामों के कारण वह और भी दुखी था और दूसरी

ओर उसके माता पिता भी उसके प्रति उदासीन रहते थे। अपनी महलात को भी वह अपने करीब महसूस नहीं करता था। दिन ब दिन वह इतना क्षीण होता गया कि उठने बैठने जैसी क्रियाओं में भी उसे तकलीफ होने लगी, यहां तक कि वह बैठे-बैठे ही नमाज अदा करता था। इस प्रकार वह इतना रोग ग्रस्त हो गया कि छः माह तक उठ भी न सका। वह स्वयं लिखता है—

> **"...... दिल बड़ा उदास सा रहता था इसलिए कि ऐसा कोई रफ़ीक ही न था जिससे मैं अपना हाले दिल कह कर दिल का गुबार निकालता। जिन मरदों को मैंने अपना रफ़ीक समझा था वह ऐसे निकले हम दमो मूनिस। औरतों का ये हाल—मां बाप तो कभी पूछते ही नहीं। इस ज़माने में मैं इतना कमजोर हो गया था कि उठना बैठना भी मेरे लिए दोभर था। बैठे-बैठे नमाज़ अदा करता था। मुसलसल तीन मरतबा ऐसा बीमार पड़ा कि पांच-छः माह तक उठ न सका। अल्लाह रहम करे।"**

सरफराज परी की बेवफाई की घटनायें सुन-सुनकर वाजिद अली शाह का हृदय टूटने लगा और उसने सरफराज परी के प्रति अपना रुझान कम कर दिया। ऐसे में उसकी मानसिक स्थिति बहुत असमन्जस में आ गयी थी जिसके कारण वह अजीबो गरीब हरकतें करने लगा। कभी जंगल की तरफ निकल जाता, तो कभी नदी के किनारे टहलने लगता और उसके दिमाग में तरह-तरह के विचार आते रहते। वह घर में अकेले कुढ़ता रहता और कभी-कभी घंटों आइने में अपनी सूरत को निहारता रहता।

वाजिद अली शाह की ऐसी दिमागी हालत पर सहानुभूति जाहिर कर एक रोज रश्क परी ने वाजिद अली शाह से पूछ ही लिया कि उसकी ऐसी स्थिति का मुख्य कारण आखिर क्या है ? वाजिद अली शाह ने सरफराज के व्यवहार के बारे में उससे और अधिक जानकारी हासिल करना चाहा जिससे कि उसके दिमाग की परेशानी कुछ कम हो सके। रश्क परी ने ठहाका लगाते हुए वाजिद अली शाह को बताया कि उस मक्कार औरत के फरेब को वह भली प्रकार जानती है। उसने यह भी कहा कि वाजिद अली शाह को चाहिए कि उसके कारण वह किसी प्रकार के दुख की अनुभूति न आने दे और अपनी आत्मा को ताजे गुलाब की तरह से ताजा रखने का प्रयास करें। खुदा की मर्जी हुई तो उस फरेबी औरत के सारे फरेब वह एक दिन वाजिद अली शाह को दिखा देगी।

वाजिद अली शाह सरफराज परी के बारे में सब कुछ जान लेने के लिए अत्यन्त व्याकुल था। उसने रश्क परी से बड़े अपनत्व के साथ आग्रह किया कि वह सरफराज के बारे में जो कुछ भी जानती हो स्पष्ट करे। रश्क परी ने वही सब कुछ दोहराया जो वाजिद अली शाह पहले से ही सुन चुका था। ऐसी बातें सुनकर वाजिद अली शाह को और भी अधिक दुख हुआ और वह सोचने लगा कि आखिर यह सब क्या हो रहा है। वह सोचता रहता कि सरफराज परी सामने तो इस कदर मुहब्बत जताती है तब आखिर

क्या बजह है कि पीठ पीछे बेवफाई करती है। इन्हीं बातों के दौरान वाजिद अली शाह ने रश्क परी से हर परी के बारे में उनके हालात मालूम किये। रश्क परी ने वाजिद अली शाह को ऐसे-ऐसे किस्से सुनाये जिनको सुनकर वह अचम्भे में पड़ गया और उसी समय से उसे अपने परी समूह से नफरत पैदा हो गयी। माशूक खास रश्क परी से उसका हृदय अभी भी वैसी ही मोहब्बत भरा बना रहा क्योंकि वह उसकी हमराज हो चुकी थी इसी वजह से समय-समय पर परियों के व्यवहार के प्रश्न पर बातें करता रहता था। वाजिद अली शाह लिखता है—

"......रश्क़ परी से मैंने एक-एक परी के हालात दरयाफ़्त किये उसने ऐसे वाक़यात सुनाना शुरू किये कि मैं दंग रह गया और उसी वक़्त से तमाम परियों से मुझे नफ़रत होने लगी।"

निसन्देह ही माशूक खास ईर्ष्या वश अपने आपे से बाहर होकर भी सरफराज परी तथा अन्य परियों की शिकायतें करती रहती थी। इतना सब कुछ समझते हुए भी वाजिद अली शाह पर माशूक खास का जादू चढ़ता ही जा रहा था। कभी वह उस पर निछावर उतारता, उसकी बलायें लेता और कभी-कभी तो वह इस तरह के शब्दों का और वाक्यों का प्रयोग करने लगता कि यदि वह उक्त बात को बता देगी तो वह उसका गुलाम हो जायेगा। वाजिद अली शाह की इन हरकतों का बड़ा अनुकूल प्रभाव माशूक खास पर पड़ा। वह वाजिद अली शाह के जानने योग्य घटनाओं की खोजबीन में लगी रहती थी।

एक रात जब दिलदार परी वाजिद अली शाह के साथ थी तो उसे वाजिद अली शाह के कान भरने का बहुत ही सुन्दर समय मिल गया। वह अन्य औरतों के चरित्र की बुराई करती रही तथा वाजिद अली शाह की आशिक मिजाजी की तारीफ करती हुई उससे अपने प्रति आकर्षण और रुझान को बढ़ा लेने पर जोर देती रही। वह बार-बार वाजिद अली शाह के दिल को छू जाने वाली बातें कहती और उसे अहसास कराती जाती कि वह इन औरतों पर इतना जी जान से बेवजह ही दीवाना हुआ जाता है जब कि उसे मालूम नहीं कि यह सभी औरतें उसके प्रति वफादार नहीं हैं। यदि वाजिद अली शाह उसके प्रति इतनी आसक्ति रखे तो उसकी ऐसी हालत न हो। सभी औरतें महज वाजिद अली शाह का लाखों रुपया लूटने पर लगी हैं और सामने बड़ी वफादार होने का अभिनय करती हैं और वाजिद अली शाह अभी तक अपनी वफादारी की कदर करना नहीं जान पाया है। इन्हीं बातों के दरम्यान उसने सरफराज परी के फरेब का जिक्र भी छेड़ दिया।

वाजिद अली शाह के दिमाग में उन दिनों दिलदार परी के प्रति यह विचार छाया हुआ था कि वह एक नेक औरत है इसीलिए वह उसके तमाम गुणों का कायल भी था और उससे मुहब्बत भी करता था। इस पर भी वह सावधानी से काम लेना चाहता था क्योंकि अन्य औरतों की बेवफाई के कारण वह सशंकित रहने लगा था। वाजिद अली शाह लिखता है—

"······मैंने जब देखा कि ऐसी परी पैकर मेरी तलबगार है तो इसको मैंने फ़ौरन कुबूल कर लिया लेकिन साथ ही ज़माने की बेवफ़ाई का असर भी मुझ पर गालिब था जैसा कि ख़ुद मेरा एक शेर है—

यकायक इश्क़ क्या निकले कि शहरे हुस्न में घर है,
फ़िराक इस रूह को क्योंकर गवारा होये क़ालिब का" ।

सरफराज परी की बेवफाई की खबर से वाजिद अली शाह का दिल सुलग रहा था । यद्यपि उसके प्रति वाजिद अली शाह का प्यार का जो दीवानापन था वह काफी हद तक कम हो चुका था फिर भी एक फांस की तरह हर वक्त उसके दिल में चुभा करती थी । आखिरकार बेकाबू होते हुए वाजिद अली शाह ने सरफराज परी का हाथ पकड़कर उसे रोक लिया और शिकायत भरे अन्दाज में कहने लगा कि आखिर तूने मुझे इतना दुखी क्यों कर रखा है । यह कौन सा तरीका है कि किसी के दिल को अपने प्रेम में पागल कर दिया और स्वयं बेमुरव्वती का सलूक कर रही है, तुम्हारी इस बेजा हरकत का मुझे बहुत दुख है । अभी भी कुछ नहीं बिगड़ा है फिर से रास्ते पर आ जा । सरफराज परी यह सुनते ही फिर बफादारी की कस्में खाने लगी और अपने असीम प्यार का भरोसा दिलाने लगी । इन बातों के दौरान कभी तो वह हंसने लगती और कभी रो पड़ती और वाजिद अली शाह पर ही यह इल्जाम मढ़ देती कि वह उसे मुहब्बत नहीं करता है और यह अच्छा ही हुआ कि वाजिद अली शाह को ऐसी सजा स्वयं ही मिल गई ।

वाजिद अली शाह को अपनी मुहब्बत और वफा पर इतना यकीनं था कि अलग-अलग जुबानों से निकली बातें भी उसे यह निश्चित विश्वास नहीं दिला सकीं थीं कि उसके साथ इतना बड़ा फरेब भी किया जा सकता है । यह यूं भी कहा जा सकता है कि वह इन विश्वास घातों को सहन करने या स्वीकार कर पाने की मानसिक शक्ति खो चुका था । वह तरह तरह से और वार-वार परीक्षायें लेता रहता और इसी अवसर की तलाश में रहता था । किसी तरह उसे यह विश्वास हो सके कि उसके साथ इतना बड़ा विश्वासघात नहीं किया गया है । एक दिन दुनियां की स्थिति से मुक्ति पाने के ख्याल से उसने सरफराज परी से उसकी अँगूठी मांग ली और उसने एक रोज विचार बनाया कि वह हुक्के की चिलम पर अँगूठी गर्म करके शरीर पर दाग ले । अब चूँकि अँगूठी उसकी मोहव्बत की निशानी थी इसलिए उसे गरम करना गवारा न हुआ । उसने अँगूठी को हाथ में रख कर हुक्के की महनाल को खूब गरम किया और बायीं जांघ पर आठ जगहों पर अंकित कर दिया । उस पर भी उसके दिल में सुलग रही मुहब्बत की आग ठण्डी न हुई । दो एक दिन बाद सरफराज परी के पास जाकर अपने ये निशान दिखाते हुए उसने अपनी वफा का सबूत दिया और उसकी बेवफाई के लिए शिकवे करने लगा । सरफराज परी ने जब उसकी जांघ पर वह निशान देखे तो ठहाका मार कर हँसने लगी और जांघ पर हुए जख्मों को वार-वार चूमने लगी । वाजिद अली शाह को

अब भी उससे यह शिकायत थी कि वह उसके प्रति लापरवाही में कोई कमी न ला सकी थी। वाजिद अली शाह ने इस घटना का वर्णन करते हुए लिखा है—

> "……एक रोज मैंने इसके हाथ की अंगूठी इससे मांग ली और दिल में ठान लिया कि इसको गर्म करके अपने जिस्म को दाग़ लूँगा। जिस वक्त मैं सुबह की नमाज़ के लिए उठा तो चाहा कि हुक्के की चिलम की आग में अँगूठी को गर्म करके जिस्म पर दाग लूँ लेकिन चूँकि इस बेवफ़ा औरत की निशानी थी इसलिए गवारा न हुआ कि अंगूठी को गर्म करूँ। अंगूठी को अपने हाथ में रखकर हुक्के की महनाल को खूब गर्म किया और बायीं रान पर इससे आठ जगह दाग़ दिया लेकिन फिर भी मेरे दिल में मुहब्बत की जो आग सुलगी हुई थी वह बुझ न सकी। इसके दो एक रोज़ बाद इस जफ़ा पेशा माशूक़ा के पास जाकर कहा-ऐ सितम शोआर हसीना देख! मैंने तेरी मोहब्बत में अपना क्या हाल बना रखा है। जब इसने मेरी रान पर जले हुए निशान देखे तो खूब ठट्ठा मार कर हंसने लगी लेकिन इसकी लापरवाही और कज अदायगी में कुछ फ़र्क न आया।"

चन्द रोज ही वीते होंगे कि सरफराज परी वाजिद अली शाह के पास आकर शिकवा करने लगी कि ऐ बेरहम सितमगर, बेखबर इन्सान--तुम्हें मालूम भी है कि मैंने भी तुम्हारे इश्क में अपनी जांघ पर महराब का गुल खाया है। वाजिद अली शाह ऐसा सुनते ही आँखों से आँसू बहाने लगा और उन जखमों को देखकर उसे यह विश्वास ही नहीं हो पा रहा था कि एक ओर तो इसका यह हाल है दूसरी ओर इसकी बेवफाई का अजीब ही हाल है। सरफराज परी की इस दुतरफा नीति और मुहब्बत का ऐसा दुरंगा स्वरूप उसे और भी परेशान करने लगा। वाजिद अली शाह ने सरफराज परी के जख्मों को चूमा और नकल कर लेने का मोहब्बत भरा शिकवा भी किया जिस पर सरफराज ने नकल की बात को साफ इन्कार कर दिया क्योंकि वह वाजिद अली शाह के जैसे जखम नहीं थे वरन् उससे भिन्न थे। सरफराज परी ने वाजिद अली शाह के सम्मुख उसी के फारसी मिसरे को दोहराते हुए ऐसी बात कही थी जिसे सुनकर उसे खामोश रह जाना पड़ा। वाजिद अली शाह लिखता है—

> ……"मैंने इसके जख़्मों को बोसे दिये और उन पर अपनी आँखें मली और कहा कि तुमने तो मेरी पूरी नकल उतारी इस पर उसने कहा कि ये तुम्हारे गुलों से बिल्कुल अलग फारसी के इस मिसरे के मुताबिक है—"नक्क़ाशे नक़्शे सानी बेहतर कुशदजे अव्वल" मैं ये सुनकर ख़ामोश हो गया।"

दिलदार परी और रश्क परी को जब वाजिद अली शाह और सरफराज परी के मध्य हुई बातों की जानकारी हुई तो उन्होंने दुबारा वाजिद अली शाह के कान भर

दिये। इन दोनों परियों ने वाजिद अली शाह को बड़ा भरोसा दिलाते हुए कहा कि जो गुल सरफराज ने दिखाये हैं वे केवल उसे धोखा देने के लिए ही खाये थे जिससे वाजिद अली शाह को यह यकीन हो जाये कि वह वास्तव में उससे प्यार करती है। ऐसी बातें सुनते ही मुहब्बत का मारा वाजिद अली शाह व्याकुल हो उठा और मन ही मन क्रोध आने के कारण अपने नाखून दांतों से चबाने लगा। लाख कोशिशों के बावजूद भी अपने क्रोध पर काबू न पाते हुए सरफराज परी के पास जाकर उसे बेवफा, ढोंग रचने वाली, धोखेबाज आदि शब्दों से ताना देकर अपने गुस्से को कम करने की नाकाम कोशिश करने लगा। सरफराज ने जब उसकी ऐसी हालत देखी तो उसे दिलासा देते हुए समझाने लगी कि उसने फिजूल में ही यह दाग नहीं खाये वरन् मोहब्बत की भाबुकता वस ही ऐसा किया है। सरफराज परी की यह तकरीर वाजिद अली शाह पर असर कर गई और वह विक्षिप्त सा होकर अपना सर पीटने लगा। सरफराज परी ने उसे ऐसा करने से रोक ही लिया वरना गंभीर चोट भी लग सकती थी। इस प्रकार रात दिन वह सरफराज परी की वास्तविक स्थिति जानने के लिए परेशान रहने लगा। वह इस संदेह से स्पष्ट मुक्ति पा लेना चाहता था। वाजिद अली शाह लिखता है—

> **"..... मैं फिर एक दरयाए तफ़क्कुर में डूब गया और अपना हाथ दांतों से काटने लगा। लाख जब्त किया लेकिन न रहा गया और उसके पास जाकर कहा ऐ बेरहम बेवफ़ा तू ढोंग रचा कर मोहब्बत का दम भरती है। ऐ दगाबाज़ तू अपने मक्रो फ़रेब से अभी तक बाज़ नहीं आयी। वह हँस कर कहने लगी कोई अपने जिस्म को फ़िज़ूल दाग़ नहीं देता। ये जज़बये इश्क ही था जिसकी बिन्हा पर मैंने ऐसा किया। इसकी ये तक़रीर बड़ी पुर तासीर थी और इसमें इसके इश्क़ के जज़बात कार फ़रमा थे। लिहाज़ा मेरा दिल भर आया और अपना सर दरवाज़े से टकराने लगा।"**

एक समय वह भी था जब वाजिद अली शाह और दिलदार परी दोनों ही एक दूसरे पर जान छिड़कते थे। वाजिद अली शाह का रुझान माशूके खास और सरफराज परी की ओर अधिक हो जाने के कारण दिलदार परी परेशान रहने लगी। दिलदार परी रोती हुई शिकवा करने लगी और कहने लगी कि वह अब उसके प्रति लापरवाही का व्यवहार करने लगा है। इस सवाल पर वाजिद अली शाह ने बड़े अन्दाज के साथ उत्तर दिया कि वह तो स्वयं अपने आप से ही बेखबर है ऐसे में दूसरों के प्रति वह क्या कर सकता है। दिलदार परी ने पुनः वाजिद अली शाह ने कहा कि ऐ संगदिल इन्सान मैंने तेरे प्यार की सौगात के रूप में अंगूठी का गुल खाया है और तुझे इसकी खबर भी नहीं है। कम से कम उस जख्म पर राहत देने के लिए थोड़ा मलहम ही दे दिया होता। वाजिद अली शाह ने जब स्वयं उस जख्म को देखा तो पूछ ही लिया कि आखिर तुम्हें क्या सूझी जो ऐसी हरकत कर बैठी। इस पर दिलदार परी कहने लगी कि जो भी हुआ अच्छा ही हुआ, आप इसकी फ़िक्र न करें। इस घटना के बावजूद भी

वाजिद शाह को दिलदार परी में विशेष दिलचस्पी नहीं रही और न दिलदार परी ही उसका अधिक ख्याल रख पाती थी।

वाजिद अली शाह द्वारा जब सरफराज परी को निरन्तर संदिग्ध दृष्टि से देखा जाने लगा और यह खबर भी मुखबिरों के जरिये मिली कि वाजिद अली शाह उस मौके की तलाश में है जब उसकी बेवफाई की घटना उसके सम्मुख आ सके। इस खबर से सरफराज परी तिलमिला गई और आग बबूला हो गई। वह उन सब लोगों के लिए मुसीबत बनती जा रही थी जो लोग वाजिद अली शाह को खबरें पहुँचाया करते थे। हर जगह हर महफिल में वह दिल जलाने वाली, लगी कटी बातें करने पर तुली रहती थी। वाजिद अली शाह का रुझान जब माशूके खास की ओर अधिक होने लगा तो सरफराज परी उससे बेइन्तहा झगड़ा करने लगी। एक दिन तो बात बढ़ते-बढ़ते दोनों एक दूसरे की चुटियाँ पकड़ कर हाथा पाई पर अमादा हो गई। सरफराज परी माशूके खास पर लात घूँसों से बार कर रही थी जिससे वह बेकाबू होती जा रही थी। ऐसी स्थिति में वाजिद अली शाह ने आकर दोनों का बीच बचाव करा दिया और समझा बुझा कर दोनों को अलग कर दिया। माशूके खास वाजिद अली शाह से लिपट कर रोने लगी और शिकवा करने लगी कि उसके रहते हुए मेरी ऐसी दुर्गत हो रही है। अब हरगिज इस घर में न रहूँगी जहाँ अन्य औरतों के सामने मेरी इस कदर बेइज्जती होती है। वाजिद अली शाह को यह बात बिल्कुल अच्छी न लग रही थी कि माशूके खास वहाँ से जाये परन्तु लाख समझाने पर भी जब वह न मानी तो बड़े अनमने मन से सवारी मंगाई और उसमें जिद में अड़ी माशूके खास बैठ कर चली गई। वाजिद अली शाह इस घटना का वर्णन करते हुए लिखता है—

> **"......एक रोज़ हाथा पाई तक हो गयी इसकी चुटियाँ उसके हाथ में और उसकी चुटियाँ इसके हाथ में। इस तरह सुबह से दोपहर तक ये लड़ायी होती रही जब मैंने देखा कि सरफ़राज़ परी की लातों से माशूके ख़ास बेकाबू हो रही है तो मैं दौड़ा हुआ गया और बीच बचाव कर दिया और दोनों को समझा बुझा कर अलग कर दिया। लेकिन माशूके खास मेरी गरेबान नगीर होकर कहने लगी अब ये वक़्त आ गया है कि तुम अपनी चहीती औरतों से मेरी बेइज्जती कराने लगे अब मैं हरगिज़ इस घर में न रहूँगी।"**

माशूके खास के जाने से वाजिद अली शाह अत्यन्त दुखित होते हुए दहाड़ें मार-मार कर रोने लगा। एक ओर तो उसे अपने माँ बाप की ओर से भय सता रहा था दूसरी ओर माशूके खास से वह बेइन्तिहा मुहब्बत करता था। तभी उसे यह सूचित किया गया कि माशूके खास वापस आ गई है। वाजिद अली शाह ने खुदा का शुक्रिया अदा किया और उसका चेहरा खिल गया। वाजिद अली शाह लिखता है—

> **"......मेरा दिल बुरी तरह भर आया और मैं दहाड़ें मार-मार कर**

रोने लगा। मैं अजीब मुसीबत में था कि एक तरफ मां बाप का ख़ौफ़ था और दूसरी तरफ माशूक़े ख़ास से बेपनाह मोहब्बत।"

जब सरफराज परी को यह मालूम हुआ कि माशूके खास आधा रास्ते से वापस आ गई है तो वह बौखला गई और घर से जाने का इरादा करने लगी। जब यह सोच कर भी उसका क्रोध शान्त न हो रहा था तो वह खुद कशी का इरादा बनाकर कुएँ की ओर बढ़ने लगी और जान देने पर आमादा हो गई। जब समझाने पर भी वह नहीं मानी तो वाजिद अली शाह ने खीझ कर यह कह दिया कि अगर उसे जाना है तो चली जाय। ऐसा सुनकर सरफराज परी उठी और सवारी में बैठकर चली गई। वाजिद अली शाह को उसके जाने का बेहद अफसोस हुआ और उसकी तस्वीर गले से लगा कर एक भवन में कमरा बन्द करके बैठ गया। वाजिद अली शाह को पूरा यकीन था कि सरफराज परी चूंकि बेवफा है इसलिए वह अब दुबारा वापस नहीं आयेगी। वाजिद अली शाह की दुख के कारण रोने जैसी हालत हो रही थी। चार घण्टे तक लगातार सरफराज की याद में कभी उसकी तस्वीर को निहारता रहता और कभी उसकी वफा में खाये जख्मों को चूमने लगता था। ऐसी ही हालत में वाजिद अली शाह तब चकित रह गया जब उसने देखा कि सरफराज उसके सम्मुख आ गई और लिपट कर रोने लगी। काफी समय तक ऐसी ही भावुक स्थिति में रहने के उपरान्त देर तक दोनों इश्के मोहब्बत की बातें करते रहे। माशूके खास को जब दोनों के बीच हुई इस घटना का पता चला तो वह ईर्ष्या की आग में बेइन्तहा सुलगने लगी।

कुछ चुगलखोरों ने वाजिद अली शाह के कान भर दिये कि सुल्तान परी भी बेवफाई कर रही है। तोहमत को सुनकर वाजिद अली शाह को बहुत दुख हुआ। सुल्तान परी को जब अपने ऊपर लगे इस इल्जाम के बारे में जानकारी हुई तो वह दो तीन दिन तक रोती रही जिससे उसकी तबियत भी खराब हो गई। उसने मारे दुख के खाना पीना छोड़ दिया और जब इससे भी सब्र न हुआ तो उसने वाजिद अली शाह की उत्तराधिकारी की सरकारी मोहर लेकर उसके नगीने को गर्म कर तीन जगह से अपनी जांघ पर दाग लिया। मोहर के तमाम अल्फाज उसकी जांघ पर साफ उभर आये। जख्म की पीड़ा से लंगड़ाती हुई वह वाजिद अली शाह के पास पहुँची और जब वाजिद अली शाह से उससे लंगड़ाने का कारण पूंछा तो वह रोने लगी और कहने लगी कि क्या उसे बेवफा और नमक हराम लोगों में शामिल समझ लिया गया है। उसने अपनी जांघ पर हुए घावों को दिखाते हुए वफा का सबूत पेश किया। वाजिद अली शाह उसकी जांघ पर उभरे अपनी मोहर के अक्षरों को देख कर दंग रह गया और उससे माफी मांगने लगा। सुल्तान परी उससे लिपट कर खूब रोई और वाजिद अली शाह ने इस घटना के बाद से उसकी तरफ से दिल अपना साफ कर लिया। वाजिद अली शाह लिखता है—

"......जब उसने सुना तो उसको इस क़दर रन्ज हुआ कि वह मुतवातिर दो-तीन रोज तक रोती रही जिसकी वजह से वह मायूस

हो गयी और इस कोफ़्त में खाना पीना भी छोड़ दिया। आख़िर इससे भी गुस्सा ज़ब्त न हो सका तो उसने मेरी बेख़बरी में मेरी बली अहदी की मोहर उठाली और उसके नगीने को गर्म करके अपनी रान पर तीन जगह दाग़ा फिर वह मेरे गले से लिपट कर खूब रोई इसके बाद से मेरा दिल इसकी तरफ़ से मिस्ले आईना साफ़ हो गया।"

इन्हीं दिनों अम्मन के माध्यम से संगीत में रुचि रखने वाली एक औरत उमराओ बख्श वाजिद अली शाह के घर पर बैठ गई। कुछ माह बाद ही वह गर्भवती हो गई और उसे पर्दे में कर दिया गया।

वाजिद अली शाह छोटे खान और गुलाम रजा खान के साथ परीखाने में बैठा परियों के प्रशिक्षण को देख रहा था। अचानक घनघोर बादल घिर आये और भयानक अंधेरा छा गया। बातों-बातों में इन लोगों ने छोटे साहब नाम की एक बहुत सुन्दर औरत का जिक्र किया जो गोलागंज में रहती थी। वाजिद अली शाह ने उसी समय वहाँ जाने का मन बना लिया और उन दोनों से भी साथ चलने के लिये कहा। ऐसी भयानक रात के सन्नाटे में जाने से वे पहले तो डरे लेकिन वाजिद अली शाह द्वारा जाने की निश्चित इच्छा और बुज़दिल कहे जाने पर वे तैयार हो गये।

वाजिद अली शाह ने उपस्थित अन्य लोगों से विदा ली और परीखाने में जाकर भेष बदल लिया। चूड़ीदार पाजामा और चादर लपेट कर अपने साथ दो पिस्तौलें छिपा लीं। केवल नजमुलनिसां को अपने जाने की सूचना दी और इस बात को गुप्त रखने का निर्देश दिया। परीखाने के एक अन्य द्वार से वह बाहर निकल गया। परीखाने की खिड़की से उस भयानक अंधेरी रात में वे बियावान सकरी गली में कूद गये। रास्ते में इस भयानक रात के मौसम की तारीफ में वक्त गुजारते हुए अपनी मंजिल पर पहुँच गये। यह छोटे साहब नामक उस औरत का कोठा था। यहाँ अन्य लोग भी उपस्थित थे। छोटे साहब को बुलाकर वाजिद अली शाह का परिचय देते हुए उसके साथियों ने बताया कि देहली से आने वाले जिन रिसालदार के बारे में तुमसे बात हुई थी ये वही हैं।

उस समय की मशहूर कहर ढ़ा देने वाली वह सुन्दर तवाइफ वाजिद अली शाह के सभी को आकर्षित कर लेने वाले चेहरे को देखते ही उस पर मर मिटी। उसने इत्रदान खोलकर वाजिद अली शाह के कपड़ों पर इत्र लगाया और पान के बीड़े पेश किये। वाजिद अली शाह ने एक दम पेशेवर और आदतन तवाइफों के कोठों पर जाने वालों की भाँति ही इसके द्वारा पेश किया गया पान बड़ी चतुराई से अपने मुँह से निकालकर छोटे खान को दे दिया और छोटे खान ने दूसरा पान अपने पास से निकाल कर दिया जिसे वाजिद अली शाह ने मुँह में दबा लिया। इसके बाद एक बाजा लेकर बजाने लगा और उस पर झंझोटी राग में अपनी लिखी एक गजल गाने लगा जिससे उसके संगीत के पारखी और ज्ञाता होने के व्यक्तित्व को समझते हुए वह औरत अपने

आपे से बाहर होने लगी। अन्ततः वह वाजिद अली शाह का हाथ थामकर उससे अपने इश्क का इजहार करने लगी। वाजिद अली शाह उस ओर जान बूझकर लापरवाही दिखाते हुए उसकी मोती नाम की बिल्ली से खिलवाड़ करता रहा और वह खुशामद में लगी रही।

जब एक पहर से भी अधिक रात गुजर चुकी तो वाजिद अली शाह ने अपने साथियों से चलने के लिए कहा। उन दोनों ने वाजिद अली शाह को दोनों हाथ पकड़ कर उठाया। जब वाजिद अली शाह चलने लगा तो उस औरत ने आंखें नम करते हुए अपना दुपट्टा वाजिद अली शाह की कमर में बांध दिया और एक अंगूठी भी भेंट स्वरूप देते हुए कहने लगी आप आज तो दुख देकर जा रहे हैं परन्तु दुबारा अवश्य आयें। वाजिद अली शाह लिखता है—

> **"......जिस वक़्त हम जाने को तैयार हुए तो वह दिलबर नाज़ भी आबदीदा होकर अपनी जगह से उठ बैठी और अपना ज़रतार दुपट्टा अपने सर से उतारकर मेरी कमर के गिर्द लपेट दिया और एक अंगूठी अपने हाथ से उतार कर मुझे दी और कहा कि ख़ैर इस वक़्त तो आप मेरे दिल को दुख पहुंचाकर जा रहे हैं लेकिन आपको चाहिये कि दोबारा अपना जलवा दिखायें।"**

वाजिद अली शाह अभी वहां से विदा ले ही रहा था कि थानेदार उमर खां वहां आ गया और आवाज देने लगा। इस पर इस औरत ने बहाना बनाते हुए कह दिया कि उसके पास कोई गैर आदमी नहीं है और दरवाजा बन्द कर लिया है। वाजिद अली शाह जैसे ही जीने से उतरा सामने से बख्श अली खाँ की सवारी आती दिखाई दी जिसके कारण वह फुर्ती से एक दुकान के पीछे छुप गया। वाजिद अली शाह के साथी इस स्थिति में बहुत परेशान हो रहे थे। गोलागंज के चौराहे पर पहुँचते हुए एक अन्य व्यक्ति आवाज देते हुए वाजिद अली शाह के निकट आ गया। उन दिनों कमर पर तलवार बांधकर चलने की मनाही थी। एक जवान आदमी को तलवार बांधे देखते हुए भी सभी लोगों ने रास्ता दे दिया जिनके मध्य से वाजिद अली शाह निकलता चला गया।

इन घटनाओं के बाद आखिर कार वाजिद अली शाह परीखाने में दाखिल हो गया। रात काफी बीत चुकी थी। लगभग रात भर गलियों में घूमना पड़ा था। अतः आते ही बिस्तर पर लेट गया और सफेद रजाई ओढ़कर बेसुध हो गया। नियमानुसार मामूली सेविकाओं द्वारा पैर दबाये जाने लगे। वस्तुतः पिता की इच्छा के विरुद्ध और सख्ती होने पर भी वाजिद अली शाह का यह रोमांचक कार्य उसके उत्साह और साहस का परिचायक था।

नवीन रोमांचक मनोरंजन का विचार करते हुए वाजिद अली शाह ने छोटे खान और अपने मध्य सुन्दरता की प्रतियोगिता कराने का निश्चय किया। एक दिन जब वह

वजीर मंजिल में बैठा हुआ था तो उसने अपने और छोटे खान के मध्य एक शर्त रखी कि हम दोनों की सुन्दरता की प्रतियोगिता एक सुन्दर स्त्री को बुलाकर करानी चाहिये। यह वह समय था जबकि छोटे खान की आकृति बहुत सुन्दर थी। उसने वाजिद अली शाह को मना भी किया कि सुन्दरता का मुकाबला करने की कोशिश न करें परन्तु वाजिद अली शाह ने उसके कथन को स्वीकार नहीं किया। अन्ततः यह निश्चय किया गया कि एक ऐसी स्त्री को बुलाना चाहिये जो दोनों को ही पहचानती न हो और न ही कभी किसी सभा या अवसर पर देखा हो। ऐसा निश्चित करने के उपरान्त ऐसी स्त्री को बुलवाया गया। छोटे खान को दूल्हे की तरह सजाया गया। दुपल्ली टोपी सिर पर रखी गयी और सुन्दर कढ़ाई दार अंगरखा और पाजामा पहनकर उस पर इत्र छिड़का गया। इस प्रकार लुभावनी मुद्रा में छोटे खान को बैठाया गया।

उस स्त्री को साहिबे खाना की हैसियत से निमन्त्रित किया गया था। वाजिद अली शाह ने छोटे खान से तय कर लिया था कि जब वह उस स्त्री से अपना प्रेमाशक्ति खूब बढ़ा लेगा उसके बाद वाजिद अली शाह वहां आयेगा। उस स्त्री के आने के पूर्व ही वाजिद अली शाह वहां से चला गया। तय की गई स्थिति के मुताबिक छोटे खां ने बड़े सलीके और कायदे से काम लेते हुए उस औरत को अपने प्रति आसक्त कर लिया। वह औरत छोटे खां के प्रति इतनी प्रेमासक्ति में बंधी जा रही थी कि छोटे खां को यह पूर्ण विश्वास होने लगा कि अब निश्चय ही वह शर्त जीत जायेगा। छोटे खां इस औरत के साथ खूब मौजमस्ती के आलम और मुहब्बत में व्यस्त था ठीक उसी वक्त वाजिद अली शाह साधारण से कपड़े पहने सिर्फ एक सफेद चादर लपेटे और मामूली सी दुपल्ली टोपी पहने उसके सम्मुख आ गया। वहां पहुँचकर वाजिद अली शाह ने स्वयं को छोटे खां जैसी हैसियत का प्रदर्शित करते हुए पहले स्वयं ही अभिवादन किया और फिर छोटे खां ने अभिवादन का प्रत्युत्तर दिया। छोटे खां भी वाजिद अली शाह से निःसंकोच दोस्त की भांति मिला। उसने स्वागत सत्कार किया और हाल चाल तथा बहुत दिनों से न मिलने का कारण पूंछने लगा। इस प्रकार उसने बेतकल्लुफ दोस्त होने का अच्छा अभिनय किया और पास ही बैठने का आग्रह किया। वाजिद अली शाह ने भी उसी प्रकार के अभिनय की मुद्रा में जवाब देते हुए बहुत दिनों से मिलने की इच्छा का इजहार किया लेकिन कार्यवश न मिल सकने की मजबूरी भी बतायी। उसने यह भी कहा कि भाग्यवश चलो भेंट तो हो गयी। अब दो चार दिन शहर में रुककर फिर शाहजहाँबाद चला जाऊंगा और केवल छोटे खां से मिलने के लिए ही यहां आया हूँ। छोटे खां ने भी उसके ऐसे आगमन को अच्छा बताते हुए प्रसन्नता व्यक्त की।

इन्हीं बातों के दौरान वाजिद अली शाह का ध्यान उस औरत की हरकतों पर भी लगा रहा। उस औरत ने पहले तो चिराग की रोशनी बढ़ाई और आँखें मिलाने की कोशिश करती जा रही थी। इसके साथ ही उस औरत ने पान के दो बीड़े बनाये-एक छोटे खाँ को पेश किया और दूसरा वाजिद अली शाह की ओर बढ़ा दिया।

वाजिद अली शाह ने इस तथ्य को बगैर छुपाये छोटे खान को दिखाते हुए वह पान मुख में रख लिया।

वाजिद अली शाह की ऐसी हरकत यद्यपि उस औरत को अच्छी न लगी थी फिर भी उसने वाजिद अली शाह के पैरों में अपने नाखून चुभाने प्रारम्भ कर दिये। यह निश्चित ही हो रहा था कि वह वाजिद अली शाह की ओर अधिक आर्कषित है। इस पर भी मौज लेने के लिए वाजिद अली शाह ने छोटे खाँ को कह दिया कि वह उस औरत को अपनी हरकतों के लिए सावधान कर दें।

वाजिद अली शाह की ऐसी प्यार भरी शिकायत सुनते ही वह औरत छोटे खाँ के पास से उठकर वाजिद अली शाह के बगल में आकर बैठ गई। छोटे खाँ ने भी नाराजगी का अभिनय करते हुए उससे क्रोधित होते हुए कहा कि तुझे मैंने बुलाया था और तू इतनी बदतमीज है कि तू दूसरे आदमी के पास जाकर क्यों बैठ गई है। इस मध्य वाजिद अली शाह वहाँ रखा सितार उठाकर बजाने लगा और वह औरत उसको दाद देने लगी। वाजिद अली शाह लिखता है—

> **"......ये सुनकर छोटे खाँ के पहलू से उठकर वह मेरे पहलू में आ बैठी। छोटे खाँ ने बनावट से काम लेकर बेरहमी का इज़हार किया और कहा ऐ बदतमीज़ तू मेरे बुलावे पर मेरे पास आयी है दूसरे आदमी से तुझे क्या गरज़।**
>
> **इस अर्से में मैं वहाँ पड़ा हुआ सितार उठाकर बजाने लगा। इस औरत ने दाद देनी शुरू कर दी।"**

अन्ततः स्थिति यहाँ तक बिगड़ती गई कि उस औरत ने छोटे खाँ से जितना रुपया लिया था वापस करते हुए उसके सम्मुख ही जमीन पर पटक दिया और रात भर छोटे खाँ के साथ रुकने के लिए साफ मना करने लगी। वाजिद अली शाह लिखता है—

> **"......नौबत बईं-जा रसीद कि उसने छोटे खाँ से जितना रुपया लिया था ज़मीन पर दे मारा और कहने लगी कि मुझे रात भर तुम्हारे साथ बसर करना मन्जूर नहीं।"**

उस औरत द्वारा किये गये इस प्रकार के व्यवहार से छोटे खाँ को क्रोधित होना ही था। दोनों में काफी कहा सुनी भी हुई। गुलाम रजा और अन्य सेवकों ने साफ सुना कि वह इस बात पर जोर दे रही थी कि वह रुकने को तैयार नही है और वहाँ से जाना चाहती है परन्तु छोटे खाँ को उसका यह निर्णय स्वीकार नहीं था। आखिरकार बड़ी मुश्किल से वह छोटे खाँ के साथ रात गुजारने को तैयार हुई।

छोटे खाँ से बक-झक करने के बाद उस औरत ने वाजिद अली शाह से उसका पता पूँछा और अगले दिन घर पर पहुँचने का विश्वास दिलाने लगी। वाजिद अली शाह

ने टालते हुए अगले दिन शाहजहाँबाद जाने का बहाना बना दिया और वहाँ से चलकर खुशी-खुशी अपने सोने के कमरे में जाकर सो गया। वाजिद अली शाह लिखता है—

> "..... इधर मुझसे मुख़ातिब होकर कहा मुझे पता दो इन्शा अल्लाह मैं कल तुम्हारे मकान पर आऊँगी। मैंने जवाब दिया मैं तो कल शाहजहाँबाद जा रहा हूँ। इतना कहकर मैं वहाँ से उठा और अपनी ख्वाबग़ाह में आकर सो गया।"

दूसरे दिन वाजिद अली शाह को यह सूचना मिली कि उस औरत ने बड़ी मुश्किल से वहाँ रात बिताई और छोटे खाँ से प्रसन्न न रहने की अपनी इच्छा को स्पष्ट शब्दों में कह दिया।

परीखाने का प्रबन्ध कार्य दरोगा नजमुलनिसां बेगम द्वारा वाजिद अली शाह की इच्छानुसार ही सम्पन्न होता रहा था। दुर्भाग्यवश उसकी अकाल मृत्यु के कारण परीखाने के प्रबन्ध के लिए योग्य प्रबन्धिका की आवश्यकता थी। मीर मोहम्मद मेंहदी की सिफारिश और उसकी इच्छा पर वाजिद अली शाह ने उमराव बेगम को परीखाने का दरोगा नियुक्त कर दिया था। उमराव बेगम के निरन्तर प्रयास करने और छल प्रपंच का सहारा लेने पर भी वाजिद अली शाह उसके चंगुल में न फँस सका। उमराव बेगम सुर्ख सफेद रंग की थी परन्तु उसके हाथ पैर लम्बे चौड़े थे, सूरत भी चौड़ी थी और पैंतालिस बरस के लगभग उम्र हो चुकी थी। यही कारण था कि वाजिद अली शाह का रुझान उसके प्रति न हो सका। यद्यपि एक बार मुता होने का किस्सा छिड़ा पर वह हो न सका।

परियों के प्रशिक्षण पूर्ण होने पर एक पूर्णिमा की रात को वाजिद अली शाह ने आलीशान महफिल का आयोजन करवाया। हर एक उपस्थित होने वाले के लिए उसकी इच्छा के अनुसार भोजन का प्रबन्ध भी किया। बहुत से संगीत के जानकारों और रुचि रखने वालों को भी निमन्त्रित किया गया। जब लोग एकत्र हो गये तो सभी ने अपने-अपने हुनर का प्रदर्शन करना प्रारम्भ किया। किसी व्यक्ति को यह साहस न था कि किसी कलाकार की कला को बुरा कह सके अथवा उसमें कमियाँ निकाल सके। इन सब कलाकारों में सुल्तान परी को विशेष रूप से सराहा गया। वाजिद अली शाह उस पर मोहित हो गया। वाजिद अली शाह लिखता है—

> "..... कमरी महीने की चौधवीं तारीख़ थी। फ़न के जानने वालों को हाजिर होने का हुक्म दिया। फ़नकार हाजिर दरे दौलत हो गये। महफ़िल आरास्ता। हर एक ने बारी-बारी से अपने फ़न का मजाहिरा किया। किसी में ये जुर्रत न थी कि इन फ़नकारों की किसी बात पर हर्फ़ जनी करें या कोई मीन मेख निकाले। खासकर सुल्तान परी ने अपने कमालात का ऐसा मज़ाहिरा किया कि मुझे उससे इश्क़ हो गया। सारे कमाली ने फ़न ने यकजुवां होकर कहा-ये मौसीक़ी नहीं, सहर सामरी है।"

एक रात जब घनघोर काली घटायें छायी हुई थीं और वाजिद अली शाह नृत्य और संगीत का आनन्द ले रहा था उस वक्त पेंतीस वर्ष की आयु की एक और सुन्दर स्त्री महफिल में उपस्थित हुई। इस औरत ने पहले तो अम्मन से सम्बन्ध बढ़ाये और फिर गुलाम रजा खाँ और छोटे खाँ को साथ लेकर एक अंधेरी और बरसात भरी रात में वाजिद अली शाह के पास पहुँच गयी। इस औरत का नाम करीम बख्श अमीर बख्श वाली था। छः माह तक तो वह वाजिद अली शाह के पास आती रही लेकिन अधिक उम्र की होने के कारण वाजिद अली शाह ने कुछ सामान और दो हजार रुपये के कपड़े देकर इससे सम्बन्ध तोड़ लिए।

इसके बाद वाजिद अली शाह ने उम्दा खानम वाली प्यारी से प्रेम प्रसंगों का बढ़ाना प्रारम्भ कर दिया। यह एक ओर तिरछा देखती थी। वाजिद अली शाह ने इसके पीछे कई हजार रुपये बरवाद किये परन्तु तिरछी होने के कारण इसे अलग कर दिया।

वाजिद अली शाह ने वानो फर्खुन्दा वाली से प्रेम करना प्रारम्भ कर दिया। यह औरत पहले स्व० नसीरुद्दीन हैदर के यहाँ गाने वाली सेविका रह चुकी थी। यह वाजिद अली शाह पर बुरी तरह शैदा थी। एक साल तक लगातार वाजिद अली शाह के घर पर ही रही लेकिन वाजिद अली शाह ने इसे भी छोड़ दिया। इस बात से इस औरत को वहुत दुख पहुँचा और प्रायः रोती ही रहती थी। अन्ततः इसने मुहम्मद रजा खाँ से मुता कर लिया। बाद में वाजिद अली शाह की एक महल की सेविका हो गई। इस पर भी जब कभी अवसर मिलता वह वाजिद अली शाह के पास घर बैठ जाने का संदेश भेजती पर वाजिद अली शाह पर इसका कोई प्रभाव न पड़ता था।

इसी प्रकार हुसैना बाद कीं एक औरत बिलायती, उमरावों छोटी खानम वाली और छोटी गौहर नाम की औरतें वाजिद अली शाह पर आशिक होकर उसके पास आयीं लेकिन किसी को विशेष सम्मान प्राप्त न हो सका और शीघ्र ही वाजिद अली शाह ने अपने को उनसे अलग कर लिया।

कन्हैया कामवाली काफी समय तक वाजिद अली शाह पर जान छिड़कती रही लेकिन वाजिद अली शाह ने उसे स्वीकार न किया। अन्ततः वह अहमद अली दरोगा इमारत हुसैनाबाद के घर बैठ गई।

एक औरत बख्शी जो निहायत बदसूरत होते हुए भी बहुत अच्छा गाती थी वाजिद अली शाह के पास आयी परन्तु बूढ़ी होने के कारण वाजिद अली शाह के दिल को न जीत सकी।

ऐसे ही चपला की बन्दी हब्शन वाली और अच्छी गुलजारी महलवाली भी वाजिद अली शाह पर डोरे डालती रहीं परन्तु वाजिद अली शाह पर इनकी एक न चली।

अली जान नामक औरत भरी महफिल में वाजिद अली शाह को इशारे किया करती थी। यह औरत सबके सामने वाजिद अली शाह का हाथ पकड़ लेती यहाँ तक कि वाजिद अली शाह द्वारा रचित गजलों का तावीज बना कर पहन लेती थी। इसने कई बार वाजिद अली शाह के घर बैठने की इच्छा भी की। वाजिद अली शाह भी दिल ही दिल उस अवसर की तलाश करने लगा जब इस औरत को घर बैठाना उपयुक्त हो। इन्हीं दिनों वाजिद अली शाह करीम बख्श अमीर बख्श वाली का आशिक हो गया जिसके कारण उस औरत की माँ ने वाजिद अली शाह के विरुद्ध मुकद्दमा दायर कर दिया। इधर तो मोहम्मद मोतमिद अली खाँ करीम बख्श अमीर बख्श वाली के मुकदमे को समाप्त करवा कर वाजिद अली शाह के घर बैठाने की फिराक में लगा हुआ था तो दूसरी ओर साबित अली खाँ अली जान संगी वाली को वाजिद अली शाह की खिदमत में हाजिर करने के लिए जुटा हुआ था। वाजिद अली शाह का इन दोनों को हुक्म था कि वे इन औरतों को उसके हुजूर में पेश करें।

अली जान एक सिपाही से मुहब्बत करती थी इसलिए वाजिद अली शाह के पास रहना उसने स्वीकार नहीं किया। यद्यपि जब कभी वह वाजिद अली शाह के सम्मुख आती तो कसमें खा-खा कर अपनी मोहब्बत दर्शाया करती थी। करीम बख्श अमीर बख्श वाली पर हजारों रुपया खर्च कर देने पर भी वह वाजिद अली शाह को हासिल न हो सकी।

एक रात जब वाजिद अली शाह सो रहा था तब मोहम्मद मोतीमिद अली खाँ ने उसकी कमर को दबा कर जगाया। साथ ही फरमाया कि बन्दी उम्दह वाली उसके इश्क के तीर से घायल होकर उपस्थित हुई है। वाजिद अली शाह तुरन्त ही उससे मिलने चल दिवा और मिलकर बहुत खुश हुआ। अइयामें मातम खत्म होने पर वाजिद अली शाह के घर बैठने का वायदा कर वह चली गयी। इसी बीच उनसे कई बार मुलाकात भी हुई पर घर बैठाना सम्भव न हो सका।

अमीर बख्श नाम की एक कस्बिया वाजिद अली शाह के यहां सेविका रखी गयी। वाजिद अली शाह प्रायः उसके कमरे में जाकर बैठता था जो अन्य महल और परियों को गवारा न हुआ। खास तौर पर माशूक खास के कारण इस औरत से सम्बन्ध तोड़ने पड़े।

वाजिद अली शाह को अपनी प्रेमिकाओं को विशेष सुन्दर नामों और उपाधियों से सम्बोधित करने का विशेष शौक था। उसने अपने परीखाने की अधिकतर नवयुवतियों, स्त्रियों और वैश्याओं जिन्हें वह परियां कहता था, को आकर्षक नामों व उपाधियों से विभूषित किया।

वाजिद अली शाह ने एक दिन ऐसी जगह महफिल सजवायी जहां का प्राकृतिक वातावरण और सजावट अत्यन्त मोहक थी। यहां फलों से भरपूर पेड़ हवा के तेज झोकों से इस तरह झूम रहे थे जैसे वे मदहोश हो गये हैं। हुजूर बाग और शहंशाह बाग के

हर ओर चिरागों की रोशनी जगमगा रही थी। महल के चबूतरे पर फर्श बिछाया गया था। वाजिद अली शाह हरित वर्ण के नगीनों और सोने जवाहरात से जड़े हुए आकर्षक वस्त्रों को धारण कर सिंहासन पर शोभायमान था। ऐसे माहौल में खूबसूरत हसीनाएँ पंजों के सहारे थिरकती हुई नाच रहीं थी और गवैये मीठे गले से तान छेड़े हुए थे। वाजिद अली शाह लिखता है—

"......एक रोज़ मैंने एक ऐसी जगह महफ़िल सजायी जहां बर्गोबार से लदे हुए दरख़्त ख़ुशग़वार हवा के झोंको से नक़्स कुनां थे और मस्ती में झूमते हुए ताउस उनका जवाब पेश कर रहे थे। हुज़ूर बाग़ और शहंशाह बाग़ में हर तरफ़ फ़ानूस विलायती रोशन थे। कसरे ख़ाक़ान के चबूतरे पर फर्श का इन्तेजाम किया गया था। परियां बेन्चों पर जलवाह अफ़रोज़ थीं। खुशनुमा मतरिब और आशिक़ नफ़स मग़नी मसरुफ नग़मा सराई थे।"

इस अवसर पर वाजिद अली शाह ने खुशी का इजहार करते हुए कुछ परियों को उपाधियां प्रदान कीं।

१. रश्क परी को	—मलका-ए माह-ए आलम माशूक-ए खास नवाब शहजादी बेगम साहिबा।
२. शहंशाह परी को	—मुशफ़िका जहानी हुस्न आरा नवाब शहंशाह बेगम साहिबा।
३. सरदार परी को	—शकिक्ता उल जमानी मलिका-ए सरदार बेगम साहिबा।
४. सरफराज परी को	—आशिक-ए खास अन्जुमन अफरोज सरफराज बेगम साहिबा।
५. सिकन्दर बेगम को	—हबीबातुल उल सुल्तान मुकर्मत उल जमानी सिकन्दर बेगम साहिबा।
६. दिलदार परी को	—महबूबए खास आशिकनुमा दिलदार बेगम साहिबा।
७. दिलरुबा परी को	—बज्म अफरोज दिलरुबा परी।
८. अमीर परी को	—खुर्शीद लका अमीर परी।
९. हूर परी को	—जाने जहाँ हूर बेगम।

अन्य परियां अपनी पूर्व उपाधियों पर ही बनी रहीं। इन परियों की सेवा के लिए आवास एवं चार-चार विशिष्ट सेविकाओं की सुविधा भी उपलब्ध की गई।

वाजिद अली शाह की विशेष कृपा इन दिनों माशूके खास पर थी। उसका रुपया पैसा सब इसी के पास रहता था। यहां तक कि अपने पिता द्वारा दी गई भूमि और उसकी हजारों रुपये की आमदनी का हकदार भी माशूके खास को बना दिया था। वाजिद अली शाह लिखता है—

"……मैं चूँकि माशूके ख़ास का आशिक़ था और हमेशा रुपया पैसा इसी की तहवील में रहता था इसलिए वह उम्दह उम्दह किस्म के लिबास तैयार करवा कर मुझे पहनाती थी इसलिए मैं माशूक़े खास का हमेशा मशकूर रहता था। इस ख़िदमत के सिलसिले में माहाना कई हजार की आमदनी के अलावा ज़मीन जो वालिद माजिद के जमाने से मेरे नाम थे सब मैंने इसी के नाम मुन्तक़िल कर दिये। इसके अलावा ज़रो जवाहर से भी इसे सरफ़राज़ फ़रमाया जिसकी तफ़सील बयान करना बायसे तवालत होगा।"

वाजिद अली शाह को परियों और औरतों की संगत की लत सी हो गयी थी। उसके लिए यह एक मुश्किल काम था कि वह इनकी सोहबत के बगैर पल भर को भी रह सके। रास रंग में डूबे और औरतों से घिरे रहने वाले वाजिद अली शाह की जिन्दगी में एक दिन तूफान सा आ गया। उसे खबर मिली कि उसके पिता बादशाह अमजद अली शाह का निधन हो गया है। वाजिद अली शाह अत्यन्त अश्रुपूरित स्थिति में वहां ले जाया गया। कुछ देर बाद उसके बादशाह होने की घोषणा भी कर दी गयी। इसके बाद दुखी वाजिद अली शाह वहीं बारादरी में आराम करने लगा। इस समय भी उसे अपनी परियों से जुदा रहने का गम लगा हुआ था। निशानी के तौर पर अनेक परियों की अँगूठियाँ अपने पास मंगवा ली और उनकी माला बनाकर गले में पहन ली। वाजिद अली शाह ने बड़े स्वाभाविक ढंग से उन क्षणों का वर्णन किया है—

"……चूँकि मैं पैकरे ग़मों अंदोह बना हुआ था और एक लम्हे के लिए भी मेरे आँसू न थमते थे इसलिए बारादरी के पीछे वाले मकान में जाकर आराम किया। इस रात को चूँकि माशूकों और परियों की मोइयत न थी, लिहाज़ा मोहम्मद मोतमिद अली खां के ज़रिये एक-एक अँगूठी हर एक परी और हर एक बेगम की बतौर निशानी मंगवा ली और उनका हार बनाकर अपने गले में डाल लिया।"

वाजिद अली शाह ने बादशाह बनने के उपरान्त परियों को बेपर्दा रखना उचित न समझा। अपने उत्तराधिकार काल में इन परियों की आदतों, कार्यों और वफादारी के बारे में वह जान ही चुका था। उसके इस फैसले से कुछ ने भागने का असफल प्रयास भी किया।

अन्ततः एक दिन बहुत सी परियों को वाजिद अली शाह ने पर्दे में बैठाकर उन्हें नयी उपाधियों से विभूषित किया। इन परियों और उनकी उपाधियों का वर्णन निम्न प्रकार है—

१. माशूके-ए-खास को —मलिका-ए माह-ए आलम माशूक-ए खास सुल्तान आलम नवाब सल्तनत महल साहिबा।

२. शहंशाह बेगम को	—मुशफिका जहानी हुस्न आरा तिरछी जान नवाब शहंशाह महल साहिबा।
३. सरफराज बेगम को	—आशिका-ए खास अन्जुमन अफरोज नवाब सरफराज महल साहिबा।
४. दिलदार बेगम को	—महबूब-ए खास जान-ए आशिकनुमा नवाब दिलदार महल साहिबा।
५. दिलरुबा बेगम को	—बज्म-ए अफरोज नवाब दिलरुबा महल साहिबा।
६. खुर्शीद लका अमीर बेगम को	—खुर्शीद लका नवाब अमीर महल साहिबा।
७. सुल्तान परी को	—नवाब सुल्तान महल साहिबा।
८. यास्मीन परी को	—नवाब यास्मीन महल साहिबा।
९. हुजूर परी को	—नवाब हुजूर महल साहिबा।
१०. सिकन्दर बेगम को	—हबीबत-उल-सुल्तान मुकर्रमत-उल जमानी नवाब सिकन्दर महल साहिबा।
११. नवाब माशूक महल साहिबा को	—मलिका-ए-मुल्क ताज-उल निसां नवाब माशूक महल साहिबा।
१२. नवाब निशात महल साहिबा को	—महरतन अफसर-उन-निसां नवाब निशात महल नन्हीं बेगम साहिबा।
१३. नवाब इज्जत महल साहिबा को	—मलिका-ए-परी पेकर नवाब सुल्तान महल साहिबा।
१४. इफतखार-उल निसां खानम को	—नवाब हजरत महल साहिबा।
१५. अमराओ खानम साहिबा को	—नवाब उमराओ महल साहिबा।
१६. फर्खुन्दह खानम को	—मुबारक-उल-निसां फर्खुन्दह खानम साहिबा।
१७. अजायब परी को	—अजायब खानम साहिबा।
१८. बादशाह बख्श को	—राहत-उल-सुल्तान
१९. शीरीं हब्शन को	—आराम उल-सुल्तान।
२०. माहरुख परी को	—माहरुख बेगम साहिबा।
२१. लैला हब्शन को	—मती-उल-सुल्तान।
२२. अंबर अफशां हब्शन को	—हाजिर-उल-सुल्तान।
२३. हैदरी बेगम को	—सीरत-उल-सुल्तान हैदरी बेगम साहिबा।
२४. नवाब खास महल साहिबा को	—मलक-ए मखु दरह उज-जमा-नवाब बादशाह महल साहिबा।

ऊपर वर्णित उपाधियों के अतिरिक्त शहंशाह महल साहिबा, दिलदार महल साहिबा, सिकन्दर महल साहिबा, सरफराज महल साहिबा और सरदार महल साहिबा को प्रतिमाह तीन-तीन हजार रुपये और अन्य महल को दो-दो हजार रुपये देने की घोषणा भी की। नवाब खास महल साहिबा को पाँच हजार रुपये प्रतिमास देने निश्चित किये। कुछ सेवकों और नपुंसकों को भी पर्याप्त धनराशि देकर प्रसन्न किया गया।

वाजिद अली शाह ने बेगमों के लिए २० आदेश जारी किये थे जो इस प्रकार हैं :—

१. सदा ही स्वयं को सुगन्धित रखें।

२. धुला स्वच्छ वस्त्र पहना करें। मैले धब्बेदार, फटे वस्त्र एवं छोटे कपड़े न पहनें।

३. वस्त्र, हाथ एवं मुख पर कभी भी किसी प्रकार की दुर्गन्ध न आने पाये।

४. पद तल सदैव शीशे की तरह चमकते रहें। किसी प्रकार का मैल और गन्दगी न हुआ करे।

५. बालों में सुगन्धित तेल, नेत्रों में काजल (सुर्मा), हाथों में मेहदी सदैव लगी रहे।

६. कौमार्यावस्था में (अविवाहित) स्त्रियाँ बिना आदेश मिस्सी न लगायें और जो मल चुकी हैं उन्हें कोई निषेध नहीं है।

७. कोई भी नाक छेदने की चेष्टा न करे। यह बिल्कुल ही निषेध है।

८. कोई तम्बाकू खाने और हुक्का पीने की चेष्टा न करें।

९. कोई अंगुलियों के अग्र भाग एवं पद नाखूनों या हथेलियों और तलवों पर किसी प्रकार का गोल चक्र न बनायें।

१०. आमन्त्रण के समय यथा सम्भव तुरन्त निर्भय एवं निर्लज्जता के साथ उपस्थित हुआ करें।

११. हालचाल सम्बन्धित बात (मिजाज पुरसी) के पूंछने पर एक के लिए, दस के लिए, सौ के लिए एक ही पर्याप्त उत्तर देने के पश्चात नयी बेगम आयेगी और हालचाल (मिजाज पुरसी) पूंछेगी तो उसको उत्तर दुराबा नहीं दिया जायेगा।

१२. मैं तुम्हारे आने जाने के स्थानों (खास मंजिल एवं जवाहर मंजिल) में आकर स्थान ग्रहण करता हूँ। तुम बेगमों ने ऐसी पद्धति को अपना लिया है कि मैं बैठा होता हूँ तो निगाह छिपाकर निकल जाती हो। आमतौर पर आवश्यकता के समय कोई जाती भी है तो वहाँ से पलट कर, मेरे भय के कारण अपने भवन पर नहीं आती बल्कि न मालूम किस दिशा को चली जाती हैं। जैसाकि एक दिन नवाब साहिबा बेगम एवं नवाब अल्लाह जलाई बेगम पाखाना करने गयीं, सम्भवतः दिन के एक बजे का समय था और फिर चिराग जले तक मैं राह देखता रहा, वह भवन में नहीं आयीं, मुझे बहुत दुःख हुआ।

इसलिए सभी बेगमों के लिए जरूरी है कि अति आवश्यक आने जाने के अलावा हमारी आँखों को वंचित न करें अर्थात हम उनको देखते रहें। अन्य भवनों में आना जाना निषेध है। सीधे जाओ और अपने भवन में लौटकर आओ।

१३. एकान्त में मेरे समक्ष आओ, चुप मत बैठ जाओ। बल्कि किसी प्रकार की बातें, जिससे हम नाराज न हों, की जायें। अपने पर जबरदस्ती न करें। इच्छानुसार लेटो एवं बैठो।

१४. खासा (बादशाहों का भोजन) पकाते समय शोर हमारे मस्तिष्क को व्याकुल करता है और दूसरी बार भोजन पकवाने का हौसला नहीं बढ़ता, इसलिये अगर हमारा सहयोग दो तो शोर न मचाओ।

१५. नाखून बड़े न हों, हर शुक्रवार को नाखून कटवाओ।

१६. हँसी की बात पर हँसा करो, बिना कारण न हँसा करो।

१७. सबसे बड़ी आज्ञा है कि अपनी काम तृष्णा को निर्लज्ज होकर तुरन्त हमसे बताया करें, चाहें हम बुलायें या न बुलायें। इस सन्देश से हमारी हृदय शक्ति बढ़ जायेगी।

१८. प्रशिक्षण को मन लगाकर सीखो, उस समय बिना आवश्यकता के बार-बार पेशाब करने का बहाना मत करो और जब पेशाब को जाओ उस समय किसी प्रकार का खाना-पीना, उछलना-कूदना निषेध है।

१९. पान कम खाओ, यह दाँत लाल करता है। मुँह को दुर्गन्ध युक्त करता है। छाली का दाना कण्ठ का शत्रु है।

२०. जो भी खड़ाऊँ एवं पादुकायें पहने उनकी ऊँचाई दो अँगुल हो, उसे दरोगा लोग प्रबन्ध करके बनवा दें और उन्हें यदि स्वीकार न हो तो उनको एक खड़ाऊँ जुर्माना हो।

दरोगाओं को आदेश दिया जाता है कि वह बेगमों पर कड़ी निगाई रखें, हम उन अधिकारी-गणों के आभारी होंगे।

एक बादशाह के लिए यह उपयुक्त ही था कि अब उन परियों को पर्दे में रखे। वाजिद अली शाह ने वैसा ही किया भी लेकिन दो माह भी न बीत पाये कि वह उन परियों की संगत के लिये व्याकुल रहने लगा। इस परेशानी से मुक्ति पाने का साधन भी उसने ढूँढ ही लिया। वाजिद अली शाह लिखता है—

> **"……मेरी तख़्त नशीनी के बाद जब दो माह गुज़र गये तो बेगमों और परियों की जुदाई में जो महल के मर्तबे को पहुंची थी, मैं ज़ारो कतार रोता था। एक लम्हे के लिए भी चैन नसीब न था लेकिन मजबूरी थी मैं कर भी क्या सकता था बिल आखिर एक तरकीब ज़ेहन में आयी जिसके मुताबिक सैंने अमल किया।"**

दो औरतों का एक मुकदमा महकमे-ए-मुराफ में पेश था। इनमें एक औरत करीम बख्श और दूसरी अलीजान थी। करीम बख्श वाजिद अली शाह को चाहती थी जब कि अलीजान नाराज थी। एक दिन दोनों को उपस्थित होने का आदेश दिया गया जिससे वास्तविकता मालूम की जा सके। वाजिद अली शाह ने करीम बख्श की मां अमीर बख्श की रजामंदी लेकर करीम बख्श को अपने घर बैठा लिया और बहार-उल-सुल्तान गुलजार बेगम साहिबा की उपाधि दे दी। अलीजान ने उपस्थित होते ही रोना धोना शुरू कर दिया। जब उससे वाजिद अली शाह ने कारण पूछा तो उसने प्रार्थना की कि वह एक सिपाही पर मरती है। प्रातः काल उस सिपाही को उपस्थित कर अलीजान को उसके हवाले कर दिया। वह सिपाही दुआएँ देता हुआ चला गया।

महलात और बेगमात के पर्दे में बैठ जाने से वाजिद अली शाह को उनकी जुदाई ने इस कदर व्याकुल कर दिया कि वह दिल का रोगी हो गया। दिल के रोग से मुक्ति पाने के लिए उसने कुछ नर्तकियों को सेविका के रूप में नियुक्त कर लिया। वाजिद अली शाह अपनी इस स्थिति का उल्लेख करते हुए लिखता है—

> **"......इस दौरान मुझे ख़फ़कान हो गया। महलातो बेगमात की मुफ़ारकत जो अब पर्दे में बिठा दी गईं थीं नाकाबिले बर्दाश्त हो रही थी। इसीलिए रफ़े ख़फ़कान के लिहाज़ से नाचने वाली चन्द औरतों को मुलाजिम रखा।"**

इन नर्तकियों में बन्दी उम्दावाली बहुत सुन्दर और आकर्षक थी। वाजिद अली शाह के उत्तराधिकारी काल में हिदायतुल्ला बहादुर के माध्यम से इसकी मुलाकात वाजिद अली शाह से हो चुकी थी। यह हुस्न बांदी हुसैनी वाली और छुट्टन नबी की बहिन थी।

कुल मिलाकर सोलह नर्तकियों की सेविकाओं के रूप में नियुक्त की गईं लेकिन महलात और बेगमात के समय में वाजिद अली शाह के हृदय को जो आनन्द मिलता था वैसा इन दिनों नहीं मिल पाया।

चूंकि उत्तराधिकार काल से ही वाजिद अली शाह के सम्बन्ध बन्दी उम्दावाली से जुड़े हुए थे इसी कारण उसके आनन्द और खुशी का विशेष ध्यान रखते हुए उसे हुजूर बाग की सैर के लिए बग्घी और जवाहरात उपलब्ध करवा दिये।

हुस्न बांदी और छुट्टन बांदी की ओर वाजिद अली शाह का रुझान बना हुआ था लेकिन बन्दी उम्दाह वाली से उसे अधिक प्यार था। जब दिन व दिन दोनों वाजिद अली शाह के और अधिक निकट आने लगीं तो बन्दी उम्दा वाली को उनसे ईर्ष्या होने लगी।

वाजिद अली शाह को जब यह अहसास हुआ कि आपसी जलन के कारण कहीं छोड़ कर चली न जायें तो ऐसा विचार करते हुए उसने छुट्टन और हुस्न बांदी को घर बैठा लिया। इनमें से एक माशूक़े सुल्तान खुसरो बेगम साहिबा और दूसरी को

मुमताजे आलम आशिक उल सुल्तान नवाब केसर बेगम साहिबा की उपाधियां प्रदान कीं और इनके लिये दो हजार रुपये प्रतिमाह निश्चित कर दिया। सिफारिशों के बाद उम्दा वाली को भी घर बैंठा लिया और इसके लिये भी दो हजार रुपये प्रतिमाह निश्चित कर दिया। यह सत्य था कि यह तीनों ही नृत्य और गायन में विशेष निपुणता की धनी थीं।

इसी मध्य एक औरत पर वाजिद अली शाह का दिल आ गया और उसे रजीउद्दौला के माध्यम से घर बैठा लिया गया। ऐसे ही इम्त्याजो नाम की औरत वाजिद अली शाह की आशिक हो गई उसे भी रजीउद्दौला के जरिये घर बैठा लिया गया। इसे इम्त्याज बेगम साहिबा की उपाधि प्रदान की गई।

वाजिद अली शाह को इस स्थिति में बहुत परेशानी होने लगी जब सरफराज बेगम बेपरदा रहने से लिए परेशान करने लगी। वह रोती रहती और वाजिद अली शाह से कहती कि वह उसकी जुदाई में रोती रहती है। अन्य बेगमात ने सरफराज की शिकायतें की और स्वयं भी बेपरदा हो जाने की धमकियाँ दीं। सरफराज बेगम बीमार रहने लगी और कमजोर भी बहुत हो गयी लेकिन वाजिद अली शाह ने उसे बेपरदा रहने की अनुमति नहीं दी।

एक दिन बहुत ही खुशगवार मौसम था। ऐसे मौसम का आनन्द उठाने के लिए उसने सभी बेगमों के साथ बादशाह बाग में निवास करने का विचार किया और सभी को वहाँ प्रस्थान करने के आदेश दिये। सरफराज परी को बादशाह बाग जाने की आज्ञा वाजिद अली शाह ने नहीं दी। जब वाजिद अली शाह अपनी महलात और बेगमात के साथ बादशाह बाग पहुँच गया तो उसी रात सरफराज महल ने हीरे का नग निगल कर आत्महत्या करने का प्रयास किया। वाजिद अली शाह यह खबर सुनते ही बहुत परेशान हो गया। छतर मंजिल से बादशाह बाग तक निरन्तर सरफराज महल से सम्बन्धित समाचार जानने का प्रबन्ध कर वह उसके स्वस्थ होने के लिए प्रार्थना करने लगा। वाजिद अली शाह बादशाह बाग से बादशाह मंजिल आ गया और सरफराज महल भी स्वस्थ हो गयी।

सरफराज महल सदैव इसी बात पर जोर देती थी कि वाजिद अली शाह उसके निकट ही बना रहे। इसी मध्य वाजिद अली शाह को यह खुशखबरी भी सुनने को मिली कि सरफराज महल गर्भवती हो गयी है। इस समाचार से वाजिद अली शाह की सरफराज महल के प्रति आसक्ति बढ़ गयी। दुर्भाग्य से पाँच माह बाद सरफराज महल का गर्भ गिर गया जिससे वाजिद अली शाह को अत्यन्त दुख पहुँचा और वह सरफराज महल के स्वास्थ्य का विशेष ध्यान रखने लगा।

हर रोज सरफराज महल और सुल्तान महल पर्दे से बाहर आने पर जोर देती थीं। वाजिद अली शाह के ठण्डे दिमाग से समझाने का भी जब उन पर कोई असर न हुआ तो मजबूरन उन्हें बेपरदा करना ही पड़ा। वाजिद अली शाह का विचार सही ही

निकला क्योंकि कुछ रोज में पर्दे में रह चुकी बेगमात और बेपरदा बेगमात में ईर्ष्या की आग भड़कने लगी। सरफराज बेगम तो सरासर बेवफाई पर उतर आयी परन्तु सुल्तान बेगम ने अपनी वफादारी से वाजिद अली शाह को प्रसन्न रखा। सरफराज महल की बेवफाई जब वाजिद अली शाह को सहन न हुई तो उसने एक दिन स्पष्ट कह दिया कि उसका और सरफराज महल का निर्वाह होना सम्भव नहीं रहा है। सरफराज महल की लापरवाहियों की शिकायत करने पर वह (सरफराज महल) रोने लगी। अन्ततः वाजिद अली शाह जब सरफराज महल से बहुत परेशान हो गया तो उसको उसकी माँ के पास भेज दिया। कुछ दिनों बाद वाजिद अली शाह को सरफराज महल की अनुपस्थिति बेचैन करने लगी। जो औरत हर समय उसके इर्द-गिर्द रहती थी वह अब उसे दिखाई तक नहीं देती थी। आखिर कार दिल से मजबूर वाजिद अली शाह ने सरफराज महल को बुलाने के लिए पैगाम भेजा परन्तु सरफराज महल ने उपस्थित होने से इन्कार कर दिया। काफी प्रयासों के बाद सरफराज महल को वाजिद अली शाह के घर लाया गया लेकिन उस समय तक वाजिद अली शाह यह निश्चय कर चुका था कि सरफराज महल से संबंध नहीं रखेगा। सरफराज महल के आ जाने पर भी वाजिद अली शाह उसकी उपेक्षा करने लगा और यही रवैया सरफराज महल ने भी अपना लिया था।

वाजिद अली शाह इन दिनों बेगमात के धोखे धड़ी के कार्यों से परेशान रहता था। तरह तरह के छल उसे दिये जाते थे परन्तु वह सब सहन करता आ रहा था। वाजिद अली शाह स्वयं लिखता है—

> **"...उन बेगमातों महलात की बेवफ़ाइयों के इस किस्म के बेशुमार वाक़्यात है और मेरे इस दरजे इक़्तदार दोलतो सख़त और सूरतो सीरत और मुतअदिद ख़ूबियों के बावजूद इन लोगों ने ऐसा सलूक किया। हालांकि मेरी तारीफ़ से कई किताबे पुर हैं।"**

वाजिद अली शाह की महलात में नवाब सिकन्दर महल बहुत अच्छी औरत थी। एक दिन उसने वाजिद अली शाह के सम्मुख निकाह करने की इच्छा व्यक्त की जिसे सुनकर वाजिद अली शाह बहुत असमंजस की स्थिति में पड़ गया। अपनी माँ से वाजिद अली शाह ने राय ली तो उन्होंने रजामंदी दे दी। बड़ी धूमधाम के साथ निकाह की रस्म अदा हुई जिसका प्रवन्ध सिकन्दर महल ने करवाया। वाजिद अली शाह लिखता है—

> **"....ख़ुदा आलिगुलगैब है। मैं कसम खा कर कहता हूँ कि नवाब सिकन्दर महल साहिबा बड़ी बेमिसाल औरत थीं—ऐसी नेक औरतें मैंने बहुत कम देखीं हैं।**
>
> **एक रोज उन्होंने बड़े प्यार से अर्ज की—जाने आलम तुमसे निकाह करने की शदीद आरज़ू है। मैं गरेबान में मुंह डालकर बैठ गया और कहा कि मैं इस काबिल हूं कि निकाह करूँ? लोग क्या मेरा मज़ाक**

न उड़ायेंगे पर वह मेरी बात मानने को तैयार न थी। यह वाकया जनाब वालदेह साहिबा की ख़िदमत में अर्ज किया मौसूफ़ा ने इरशाद किया कि इसमें हर्ज ही क्या है। बिल आख़िर······निकाह पढ़वाया उन्होंने जश्ने शादी की तैयारी और आरास्तगी का माकूल इन्तेज़ाम किया। ख़ुश आवाज़ गाने वाले गा रहे थे। माशूकाने सीमवर नाच रहीं थीं सिर्फ़ यही नहीं उन्होंने चौथी की तक़रीब का भी काफी एहतेमाम अपने हस्बे मंशा किया था।"

मुगल नाम की एक औरत नाचने वाली सेविका के रूप में वाजिद अली शाह के यहां नियुक्त हुई। वाजिद अली शाह इस पर दीवाना हो गया। इसे महबूबा आलम नवाब मुगल साहिबा का खिताब देते हुए घर बैठा लिया और दो हजार रुपया प्रतिमाह इसके लिए निश्चित कर दिये गये।

कुछ ही दिन बीते होंगे कि एक कसबी औरत वाजिद अली शाह के घर बैठ गई जिसे दारा बेगम की उपाधि दी गई। केसर बेगम और खुसरो बेगम से ईष्या के कारण दारा बेगम को वाजिद अली शाह ने निकाल दिया।

वाजिद अली शाह के हृदय में पुनः परीखाने का प्रबन्ध करने का विचार आया। इस विचार का कारण उत्तराधिकार काल के परीखाने का नष्ट हो जाना और उसकी आनन्द दायक यादों को नया रूप देना था। पुराने चाहने वालों को दौलत खाना अशर्फी और पंच मुहल्ला में बुलवाया। कुछ को स्वतन्त्र कर दिया और कुछ का विवाह सम्पन्न करवा दिया। केवल कुछ चुनी हुई स्त्रियों के लिए नृत्य गायन कला के प्रशिक्षण का प्रबन्ध करवाया। इन औरतों में से पसन्द उल सुल्तान आलिया बेगम जो मिर्जा नसर उल हैदर की लौंडी थी और जिसे वाजिद अली शाह पसन्द करके लाया था, उसकी स्थिति को उच्चता प्रदान करते हुए उसे मोतीमहल में निवास करने के लिए भेज दिया परन्तु इस औरत के रोने धोने के कारण उसे फिर से बुलवा लिया। वाजिद अली शाह के पिता की तीन लौंडियां (सेविकाएँ) रियाजुल सुल्तान, नाजबेगम, इशरत परी, गौहर परी और बादशाह बेगम, मसाहिब परी, राहिब परी, शान बेगम, दूसरी इनायत उल सुल्तान बेगम के भी नृत्य और गायन के प्रशिक्षण का प्रबन्ध किया गया। शौकत बख्श और तुरहत बख्श को वाजिद अली शाह की सेविका के रूप में नियुक्त किया गया था। सभी को प्रशिक्षण देने के लिए उस्ताद रखे गये। जिन औरतों को प्रशिक्षित करने के लिए यह प्रबन्ध किया गया था वे पहले से सीखी हुई न थीं। निरन्तर प्रयास के बाद कुछ तो अपनी-अपनी कला में पारंगत हो गईं परन्तु कुछ इनमें से कुछ भी सीख न सकीं। इन औरतों में से एक मसाहिब परी थी जिसे वाजिद अली शाह ने अपनी शिष्या बना लिया था। यह मसाहिब परी वाजिद शाह के प्रयास से थोड़ी ही अवधि में सबसे अधिक निपुण हो गई थी। वाजिद अली शाह ने इन सभी के लिए पांच सौ से डेढ़ हजार रुपये तक की राशि निश्चित कर दी थी। वस्तुतः इस परीखाने का

उद्देश्य ऐयाशी न होकर कुछ औरतों की इज्जतदार परवरिश करना था। वाजिद अली शाह लिखता है—

"......फिर एक बार मेरा दिल परीख़ाने की तरतीब और इसकी अज़ सरे नो तन्ज़ीम का ख्वाहिश मन्द हुआ—दस पन्द्रह औरतें जो निहायत खूबसूरत और कम उम्र थीं, मुन्तरख़ब करके मैंने रख छोड़ीं और उन्हें रक़्सों सुरुद की तालीम में मसरुफ़ कर दिया। इनकी माहाना तनख़्वाह किसी को हज़ार रुपये, किसी को डेढ़ हज़ार, किसी को पांच सौ रुपये मुकर्रर की गयी। तालीम मौसीक़ी के लिए गाने बजाने वाले सात उस्ताद मुलाजिम रखे गये। बाज़ माहिरे फ़न हो गयीं तो बाज़ मौसीकी की अलिफ बे से भी वाकिफ़ न हो सकीं। मसाहिब परी को मैंने खुद अपना शागिर्द बना लिया। चन्द ही रोज में वह और औरतों के मुकाबले में बदरजहा बेहतर हो गयीं। मालूम होना चाहिए कि ये जलसा जज़बे इश्को हवस की तसकीम के लिए तरतीब नहीं दिया गया था बल्कि एक मामूली सी दिलचस्पी और इन औरतों की परवरिश करना मंजूर थी।"

यद्यपि इस नये परीखाने का प्रबन्ध तो प्रारम्भ कर दिया परन्तु अपनी महलात और बेगमात की आपसी ईर्ष्या वाजिद अली शाह को अप्रिय लगने वाली कार्यवाहियां तथा मुंह खोल कर करारा सा उत्तर देने की दिन प्रतिदिन बढ़ती प्रवृत्ति ने उसे परेशान कर दिया। वह प्रत्येक को समझाता पर कोई उसकी बात न मानती थी। उनमें प्रमुख रूप से केसर बेगम, खुसरो बेगम, हजरत बेगम, बादशाह बेगम, गुलजार बेगम आदि बेगमात तथा कुछ अन्य महलात की आपसी ईर्ष्या में की गयी कार्यवाहियों से वाजिद अली शाह का दिल टूटने लगा।

वाजिद अली शाह किस कदर परेशान हो चुका था यह उसके ही शब्दों में स्पष्ट हो जाता है। वह लिखता है—

"..... मुझे इस बात का बेहद मलाल है कि उन सात-आठ बेगमात में से एक ने भी मेरा हाथ पकड़ कर ये न कहा कि मैं तुम्हें छोड़कर न जाऊंगी। यही वजह है कि उस रोज से बेग़मात की तरफ़ से मेरा दिल फिर गया और मैंने कान पकड़े कि आइन्दह किसी की मोहब्बत का दम न भरूंगा। औरतों से मैं इस कदर बेज़ार हो गया था कि अगर कोई औरत मर जाती तो मैं यही कहता कि शायद कब्र में भी कोई फरेब करने गई होगी। जब तक इस मरने वाली औरत का चेहल्लुम न हो जाता मुझे उसके मरने का यक़ीन न आता।

मुझे बड़ी तकलीफ हुई और दिल से कहा ऐ नालायक जो वाक़यात पेश आये हैं दर अस्ल तू इसका मुस्तहक़ था। ग़रज उनकी

बेवफ़ाई और कज़ अदायी से ज़मीनों आसमान मेरी नज़र में तारुफ हो गये—ऐसी बातों की वजह से मेरा दिल नये जलसे की तरफ़ से फिर गया।"

परीखाने की इस नयी सभा से भी वाजिद अली शाह औरतों की हरकतों के कारण उकता गया और उनके प्रति उदासीन हो गया। परन्तु आदतों से मजबूर वाजिद अली शाह ने अपनी ऐसी स्थिति में भी एक औरत को घर बैठा लिया और उसे जोहरह बेगम की उपाधि से विभूषित किया। इस घटना के बाद वाजिद अली शाह ने इरादा बनाया कि भविष्य में वह कभी किसी औरत से इश्क नहीं करेगा। वाजिद अली शाह लिखता है—

" .... इसी ज़माने में मैंने अपने कान पकड़े कि आइन्दह से हरगिज़ किसी औरत से इश्क़ न करूँगा।"

महलात और बेगमात के व्यवहार से वाजिद अली शाह अत्यन्त दुखी रहने लगा था। उलझनों में उसकी स्थिति साँप छछूंदर जैसी हो गयी थी। इन स्त्रियों के सानिध्य के बिना उससे रहा नहीं जाता था और साथ रखने पर उनकी करतूतें उसे परेशान किये रहती थीं।

इन्हीं दिनों कैसर बेगम से विलासिता की तृप्ति करते हुए वाजिद अली शाह को सुजाक रोग हो गया। रोग बढ़ता ही गया और वाजिद अली शाह एक बार फिर अस्वस्थ हो गया। सारे घाव में जलन होती रहती थी जिसकी असहनीय पीड़ा से वह तड़पता रहता था। उसे रोग की पीड़ा तो थी साथ ही मानसिक वेदना भी उसे हो गयी कि 'जब वह स्वस्थ था तब तो सब उसके इर्द-गिर्द रहते थे लेकिन ऐसी स्थिति में उसे अब कौन पूछेगा ? उसका ऐसा विचार सही ही निकला जब एक दुख पहुँचाने वाली हरकत महबूबे आलम नवाब मुगल साहिबा कर बैठीं। हुआ यूँ कि महबूबे आलम मुगल साहिबा ने वाजिद अली शाह को हाथ लगाने के बाद अपने हाथों को आटे और बेसन से धोया। यह सब वाजिद अली शाह की नजर के सामने ही किया। इसे देखते ही वाजिद अली शाह की आँख में आँसू छलक आये। इतना ही नहीं नवाब मुगल साहिबा ने वाजिद अली शाह से यह भी कहा कि ऐसे रोगी को छूना बहुत हानिकारक होता है तथा उसे लकड़ी में बाँध कर रोटी दी जाती है इसलिए उसने अपने हाथ धोये हैं। वाजिद अली शाह उस समय तो चुप रहा परन्तु एकान्त में खूब रोया। इसी दिन से उसने शहंशाह मंजिल बन्द करवा दी और सबसे मिलना जुलना बन्द कर दिया। कई बेगमात ने मिलने की इच्छा भी की लेकिन वाजिद अली शाह ने मना करवा दिया। उसे नवाब मुगल साहिबा के बर्ताव की याद हो आती थी। कई प्रकार के इलाज चलते रहे परन्तु किसी से विशेष लाभ नहीं मिल रहा था। वाजिद अली शाह इस स्थिति में लिखता है —

"......क़ैसर बेगम के तुफ़ैल में सुज़ाक के मर्ज में गिरफ़तार हो गया—सारे ज़ख़्मों में आग की सी जलन होती थी — महबूबो और

गुलरुखों के दिल को भी मलाल रहता था—मेरे दिल को भी मलाल रहता था। फिर मैंने दिल से कहा जब कि मुझमें कोई ऐब ही न था और सेहत मंदो तवाना था तो तेरा कौन पुरसाने हाल था जो अब पैदा होगा—एक रोज महबूब आलम नवाब मुगल साहिबा ने जब मुझे हाथ लगाया तो ख़ुदा की कसम मैंने अपनी आँखों से देखा कि उन्होंने आटे और बेसन से अपने हाथ धोये—मुझे रोना आ गया—फिर मेरे करीब आकर कहा ख़ुदा तुमको शिफा दें। बड़ा मूंजी मर्ज है इसके मरीजों को लकड़ी में बाँध कर रोटी दी जाती है—जिस्म को छूना भी बड़े नुकसान का बाईस है—मैं चुपसा हो रहा और एक अलग जगह जाकर खूब रोया—शहंशाह मंजिल बन्द करवा दी—किसी को भी अपने पास आने की इजाज़त न दी।"

आहिस्ता-आहिस्ता रोग के जख्म तो सूखने लगे पर वाजिद अली शाह उन दिनों परहेज पर था और पीड़ा भी अनुभव कर रहा था। अपना इलाज स्वयं करने की गरज से उसने कटी हुई हर्र खा ली जिसके कारण वाज़िद अली शाह को हृदय रोग भी हो गया। वाजिद अली शाह की स्थिति और भी बिगड़ गयी यहाँ तक कि एक रोज व्याकुलता और वदहवासी में उसने अपने शरीर के कपड़े तक फाड़ डाले और अगले दिन वह बेहोश हो गया और उसकी आंखें बन्द हो गई। वाजिद अली शाह के नजदीकी लोग और कुछ नेक और भली महलात बुरे अन्देशों के कारण रोने पीटने लगी। रात भर सब वाजिद अली शाह को हाथों पर लिये रहे। वाजिद अली शाह बेजान सा हो गया, उस पर क्या बीत रही है उसे खबर भी न हुई।

वाजिद अली शाह इस स्थिति का वर्णन करते हुए बड़े दुख भरे लहजे में लिखता है—

"......ये वाक़या १२६५ हिजरी का है—कटी हुई हड़ खाली—मुझे फफ़क़ान भी होने लगा—अजीब हाल हो गया था। मैंने जिस्म के तमाम कपड़े फाड़ डाले। इसके दूसरे रोज़ गश भी आ गया मेरी आँखें बन्द रहीं मेरे सारे मुतातलेक़ीन और वह महलात जो नेक और शरीफ़ थीं रोने पीटने लगीं और वह सब रात भर अपने हाथों पर रखे रहते थे—क्या-क्या मुझ पर गुजरी कुछ ख़बर नहीं।"

वाजिद अली शाह की बीमारी के उस हादसे के दो माह बाद तक उसकी तकलीफ कम न हो रही थी दाने पुनः निकल आते थे और सूख भी जाते थे परन्तु पूरी तरह आराम न मिल पा रहा था। दुनिया की खैर खबर से अलग वाजिद अली शाह को जब कभी होश आता तो दिल बहलाने के लिए शेरो शायरी में मन लगा लेता था और जब फिर तकलीफ बढ़ जाती तो निढाल हो जाता था। वाजिद अली शाह का शरीर अत्यन्त क्षीण हो चुका था यहाँ तक कि आँखें और मुँह भी कम्पन करने लग

जाते थे । उसमें इतनी भी शक्ति नहीं रही थी कि स्वयं उठ कर नमाज अदा कर सके । बस खुदा से दुआयें ही माँगता रहता था । वाजिद अली शाह लिखता है—

> "...... दो माह का अरसा हो गया—दाने निकल आते हैं फिर सूख जाते है इसी बला में गिरफ़्तार हूँ—होश में आता हूं तो शेरो शायरी का शगल करता हूँ – तमाम आज़ाय जिस्म यहाँ तक के आँखें और मुँह भी बैंत की तरह लरज़ते हैं इतना भी करार नहीं कि नमाज़ पढ़ सकूँ—ख़ुदा रहम करने वाला है ।"

वाजिद अली शाह की आँखों के सामने ही अधिकतर महलात सजधज कर तमाशाइयों की तरह घूमती फिरती थीं और नृत्य तथा गायन में व्यस्त रह कर आनन्द उठाती रहती थीं । जब वाजिद अली शाह को इनकी ऐसी बेरुखी बेवफाई और भक्ति हीनता सहन न हो सकी तो वह रजीउद्दौला के घर जाकर रहने लगा ।

इसी बीच कैंसर बेगम को भी यही रोग हो गया परन्तु दो माह की अवधि में ही वह पुनः स्वस्थ हो गयी । इम्त्याज बेगम को भी यही रोग हो गया । उसे इसमें अत्यधिक पीड़ा का सामना करना पड़ा ।

हजरत बेगम साहिबा और महबूब आलम साहिबा ने अपनी जिद्दी आदतों के कारण वाजिद अली शाह की ऐसी अवस्था में भी दुःख देना जारी रखा यहाँ तक कि हजरत बेगम साहिबा वाजिद अली शाह से झगड़ा कर घर चलीं गयी और वहाँ जाकर अफीम खा ली । वाजिद अली शाह को मजबूरन उसके पास जाना पड़ा और उलटी करवाने के लिए मिन्नतें करनी पड़ीं । इसी प्रकार महबूब आलम और खुसरो बेगम तीसरी बार वाजिद अली शाह से छुप कर सैर की तफरी के लिए सवारी में बैठ कर चली गयीं । वाजिद अली शाह को अत्यन्त दुःख हुआ वह सोचने लगा कि एक वह समय था कि वह इनके बिना तफरीह का विचार तक न लाता और उसे आज ऐसा दिन भी देखना पड़ रहा है कि उसकी अस्वस्थता में उसे अकेला छोड़कर और बगैर बताये सैर का लुत्फ लेने चली जाती हैं और उससे इजाजत तक नहीं लेतीं । अपनी बफादारी और वाजिद अली शाह के प्रति निष्ठा दिखाने के लिए महबूब आलम ने वाजिद अली शाह के तमगे का गुल अपनी रान पर वाजिद अली शाह के सम्मुख ही खाया परन्तु वाजिद अली शाह के दिल में इस बात का कोई विशेष असर न हुआ ।

वाजिद अली शाह की इसी रोग ग्रस्त अवस्था में वफादार माशूक नवाब सिकन्दर महल साहिबा का निधन हो गया । वाजिद अली शाह को इसके मरने पर अत्यधिक दुःख हुआ । वह लिखता है—

> ......माशूके बावफ़ा नवाब सिकन्दर महल साहिबा का इन्तकाल हो गया है—मेरा दिल खून बन कर आँखों की राह से निकल आया । इस बफ़ादार दोस्त का ग़म भी अजीब था कि बयान करना भी मुश्किल है ।"

इस घटना के कुछ ही रोज बाद वाजिद अली शाह को सुख पहुँचाने वाली आरामुल सुल्तान का तीन माह की बीमारी के बाद देहान्त हो गया। वाजिद अली शाह लिखता है—

> **"......इस सानह से मेरी अजीब हालत है कभी आसमान की तरफ़ देखता हूँ कभी इस्तदुआ करता हूँ ख़ुदा इस पर अपनी रहमत नाज़िल फ़रमायें।**

वाजिद अली शाह हजरत बेगम और महबूब आलम के धोखा धड़ी के कार्यों और लड़ाई झगड़ों से अत्यन्त परेशान हो चुका था। एक दिन तो नवाब खास महल की उपस्थिति में उन्होंने वाजिद अली शाह को बहुत खरी खोटी सुनाई। यह तीन दिन वाजिद अली शाह के पास रहती थीं तो तीन दिन कहीं अन्यत्र निवास करने जाती थीं।

वाजिद अली शाह की औरत परस्ती ने उसे कहीं का न छोड़ा। उसे अपनी बेगमात और महलात सभी से मोहब्बत थी लेकिन इन औरतों की वाजिद अली शाह को दुःखी और परेशान करने वाली हरकतें इस अस्वस्थता की स्थिति में और अधिक बेचैन कर रहीं थी। यही वजह थी कि वाजिद अली शाह को इन औरतों के प्रति घृणा की भावना प्रारम्भ होने लगी। यद्यपि कुछ औरतों को उसने मध्यम की वफादार औरतें माना है जैसे— माशूके खास, मलिक-ए माह-ए आलम, नवाब सल्तनत महल साहिबा, महबूब-ए खास जमाने जानां आशिकुनुमा, नवाब दिलदार महल साहिबा, हबीब-उल सुल्तान, मुकरंमात उल जमानी, नवाब सिकन्दर महल साहिबा, खुर्शीदलका नवाब अमीर महल साहिबा, मलिक-ए-मुल्क ताज-उल निसां नवाब माशूक महल साहिबा, निशात महल नवाब नन्हीं बेगम साहिबा, खुर्दमहल नवाब उम्दह बेगम साहिबा, निगार महल साहिबा, सैयदत-उल निसां हैदरी बेगम साहिबा। इनके अतिरिक्त उसने अपने सम्पर्क में आने वाली सभी औरतों को बेवफा बताया है। नयी आठ बेगमों में से सभी को उसने बेवफा कहा है।

वाजिद अली शाह ने अपने विचार प्रकट करते हुए कहा है कि जो मेरी इस कहानी को सुनकर भी ऐसी औरतों पर अपना पैसा खर्च करेगा तो यह बर्बादी ही होगी। इन औरतों को चाहे जो भी मिल जाये पर अपनी बेवफाई की प्रकृति के कारण यह धोखा अवश्य करतीं हैं। वाजिद अली शाह लिखता है—

> **"..... दरमयानी दर्जे की वफ़ादार औरतें हैं इनके अलावे जो बाकी रहती हैं वह सब बेवफ़ा हैं। आठ नई बेगमात में भी किसी को मैं वफ़ादार नहीं कह सकता हूँ। मैं मुतक़्क़े हूँ कि जो कोई भी ये बेवफ़ाई नामा मुलाहेजा करेगा, वह औरतों की मुहब्बत से गुरेज करेगा। अपना रुपया इन पर बरबाद करेगा क्योंकि इसका जो नतीजा होता है वह पोशीदाह नहीं। उन औरतों को अगर**

हज़रत युसुफ़ भी मिल जायें तो अपनी बेवफाई को न छोड़ें इसलिए इनसे दूर ही रहना मुनासिब है।

मुझ जैसे बादशाह सूरतों सीरहत में यक़्ता जिसकी तारीफ़ में किताबें लिखी गयी हैं बावजूद नाज़ वरदारियों के कुछ खौफ़ न करे तो दूसरों के साथ क्या न करेंगी।"

वाजिद अली शाह बेगमात की ऐसी ही हरकतों से उकताने सा लगा और उसके मस्तिष्क में विरक्ति का भाव जोर मारने लगा। यहाँ तक कि उसने संगीत की ओर से भी मुँह फेर लिया। गाने वजाने की आवाज से भी दूर रहने लगा। उसके ऐसा करने से दुवारा वनाया गया परीखाना भी वर्वाद हो गया। वह शीघ्र से शीघ्र स्वस्थ होने के लिए खुदा से प्रार्थना करने लगा।

औरतों के स्वभाव और व्यवहार से क्षुब्ध वाजिद अली शाह ने इनके इस माया जाल से निर्विकार रह कर स्थापत्य कला, साहित्य सृजन, संगीत-नाटक और सामूहिक मनोरंजनों के आयोजनों पर विशेष ध्यान देना प्रारम्भ कर दिया। यद्यपि संगीत-नाटक और सामूहिक मनोरंजन उसके लिए एक दम नवीन न थे परन्तु इसको एक कला के रूप में विकसित करने का अवसर तभी मिल सका जब विलासिता की लालसा से उसका हृदय उकता चुका था। स्थापत्य कला, संगीत-नाटक के सम्पादन और आयोजन के साथ ही साहित्य में भी उसने अपने व्यक्तित्व के अनुरूप ही नवीन आयाम स्थापित करने में सफलता प्राप्त की।

———

अध्याय--५
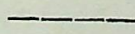
उत्सव और मेलों का आयोजन

वाजिद अली शाह ने अपने जीवन का अधिकांश समय राजनीति से पृथक किन्तु सांस्कृतिक कार्यों में रुचि रखते हुए कामुकता पूर्ण विलासिता के साथ व्यतीत किया। उसने ललित कलाओं में विशेष रुचि प्रकट की और अपना अधिकतम समय संगीत का प्रशिक्षण प्राप्त करने, औरतों की संगत में रहने और शेरो शायरी लिखने में व्यतीत किया। वह इस कार्य में इतना व्यस्त हो गया कि राज्य प्रशासन जैसे महत्वपूर्ण कार्य की ओर से ध्यान हटाकर मुशायरों, संगीत और नृत्य की महफिलों में ही लिप्त होकर रह गया। कला-प्रियता उसका जन्म जात गुण था। यही कारण था कि उसने अपनी विषय भोगिता और संगीत प्रियता को अपने अनोखे अन्दाज के साथ सम्पन्न किया। अपने आश्रय में आने वाली स्त्रियों के निवास, लिवास और रियाज के लिए उसने उचित प्रबन्ध की व्यवस्था की। संगीत और नृत्य प्रशिक्षण का कार्य नियमित रूप से सम्पन्न होता था जिसमें वह स्वयं भी विशेष रुचि लेता था। वाजिद अली शाह ने अपने उत्तराधिकारी काल में ही लोक प्रियता प्राप्त करने के लिए उस समय की जनता की प्रवृत्तियों को परखा, उसी अनुरूप व्यवस्थित रूप से रास रंग के आकर्षक सार्वजनिक कार्यक्रमों को आयोजित किया। इन कार्यक्रमों की यह विशेषता थी कि रंग की मस्ती में डूबे लोग कभी अनुशासन की सीमाओं को न लांघ सके। ऐसे कार्यक्रमों में प्रथम और अन्तिम बार परियों का हजरत अब्बास की दरगाह पर सजधज कर जाना और वहां बे-परदा घूमना फिरना था। इस बे-पर्दगी की नुमाइश पर तत्कालीन बादशाह अमजद अली शाह ने रोक लगा दी थी जिस कारण इसका आयोजन दोबारा न हो सका। जोगिया मेला, रहस और मीना बाजार का आयोजन कर वाजिद अली शाह ने लखनऊ की जनता के दिलों में स्थायी प्रभाव अंकित कर दिया था। यह लोक प्रियता इस सीमा तक बढ़ी कि कम्पनी सरकार के नुमाइन्दों को खटकने लगी। यही वजह थी कि वाजिद अली शाह के उत्तराधिकार काल में ही तत्कालीन लखनऊ के रेजीडेन्ट ने वाजिद अली शाह के विरुद्ध एक शिकायत भरा पत्र कम्पनी के गर्वनर के नाम भेजा था।

वाजिद अली शाह के सभी कार्यकलाप आकर्षक एवं रोचक हुआ करते थे। जब हर चीज शानो शौकत से मनाई जा रही थी तो भला वाजिद अली शाह के जन्मोत्सव पर खुद जोगी बनने की रस्म इतनी फीकी क्यों रहती। जो रस्म महल के अन्दर मनायी जाती थी और जिसमें सिर्फ नजदीक के रिस्तेदार ही मौजूद होते थे उसे वाजिद अली शाह ने खुले आम धूम-धाम से मनाने की सोची। उसने अनोखे अन्दाज में अपने जन्मोत्सव को भी जोगिया मेले के रूप में मनाना प्रारम्भ किया। इस प्रकार के मेले का आयोजन क्यों किया जाता था इस पर किसी प्रकार का विवाद नहीं है। वाजिद अली

शाह की जन्म-छठी के समय उसकी दादी ने उसे जोगियाने वस्त्र धारण कराए थे और उसकी हर वर्ष गांठ उसी रंग के वस्त्रों में होती थी। सन् १८२२ में जब जाने आलम पैदा हुए थे तो उनकी दादी मलका आफाक साहिबा ने नवजात को जोगिया रंग के कपड़े पहनाए थे ताकि लड़के की जिन्दगी में ऐश आसाइश की कमी रहे और रास बिलास से बचा रहे क्योंकि यही वो समन्दर था जिसमें हुक्मराने अवध के बेड़े गर्क हो रहे थे। पर उस केसरिया रंग ने अपना वो रंग दिखा दिया कि इतिहास में अपनी आप मिसाल बन गया और उस जोगिये अंगरखे ने उसे मस्ताना जोगी बना दिया।

पहला जोगिया मेला वाजिद अली शाह के उत्तराधिकार काल के प्रारम्भ में ही मनाया गया। उन दिनों परियों का विशाल समूह उसके पास था। साथ ही नाचने-गाने वालों की बहुतायत उसकी सभा में हो गई थी। वाजिद अली शाह के इश्को मुहब्बत का दौर अपने पूरे शबाब पर था। मधुर गाने वाले, आनंदित कर देने वाले सितार वादक तथा पखावज के माहिर और तबलावादकों का ससूह इस तरह अपनी कला के अभ्यास और प्रदर्शन में व्यस्त रहते थे कि दिन और रात का अनुमान ही नहीं रहता था। प्रेमिकाओं द्वारा दिये गये कष्टों के अतिरिक्त और कोई बात ऐसी न थी जो वाजिद अली शाह को दुखी करते हों। प्रेमिकाएं भी स्वयं में ही मस्त रहती थीं। उन्हें उत्कृष्ट भोजन, उपयुक्त वस्त्र एवं गाने-बजाने के अलावा कुछ चिन्ता ही न रहती थी। किसी प्रकार का रन्जोगम उनमें व्याप्त न था। वाजिद अली शाह किसी न किसी प्रेमिकाओं के आगोश में ही सांसे ले रहा होता था। वाजिद अली शाह को अपनी ऐसी स्थिति से पूर्ण संतुष्टि मिल रही थी।

आकाश में घन्घोर घटा छायी हुई थी। हल्की-हल्की फुहार वृक्षों के पत्तों पर गिर कर दिल को लुभाने वाला वातावरण उत्पन्न किए हुई थी। हुजूर बाग में चारों ओर फूल और उनकी खुशबू फैली हुयी थी। हवा उन फूलों को अपने हल्के-हल्के झोंकों से इस तरह हिला रही थी जैसे वातावरण की मस्ती में झूम रहे हों। वाजिद अली शाह एक वृक्ष के साए में बैठा हुआ इस प्राकृतिक सौन्दर्य का आनन्द ले रहा था। इस मौसम ने वाजिद अली शाह को इतना आनन्दित कर दिया कि वह अचानक उठा और भावातिरेक में सब होशो-हवाश खोते हुए अपने कपड़े फाड़ डाले, फिर सबके सामने इसी आनन्द की चरम सीमा में गुजर कर चला गया। इस स्थिति में वह जोगियों जैसी वेश-भूषा धारण किये हुए था। मोतियों की राख सुबह की किरणों की तरह उसके मुख पर चमक रही थी। मोतियों की माला उसने अपने गले में सुशोभित कर रखी थी। नवाब सिकन्दर महल और माशूके खास भी जोगियाने वस्त्रों में उसके अगल-बगल थीं और वाजिद अली शाह ने दोनों के हाथ अपनी बगल में दबा रखे थे। तीनों के शरीर पर बनारसी चादरें लिपटी हुई थीं, गेसू उलझे हुए और चेहरे पर जले हुए मोतियों की राख मली हुई थी। खुशबू से सारे बाग का वातावरण सुगन्धित था। इस मदहोश महफिल में हाजरीन सेवक-सेविकाएं आदि अनेक लोग उपस्थित थे। सभी उपस्थित लोगों को इस वातावरण ने कुछ ऐसा सम्मोहित सा कर दिया कि मदहोशी के नशे में

अचानक ही अस्तित्व को भुलाते हुए अपने कपड़े फाड़ने लगे। ऐसे मस्ताने मौसम को और भी खुशगवार करते हुए साजिन्दों ने अपने-अपने साजों पर राग छेड़ दिया। सितार, रबाब, सारंगी, मृदंग और तबला अपनी इन्तेहा पर झनझना उठे। गवैयों ने मीठी तान में ऐसे गीत गाए कि उनकी आवाज आकाश में गूंज गई। सभी उपस्थित लोग मदमस्त थे और उनकी आँखों से आँसुओं की धारा बह रही थी। हर एक दिल अपने-अपने होश खोकर बेक़ाबू हुआ जा रहा था। वाजिद अली शाह लिखता है—

> "......यह उस वक़्त का जिक्र है जब कि परियों का जमघट गाने वालों की बोहतात और मेरे जज़्ब-ए इश्को मुहब्बत का बड़ा जोर था। यह एहसास न होता था कि अब रात है या दिन। ख़ुश गुल गाने वाले ख़ुश अतवार बजाने वाले, सितार का शोर, पख़ावज की झंकार और फ़िर मुसलसल चार पांच पहर तक तबला बजाने की आवाज़ एक अजीब समां होता था। माशूकों के ग़म के अलावा और कोई ग़म था ही नहीं। माशूकों का भी यही हाल था। उम्दा खाने, बेशो-बहालिबास और गाने बजाने के अलावा कुछ जानती ही न थीं। ख़ुदा की मेहरबानी ऐसी शामिले हाल थी कि किसी क़िस्म का ग़म मिस्ले उनको न पैदा था। मैं हमेशा किसी न किसी शाहिदे राना से हम-आग़ोश रहता। फ़लक कीना, परवर मारे, रश्क़े हसरत के आँसू तारों की आँखों से ज़मीन पर गिराते हुऐ मेरी महफ़िलों की तरफ हसरत भरी नज़र से देखतीं।"
>
> आसमान पर चारों तरफ घन्घोर घटा छायी हुई थी। हल्की-हल्की फुहार के क़तरे दरख़्तों के तरोताज़ा पत्तों पर गिरकर अजीब मंज़र पेश कर रहे थे। नसीमे अम्बर फ़िशार हुज़ूर बाग़ के चारों तरफ गुल फैला रही थी। अन्दली बाने नग़मा सरा तराने ख़ुश नवा सेयानी के फूल की शाखों पर अजीब मस्ताना अदा से ख़ुश अल हाफ़ी कर रहे थे..."
>
> "......मैं इसी के साए में बैठा हुआ उस यार गफ़लत शोआर की फ़ुरक़त में अपने दिल को रश्क़े गुलज़ार बनाये हुए था और खुद मेरी ही तसनीफ़ मसनबी अफ़सान-ए इश्क़ ज़ेरे मुताला थी। इस आलम में यकायक जुनून का ग़लबा हुआ चुनाँचे मैंने अपने कपड़े फाड़ डाले और इसी आलमे बेख़बरी में दिल के आइने को ग़ुबार आलूदा और जिगरे फ़िगार को रश्क़ वो लाले पुरबहार बनाकर सबके सामने से गुज़र गया।
>
> जोगियों का ख़ास इमत्याज़ी साज़ो सामान मेरे जिस्म पर था। मोतियों की ख़ाक सुबह सादिक़ की तरह मेरे चेहरे पर चमक रही थी। मोतियों का कण्ठा गले में था। माशूके ख़ास और नवाब

सिकन्दर महल जोगिन बनी थी। उनका हाथ मैंने अपनी बग़ल में दबा लिया था।

हम तीनों की जिस्मों पर बनारसी चादरों की गातियां लिपटी हुई थीं और चेहरों पर जले हुए मोतियों की ख़ाक मली हुई थी। बाल परेशान जिनकी ख़ुशबू से सारा बाग़ मोअत्तर था। कानों में गोश्वारे और गले में मोतियों की मालाएं। इस महफ़िले मदहोशी के हाज़रीन में मसाहिब मुलाजिम अश्बाबे निशात वगैरह मौजूद थे और सबको सरवर के नशे ने कुछ ऐसा मुतास्सिर किया था कि यक़ायक़ सब के सब बेख़ुद होकर अपने कपड़ें फाड़ने लगे और इसी आलम में तमाम आलाते मौसीक़ी जैसे साज़, सितार, रबाब, सारंगी, मरदंग, तबला झनझना उठे। ख़ुश आवाज गाना गाने वालों ने ऐसी नग़मा सराई शुरू कर दी कि उनकी आवाज आसमान तक जा पहुंची। जो लोग यह हाल देख रहे थे वह शशदर और हैरान थे और सबके हवास छूट गये थे।

गरज़ के इस महफ़िल की हालत ने किसी के होश बजा न रखे थे। कोई आँख ऐसी न थी जो आंसू न बहा रही हो और कोई दिल ऐसा न था जी मुज़तरिबो बेचैन न रहा हो।"

जोगी सुनहरे कढ़ाईदार दुपट्टे अपनी कमर पर तहमद की तरह लपेटे हुए था जिसकी चमक दमक चकाकौंध कर रही थी। जब दुपट्टा बाँधा गया तो कमर अत्यन्त ही पतली प्रतीत होने लगी थी जो नजर की बारीकी से भी अधिक पतली थी। वक्ष और कन्धों की शान ही निराली थी। जोगी वेश में वाजिद अली शाह दोनों जोगिन वेशाधारी परियों के हाथ में हाथ डाले शोर-गुल करती हुई भीड़ में तेजी से गुजर रहा था। एक हंगामा सा बरपा हुआ था। सम्पूर्ण स्त्रियों और पुरुषों पर मदहोशी की अवस्था छायी हुई थी। प्रत्येक गली, कोने, निवास, दिशा अर्थात हर तरफ स्त्रियों का विशाल समूह उमड़ा हुआ था, बाग एक परीखाना सा प्रतीत होता था। वाजिद अली शाह लिखता है—

"......जोगी ज़र निगार दुपट्टा अपनी कमर से पहने हुए थे जिसके नूरे तजम्मुल से तजल्ली बरस रही थी। जिस वक़्त दुपट्टे की गिरह लगायी गई कमर की बारीकी तारे नजर से भी कई गुना ज़्यादा बारीक़ थी।

चश्में बददूर सीना और शानों के उभार की शान ही निराली थी। भरी-भरी रानें सरद के पेड़ के मिसाल थीं। जोगी दोनों जोगनों के हाथ में हाथ दिए इस मजमें से जहाँ एक शोर बरपा था तेजी के साथ गुजर गया और वह शख़्स जो साथ था आपे से

बाहर था। जो सामने आया वह भी अपने होश खो बैठा। तमाम औरतों और तमाम मर्दों पर ख़ुदरफतगी का आलम था। दरो-दीवार कसो बाम और हर पस्तो बुलन्द की नज़रें, जोगी और जोगनों पर जमीं हुई थीं। हर गली हर मकान हर सिम्त और हर कोना ग़रज़ हर तरफ औरतों का एक हुजूम था। बाग़ क्या था एक परिस्तान मालूम होता था।

जब अनीसुद्दौला बहादुर और रजीउद्दौला बहादुर बाग के द्वार पर आए तो उस दृश्य को देखकर आश्चर्य चकित और मदहोश हो गये। उन्होंने अपने कपड़े फाड़ लिए। अपनी मुखाकृति और शरीर पर राख मलकर धोती पहन कर वह भी जोगियों के वेश में आ गये। उनकी आँखों से उस समय आँसुओं की धारा बह रही थी। वह मोरछल हाथ में लिए आगे बढ़े। जब जोगी के समीप पहुँचे तो देखा कि वहाँ राग और रागनियों की फ़ुहार पड़ रही है। वाजिद अली शाह लिखता है—

"......जब अनीसुद्दौला बहादुर और रजीउद्दोला बहादुर बाग़ के दरवाज़े पर आए तो उस अजीब मंजर को देखकर हैरत जदा व बेख़ुद हो गये और अपने कपड़े फाड़ डाले। चेहरे और जिस्म पर ख़ाक़ मलकर और तहमद बाँधे हुए वह भी जोगियाना भेस में आ गए। उनकी आँखों से उस वक़्त आँसू जारी थे। मोरछल हाथ में लिए आगे बढ़े और जोगी के करीब आकर देखा कि यहाँ रागनियों की फुहार पड़ रही है। जो भी उस मन्ज़र को देखता यह समझता है कि परिस्तान का शहर है।"

अभी कुछ दिन शेष था, सभी वैसी ही हालत में उठे और बाग के एक कोने की तरफ चल पड़े। सन्ध्या हो जाने पर जब सब वहाँ पहुँच गये तो जादू का असर कर देने वाले गायकों ने ख़याल "न कर सांवरिया से यारी मैं जोगन भई रे", का राग आरम्भ कर दिया। इस संगीत की बहुत सराहना की जा रही थी। जोगी वाजिद अली शाह वैरागिन पर तकिया करते हुए दायां पैर बांयीं जांघ पर रखकर आकर्षक रूप से मस्त शेर की तरह बैठकर आनन्द लेने लगा। जांघों और वक्षस्थलों के कटाव सुडौल और चमकदार चेहरे निहायत ही मस्ती भर रहे थे। दोनों जोगिनें बिल्कुल निराले रूप में अंगूर की लता की छाया में अपने नृत्य में सब कुछ भूली हुई थीं। इनके होश उड़ा देने वाले नृत्य और हृदय को प्रसन्न करने वाले गानों को सुनते हुए कोई भी व्यक्ति होश में न था और सब की आँखों से आँसू बह निकले थे। वाजिद अली शाह लिखता है—

"......अभी कुछ दिन बाकी था कि सब के सब इसी हालत में बाग़ के एक गोशे की तरफ़ चल पड़े और शाम के करीब वहाँ पहुंचे। जादू नवाज़ मतराबों ने ख़याल "न कर सांवरिया से यारी

मैं जोगिन भई रे" का राग गाना शुरू किया और ख़ूब, ख़ूब दाद मौसीक़ी दी। इस वक़्त जोगी बैरागन पर तकिया करके दायां पैर बांईं रान पर रखकर दिलबरों और मस्त शेर की तरह बैठ गया। रानों और सीने के कटाव सुडौल और चमकदार रुख़सारों का हाल कैसे बयान किया जाए। जो भी देखता था अश-अश करता था। दोनों जोगनों का अजीब रंग था वह अंगूर की बेलों के साए में महवे रक़्स थी। इनके होश में रुबा रक़्स और दिलरुबा गाने पर कोई शख़्स अपने होश में न था और अब सबकी आँखों से आँसू जारी थे।"

जब सूर्यास्त हो गया तारे जगमाने लगे और चन्द्रमा आकाश में सुशोभित होकर अपनी किरणों से वातावरण को रुपहला बनाने लगा तो वाजिद अली शाह सारे साजो सामान के साथ अचानक ही चल पड़ा और नहर के ऊपर रफ़अत मन्जिल पर आकर आसन ग्रहण किया। रोशनी कर दी गयी और विभिन्न प्रकार की आतिशबाजी छूटने लगी। इस समय एक बारात जैसी मालूम पड़ती और उसमें दूल्हे की तरह वाजिद अली शाह को सभी देखने के प्रयास में लगे हुए थे। आधी रात बीत जाने पर सभा समाप्त कर दी गई। धीमें-धीमें सभी अब होश में आते जा रहे थे सामान्य सा वातावरण बनता जा रहा था। सूर्य के आगमन की सूचना देते हुए सितारे आँखें बन्द करने लगे थे। वाजिद अली शाह लिखता है—

"......शाम को जब सूरज डूबा और चाँद निकल आया जोगी यक़ायक़ अपनी नशिस्त से उठकर अपने तमाम साज़ो सामान के साथ चल पड़ा और नहर के ऊपर रफ़अत मंज़िल पर मक़ाम किया। नूर महताबियां रोशन कर दी गयीं और मुख़तलिफ़ सी आतशबाज़ी छूटने लगी। इस वक़्त शादी की बारात की कैफ़ियत पैदा हो गयी थी। अब हर आदमी की यह ख़्वाहिश हुई कि जोगी जो इस तक़रीब का दूल्हा बना हुआ है के जलवे का नज़ारा करना चाहिए ताकि ज़्यादा सुरूर हासिल हो। मुख़तसिर यह कि जब आधी रात गुज़र गई दुनियां का रंग भी बदल गया। चुनाचे महफ़िल भी बरख़ास्त हो गयी अब वैसी हैरत बाक़ी न रही। दिलों की हालत मामूल पर आ गई। महताब ने अपनी कार फ़रमाई शुरू कर दी और सितारों ने अपनी आँखें झपका लीं।"

वाजिद अली शाह को यह रोमांचक मनोरंजन पूर्ण कार्य बहुत अधिक प्रिय था। प्रत्येक वर्ष सावन के महीने में ऐसी सभा का आयोजन होता रहा। हर बार इसका अनोखा ही रूप देखने में आता था। यह उत्सव कई वर्षों तक जारी रहा। वाजिद अली शाह ने इसके निरन्तर आयोजन के संबंध में लिखा है—

"......चूँकि यह ताए जादे मशग़ला मुझे दिल से पसन्द आया था लेहाजा हर साल सावन के महीने में यह महफ़िल मुनक़्क़िद होती रही और हर बार इसका रंग नया ही होता था और वह सिलसिला कई साल तक जारी रहा।"

जोगिया मेले को स्वर्गिक आनन्द सभा की भाँति बनाने का पूरा प्रयास किया गया था। अनेकों सुन्दर युवतियाँ परियों की भाँति जैसे स्वर्ग में अप्सरायें होती हैं, लाल वस्त्रों को धारण कर नृत्य एवं गायन करती हुई सुसज्जित होती थीं। मधुर शहनाइयों के स्वर से वातावरण गुंजित हो जाता था। समस्त बेगमात व सेविकाएं उपस्थित होती थीं और वाजिद अली शाह स्वयं जोगी के वेश में हीरे और जवाहरातों से जड़ित आसन पर विराजमान होता था। मेले में बाजारों की सजावट व दुकानदारों के वस्त्र भी जोगिया रंग के होते थे। सफेद वस्त्र पहने किसी व्यक्ति का प्रवेश वर्जित रहता था। यह मेला निरन्तर तीन दिनों तक चला करता था। हर वर्ग जाति और आयु के आम शहरियों को मेले में शामिल होने की इजाजत होती थी। हजारों की संख्या में लोग मेला देखने के लिए उमड़ पड़ते थे। मेले में सम्मिलित होने की बस एक ही शर्त रहती कि सभी गेरुए वस्त्र पहन कर ही आएं। नतीजा यह होता कि अस्सी-अस्सी बरस के जीर्ण-जीर्ण बूढ़े भी छैला बनकर आते थे और वाजिद अली शाह की जवानी की आनन्द मदिरा से जाम भर अपने बुढ़ापे को रंगीनी और मस्ती में डुबा लेते थे।

वाजिद अली शाह के बादशाह बन जाने के बाद भी जोगिया मेले के आयोजन का यह सिलसला जारी रहा। सन् १८५२ ई० में वाजिद अली शाह ने इसे एक विशाल उत्सव के रूप में सम्पन्न करवाया और सारे शहर को इसमें सम्मिलित होने का हुक्म दिया। केसर बाग को स्वर्ग बना देने की भावना से आयोजित इस मेले में सभी की उपस्थिति अनिवार्य होने का आदेश कुछ इस तरह प्रसारित किया गया—

यही भेस हो अहले बाजार का
यही जोग हो अहले दरबार का
मुलाजिम मेरे जितने हैं हक शनास
वह बिल्कुल फकीराना पहनें लिबास
करेगा न जो यह लिबास अखतियार
वह जनहार मेरा नहीं दस्तगार।

भला कौन बादशाह से दुश्मनी लेने का प्रयास करता, सारा लखनऊ ही जोगियाना वेश में इस मेले में उमड़ पड़ा।

जब ऐश्वर्य की कमी न हो, हुस्न जमाल परियों का समूह चारों ओर मंडराता रहता हो, संगीत और गायन के मर्मज्ञ कलाकार अपनी राग रागनियों से हर समय दिल को आनन्दित करते रहते हों तो कृष्ण की भाँति रास लीला की क्रीड़ाओं की गाथा

सुनकर वैसे ही सामूहिक नृत्य और कथा पर आधारित नृत्य सभा आयोजित करने की अभिलाषा उत्पन्न होना स्वाभाविक ही था।

समस्त प्रकार के सुगन्धित पुष्पों से हुजूर बाग महकता रहता था। एक दिन वाजिद अली शाह जब नृत्य और वादन के साज-सामान सहित फलके सैर में उपस्थित था उसने परियों को रास रचाने का आदेश दिया। वाजिद अली शाह लिखता है—

"......एक रोज़ बाग़ बाने कुदरत ने ज़मीन पर गुले लाला का फ़र्श बिछाया था और ख़ल्क अल्लाह के दिले फ़रहत ख़ेज़ी से लालाज़ार बने हुए थे। वह दिन ऐसा था कि इसका जवाब शबे उरुसी भी पेश नहीं कर सकती थी। निग़हते गुल से सारा हुज़ूर बाग़ महका हुआ था। मैं नाच गाने के साज़ो सामान के साथ फलके सैर में रौनक अफ़रोज था इस वक़्त मैंने परियों को रहस धारी का हुक़्म दिया।"

रास में कन्हैया और गोपियों का रूप धारण किया जाता है। माहरूख परी ने कन्हैया की वेश भूषा पहन कर मुरली व मुकुट धारण किया और सुल्तान परी राधा की भाँति सुसज्जित होकर प्रस्तुत हुई। इज्जत परी, दिलरुबा परी, यासमीन परी आदि सभी इनकी सखियाँ अर्थात् गोपियों की भाँति बन गईं। इन्हें इस रूप में देखकर सभी मन्त्र मुग्ध हो गये। वाजिद अली शाह लिखता है—

"..... सुल्तान परी राधा के रूप में जो कन्हैया की ख़ास गोपी है, माहरुख़ परी कन्हैया के रूप में। यासमीन परी, इज़्ज़त परी, दिलरुबा परी, हूर परी, कन्हैया की दूसरी गोपियों के भेस में। कन्हैया की जो माशूक़ बनीं थीं उन्हें ज़बान संस्कृत में गोपियां कहा जाता है।"

जब सारे प्रबन्ध पूर्ण हो गये तो वाजिद अली शाह ने अपने छोटे भाई मिर्जा सिकन्दर हशमत बहादुर को भी निमन्त्रित किया जो बड़े शौक और खुशी के साथ फलक सैर में उपस्थित हुआ। वाजिद अली शाह लिखता है—

"......जब उसका एहतमामो इन्तज़ाम मुकम्मिल हो चुका तो मैंने अपने छोटे भाई मिर्ज़ा सिकन्दर हश्मत बहादुर को भी शरकत की दावत दी थी उन्होंने निहायत शौक़ और ख़ुशी से मेरी दावत क़बूल करली और फ़लक सैर आकर जल्से में शरीक़ हुए।"

रहस की सभा केवल सायंकाल हुआ करती थी। इस अवसर पर सम्पूर्ण परी समूह ने अपने वस्त्रों को इत्र की सुगन्ध से सराबोर कर रखा था और दांतों पर मिस्सी की परत चढ़ा रखी थी। परियां बड़े नाजो अन्दाज से वाजिद अली शाह के आसन के

अगल-बगल पड़ी कुर्सियों पर बैठी हुई थीं। निःसन्देह नृत्य और संगीत की यह महफिल अनोखी ही थी। प्रत्येक उपस्थित व्यक्ति के मुख से बार-बार वाह-वाह निकल रही थी। वाजिद अली शाह के वगल में बैठे उसके भाई खिले हुए पुष्प की भाँति प्रसन्न मुद्रा में बैठे हुए थे। शीशे के कमल व विभिन्न रंगों, विशेष प्रकार के शीशे के फानूस जिनमें शमा जल रही थी रोशनी के लिए आकर्षक रूप से सजाकर रखे गये थे। वाजिद अली शाह के आसन के चारों ओर फूल की चादरें महल के पर्दे में रहने वाली बेगमों के लिए डाली गयीं थीं। वह उसके पीछे रह कर ही झरोखों से सम्पूर्ण दृश्य का आनन्द ले रहीं थीं। यह समारोह आधी रात हो जाने पर समाप्त हुआ। सभी देखने सुनने वाले लोग हर्षित होते हुए अपने-अपने घर को चले गये। वाजिद अली शाह भी सोने चला गया। वह लिखता है—

> **"जल्सा मज़कूर सिर्फ शाम के वक़्त होता है—इस मौके पर तमाम परियों ने अपने कपड़ों में इत्रे हिना लगाया हुआ था। दांतों पर मिस्सी और अजीब नाज़ो अन्दाज़ के साथ मेरे तख़्त के अतराफ़ कुर्सियों पर बैठी हुई थीं। नाच गाने की यह महफ़िल इस क़दर उम्दा थी कि हर शख़्स की ज़बान पर सिवाये वाह वाह के कुछ और न था। मेरे भाई फूल की तरह खिले हुए मेरे पहलू में बैठे थे। शीशे के केवल और मुख़्तलिफ़ रंगों के फानूस जगह-जगह लगाए गये थे। तख़्त के अतराफ़ फूल की चादरें थीं। महलाते पर्दा नशीन के लिए चिलमने छोड़ रखीं थीं। वह चिलमनों के उधर से यह तमाशा देख रही थीं। यह हयात् आफ़री सोहबत आधी रात के बाद मौकूफ़ हुई और जुमला हाज़रीन अपने-अपने मकान को चल दिए और मैं भी सो गया।"**

राधा कृष्ण का यह रास सर्व प्रथम जोगिया जश्न में रचाया गया था। इसके उपरान्त वाजिद अली शाह ने स्वयं एक नई कथा पर रास का निर्माण किया और सार्वजनिक रूप से इसका प्रदर्शन करना प्रारम्भ किया।

वाजिद अली शाह ने लगभग १५० सुन्दर युवतियों का चयन करके उनके लिए जो भी कार्य गाथा के अनुसार हो उन परियों के लिए उसी प्रकार के वस्त्र व आभूषण वनवाये थे। बाजुओं पर जुड़ाई लगाकर परियों जैसे दो पर (पंख) लगाकर परी का स्वरूप दिया जाता था। इनके नाम भी परियों की भाँति हुआ करते थे। इसी प्रकार लम्बे चौड़े पुरुषों को देव बनाया जाता था और उनको नृत्य और गायन के लिए नियुक्त किया था। इस सम्पूर्ण समूह को वाजिद अली शाह ने 'रहस' नाम दिया था।

'रहस' कैसर बाग में होती थी। बाजिद अली शाह और उनके दरबारी जब बाग में पहुँच जाते तो कम से कम डेड़ सौ औरतें बहुत कीमती पोशाक पहनें नाचती गाती आतीं। उनके साथ कोई दो-दो सौ तबलिये और सारंगीये होते। काफी देर तक नाच

गाने का जल्सा रहता, उसके बाद दर्शकों के सामने ही स्टेज तैयार की जाती और रहस शुरू होता। रहस का पूरा खेल लगभग एक महीने तक चलता था। रहस में नाच गाने के अलावा हाथी घोड़े चौवदार नौबत और बाकी सारा शाही लवाजमा भी काम में लिया जाता था।

बादशाह बनने के उपरान्त वाजिद अली शाह नियमित रूप से कैसर बाग में रास लीला की भूमिका पर रचित रहस नामक नाटक का मंचन कराता रहा।

रास या रहस का मतलब रासलीला से ही है। रासलीला में नृत्य और नाटक दोनों का ही अंश है और वाजिद अली शाह ने दोनों को बराबर महत्व दिया। वाजिद अली शाह ने "परीखाना" में रहस को स्वयं स्पष्ट किया है और उसे एक प्रकार का स्वांग कहा है जिसे हिन्दुओं में ईश्वर की भक्ति के रूप में मनाया जाता है और इस आयोजन में काफी मात्रा में धन व्यय किया जाता है। इसके साथ ही अपने द्वारा रचित रहस के बारे में स्पष्ट किया है कि उसका लिखा रहस ऐसा है कि उसके मुकाबले का कोई अन्य रहस नहीं होगा। वह लिखता है—

> "..... **रहस धारी नाच गाने का एक स्वांग है जिसकी हिन्दू मजहब में इबादत की जाती है। हिन्दू लोग इस इबादत के सामान पर बेशुमार रुपया व्यय करते हैं। इसमें कन्हैया और उसकी गोपियों का रूप धरा जाता है। यह मुबालिगा नहीं कि जैसा के रहस मैंने तैयार करवाया है वैसा कहीं और न होगा।"**

रहस की प्रारम्भिक अवस्था की झलकी कुछ इस प्रकार होती थी कि नृत्य और संगीत की तालों के नाम हिन्दी के होते थे तथा कन्हैया और राधा के संवाद दोहों के रूप में बोले जाते थे। वाज़िद अली शाह लिखता है—

> "...... **उनके नाच संगीत लक्ष्मी और बृज से मुमासलत रखते हैं और यह नाम हिन्दी तालों हैं इस नाच में कन्हैया और राधा के मकालिमा का तास्सुर होता है जो मफ़ारकत और वस्ल के रुनुमा होता है यह मकालिमा हिन्दी दोहा में लिखा जाता है, जैसे—**
>
> **मोर मुकुट कट काछनी कर मुरली उर माल।**
> **ये मानक मोह मन बसे सदा बिहारी लाल॥**
>
> **दूसरा दोहा राधा :—**
>
> **आवो प्यारे मोहना पलक ढ़ांप तोहे लेऊं।**
> **ना मैं देखूँ और को न तोहे देखन देऊं॥**

वाजिद अली शाह ने रहस के नाच में कई प्रकार के नये नाच ईजाद किए। रहस में पहली बार कत्थक का प्रयोग उन्होंने ही किया। वाजिद अली शाह ने स्वयं अपनी पुस्तक "बनी" में इसका सम्पूर्ण उल्लेख क़िया हैं। "बनी" में बत्तीस तरह के

नाच लिखे हैं। नाच को दो हिस्सों में बाँटा था। पहले में सत्तरह और दूसरे में पन्द्रह। हर एक नाच का खास नाम दिया हुआ था, जैसे पहले में "सलामी", सिन्धी हथजोड़ी, मोरपंखी आदि और दूसरे में "मुजरा", "घूँघट", "मोर छतरो" आदि। "बनी" में जो रहस के नाच का वर्णन किया है और जो हिदायतें दी हैं, उनको पढ़ने से मालूम होता है कि रहस का नाच कत्थक नाच ही था। वाजिद अली शाह की "बनी" में लिखा है कि सखियां पेशावज आदि से आरास्ता होकर आयें और खामोश बैठ जाएं, साजिन्दे उनके हमराह या तसनीफ राकम गायें—"चलो सखी अब रहस करें .....अख्तर पिया के मन को रिझायें ... " जिस वक्त राकम का तखल्लुस लबों पर आये फौरन सब सखियाँ खड़ी हो जाएं और जिस मुकाम पर रहस के वास्ते सफ बाँध कर खड़ा होना मुकर्रर हो चुका हो, वहाँ पर सफ-बस्ता हमवार उस्ताद हों और दो जोड़ी छोटी-छोटी झांझों को जानबे सफ बजायें जाएं। हर रहस के लिए जरूरी है राकम की तसनीफ गाएं। बाद में पखाबजी के कड़े के हमराह नगमा सफ पर तमाम करें और हर रहस के खत्म होने पर "चिरंजीव रहो जाने आलम" या "जाने आलम की जय" सुर में कहा करें और एक टुकड़ा दाहिनी जानिब और दूसरा बायें जानिब और तीसरा बालाएं ताफ तमा करें। इसकी शक्ल यह है कि पहले दाहिनी जानिब दोनों हाथ लय में बढ़ायें और दूसरी दफा में बायें जानिब भी इसी तरह से और तीसरी मरतबा नाभि पर बायें हाथ की अंगुश्त कलमा और अंगुश्त नर मिला कर चुटकी की सूरत बनाकर और एक दो तीन पर कमर को हिलायें। एक-एक दाहिने की लय और दो बांये को लय पर तीन दाहिने को लय पर तमाम करें और लय ताल में गुलदस्ते उठाएं और धरा करें। चक्करों में एक दो के कदम लिये जाते हैं। टुकड़े पखावजी बोलता है। इससे यह साफ मालूम होता है कि रहस का नाच किस तरह होता था और कत्थक से मिलता जुलता था। आज भी कत्थक नृष्य में "सलामी" मोरपंखी, मजुरा, घूंघट वगैरह मौजूद हैं। रहस का नाच हर शाही जलसे में हुआ करता था।

वाजिद अली शाह ने रहस में नाटक का मकतब श्री कृष्ण की उस लीला से किया है कि जब वह गोपियों के साथ खेलते हुए और नाचते हुए एक दम से गायब हो जाते थे और गोपियाँ व्याकुल होकर उन्हें ढूंढती फिरती थीं और इस तरह से भाव दिखाकर एक-एक से पूंछती थीं कि हमारा कन्हैया कहां है। इसी पृष्ठ भूमि में वाजिद अली शाह ने एक नाटक लिखा था जिसका नाम "राधा कन्हैया का किस्सा" था। यह नाटक वाजिद अली शाह ने अपने वली अहद के जमाने में लिखा और १८४३ ई० में हुजूर बाग जहां जोगी जश्न मनाया जाता था, वहाँ पहली बार खेला। इसलिए यह कहना गलत नहीं होगा कि "राधा कन्हैया का किस्सा" हिन्दुस्तानी रंग मंच का पहला नाटक और वाजिद अली शाह पहला नाटककार है।

वाजिद अली शाह ने यह नाटक संस्कृत के नाटकों से प्रभावित होकर लिखा है। उन्होंने इसके संवाद कुछ गद्य में और कुछ पद्य में लिखे। सारे पात्र गद्य में ही बात

करते हैं मगर जब कन्हैया और राधा अपनी मुहब्बत का इजहार करते हैं तब पद्य में करते हैं :—

राधा— मैं तेरे इश्क़ में दीवानी हुई ऐ कान्हां
(बेंत) मैंने जी जान से तुझको तो यही पहचाना।

(दोहा) आवो प्यारे मोहना पलक ढांप तोहे लेऊँ।
ना मैं देखूं और को न तोहें देखन देऊं ।।

कन्हैया—(बेंत) इश्क़ में तेरे राधा जी जंगल-जंगल छाना।
देवपरी ने भी मुझको कहीं नहीं पहचाना ।।

राधा— (दोहा) सीस मुकुट कट काछनी कर मुरली उरमाल।
यह मानक मोह मन बसे सदा बिहारीलाल ।।

बाकी सारे संवाद गद्य में हैं और बहुत ही सरल भाषा में हैं जैसे—

राधा— "राजन के राजाधिराज महाराज जुग-जुग जियो आनन्द रहो।"
"वह मुरली जा में छह राग छत्तीस रागनियां बाजत थीं वह मुरली कहाँ छोड़ आये। वही मुरली बजाओ।"

कन्हैया—राजन की राजधिरानी महारानी कान्हा, कान्हा असीस देते हैं जुग-जुग जियो आनन्द रहो राम दुहाई, वह मुरली खो गयी।

राधा— "महाराज मैं तुमको खूब चीन्हत हूँ, तुम किसी को दे आये हो।"

यही नहीं, उन्होंने संस्कृत नाटक के विदूषक के आधार पर रामचेरे की रचना की, कन्हैया का दोस्त मजाकिया तबियत का और वही विदूषक की पोशाक और वेश। जिस तरह संस्कृत नाटकों में मात्र भाव से ही पानी भरना, एक जगह से दूसरी जगह जाना आदि दिखाते थे वैसे ही इस नाटक में सखियां कुयें से पानी खींचना, मक्खन मथना आदि भाव से ही दिखातीं थीं।

दृश्य के साथ-साथ जगह भी बदलती थी। जैसे महल का वजीर किसी दरवेश की तलाश में जाता था तो एक जंगल बनाया हुआ होता था वहां जाकर उसे दरवेश मिलता था। एक दिन में एक अंक ही खत्म होता था। दूसरे दिन रहस वैसे ही शुरू होता था और दूसरा अंक खत्म होता था। इस तरह महीने भर में जाकर पूरा खेल खत्म होता।

बाग बगीचों के दृश्य तो केसर बाग से ही पूरे हो जाते थे, मगर कई दृश्य कागज और कपड़ों से बनाये जाते थे। कई 'सीनिक इफैक्ट' जैसे तलवार की चोट, खून निकलना आदि दिखाए जाते थे। यह कहना गलत नहीं होगा कि यह पूरी तरह से 'टोटल थियेटर' की परिभाषा को सिद्ध करता था। रहस के मंचन में वाजिद अली शाह का लाखों रुपया व्यय हो जाता था यहां तक कि कुछ व्यय तो अनावश्यक रूप से ही हो जाता था। वह लिखता है :—

" ...... इस खेल की तैयारी पर कई लाख रुपये खर्च हुए। तमाम लवाजमात मौजूद होने के बावजूद सिर्फ दुरुस्ती के सिलसले में पांच सौ रुपये खल गये और परस्तिश लवाजमात और लिबास वग़ैरह की आराइश के लिए जो अश्यांए ख़रीद की गयीं उनको बयान करना भी तफसील औक़ात का बाइस होगा।"

सबसे पहला रहस जिसका कि श्रीकृष्ण की जिन्दगी से कोई ताल्लुक नहीं था, लिखने का श्रेय भी वाजिद अली शाह को ही था। १८४७ ई० में वाजिद अली शाह अवध की गद्दी पर बैठा मगर कुछ ही दिनों के बाद वह सख्त बीमार पड़ गया। जब तबियत थोड़ी ठीक हुई तो, खुद अपनी लिखी हुई कविता "दरिया-ए-तश्त" जो विलक्षण कल्पना है जिसमें गजाला एक राजा की लड़की और माहरुह एक परी देश के राजकुमार के इश्क की कहानी है तथा इसका श्रीकृष्ण की जिन्दगी से कोई ताल्लुक नहीं है मगर फिर भी इसे रहस ही कहा जाता है, की तैयारी में साल भर लगा और कई लाख रुपया खर्च हुआ। यह १८५१ ई० में केसरबाग में खेला गया था और देखने के लिए सिर्फ खास-खास लोगों को बुलाया गया था।

सम्पूर्ण परियों को गुरुओं के द्वारा बड़े परिश्रम के साथ प्रशिक्षित किया जाता था वास्तव में उसको कला का रूप देने के लिए सात ऐसे व्यक्ति थे जो सरकार में नौकर थे। उसका निर्देशन सम्बन्धी एक दृष्टान्त प्रस्तुत है—

सखियां अंगरखा आदि से सुसज्जित होकर आयें और शांति से स्थान गृहण करलें। संगीतिज्ञ उनके साथ में राग गायें "चलो सखी अब रहस करें, अख्तर पिया के मन को रिझायें" जिस समय अखतर का नाम होठों पर आये तो तुरन्त सब सखियां खड़ी हो जायें और जिस स्थान पर पंक्ति बांधकर खड़ा होना निश्चित हो वहां पर पंक्ति में आयें और रहस के समय खाने-पीने की चीजों आदि से पृथक रहें।

इस रहस के फौरन बाद ही वाजिद अली शाह ने अपनी दूसरी कविता "अफसान-ए-इश्क़" पर रहस की रचना की जिसे १८५३ ई० में खेला गया और पहली बार आम जनता को इसे देखने की इजाजत दी गयी। यह रहस बहुत ही लोकप्रिय हुआ। इस रहस और जोगिया मेले की लोकप्रियता ने आम जनता को भी रहस खेलने की प्रेरणा दी। इस आवामी सेज का सबसे पहला और लोकप्रिय रहस था अमानत का लिखा हुआ "इन्द्रसभा"। इन्द्रसभा वाजिद अली शाह के रहस की ही देन है और वह सबसे पहला हिन्दुस्तानी रंगमंच का नाटक है जो कविताओं में लिखा गया और सबसे पहला नाटक जिसे आम जनता ने खेला।

वाजिद अली शाह के जमाने में ही सबसे पहले तवायफों ने अभिनय करना भी सीखा था। इन्द्र सभा के रहस नाटक ने लखनऊ में धूम मचा दी थी। देखा जाए तो

स्टेज पर अभिनय एक गायकी-नृत्य का सम्मिश्रण सबसे पहले लखनऊ में ही हुआ। इन्द्र सभा यकीनन 'ओपेरा' की भांति ही होता होगा।

वाजिद अली शाह विभिन्न प्रकार के मनोरंजक उत्सवों को आयोजित करने में अत्यधिक रुचि लेता था। परियों की इच्छा पर उसने मीना बाजार और मेले का प्रबन्ध करने का आदेश पारित कर दिया था। वह लिखता है—

> **"...... परियों की बेहद ख़्वाहिश थी कि मीना बाजार और मेले का एहतमाम हो चुनाचे मैंने उनकी ख़्वाहिश पूरी करने के लिए मीना बाजार और मेले का हुक़्म नाफिज़ किया।"**

आदेश पारित होने के उपरान्त ही विभिन्न दस्तकारों और व्यवसायियों ने अपनी वस्तुओं का आकर्षक प्रदर्शन किया। सम्पूर्ण सामिग्री उचित प्रकार से दुकानों में सजायी गयी थी। जिस किसी ने भी यहाँ के मिष्ठान को खाया उसका संसार के आनन्द से हृदय प्रसन्न हो गया। सब्जी विक्रेताओं ने हर प्रकार की सब्जियां टोकरियों में सजा रखी थीं। मेवा विक्रेताओं ने सेब, नाशपाती, पिस्ता, बादाम आदि बहुत अच्छे तरीके से सजा रखे थे। पिस्ता और बादाम तो बिलकुल हसीनाओं के होठों जैसे लग रहे थे। वाजिद अली शाह लिखता है :—

> **"हुक्म के नाफ़िज होने के फौरन बाद ही फनकारों और पेशेवरों ने अपना सामान हाजिर किया। निहायत करीने और सलीके से दुकानें सजाईं। जिस किसी ने भी यह मिठाई खाई दुनियां भर की लज़्जत से उसका दिल भर गया। एक जानिब सब्ज़ी टोकरियों में तरतीब के साथ रखी थीं। मेवा फ़रोश सेब, नाश्पाती, पिस्ता, बादाम निहायत उम्दा तरीक़े से लगाये हुए थे। सेब के देखने माशूकों के सेब ज़क़न बे साख़्ता याद आ जाते थे। अनार और नाशपाती गुल अज़ार माशूकों से आगे बढ़े हुए थे। पिस्ता और बादाम किसी के लबों चश्म के मुमातिल थे।"**

एक ओर मांसाहारी भोजन और नशीली वस्तुओं की दुकानें थीं। भांग बेचने वाली हसीनाऐं अपने नखरों और अदाओं से आशिकों को मदमस्त कर रही थीं। चरस और तंबाकू पीने वाले दिलों से धुआं निकाल कर वायु मण्डल में उड़ा रहे थे। कबाब की दुकानें आकर्षक लग रही थीं और वहाँ पर लोग काफी आनन्दित हो रहे थे। कबाब और पान की दुकानों से आ रही खुशबू दिलों दिमाग पर छा रही थी। वाजिद अली शाह लिखता है—

> **"......एक जानिब भंग फरोश नाज़नीन अजीब नाज-नख़रे से आशिक़ों का नशा देबाला कर रहीं थीं। चरस और तंबाकू उनके पीने वालों के दिलों का धुआं निकाल कर फ़िज़ां में उड़ा रहे थे। कबाब की दुकानें दिल जले लोगों के लिए तसकीन का बाअस थीं।**

जख़्मी दिलों पर नमक पाशी हो रही थी। पनवाड़ी अपने पानों से माहवारों के मुंह अगवानी कर रहे थे। किसी तरफ नानबाई ख़ुशगवार तरीक़े पर शीरमाल और कबाब चुन रहे थे जिनकी बुए जान परवर से दिमाग मोअतर हो रहा था।"

फूलवालों की एक कतार लगी हुई थी। प्रत्येक की दुकान भिन्न-भिन्न प्रकार से दिल को आनन्दित करने वाले पुष्पों का संग्रह थी। फूल बेचने वालों की अदायें लोगों को लुभा रहीं थीं। अबरक और मिट्टी के विभिन्न प्रकार के खिलौनों पर आश्चर्य चकित चित्रण किया गया था। उन्हें दुकानदारों ने सजा रखा था। वाजिद अली शाह लिखता है—

" ·· उनके बाद गुलफ़रोशों की दुकानों की कतार शुरू होती थी। हर दुकान तरह-तरह के फूलों का मख़ज़न थी। उन गुलो फ़रोशों की मस्ताना सदायें नग़मा हाये बुलबुल की तरह नाज़नीना में जहाँ के गोश गुजार हो रहीं थीं। अबरक और मिट्टी के क़िस्म-क़िस्म के खिलौने अजर्गचीन की कारीगरी पर तानाज़नी कर रहे थे।"

खेल तमाशा दिखाने वाले अत्यन्त फुर्ती दिखा रहे थे। एक स्थान पर नेवले और सांप की लड़ाई का दृश्य था, दोनों ही एक दूसरे से निर्भय थे। ऐसा प्रतीत होता था कि पारस्परिक रूप से वह पीड़ित हो गये हैं। दर्शक इस भयानक तमाशे से घबरा उठते थे, लेकिन फिर भी एक बहुत बड़ी भीड़ उसको देखने में व्यस्त थी। वाजिद अली शाह लिखता है—

"······खेल तमाशे दिखाने वाले मुख़्तलिफ क़िस्म के करतब निहायत फुर्ती से दिखा रहे थे। एक मक़ाम पर नेवले और सांप की लड़ाई का मंजर था। दोनों एक दूसरे से बेखौफ़ थे जैसे इश्क़े पेचां दरख़्त से लिपटा है। ग़ालिब मग़लूब का सर ज़मीन पर रगड़ता था और ऐसा महसूस होता था कि मग़लूब ग़ालिब से आजिज़ हो रहा है। देखने वाले इस भयानक तमाशे से घबरा उठते थे लेकिन एक मजमे कसीरान के देखने में मशगूल था इन दोनों जानवरों की हिफ़ाजत ख़ुदा करने वाला है।"

एक स्थान पर एक सन्दूक और फिर सन्दूक के अन्दर सन्दूक एक के बाद एक इस तरह कई सन्दूक रखे हुए थे लेकिन तमाशा दिखाने वाला देखने वालों को एक सन्दूक में रखे पंखों (परों) से कबूतर बनाकर दिखाता था। वाजिद अली शाह लिखता है—

"······एक जगह पर एक सन्दूक और क़ालिब में तहे दर तहे कई सन्दूक़ थे इसमें बज़ाहिर थोड़े से पर रखे थे लेकिन तमाशा दिखाने

वाला हाज़रीन को इन्हीं परों से कबूतर बनाकर दिखाता था इस शोब्दे की वजह से बाज़ार में बड़ी भीड़ थी।"

एक ओर नट अपना करतब दिखा रहे थे। नटों के करतब को कई लोग आश्चर्य चकित होते हुए देख रहे थे। नटों को छोटी जाति का बाजीगर होने के कारण उच्च दृष्टि से नहीं देखा जाता था। खेल और करतब को दिखाने वाले अनेक लोग होते थे। एक व्यक्ति ढोल पीटता जाता था और दूसरे अन्य व्यक्ति विभिन्न प्रकार के दर्शकों को अपनी ओर आकर्षित करते थे। एक व्यक्ति धरती पर नेजा गाढ़ देता था। कोई एक रस्सी पर चढ़ता था और अपने सिर पर भारी बोझा उठाकर दौड़ता था। इसी प्रकार एक व्यक्ति नंगी तलवार पर खड़ा हो जाता था फिर तलवार पर चलकर और कलाबाजियाँ खाते हुए उसी रस्सी पर लौट आता था। खेल में अपने शरीर को यह लोग तलवार से टुकड़े-टुकड़े कर देते थे और फिर इन टुकड़ों को मिलाकर जोड़ देते थे तो पहले की भाँति आदमी जीवित हो जाता था। इस प्रकार का खेल दिखाने वाले अच्छे-अच्छे जादूगरों को भी कुछ नहीं समझते थे। इनका विश्वास था कि हम वृद्ध को जवान, मनुष्य को पशु और मृतक को जीवित कर सकते हैं। सूखे बीज को बोते ही उसी क्षण पौधा उग आता था उसमें फल फूल भी निकल आते थे। इस टोली के कुछ लोग बातों में लगाये रहते थे और उनकी स्त्रियाँ अपनी सुन्दरता और अदाओं के प्रदर्शन से लुभाने की चेष्टा करती रहती थीं। कुछ लोगों का यह भी मत था कि इनके ढोल पीटने की आवाज में सम्मोहन की शक्ति थी जिसके कारण वह अपने करतबों को दिखाने में सफल रहते थे। वाजिद अली शाह लिखता है—

"......एक तरफ नटों का करतब जानने वाले ये लोग ईरान में रसन बाज़ और नैन्ज़ू साज़ के नाम से शोहरत रखते हैं और वहाँ वह इज्जत की नजर से देखे जाते हैं लेकिन हिन्दुस्तान में निचली जाति होने की वजह से इन बाजीगरों को अच्छा नहीं समझा जाता। इस खेल को पेश करने वाले मुतअहिद आदमी होते हैं एक आदमी ढोल पीटता जाता है और दूसरे आदमी मुख़्तलिफ़ तरीक़ों से तमाशाइयों को अपनी तरफ मुतवज्जे रखे हैं। आम तौर पर लोगों का ख़्याल है कि इनके ढोल की आवाज़ में जादू होता है जिसकी वजह से मुतहरे कुन हरकतें दिखाई देती हैं।"

एक शख़्स जमीन में नेजा गाड़ देता है और उस पर रस्सी बाँध कर रस्सी पर चढ़ता है फिर अपने सर पर कोई भारी बोझ लेकर दौड़ता है इसी तरह वह शख़्स नंगी तलवार पर खड़ा हो जाता है इसके बाद तलवार पर चलकर और कलाबाजियां खाकर उसी रस्सी पर लौट आता है। इस खेल में अपने जिस्म को यह लोग तलवार से टुकड़े-टुकड़े कर देते हैं और फिर उन टुकड़ों को निकाल कर जोड़ते हैं तो पहले की तरह आदमी ज़िन्दा हो जाता है। ग़रज़

इस क़िस्म के जादू के खेल दिखाने वाले सहर सामरी को भी ख़ातिर में नहीं लाते। उनका क़ौल है हम बूढ़े को जवान, इन्सान को हैवान और मुर्दे को ज़िन्दा कर सकते हैं और ख़ुश्क़ बीज बोते हैं उसी लम्हा दरख़्त उग आता है और उसमें फल-फूल भी निकल आते हैं। इसी गिरोह के कुछ आदमी लोगों को बातों में लगाए हुए थे और उनकी औरतें अपने हुस्नो जमाल की नुमाइश कर रहीं थीं।"

एक स्थान पर किस्से कहानियाँ कहने वाले जमे हुए थे और उसमें रुचि लेने वालों की भीड़ लगी हुई थी। इन व्यक्तियों द्वारा कल्पित घटनाओं पर आधारित प्रेम गाथायें श्रोताओं को रस दे रहीं थीं। वाजिद अली शाह लिखता है—

"... एक जगह पर दास्तान गो बैठे हुए थे और उनके मुश्ताकाने दास्तान जमा थे यह लोग इश्क़ो मुहब्बत की दास्तान में तिलस्माती हिक़ायात और झूठमूठ के वाक़यात को सुनने वालों को हैरत के ग़ोते दे रहे थे इसमें से एक क़िस्सा भी ऐसा नहीं जो कि क़रीने क़यास हो लेकिन इन बातों से घुल हवसों के मुबतज़िल जज़बात को तसकीन हासिल होती थी।"

इस मेले में जुआरी भी अपने धन्धे को फैलाये बैठे थे। इनका उद्‌देश्य दूसरों की जेबों पर डाका डालना होता था। जो भी व्यवित इस तमाशे में सरीक होते थे वह अचंभित हो जाते थे। कुछ लोग चौसर और शतरंज बिछाये बैठे थे। कुछ व्यक्ति वजीर या अधिकारी बताकर खेल को लड़ाई और लड़ाई को खेल बना रहे थे। इस खेल में अजीब तरीके का लेन-देन होता था जिसमें क्षण भर में निर्धन व्यक्ति धनी और धनी व्यक्ति निर्धन हो जाता था। इस खेल के कारण ही निर्धन व्यक्ति धनी व्यक्तियों पर अत्याचार करते थे। रिश्वत खोर हर आदमी से मिले रहते थे। इस प्रकार यह खेल इन्सानियत की सीमाओं के विरुद्ध था। वाजिद अली शाह लिखता है—

"......एक मकाम पर ज्वारी अपने कारोबार फैलाये बैठे थे उनका मक़सद यह होता है कि दूसरों की जेब पर डाका डाला जाये। जो भी लोग यह तमाशा देखते थे हैरत में डूबे हुए थे अलबत्ता इस फ़न के जो माहिर हैं वह अपने साथियों से कानाफूँसी कर रहे थे। कुछ आदमी चौसर और शतरंज बिछाये बैठे थे। बाज़ आदमी अपने को वज़ीर या अफ़सर बताकर खेल को लड़ाई और लड़ाई को खेल बना रहे थे। यह भी अजीब तरह का लेन-देन था एक ग़रीब आदमी पलक झपकते ही में तवगर और दौलतमन्द आदमी देखते-देखते कंगाल हो जाता था। इस नासेज़ार खेल की वजह से गरीब आदमी अमीर आदमियों पर ज़ुल्म करते थे और फ़ेले बद के ख़याल को जहन से निकाल कर हिर्स के शिकार होते थे और

फ़ितनओ दग़ाओ न फ़रेब की वजह से क़हरे मुजल्लत में घिरे हुए थे लेकिन रिश्वत ख़ोर मोहतसिब अपने हुसूले ज़िन्दगी की खातिर उनसे चश्म पोशी करते थे ओर हर बदकार आदमी से मिले हुए थे।"

नगर के काजी तथा अन्य सख्तियों के वावजूद वहुत से ऐसे व्यक्ति भी मेले में थे जो अभद्र व्यवहार करते थे और अवैध कार्यों में लगे रहते थे। यह लोग पाप और पशुता से युक्त थे जो अपने जीवन को राक्षसी प्रवृत्ति की भांति ही मदिरा पान आदि में मदहोश किये रहते थे और एक जाम तक के लिए जान लेने और देने पर तुल जाते थे। वाजिद अली शाह लिखता है—

"· ···अगरचे अमरे ख़िलाफ़ शरियत को बादशाहे दीन पनाह की शरा परवरी रोकने के लिए काफ़ी थी लेकिन ख़ुदसरो आबरू हुरामन रिआया ज़श्त आमाल नेरेह बातिन अवामें मोहताविब व काज़ीये शहर की सख़्ती के बावजूद हरकात नाशाइस्तीं अफ़जाले नाजाइज़ के मुरतक़िब होते थे यह लोग गुनाह और हैवानी ख़सलतों के बानी थे और अपनी ज़िन्दगी को शैतान परस्ती, भंग नोशी और शराब ख़ोरी की नज्र किए हुए थे। यह मदहोशी में परस्त सर शारों बदमस्त अपने लहू व लोआब से एक लम्हे को भी ग़ाफ़िल नहीं हुए। एक जाम के लिए जान देने को तैयार थे।"

यही स्थिति मदक पीने वाले नशेड़ियों और अफीमचियों की भी थी। जब यह लोग मित्रों में सम्मिलित होते थे तो उनके मन में किसी प्रकार से दण्डित होने के विचार नहीं होते थे। मेले में एक व्यक्ति चिलम पीकर ऊंघ रहा था दूसरा पागलपन में अपने को भूले हुए था कभी खिलखिला कर हंस देता तो कभी रोने लगता था और ऐसे मदमस्त व्यक्ति के सामने सत्यता का कोई महत्व नहीं था। वाजिद अली शाह लिखता है—

"······यही हाल मदक नोशों अफ़ीमियों का था जब यह लोग अपने साथियों में आकर शामिल होते जज़ा व सज़ा का ख़्याल भी अपने ज़हन में न रखते और दुनिया व माफ़ीया से ग़ाफ़िल हो जाते एक शख़्स चिलम पीकर ऊंघ रहा था दूसरा खुद रफ़तगी के आलम में बरहना होकर मजज़बों के से हरकात ज़ाहिर करता था या कभी-कमी कुलकुले जान की तरह हँसता या कुलकुले मीना की तरह रो देता।"

इस मेले में एक शेर लाया गया था जो बकरी के थन से दूध पीता था। इस अनहोनी और विचित्र बात को देखते हुए लोग हैरत में पड़कर यह दृश्य देख रहे थे। वह जिक्र करता है—

"......इस मेले में एक शेर लाया गया था जो बकरी के थनों को मुँह लगाकर दूध पीता था मेले में शरीक होने वाले तमाम आदमी इस नामुमकिन अमल के इमकान पर हैरान थे।"

इस प्रकार मेले में उपस्थित जन समुदाय अपनी-अपनी रुचि के अनुसार आनन्द लेने में व्यस्त था। यह अवसर उन लोगों को बहुत खुश कर देने वाला था जिसके आनन्द में सभी डूबे हुए थे। अपनी तरह से सभी सजधज कर उपस्थित हुए थे। वाजिद अली शाह लिखता है—

"....गरज़ के हर आदमी ख़ुश्को तर नशा आवर्र चीज़ों से अपनी ख़्वाहिश के मुताबिक शग़ल कर रहा था उनमें कोई चीज़ पकी हुई थी, कोई टकी हुई और कोई कशीद की हुई।"

वाजिद अली शाह ने इस मेले में सभी परियों, सेवक-सेविकाओं, आदि के भ्रमण करने की आज्ञा प्रदान कर दी थी। उसने इन लोगों के द्वारा व्यय करने के लिए उचित मात्रा में धन भी वितरित करवाया था जिससे यह सभी इस अवसर का पूरा आनन्द उठा सकें। परियाँ और अन्य औरतें बड़े नाजो नखरे से मेले की इस भीड़ में घूम रही थी वाजिद अली शाह लिखता है—

"..... इस मेले के लिए मैंने अपनी हूर तमसालो परी पेकर कहारियों को ज़रे लफ़बत के जोड़े और मेले के ख़र्च के लिए बहुत सा रुपया इनायत फ़रमाया था इस मेले के हंगामे होश रूबा में वह मुश्तरी खिसालो ज़ोहरा जबीं नाज़ो अन्दाज़ दिखाती हुई और नख़रे करती हुई बर्क़ के मानिन्द मेले में इधर से उधर फिर रही थीं।"

मेले में उपस्थित सभी लोग इस आयोजन और इसके आकर्षण को देखकर आश्चर्य चकित भी थे साथ ही आनन्दित भी हो रहे थे और बार-बार दुहाई दे रहे थे। वाजिद अली शाह लिखता है—

"... हाजरीने मेला उन अशवा साज़ों की शानो-शौकत देखकर हैरान थे और उनकी ज़बान पर अलअमान-अलअमान का विर्द जारी था।

वाजिद अली शाह हाथी पर बैठकर इस मेले का नजारा लेने के लिए गुजर रहा था। रास्ता तय करने की गरज से रुपया लुटाते हुए चल रहा था और खेले के आकर्षण को देखता जा रहा था। गरीब और फकीरों पर विशेष मेहरबानी की गई। वाजिद अली शाह ने सरकारी अधिकारियों को आदेश दिया कि इस मेले में उपस्थित हर वस्तु उसके रखने के वर्तन सहित दस गुनी कीमत देकर खरीद ली जाय जिस से सभी दुकान दार मालदार हो जाएं और यह मेला हमेशा के लिए यादगार बन कर रह जाए। वाजिद अली शाह लिखता है—

"...... माबदौलतो इक़बाल मरक़ब हशमत अफ़जाल हाथी पर सवार होकर निकले और दोनों हाथों से रुपया लुटाते हुए रास्ता तय कर रहे थे और मेले के हर अदना व आला पर अपना साये आतफ़त डालते हुए मेले की दिलचस्पियों को देख रहे थे। फ़क़ीरों और मौहताजों को बे न्याज़ कर दिया गया और सरकारी आदमियों को हुक्म दिया गया कि मेले का जुमला सामान और वह तमाम बर्तन जिनमें यह सामान रखा हुआ है दस गुना दाम देकर ख़रीद लिया जाए ताकि तमाम दुकानदार मालदार हो जाएं और यह बख़्शिश सफ़हऐ रोज़गार पर यादगार रहे।"

मीना बाजार की यह खरीदी हुई सभी वस्तुएं बादशाह अमजद अली शाह की सेवा में प्रस्तुत कर दी गईं, जिन्होंने उन सभी वस्तुओं को अपने बेटे की ओर से भेंट रूप में स्वीकार कर लिया। वाजिद अली शाह की भेंट तो अमजद अली शाह ने स्वीकार कर ली लेकिन साथ ही यह निर्देश भी भेज़ दिया कि सारा मीना बाजार खरीद कर तुमने अच्छा तो किया लेकिन इस बात की सूचना पहले से देनी चाहिए थी अभी तो कोई बात नहीं जो हुआ वह उचित ही हुआ परन्तु भविष्य में ऐसा निर्णय लेने से पूर्व सूचना देना अनिवार्य है। वाजिद अली शाह लिखता है—

"......और ख़रीदा हुआ मीना बाज़ार का यह सामान आला हज़रत क़द्र मेज़ मंज़लत सुल्तान इबने सुल्तान ख़ाक़ान इबने ख़ाक़ान मुहम्मद अमजद अली शाह नूरूल्लाह मरक़दह की ख़िदमत बा बर्क़त में हदियतन भेज दिया गया उन्होंने इज़हारे शिफ़क़त पिदरी उन चीज़ों को कुबूल फ़रमाया और साथ ही यह भी फ़रमाया कि तुमने सारा मीना बाज़ार ख़रीद लिया लेकिन हमें इत्तला न की ख़ैर जो कुछ हुआ अच्छा हुआ आइन्दा इत्तला कर देना लाज़मी है।"

इस प्रकार मेले के इस आयोजन को बादशाह द्वारा स्वीकृति प्रदान हो गयी थी। वाजिद अली शाह के इस प्रकार के कार्यों को वादशाह अमजद अली शाह ने सदैव की भाँति स्वीकार कर लिया था।

लखनऊ में हजरत अब्बास नामक पीर की दरगाह उन दिनों बहुत मशहूर थी। एक बार वाजिद अली शाह के आदेश से सभी परियां आकर्षक वस्त्र पहन कर और मूल्यवान गहनों से सजधज कर हजरत अब्बास की दरगाह पर गयीं। नजमुलनिसां और मीर मुहम्मद मेंहदी को इन परियों के आने-जाने की व्यवस्था का भार सौंपा गया। यह सजी संवरी परियां सुन्दर पालिकियों में ले जायी गईं। रोशनी का अत्यधिक आकर्षक प्रबन्ध किया गया जो देखते ही बनता था। दर्शकों का अपार समूह हृदय को आनन्दित करने वाले इस दृश्य को देखने के लिए उमड़ पड़ा। जिस घड़ी परियों का यह हुजूम गुजरता तो सारी अवाम व दरगाह पर मौजूद लोग उन्हें हसरत भरी निगाहों से देखने

लगते थे। काफी रात बीत जाने के बाद यह परियाँ वापस महल को आ गईं। वाजिद अली शाह लिखता है—

"......एक रोज़ हज़रत अब्बास अलैस्सलाम की दरगाह की ज़्यारत के लिए माह रजबुल मुरज्जब की नौचन्दी में तमाम परियों को भेजा। इस वक़्त परियों को निहायत मुख़तलिफ़ लिबास और बेश कीमती ज़ेबरात पहनाये गये और उनकी सवारी के लिए नफ़ीस तरीन फैंनिसे और पालकियाँ आरास्ता की गयीं जब यह कारवां रवाना हुआ तो एक अजीब फ़रोफ़र नुमायां था ऐसा मन्ज़र शायद कभी चश्म फ़लक ने भी न देखा होगा। मैंने उन परियों के साथ दरोग़ा मीर मुहम्मद मेंहदी और दरोग़ा नजमुलनिसां बेगम को कर दिया था। सुना कि जिस वक़्त परियों का यह हुजूम रवाना हुआ बाज़ार में राह चलते लोगों और दरग़ाह शरीफ़ के तमाम हाज़रीन की नज़रें इसी जानिब थीं। फिर रात तक दरगाह में गुज़ार कर यह लोग ख़ैरियत से वापस हुए और मेरे निहायत शुक्रगुज़ार थे कि मैंने इस किस्म का मौका दिया।"

जब वाजिद अली शाह के पिता बादशाह अमजद अली शाह को हजरत अब्बास की दरगाह पर औरतों को बेपरदा तमाशे के रूप में प्रस्तुत करने की गुस्ताखी की सूचना मिली तो वह बहुत क्रोधित हुए और भविष्य में ऐसे आयोजनों पर रोक लगा दी। वाजिद अली शाह लिखता है—

"......लेकिन जब इसकी इत्तला हज़रत जन्नत मकां को हुई तो वह सख़्त बरहम हुए और आइन्दा के लिए सख़्त ताक़ीद फ़रमायी।"

वाजिद अली शाह का विचार था यदि किसी को प्रेम के लिए बाध्य किया जाए तो उसके हृदय में प्यार की भावना कभी जागृत नहीं हो पाती। प्रेम की अभिव्यक्ति तभी पनपती है जब प्रेमी प्रेमिका दोनों स्वयं को स्वतन्त्र और विचारों की स्वछन्दता का अनुभव करते हैं। ऐसी प्रेम भावना ही हृदय को सन्तुष्टि प्रदान कर सकती है। इसी विचार से उसने परियों को बेपरदा कर स्वतन्त्रता पूर्वक सैर करने का अवसर प्रदान किया था। इस आयोजन को मनाने का एक अन्य कारण यह भी था कि उसने तीन स्त्रियों को महल का स्तर प्रदान किया था जो अब परदे में रहने लगीं थीं। वाजिद अली शाह लिखता है—

"..... उन लोगों को बेपरदा दरगाह को भेजने की यह वजह थी कि मैंने तीन ओरतों को महल करार दिया था और वह पर्दे में रहती थीं लेकिन परियों के इस परदे का कुछ मतलब ही न था लिहाज़ा एक रोज़ मुझे ख़्याल आया कि किसी को मुहब्बत करने

पर मजबूर किया जाए तो उसके दिल में जज़बए मुहब्बत पैदा नहीं होती जब तक कि माशूक़ अपने को आज़ाद तसव्वुर न करे। इसकी मुहब्बत का अन्दाज़ा दुश्वार है इसीलिए मैंने उनकी ख़्वाहिश को पूरा करना ज़रूरी समझा था।''

रंगीन मिजाज वाजिद अली शाह को हिन्दुओं का होली का रंग भरा त्योहार बेहद पसंद आया था। वह स्वयं भी इस त्योहार में सम्मिलित होकर इसका आनन्द लेता था। मजहबी कारणों से वह इस रंगमय त्योहार को अपने महल में बेगमों के साथ नहीं मना सकता था पर उसे इस त्योहार का आनन्द अपनी बेगमों के साथ लेने की इच्छा रहती थी। इसी लिए उसने होली के समान ही एक अन्य नवरोज का त्योहार मनाना प्रारम्भ कर दिया था जिसमें सभी को सम्मिलित होकर मौज मस्ती मनाने की इजाजत दे रखी थी।

नवरोज के उत्सव के दिनों में महल को इस कदर सजाया जाता कि उसकी जगमगाहट देखते ही बनती थी। हर कमरे को करीने से सजाया जाता जिसमें मखमली गद्दे और ईरानी कालीन बिछे रहते थे तथा उन पर जरदोजी के काम किए हुए मसनद लगे रहते थे। खुशबूदार गुलदस्ते गुलदानों में संवार कर सजाए जाते थे। रेशमी पर्दे खिड़कियों को सुशोभित करते थे। एक-एक खूबसूरत झाड़ फानूस हर कमरे की छत के बीचों बीच लटका रहता था। बड़े-बड़े गंगालों में रंग भरकर कमरों के बाहर रख दिया जाता था। इस रंग को पारिजात केसर के फूलों को पका कर बनाया जाता था।

प्रात: काल से ही महल में चहल-पहल होने लगती थी। नाच गाने का कार्यक्रम अपने रंग पर जमा होता था। शाही परिवार के लोग, दरबारी और मुसाहिब सभी रंग-बिरंगे वस्त्रों से सजधज कर उपस्थित होते थे और वाजिद अली शाह को नवरोज की मुबारकबाद देते और नजराने पेश करते थे। विभिन्न प्रकार के इत्रों की सुगन्ध से सराबोर महकता कमरा घुंघरुओं की झनकार और तबले की गमक से गूंजता रहता था। उत्सव की विशेष प्रथा थी कि जो कोई वाजिद अली शाह के लिए नजर पेश करता था उस पर वह पिचकारी से रंग डाल देता था। इस प्रकार काफी समय तक वाजिद अली शाह इस कार्य में रहने के उपरान्त उठ जाते थे।

यहां से वाजिद अली शाह सीधे शाही हरम में पहुँचते थे जहां बेगमें उनका बेसबरी से इंतजार कर रही होती थीं। नवरोज के उत्सव के अवसर पर शाही हरम को भी लाजवाब खूबसूरती प्रदान करते हुए सजाया जाता था। सभी बेगमें अपने आपसी मनमुटाव को भूलकर वाजिद अली शाह को लुभाने और प्रसन्न करने के लिए उसकी सेवा में जुट जाया करती थीं। इस अवसर विभिन्न मनोरंजक कार्यों का आयोजन भी होता जैसे नाच, गाना, स्वांग और तरह-तरह की हंसी के फव्वारे छुड़ा देने वाली ठिठोलियां। यहां सभी की यही कोशिश रहती कि वाजिद अली शाह का दिल प्रसन्न रहे।

वाजिद अली शाह शाही महल से उठकर अपनी मां मलिका किश्वर के महल को जाते थे। बहुत ही सादा जीवन व्यतीत कर रहीं मलिका किश्वर नवरोज के इस उत्सव में रुचि और उल्लास के साथ सभी से मिलती थीं और प्रसन्नता उनके मुख पर छायी रहती थी। वाजिद अली शाह अपनी मां को मुबारक बाद देता और वह उसे अपनी छाती से चिपका कर दुआओं की झड़ी लगा देतीं और हाथ में पिचकारी लेकर स्वयं वाजिद अली शाह पर रंग डालती थीं।

वाजिद अली शाह ने होली के पवित्र त्यौहार की भांति ही नवरोज के इस उत्सव में वैसी ही भावना के रंग भरे थे। वाजिद अली शाह ने होली व नवरोज को राजकीय पर्व बना दिया था। हिन्दुओं की होली का एक किस्सा मशहूर है :—

होली के उत्सव पर हिन्दुओं द्वारा नशा कर बदतमीजियों द्वारा उसे बेहूदा बनाने का चलन वाजिद अली शाह को बहुत नागवार था। उसे शराब से बेहद नफरत थी इसी लिए उसने एक बार शराब की दुकानें बन्द करवा दी ताकि लोग नशे में धुत होकर होली के अवसर पर ऊधम और फसाद न कर सकें। ऐसे आदेश से जनता के एक वर्ग विशेष को बहुत परेशानी हुई। मुंशी शंकर दयाल "फरहत" से अपनी इस परेशानी से छुटकारा दिलाने की अपील की गई। फरहत साहिब ने एक कागज पर दो शेर लिखे और सभी के हस्ताक्षर करवाकर उस कागज़ को अन्य कागजात के साथ वाजिद अली शाह की खिदमत में हाजिर किए। वाजिद अली शाह ने उस अर्जी नुमा कागज पर लिखे शेर पढ़े—

"......कुर्क मय अय्याम होली में कहो क्या कीजिए। जी में आता है कि इस सूरत में कंठी लीजिए गर तमाशा कायस्थों का देखना मन्जूर है शाह दो दिन के लिए मय की इजाजत दीजिए।"

वाजिद अली शाह चूंकि स्वयं भी शायर था तो उसने जवाब भी शेर लिखकर ही दिया—

"गर इजाजत चाहते हैं, ख़ौफ़ इतना कीजिए
साथ ही भर-भर किसी बदमस्त को मत दीजिए
नशे में आकर किसी के घर कहीं वह घुस पड़े
नालशी से मत ख़राबी सर पे अपने लीजिए

इस प्रकार लोगों को इजाजत मिल गयी।

चौदहवीं का चांद अपने पूरे निखार पर चमक रहा था। चारों ओर रुपहली चांदनी मौसम में नशा सा घोले हुई थी। ऐसे खुशगवार मौसम को और भी मनमोहक और रोमांचक बनाने के विचार से वाजिद अली शाह ने संगीत नृत्य और गायन के क्षेत्र में महारत हासिल करने वाले लोगों को उपस्थित होने का आदेश दिया। उनसे कहा गया कि खाने की स्वादिष्ट से स्वादिष्ट वस्तु जो खाने की इच्छा हो बनवा लो। सभी वाजिद अली शाह के आदेशानुसार उपस्थित हुए और बारी-बारी से हर एक ने

अपने संगीत, नृत्य और गायन की अपनी-अपनी कला का प्रदर्शन किया। इस महफिल में कला का जैसा प्रदर्शन हुआ वह दुनियां को हैरत में डाल देने के लिए पर्याप्त था। महफिल की एक विशेषता और भी थी, यह साहस किसी का नहीं था कि वह कोई आलोचना करे या कैसा भी मीनमेख निकाल सके। वाजिद अली शाह को ऐसी गुस्ताखी बिल्कुल नापसन्द थी। वाजिद अली शाह लिखता है—

> **"......क़मरी महीने की चौदहवीं तारीख़ थी चांद अपनी आबो ताब में दर्जे कमाल तक पहुंचा था। इस फ़न के जानने वालों को हाज़िर होने का हुक्म दिया और कहा तुम्हें हर क़िस्म के खानों और लज़ीज़ चीज़ों में से जिस चीज़ की भी ज़रूरत हो तैयार करवा लो। मेरे हुक्म की बिना पर तमाम फ़नकार हाज़िर दरे दौलत हो गये जब तमाम आदमी जमा हो गये और महफ़िल आरास्ता हुई तो उन सब में से हर एक ने बारी-बारी से अपने फ़न का मज़ाहिरा किया और अपने नाच-गाने से कायनात को सर शार कर दिया इस वक़्त किसी में यह जुर्रत न थी कि फ़नकारों की किसी बात पर हफ़ज़नी करे या कोई मीन मेख़ निकाले।"**

इस सभा में वाजिद अली शाह को सबसे बेहतर प्रदर्शन सुल्तान परी का लगा। उसने उसकी तारीफ हृदय से की है। यह शाम स्वर्गिक शाम थी। वाजिद अली शाह ने लिखा है—

> **"......इन सबमें ख़ासकर सुल्तान परी ने अपने कमालात का ऐसा मज़ाहिरा किया कि मुझे उनसे इश्क़ हो गया। सारे कामिलाने फ़न ने यक ज़बां होकर कहा यह मौसीक़ी नहीं सहर सामरी है।"**

संभवतः ऐसी ही महफिलों ने आगे चलकर शामे अवध की महफिल का स्वरूप ले लिया जिसके लिए आज तक लखनऊ की 'शामे-अवध' मशहूर है।

———

अध्याय—६

स्थापत्य कला और बाग बगीचे

वाजिद अली शाह की रुग्णावस्था में उसकी प्रेमिकाओं का उसके प्रति जो उपेक्षनीय एवं अस्नेहपूर्ण व्यवहार रहा उससे उसे केवल मानसिक वेदना ही नहीं हुई अपितु समस्त नारी जाति के प्रति विरक्ति और वितृष्णा की भावना भी उत्पन्न हुई, जिसका उल्लेख पिछले अध्यायों में किया जा चुका है। शारीरिक एवं मानसिक रोग से ग्रसित वाजिद अली शाह ने ज्ञानेन्द्रियों के माध्यम से सौन्दर्य-रसास्वादन करने का विचार किया। फलतः बागों और भवनों के निर्माण का कार्य प्रारम्भ किया। फव्वारों की शृंखलाओं तथा विभिन्न प्रकार के फलों और फूलों के वृक्षों से सुशोभित इन बागों और भवनों ने अवध को सुन्दर नव-परिधान से सुसज्जित कर अतुलनीय स्वरूप प्रदान किया। कुछ ही समय के अन्तराल के उपरान्त जब वाजिद अली शाह रोग मुक्त हुआ तो उसे कामिनियों के कटाक्ष, नुपुरों की धुन, सितार एवं वाद्य-यन्त्रों की संगीत लहरी फिर आमंत्रित करने लगी। वह शनैः शनैः अपनी सौगन्ध को अतीत में डुबोता हुआ एक सफल नायक की भाँति उठ कर सुन्दरियों के मध्य पहुँचा एवं अपनी कलाकृतिम निर्माण की प्रतिभा से निर्मित बागों और महलों में प्रणय की लीलाएँ रचाने लगा।

पिता अमजद अली के स्वभाव के प्रतिकूल वाजिद अली शाह को इमारत बनवाने का शौक था। युवराजत्व काल ही में उसने अपनी आनन्द सभा और भोग विलास के लिए एक सुहावना बाग और उसमें छोटे-छोटे और खूबसूरत भवनों का निर्माण करवाया। दुनियाँ में इमारत के शौकीन हजारों बादशाह गुजरे हैं मगर अपनी पसंद और शौक से किसी बादशाह ने इतनी इमारतें और इतने बाग न बनवाये होंगे जितने कि वाजिद अली शाह ने अपनी असफल जिन्दगी और नाम मात्र की बादशाही के थोड़े से समय में बनवाये। शाहजहाँ के बाद इस संबंध में अगर किसी का नाम लिया जा सकता है तो वह इसी अत्याचार-ग्रस्त अवध-नरेश का नाम है। यह और बात है कि कोई खास इमारत सैकड़ों हजारों साल तक बाकी रही और किसी की सैकड़ों इमारतें जमाने ने चंद ही रोज में मिटाकर राख कर दी हों।

"हुजूर बाग" की उपाधि से विभूषित इस विख्यात बाग को आकर्षक आकार में बनाया गया। वाजिद अली शाह स्वयं उल्लेख करता है कि—"मैं प्रारम्भ से ही स्वच्छता प्रेमी था इसी लिए नवीन निर्माण में रुचि रखता था– इसी कारण बाग और नहरों के निर्माण का विचार उत्पन्न हुआ– योजना पर विचार किया और बाग में दो नहरों का निर्माण करवाया–एक का नाम "चश्म शीरी" और दूसरी का "चश्माए फैज"

रखा गया। बह नहरें बाग के दोनों ओर बहती थीं। इस बाग के आस पास इतनी चौड़ी सड़क का निर्माण किया गया जिस पर एक साथ तीन घोड़ा-गाड़ियाँ चल सकती थीं। हुजूर बाग के निर्माण के पश्चात् इसमें एक तालाब का निर्माण किया गया जिसकी लम्बाई ४० गज और चौड़ाई १५-२० गज थी। फव्वारे भी लगाये गये जिसका वाजिद अली शाह स्वयं उल्लेख करता है कि इन फव्वारों से जब पानी उछलता था तो लगता था मानों वर्षा ऋतु का आगमन हो गया हो। वाजिद अली शाह के अनुसार इस बाग में बनी नहरों की जैसी नहरें इस सल्तनत के अतिरिक्त और कहीं नहीं देखी गई। इस बाग में प्रत्येक ऋतु में अनुकूल निवास के लिए अलग-अलग भवनों का भी निर्माण किया गया।

"शहंशाह मंजिल" नाम का एक भवन हुजूर बाग में निर्मित किया गया। इस भवन को योजना के अनुरूप इस प्रकार बनवाया गया कि यह शीत ऋतु में निवास के लिए सर्वथा योग्य बन पड़े। इस भवन के मध्य में पुष्प गमलों से सुसज्जित छोटा सा तालाब भी निर्मित किया गया। "मकाने खास" की उपाधि से विभूषित एक भवन शहँशाह मंजिल के सम्मुख ग्रीष्म ऋतु में निवास के उद्देश्य से बनवाया गया। इसमें संगमरमर का फर्श बनवाया गया। हुजूर बाग के मध्य एक और भवन वर्षा ऋतु में निवास करने के लिए बनवाया गया। हरियाली से युक्त इस बाग को "फल्के सैर" की उपाधि दी गई। वाजिद अली शाह उल्लेख करता है—"जब धूप तेज हो जाती है और मनुष्य मछली की भाँति तड़प रहे होते हैं तो इस स्थान पर आने के पश्चात एक विशेष आश्चर्य जनक ठण्डक का आभास करते हैं। कुछ पेड़ तो इतने घने हैं कि पानी की एक बूंद भी नीचे नहीं गिर सकती है। पेड़ों के नीचे विश्राम करने के लिए संगमरमर की चौकियाँ बिछायी गई हैं। बाग के हर कोने में चमेली के पौधे हैं। मेंहदी की बाड़ की सुरक्षा हेतु लकड़ी के कटघरे बनाये गये हैं। ऊँचे पेड़ों में विशेषकर शहतूत का पेड़ इतना ऊँचा है जैसा मैंने आज तक नहीं देखा था। इस बृक्ष के नीचे संगमरमर का चबूतरा बनाया गया ताकि वर्षा ऋतु में यहाँ बैठ कर आनन्द प्राप्त किया जा सके। प्रत्येक शुक्रवार को इन बृक्षों की छाया में परियों और गायकों की सभा लगती है। मन को लुभाने वाली आवाजें बोलने वाले पक्षी यहाँ आकर बैठते हैं। इस बाग में पक्षियों का शिकार करना निषेध है।"

वाजिद अली शाह ने इस बाग के निर्माण कार्य के निर्देशन का उत्तरदायित्व अली नकी खां को सौंपा था। उसकी सहायता के लिए मीर मेंहदी जो दरोगा के पद पर था, नियुक्त किया गया था। जब उपयुक्त बाग और इमारत बनकर तैयार हुए तो वाजिद अली शाह को अली नकी का कार्य बहुत पसन्द आया। अली नकी के अधिकारों में बृद्धि कर दी गई और समझ लिया गया कि वजारत और राज्य के प्रबन्ध के लिए उससे अधिक उपयुक्त और कोई व्यक्ति नहीं है। अवध के अन्य अधिकारियों और विशेष रूप से मीर मेंहदी को अली नकी की इस उच्च स्थिति से ईर्ष्या होने लगी।

चूंकि वाजिद अली शाह को इमारतें बनवाने का बेहद शौक था, इसीलिए भवन निर्माण कला का एक अभूतपूर्व नमूना "कैसर बाग" का निर्माण करवाना प्रारम्भ किया। कैसर बाग वाजिद अली शाह के सपनों का स्वर्ग था, यही उसकी भाव भूमि थी। शाहे अवध का क्रीड़ा केन्द्र कैसर वाग ही था। यह चाहे आसिफुद्दौला की इमारतों की तरह मजबूत न हों, मगर खूबसूरती और शानदारी में लाजवाब था। कैसर बाग में बहुत ही सुन्दर और शानदार इमारतों का एक आयताकार इलाका दूर तक चला गया था जिसका एक रुख गोमती नदी की ओर था। कैसर बाग का अन्दरूनी सहन जिसमें पेड़ पौधे लगे हुए थे जिलोखाना (अस्तबल) कहलाता था। इसमें पत्थर वाली बारादरी और अन्य कई इमारतें भी थीं जिन्होंने ज़मीन के उस हिस्से को संसार की विलक्षण वस्तु बना दिया था। यह इमारतें कैसर बाग के पूर्वी फाटक के बाहर थीं। उस फाटक से निकलते ही दोनों तरफ लकड़ी के पर्दे मिलते थे जिनमें से गुजरकर चीनी बाग में पहुँचते थे। वहां से बायें हाथ की तरफ जलपरियों का एक आलीशान फाटक था। इस फाटक के दूसरी तरफ हजरत बाग था और अन्दर ही दाहिनी तरफ चांदी वाली बारहदरी थी। यह एक मामूली ईंट चूने की इमारत थी मगर छत में चाँदी के पत्तर जड़े होने की वजह से चाँदी वाली बारहदरी कहलाती थी। इसी से लगी हुई कोठी "खास मुकाम" थी जिसमें खुद जहाँ पनाह सलामत रहते और वहीं नवाब सआदत अली खां की बनायी हुई पुरानी कोठी (बादशाह मंजिल) थी।

लकड़ी के स्क्रीनों के गलियारे से निकलकर दूसरी तरफ पेचीदा इमारतों का एक सिलसिला दूर तक चला गया था जो चौलक्खी के नाम से मशहूर था। इन इमारतों की बुनियाद हुजूर नाई अजीम उल्लाह ने रखी थी जिन्हें बादशाह ने चार लाख रुपया देकर मोल लिया था। नवाब की खास बेगम और दूसरी प्रतिष्ठित पत्नियां इसमें रहती थीं। इसी के अन्दर गदर के जमाने में हजरत महल का कयाम रहा और यहीं उनका दरबार हुआ करता था।

यहां से एक सड़क कैसर बाग की तरफ आयी थी जिसके किनारे एक बड़ा भारी सायादार दरख़्त था। इसके नीचे आस पास संगमरमर का एक सुन्दर गोल चबूतरा बनाया गया था जिस पर कैसर बाग के मेलों के जमाने में वाजिद अली शाह जोगी बनकर और गेरुए कपड़े पहनकर आते और धूनी रमाकर बैठते। इस चबूतरे से आगे बढ़कर एक आलीशान फाटक था जो चौलक्खी फाटक कहलाता था, और इससे बढ़कर फिर कैसर बाग में आ जाते थे। चारों तरफ की इमारतों में जहां पनाह की बेगमें और परियों जैसी सुन्दर स्त्रियां रहती थीं जिनकी जगह अब अजीब-गरीब सूरतों को देखकर बाज पुराने जमाने वाले कह उठा करते हैं :—

परीनिहुफ़ता रुखां-ओ देव दरकरिश्मा-ओ नाज
बसाख़्त अक्ल हैरत कि इंचे बुल अजवो-अस्त।

अनुवाद—परी ने अपना चेहरा छिपा लिया और देव (राक्षस) नाज नखरे दिखा रहा है। **अक्ल हैरान है कि यह सब कैसे हुआ ?**

कैसर बाग के पश्चिमी फाटक के बाहर रौशन उद्दौला की कोठी थी। उसे वाजिद अली शाह ने ज़ब्त करके उसका नाम "कैसर पसंद" रख दिया था और उनकी एक प्रेमिका नवाब माशूक महल उसमें रहती थीं, उसके सामने और कैसर बाग के उस पश्चिमी पहलू पर भी दूसरा अस्तबल था। कैसर बाग और उसकी इमारतों में सल्तनत के अस्सी लाख रुपये खर्च हुए थे। कैसर बाग में छोटे-छोटे तालाबों का निर्माण भी करवाया गया। इसके अतिरिक्त फल-फूलों और सायदार वृक्षों, फव्वारों आदि से उसे दर्शनीय रूप प्रदान किया गया था।

कैसर बाग की इन तमाम कोठियों, कमरों, बंगलों और महलों में साफ सुथरा फर्श बिछा रहता था। चांदी के पंलगों पर बिछौने और तकिए लगे रहते थे और तस्वीरें तथा तरह-तरह के फर्नीचर के द्वारा इन्हें सजाया गया था। हर भवन अपने में इतना सजा हुआ नजर आता था कि इन्सान चकित हो जाता था। भवनों के आस-पास बाग और चमन ऐसे ज्यामितीय आकार के अनुसार बनाये गये थे कि देखने वालों को वाजिद अली शाह की स्थापत्य कला की स्वाभाविक रुचि और प्रतिभा पर आश्चर्य होता था।

कैसर बाग और उसके भवनों की देख भाल के लिए जरूरत से ज्यादा मकानदार नियुक्त किये गये थे जो रोज भवनों की झाड़ पोंछकर हर चीज़ को सफाई और सलीके से सजाकर रखते थे। बाग में हजारों प्रकार के दुर्लभता से प्राप्त होने वाले विभिन्न प्रकार के वृक्ष थे। एक बगीचा नासपातियों का और दूसरा सेवों का और एक करौंदे और अमरूद और नारंगियों का था। परन्तु उनमें से कोई भी वृक्ष एक गज़ से ऊंचा नहीं था। बाग के चारों ओर विभिन्न रंगों के पुष्प एवं हरियाली थी। इसी बाग में वाजिद अली शाह वृक्षों की छाया में बैठकर स्वयं अपनी पुस्तक मसनवी "अफसानाये इश्क" का अध्ययन करता था।

उत्तराधिकारी के समय में वाजिद अली शाह पर परियों के समूह, गाने वालों को बाहुल्यता और विलासता के भाव चरम सीमा पर पहुँच गये थे। उस समय उसे यह अनुभव नहीं होता था कि अब रात है या दिन। मधुर कण्ठ से गाने वालों की आवाज, मधुर वाद्य वादन, सितार की ध्वनि, पखावज की झंकार, तबलों की ताल निरन्तर 4-5 पहर तक होती रहती थी और आश्चर्य जनक वातावरण उत्पन्न हो जाता था। उसे प्रेमिकाओं की पीड़ा के अतिरिक्त और कोई पीड़ा थी ही नहीं। "आकाश पर चारों ओर घन्घोर घटा छायी थी--हल्की-हल्की फुहार की बूंदें वृक्षों के ताजा पत्तों पर गिरकर आश्चर्य जनक दृश्य प्रस्तुत कर रहे थे। गुलाब के पुष्पों के अतिरिक्त हज़ारों छायादार वृक्ष इस प्रकार लगे हुए थे जैसे बाग में कोई हरियाली शिविर लगा हुआ हो।"

इतिहास की कुछ पुस्तकों में उल्लेख मिलता है कि कैसर बाग नाम का चयन इसलिए किया गया था कि अवध के शासक अपनी मुहर में "कैसर" शब्द लिखा करते थे। इसके लिए देखिए-नजमुल गनी, ताजदारे अवध पृष्ठ संख्या 83। परन्तु नजमुल

गनी का यह उल्लेख अशुद्ध प्रतीत होता है। रोम के मुसलमानों की उपाधि कैसर थी इसलिए इसका नाम कैसर बाग रखा गया। कुछ लोगों का कहना है कि इस भवन की नींव में कैसर युक्त मिट्टी का प्रयोग किया इसलिए इसे कैसर बाग कहा जाता था।

कैसर बाग जैसे भव्य बाग और महलों के आश्चर्य युक्त निर्माण के अतिरिक्त वाजिद अली शाह ने अपने पिता अमजद अली शाह की मृत्यु के उपरान्त उनकी यादगार में हज़रतगंज में दस लाख रुपये के खर्च से एक सुन्दर इमामबाड़े का भी निर्माण करवाया जो सिब्तेनाबाद का इमामबाड़ा कहलाता है।

वाजिद अली शाह ने अपनी एक चहेती बेगम नवाब सिकन्दर बेगम के निवास के लिए "सिकन्दर बाग" का निर्माण करवाया। सिकन्दर बाग का निर्माण कार्य केवल एक वर्ष की अवधि में सम्पन्न किया गया। इस कार्य को साबत अली खान्, गुलाम रजा खान् और मुहम्मद अली खान् के सुपुर्द किया गया। इसके निर्माण कार्य में पांच लाख रुपया खर्च हुए। सिकन्दर बाग के निर्माण में एक-एक निवास को तैयार करवाने के लिए एक-एक व्यक्ति नियुक्त किया गया, इसी कारण जिस कार्य में 7-8 वर्ष लग जाते उसे केवल एक वर्ष में पूरा करना सम्भव हो सका था। सिकन्दर बाग के मध्य में एक सुन्दर मस्जिद का भी निर्माण करवाया गया था, जिसकी मीनार बाहर से भी दिखाई देती थी। महल का दृश्य दूर से स्पष्ट एवं सुहाना नजर आता था। वाजिद अली शाह के अनुसार "सिकन्दर बाग" बिल्कुल स्वर्ग की भांति था—निवास स्थान से नदी के साथ-साथ एक नयी सड़क है—सड़क के दोनों ओर फलदार वृक्ष लगाये गये हैं—सड़क की चौड़ाई इतनी है कि तीन-तीन बग्घियाँ एक साथ निकलें तो भी कोई आपत्ति न हो—बल्कि फिर भी बग्घियों के दोनों तरफ एक-एक गज सड़क शेष रह जाती है।"

सिकन्दर बाग का निर्माण होने के पश्चात इसमें नवाब सिकन्दर बेगम जीवन पर्यन्त रहीं। उनका कोई वारिस नहीं था, इसलिए उनकी मृत्यु के बाद यह सरकार के स्वामित्व में आ गया।

———

अध्याय--७

सांस्कृतिक अभिरुचि और देन

अंग्रेजों ने अवध के साम्राज्य और उसकी प्रतिष्ठा को धूल-धूसरित करने में कोई कोर-कसर बाकी नहीं रखी थी पर यदि ऐसा न होता तो संभवतः इतिहास की परतों में वाजिद अली शाह दबा रह जाता और उसकी उन परतों के ऊपर कम्पनी राज्य के वैभव के रंग-महलों का निर्माण हो जाता। लेकिन ऐसा नहीं हुआ क्योंकि वाजिद अली शाह इस छुपी हुई परतों में से एक ऐसा अनोखा व्यक्तित्व होकर निखरा जो इतिहास के पृष्ठों पर स्मरणीय है। उसके शासन काल में जो नृत्य, गायन, स्थापत्य, साहित्य और शिक्षा के क्षेत्र में प्रगति हुई वही उसे महान बनाने के लिए पर्याप्त कही जा सकती है। वाजिद अली शाह की बहुमुखी कला प्रतिभा और रुचि ने अवध और विशेष रूप से लखनऊ को सभ्यता और संस्कृति का केन्द्र बनाने का प्रयास किया।

धर्मशास्त्र का पालन करने वाले पिता अमजद अली शाह ने अपने पुत्र वाजिद अली शाह को भी विद्वानों की संगति में रखकर अपने जैसा बनाना चाहा था और यह रंग किसी सीमा तक वाजिद अली शाह पर चढ़ा भी और उम्र के ढलने के साथ ही अधिक से अधिक खिलता गया। पिता अमजद अली शाह का इसमें कुछ जोर न चला कि सल्तनत के वारिस राजकुमार की स्वाभाविक प्रवृति जो विलासिता और ललित कलाओं की ओर थी, में कुछ सुधार आ सके। यद्यपि पिता के आग्रह के कारण वाजिद अली शाह लिखने-पढ़ने में भी अच्छा था, परन्तु संगीत का शौक उस पर हावी था। अपने पिता की इच्छाओं और अभिलाषाओं के विपरीत वाजिद अली शाह ने अपने युवराजत्व काल ही में अपनी व्यक्तिगत रुचि से गवैयों और ढोरियों को अपने साथ रखकर गाना-बजाना सीखा। आवारा औरतों और डोम-ढोरियों से सम्पर्क बढ़ाया जिसका परिणाम यह निकला कि जो आनन्द उन्हें सुन्दर स्त्रियों और गवैयों की संगति में आता था वैसा ज्ञान-विज्ञान की सभ्य मंडलियों में न आता था।

वाजिद अली शाह अपना अधिकतर समय गायकों, वेश्याओं, नर्तकियों और डोमों के संगीत में व्यतीत करता था। उसकी संगीत-प्रियता का स्तर अद्वितीय था। उसने स्वयं भी इस कला में निपुणता प्राप्त करने के लिए प्रशिक्षण प्राप्त किया।

वाजिद अली शाह ने संगीत की शिक्षा उस समय के प्रसिद्ध संगीतज्ञ गुरू वारिस खान् से ली थी और वह उसमें पूर्ण मर्मज्ञ हो गये थे। अपनी प्रखर बुद्धि के कारण बादशाह ने अपने ही ढंग से नयी राग-रागनियां बनायी थीं। इन राग-रागनियों के नाम अपनी रुचि के अनुसार ही रखे, जैसे जोगी, कन्नड़ (श्याम), जूही, शाहपसंद आदि। वाजिद अली शाह इस कला के आचार्य माने जाते थे।

सितार वादन का प्रशिक्षण उसने उस समय के प्रसिद्ध सितार वादक कुतुब अली खान् से लिया था। वह स्वयं उल्लेख करता है "इस व्यक्ति को मैंने सितार सीखने के लिए अपना गुरू नियुक्त किया और उससे वह कला इतनी ग्रहण की कि कई बार श्रोता चकित रह गये—लोग हंसते-हंसते रो देते देते थे और रोते-रोते हंस देते थे-- यदाकदा स्वयं कुतुब अली खान् मेरे को चूमता था—मैंने इस कला को अपनी चरम सीमा तक पहुँचा दिया था— इसी समय से कुतुब अली खान् मेरा मित्र और सहयोगी हो गया था।"

वाजिद अली शाह ने नृत्य का भी प्रशिक्षण लिया। कहा जाता है कि उस समय के ख्याति प्राप्त नर्तक दुर्गा प्रसाद वाजिद अली शाह के उस्ताद थे। वाजिद अली शाह की नृत्य कला में दक्षता, उसकी नृत्य के निर्देशन की पटुता, जिसका सबसे महत्वपूर्ण उदाहरण उसका रहस में नृत्य निर्देशन करने की अपूर्व क्षमता, से सिद्ध होती है।

लय संगीत का एक महत्वपूर्ण अंग है। लय का बोध थोड़ा बहुत सभी में होता है परन्तु वाजिद अली शाह को लय का बोध बहुत अधिक था जिसे प्रकृति की देन ही कहना चाहिए। जिस व्यक्ति में प्राकृतिक रूप से लय का बोध बहुत अधिक होता है उसके अंग-प्रत्यंग से अनायास क्रियायें प्रकट होतीं हैं और लय पर हर अंग फड़कने लगता है। आम लोगों को यह किया निरर्थक मालूम पड़ती है परन्तु जो वह क्रिया कर रहा होता है वह उसके लिए मजबूर होता है। वह जानबूझ कर ऐसी क्रिया नहीं बल्कि उसके शारीरिक अंग स्नायुतंत्र पर हावी हो रहे संगीत की लय पर स्वतः ही थिरकने लगते हैं। वाजिद अली शाह की ऐसी ही क्रियाओं को लोगों ने कह दिया वह नाचते भी थे, हालांकि वह नाचते नहीं थे, लय के साथ तल्लीन हो जाने पर उनके अंगों से ऐसी क्रियाएं होने लगती थीं जिनको लोगों ने नाचना कह दिया। लय दारी में ऊंचे से ऊंचा गवैया भी वाजिद अली शाह का मुकाबला नहीं कर सकता था। उसके साथ रहने वाले विश्वस्त गवैयों के मुख से सुना गया कि वाजिद अली शाह के पांव का अंगूठा सोते में भी लय पर ही चलता था।

नृत्य जिसे भाव बनाना अथवा अंग्रेजी में "मोशन" कहते हैं, संगीत का एक महत्वपूर्ण अंग है। इसमें अपने मंतव्य को हाव-भाव और संकेतों से व्यक्त किया जाता है। वाजिद अली शाह के लय दारी में मर्मज्ञ होने के कारण उसके हावभाव में नृत्य कला झलकती थी।

वाजिद अली शाह स्वयं व्यवसायिक गायकों की भांति मधुर स्वर में गाता और बजाता था। उसकी संगीत के प्रति रुचि इतनी बढ़ गयी थी कि उसने नृत्य, संगीत, गायन आदि के प्रशिक्षण की व्यवस्था सुचारू रूप से प्रारम्भ की। वह स्वयं उल्लेख करता है "मैंने परम्परा के अनुसार सौन्दर्ययुक्त, आकर्षक एवं परी की भांति युवतियों के लिए संगीत कला का प्रबन्ध किया। जब वह गाने लगतीं हैं तो चारों ओर मधुर ध्वनि गुंजरित होने लगती है और ऐसा प्रतीत होता है कि आत्मा शरीर

से निकलने को तत्पर हो रही हो जब नृत्य के वस्त्र धारण किये जाते हैं तो मानो अग्नि की पूजा करने वालों की भांति उसमें समाधिस्थ हो जाते हैं।''

वाजिद अली शाह स्वयं उल्लेख करता है—''जब मैंने उक्त कला को सम्पूर्ण करने का आदेश दिया तो थोड़े ही दिनों में उन परी की भांति युवतियों ने भी ऐसी निपुणता प्राप्त की कि यदि इस कला के गुरू तानसेन और बैजू भी होते तो वह भी उनके समक्ष अपने को निम्न कोटि का अनुभव करते।''

वाजिद अली शाह ने अपनी संगीत के प्रति रुचि के लिए अनेकों युवक युवतियों को नियुक्त किया था जिसका विवरण निम्न प्रकार है :—

४३ युवतियाँ संगीत और नृत्य की शिक्षा प्राप्त कर रही थीं। इनके अतिरिक्त १५ गायक डोम, २ पखावजी, २३ तबला वादक, ४६ सारंगी वादक, २२ मन्जीरा वादक, ६ रक्कास (नृत्य करने वाले) १ मसखरा, २ ढोलक वादक, १ स्वर सिंगार वादक और १९ व्यक्ति उस पद पर नियुक्त किये जाते थे जिनका कार्य ढोल बजाना था। इसके अतिरिक्त सभा को शोभायमान करने के लिए अन्य कर्मचारियों को नियुक्त किया गया था जिनका कुल वेतन रुपया ३२६१/- मासिक होता था। जो ढोमनियां कार्य करती थीं उनके पुरुषों को ''बहारे महफ़िल'' की उपाधि तथा उन्हें ''सरुरे महफिल'' की उपाधि दी गयी थी।

वाजिद अली शाह ने अपनी पुस्तक ''बनी'' में नृत्य और गायन करने वाली स्त्रियों के प्रकारों का विस्तृत वर्णन किया है :—

१. राधा मंजिल भवन वालियों—इनकी संख्या १८ थी और सबके अपने उपनाम भी थे। रहस के समय इन स्त्रियों को बड़ी मात्रा में नृत्य के वस्त्र, जिनमें सोने की जरी की कढ़ाई हुआ करती थी, दिये जाते थे और नृत्य के पश्चात् यह वस्त्र भण्डार गृह में जमा कर दिये जाते थे।

२. रहस वालियाँ—इनको शारदा मंजिल वालियों की उपाधि भी दी गई थी। यह युवतियाँ संख्या में १५ थीं और प्रत्येक के अपने उपनाम थे।

३. सुल्तान खानी वालियाँ—रहस की बड़ी सभा में २४ युवतियाँ, जिनमें प्रत्येक के उपनाम भी थे, अपनी भूमिका का सम्पादन करतीं थीं। इनको सुल्तान खानी वालियाँ कहा जाता था।

४. खास महल वालियाँ हुजूर वालियों की सभा में रहने वाली ऐसी ग्यारह युवतियाँ थीं जिनके अपने उपनाम थे।

५. यौवन से परिपूर्ण मंजिल वालियाँ-इन सब युवतियों को १६ उपनामों से संबोधित किया जाता था।

६. शहंशाह मंजिल वालियाँ—इन युवतियों को ८ उपनामों से संबोधित किया जाता और उनको रहस की शिक्षा से वंचित रखा जाता था।

७. लघु सभा वालियाँ—इन युवतियों ७ प्रकार के उपनाम होते थे और इनका कार्य केवल गायन और नृत्य करना था इनका रहस से कोई संबंध नहीं होता था।

८. आठवीं सभा में ५ प्रकार की युवतियाँ होती थीं।

९. नौवीं सभा में ११ उपनाम की युवतियाँ होती थीं।

१०. दसवीं सभा—इसमें ७ प्रकार के उपनाम की युवतियाँ होती थीं।

११. ग्यारहवीं सभा—यह घूंघट वालियाँ के नाम से भी प्रसिद्ध थीं और इसमें सात उपनाम होते थे।

१२. बारहवीं सभा—नत्थू वालियाँ की थी यह भी ३ उपनामों से प्रसिद्ध थी।

१३. तेरहवीं सभा में भी ७ प्रकार के उपनामों वाली युवतियाँ थीं जो गाने वालियाँ के नाम से प्रसिद्ध थीं।

१४. चौदहवीं सभा में लटकन वालियाँ थीं यह युवतियाँ भी सात प्रकार के उपनामों से प्रसिद्ध थीं।

१५. पन्द्रहवीं सभा—झूमर वालियाँ के नाम से प्रसिद्ध थीं और इसमें भी ७ उपनामों की युवतियाँ थीं जो कानों में मोतियों की माला पहनती थीं।

१६. सोलहवीं सभा—जलनी वालियाँ के नाम से प्रसिद्ध थीं और इसमें भी ७ उपनामों वाली युवतियाँ थीं।

१७. सत्रहवीं सभा—बेसुर वालियाँ के नाम से प्रसिद्ध थी इनमें भी ७ प्रकार के उपनाम वाली युवतियाँ थीं।

१८. अठारहवीं सभा—बन्दियाँ वालियाँ के नाम से विख्यात थी। इन युवतियों के भी सात प्रकार के उपनाम थे। यह वह कवितायें गातीं थीं जिनमें करवला की वीरों के बलिदान का वर्णन किया जाता था।

१९. उन्नीसवीं सभा—मर्सिया वालियाँ के नाम से थी। इन युवतियों के भी सात उपनाम होते थे।

२०. बीसवीं सभा—नकल वालियाँ (स्वाँग रचना) की थी यह युवतियाँ भी सात उपनामों से विख्यात होती थीं।

२१. इक्कीसवीं सभा—में तमाशा (हँसी-मजाक) करने वाली युवतियाँ होती थीं। यह भी सात प्रकार के उपनामों से प्रसिद्ध होती थीं।

२२. बाईसवीं सभा—जो मसाह जीन (वे युवतियाँ ही साथ रहती थीं) इसमें भी सात प्रकार के उपनामों की युवतियाँ होती थीं।

इसके अतिरिक्त १० और भी प्रकार की सभायें होती थीं और उसमें ४३ स्त्रियों को शिक्षित किया जाता था। सभाओं में कुल २१६ नृत्य और गायन करने वाली युवतियों की संख्या थी। इस प्रकार से वाजिद अली शाह के पास प्रत्येक क्षण युवतियाँ उपस्थित रहती थीं और उन्हीं के साथ वह अधिकतर समय व्यतीत करता था।

वाजिद अली शाह के समय में शायरी की चर्चा हद से ज्यादा बढ़ी हुई थी। अकेले लखनऊ में इतने शायर मौजूद थे कि अगर सारे हिन्दुस्तान के शायर जमा किये जाते तो उनकी तादाद भी लखनऊ के शायरों से ज्यादा न होती। "मीर" और "सौदा" की पुरानी शायरी बेकार हो चली थी। अब "नासिख" की जबान और "आतिश" के ख्यालात दिमागों में बसे हुए थे जिनमें "रिन्द" और "साहबा" की सुरा सुन्दरी विषयक शायरी और नवाब मिर्जा "शौक" की मसनवियों ने विषय वासना को बढ़ावा दिया था। इसी प्रकार के विषयों में वाजिद अली शाह की रुचि थी जो उसके स्वभाव के अनुरूप ही था।

वाजिद अली शाह ने इन मसनवियों को देखा और चूंकि वह खुद शायर था अतः इस रंग को अपनाकर अपने बहुत से प्रेम-प्रसंगों और यौवन की सैकड़ों असंगतियों को खुद ही शेर के रूप में ढालकर फैलाने लगा था। अपनी शायरी में वह स्वयं अपने नैतिक अपराधों को स्वीकार करता था। वाजिद अली शाह की तरह किसी ने भी अपने बेशर्मी के अपराधों को न तो स्वीकार ही किया था और न ही स्वयं लोगों के सम्मुख प्रस्तुत करने का साहस किया था। वाजिद अली शाह जोश में आ जाता था तो चाहे शायरी में आगे न बढ़ पाये मगर भावों और विचारों के अपने कारनामों को दुनियाँ के सामने प्रकट करने में नवाब मिर्जा से भी दो कदम आगे निकल जाता था। यहाँ तक कि बाज मौकों पर उसे घृणित बाजारी मजाक और अश्लील शब्दों के प्रयोग में भी संकोच न होता था। उसकी यह मुख्य विशेषता थी कि उसने निर्भय होकर अपने गुप्त भेद, कमजोरियाँ और निजी बातें सभी के सम्मुख खुल कर प्रस्तुत कीं जिसके कारण वह भूत और भविष्य के सभी कवियों से सत्यता को अभिव्यक्त करने की कसौटी पर उच्च कोटि का व्यवित सिद्ध हुआ।

वाजिद अली शाह के विभिन्न दीवान, मसनवियां, मर्सिया और अनेकों कविताओं को देखकर सरलता से यह अनुमान लगाया जा सकता है कि वाजिद अली शाह हर समय अपने साहित्यक कार्यों में लगा रहता होगा। उसने विभिन्न रसों में काव्य एवं साहित्य का सृजन किया है परन्तु उसकी ठुमरियों की लोकप्रियता जिस कोटि की हुई उतनी अन्य पुस्तकों को प्राप्त न हो सकी।

वास्तविकता यह है कि वाजिद अली शाह को लिखकर अपने विचारों को प्रकट करने की बड़ी प्राकृतिक लगन थी। उसने दो दीवान और तीन मसनिवियाँ उस समय लिखीं जब उसकी आयु केवल १८ वर्ष की थी। उसके संपूर्ण जीवन में लेखन कला की लगन इस सीमा तक रही कि उर्दू और फारसी, गद्य एवं पद्य में उसकी पुस्तकों की संख्या लगभग १०० से अधिक थी।

वाजिद अली शाह के काल में लखनऊ के शाही पुस्तकालयों में दो लाख पुस्तकें भरी हुई थीं और पुस्तकालय का प्रबन्ध करने वाले हजारों रुपये पाते थे। पुस्तकों का काफी व्यवहार था। सिंहासनारूढ़ होने के प्रथम वर्ष में ही पुस्तकें बेचने वालों को मनचाहा धन देकर पुस्तकें खरीदी गयीं। मसी उद्दीन खान काकोरी शाही पुस्तकालय

के सम्बन्ध में उल्लेख करता है कि वाजिद अली शाह के शाही पुस्तकालय में दो लाख अत्यन्त मूल्यवान पुस्तकें थी परन्तु १८५७ के स्वतन्त्रता संग्राम के समय जो लूटमार की गयी उसमें अधिकतर पुस्तकालय नष्ट हो गये। अवध के शाही पुस्तकालयों में अरबी फारसी की पुस्तकों के सम्बन्ध में सूची बनाने के लिए लखनऊ के रेजीडेन्ट के एक अतिरिक्त सहायक डा० स्प्रिगंर को नियुक्त किया था जो ३ मार्च, १८४८ से १ जनवरी, १८५० तक लखनऊ में रहा। उसने अपने इस कार्यकाल में दस हजार पुस्तकें देखीं और सूची तैयार की जो चार भागों में विभक्त थी।

वाजिद अली शाह अपनी प्रत्येक पुस्तक को छपवाकर बिना मूल्य लिए वितरित कराता था और उस पर उसके पुस्तकालय की मुहर सिर्फ यह सकेत देती थी कि वह मुफ्त वितरण की गयी किताबों में से एक है।

उपर्युक्त वर्णन से यह अधिक सीमा तक सिद्ध होता है कि वाजिद अली शाह के विरुद्ध जो प्रचार किया जाता है कि वह कामुक एवं विलासिता सम्बन्धी कार्यों में व्यस्त रहता था और इसके अतिरिक्त उसने कोई राजकीय एवं साहित्यक कार्य नहीं किया, इस प्रकार का लांछन लगाना विवेक से परे है। क्योंकि यदि वह हर समय विलासिता की तृप्ति में लगा रहता तो उसे पुस्तकें लिखने का समय कहाँ मिलता, फिर यह भी नहीं कि उसने २-४ पुस्तकें लिखी हों बल्कि १०० से भी अधिक पुस्तकें लिखीं। एक महत्वपूर्ण लेखक ने उल्लेख किया है कि वाजिद अली शाह ने सैकड़ों मर्सिये एवं कलाम कह डाले और इतनी पुस्तकें गद्य और पद्य में लिखी कि संभवत: उनकी गणना करना आज भी किसी से नहीं हो पाया है।

भारतीय भाषाओं के एक प्रसिद्ध फ्रांसीसी विद्वान ने उल्लेख किया है कि वाजिद अली शाह एक उच्च कोटि का लेखक एवं कवि था। वह भारतीय कवियों के आकाश पर चमकते हुए नक्षत्र में से एक था। एक अन्य वाजिद अली शाह का कर्मचारी जो उसकी मृत्यु तक लगभग ११ वर्ष सेवक रहा उल्लेख करता है कि वाजिद अली शाह प्रात: काल से १० बजे तक, ग्रीष्म ऋतु में ११ बजे तक और शीत ऋतु में सायंकाल १० बजे तक लेखन कला एवं अध्ययन के कार्य में व्यस्त रहता था।

वाजिद अली शाह ने अपनी पुस्तक "बनी" में जो १२६२ हिजरी में लिखी थी एक स्थान पर अपनी ४६ पुस्तकों का उल्लेख किया है जिनके नाम निम्नवत् हैं :—

१—अख्तर मलिक	२—अफसाना इश्क
३—इरशाद खकानी	४—ईमान
५—बहर वल हदायत	६—बहरे उल्फत
७—बहरे मुख्तलफ	८—बनी
९—तारीखे मजहब	१०—तारीखे मुमताज
११-—तारीखे खास	१२—तारीखे फिराक

१३—तारीखे मसगली

१४—तारीखे गजाल

१५ – तारीखे नूर

१६—तारीखे जमशेदी

१७—तारीखे दहरे

१८—तज्जलिये इश्क

१९—जौहरे उरुज

२०—हिजने अख्तर

२१—दरियाये अश्क

२२—दस्तूरे वाजदिया

२३—दफतरे हुमायूं

२४—दीवाने मुबारिक

२५—दफतरे परेशां

२६—दुल्हन

२७—सुखन अशरफ

२८—सेवा फैंज

२९—सहीफाये सुल्तानी

३०—सूत उल मुबारिक

३१—इश्क नामा

३३—कम्र मज्जम (उम्र मजमून)

३३—कुलयाते अख्तरी

३४—कुलियाते सौम

३५—गुलदस्ता आशकां

३६—मसूदात हसीनया

३७—महिनामा

३८—मरक्काये फर्ख

३९—मुबाहिसा बैने उल नफस

४०—नाजी

४१—नज्म नामवर

४२—नशाहे अखतरी

४३—हैवित हैदरी

४४—लुगत हफ्त जवान (वह अभी तक अपूर्ण है)

४५—चार-पाँच पुस्तकें मर्सियों की एवं अनेकों कवितायें भी जो करबला के बलिदान करने वालों के सम्बन्ध में लिखी गयीं।

४६—मजमूआ (संग्रहालय वाजदिया)

इस सूची में एक जगह चार-पाँच पुस्तकों का वर्णन एक साथ कर दिया गया है। इस प्रकार यह सूची ४६ पुस्तकों की नहीं बल्कि ५० पुस्तकों की है।

वाजिद अली शाह ने अनेकों गद्य एवं पद्य लिखे हैं। "बनी" के अतिरिक्त उसने कविताओं का एक संग्रह "गुलदस्ता-ए आश्कान" नामक पुस्तक में किया है जिसका वर्णन उसने अपनी "बनी" पुस्तक में किया है। इस पुस्तक को मोहमदी में मुंशी मोहम्मद हुसैन ने प्रकाशित किया। इस संग्रह में वाजिद अली शाह "अख्तर" की गजलों को बड़ी आकर्षक भाषा में लिखा गया है।

वाजिद अली शाह की शैक्षिक योग्यता और लेखन के सम्बन्ध में अध्ययन किया जाए तो यह ज्ञात होगा कि वाजिद अली शाह अपने काल के कवियों से किसी भी क्षेत्र में पीछे नहीं था। वाजिद अली शाह की कविताओं के सम्बन्ध में अबउललैस सिंधी अपनी पुस्तक "दीवाने उर्दू" में लिखते हैं कि "वास्तव में बादशाह को केवल दो प्रकार की

कलाओं से प्रेम था कि एक संगीत और दूसरी कविता। संगीत में उन्होंने जो विशेषताएं प्राप्त की उसका प्रभाव अब भी पाया जाता है। वाजिद अली शाह के काल में शाही महल में कवि सम्मेलन धूम-धाम से होता था जिसमें अच्छी प्रकार की साज सज्जा होती थी और जिसमें दरबार के अधिकारी सम्मिलित होते थे।" वाजिद अली शाह की कविताओं में प्रारम्भ से अन्त तक यह स्थिति है कि कोई भी शब्द बेजोड़ नहीं है और न असंगत हैं। उसकी कविता उस समय की कविताओं की भांति ही थी। जब उसकी कविता की तुलना बर्क, अमीनत, आर्तिश, अनीक्ष, बहर, अमीर इत्यादि की कविताओं से करते हैं जो उसके दरबारी कवि थे तो यह मानना पड़ता है कि उसकी कविता का रूप किसी प्रकार भी उनसे कम नहीं है। बल्कि अमीनत इत्यादि की तुलना में उसकी कविता उच्च कोटि की है।

अब्दुल हलीम 'शरर' लिखते हैं कि यह सम्भव न था कि कोई पद अव्यवस्थित होता एवं बहर एक समान थी यही उसकी कविताओं का गुण था। वाजिद अली शाह की कविता भली बुरी जैसी भी है उसी की है उसमें से एक शब्द किसी अन्य का नहीं है। उसके पद्य की इतनी चर्चा थी कि उसके दरबार में कोई एक शब्द गलत नहीं बोल सकता था। बादशाह लेखक कवि और साहित्यकार का बहुत सम्मान करता था। वाजिद अली शाह का दरबार अब्दुल हलीम 'शरर' के शब्दों में पूर्वी सभ्यता का नमूना था। यह दरबार १८४७ से १८५६ तक स्थित रहा। १७०० लेखक, ५०० डाक्टर, १५० चौबेदार उनके नौकर थे। इससे यह अनुमान लगाया जा सकता है कि बादशाह की अभिरुचि किस ओर थी। वाजिद अली शाह जब उत्तराधिकारी नियुक्त हुए तो उन्होंने कविता में शिष्य बनना स्वीकार किया। वाजिद अली शाह के पश्चात कवियों के सम्मान में कोई कमी नहीं आयी। एक फ्रान्सीसी विद्वान वाजिद अली शाह के सम्बन्ध में अपने विद्यार्थियों से कहता है कि मुझको वाजिद अली शाह से यह अभिरुचि हुई है कि वह एक उच्च कोटि का लेखक और अच्छा कवि है उसका उपनाम "अख़्तर" है। स्वयं वाजिद अली शाह के अभिलेखों से उसकी साहित्यिक रुचि का पता चलता है। बादशाह अपनी एक बेगम "मुमताज जहाँ नवाब" अकलील महल को अपने पत्र १७, ज़ीक़द, १२७५ हिजरी में लिखता है कि मैं विस्तृत रूप से अपने सम्पूर्ण अभिलेखों को एकत्रित कर रहा था। इस कारण मुझे फुरसत नहीं है और जब मुझे फुरसत मिलेगी तो मैं अपने हाथ से पत्र लिखूंगा और इसी प्रकार से वह एक अन्य पत्र में बेगम गजाला को भी यही बात लिखता है।

वाजिद अली शाह पर लेखक के रूप में त्रुटिपूर्ण लांछन लगाया जाता है कि उसने अपने जीवन काल में अन्य व्यक्तियों से पुस्तकें लिखवाकर स्वयं के नाम से उद्धरित कीं। जैसा कि मौलवी अब्दुल हक का उल्लेख है कि "वाजिद अली शाह का विचित्र स्वभाव था कि वह अपने पुस्तकालय में जाकर इधर-उधर से कुछ पुस्तकें उठा लेता और पुस्तक खोलकर कुछ पृष्ठ नकल कर नयी पुस्तक बना देता। इसी प्रकार से जो पुस्तक समक्ष

आयी उसमें से कुछ हिस्से नकल कर लिया—बादशाह की पुस्तकें इसी प्रकार से लिखी जाती थीं।''

उपर्युक्त लांछन गलत प्रतीत होता है क्योंकि जिन्होंने वाजिद अली शाह की पुस्तकों के चन्द पृष्ठ पढ़ लिए वह स्वयं वता देगा कि इसका लेखक कौन है। वाजिद अली शाह जिस प्रकार निर्भय होकर और स्पष्ट रूप से निजी भावों को व्यक्त करता था और अपने वर्णन को वह जिस लक्ष्य से प्रस्तुत करता था उस प्रकार से और कोई दूसरा नहीं कर सकता।

सैयद मसूद हसन रिजवी सायेदाव के अनुसार उसने वाजिद अली शाह की लगभग ७० पुस्तकों का अध्ययन किया था और उनमें से एक पुस्तक भी ऐसी नहीं है जिस पर मौलवी अब्दुल हक का कथन सत्य सिद्ध होता हो।

वाजिद अली शाह को साहित्य सृजन की विशेष धुन थी। उसमें साहित्यिक प्रतिभा की भी कमी नहीं थी। वाजिद अली शाह ने लाखों शेर लिख डाले जिनके छः दीवान अभी भी उपलब्ध हैं। वाजिद अली शाह ने 40 से अधिक ग्रन्थों की रचना की और बहुत सी मसनवियाँ और ठुमरियाँ लिखीं जिनका विस्तृत विवरण पहले दिया जा चुका है। वाजिद अली शाह ने उर्दू और फारसी में कई कसीदे लिखे थे। वाजिद अली शाह की रचनाएं उसके गद्य एवं पद्य दोनों में उसकी दक्षता को सिद्ध करती हैं। उसकी शैली में भाषा व भावना का संगीत भरा मिलता है। उसके बोलने व लिखने की उत्कृष्ट प्रवृत्ति की सभी ने प्रशंसा की है। उसकी भाषा में लचक का एक खास अन्दाज होता था। उसकी कविता में कोई भी मिसरा वहर से अलग नहीं है और न ही अतुकान्त है। वाजिद अली शाह की रचनायें स्वयं उसकी ही हैं उनकी भावनात्मक विशेषता स्पष्ट वादित है। किसी प्रकार का लाग-लगाव या दुराव छिपाव उसमें नहीं था। उसकी काव्य कला का वर्णन उद्धरणों के बिना सम्भवतः अधूरा ही रहेगा। यहाँ उसकी कुछ रचनाओं के अंश प्रस्तुत हैं।

सुरों की उपज हो तरन्नमुम के साथ
हिलें होठ मुतरिब के कुमकुम के साथ
खरज का वकार और सुरों की लकीर
व ताने कि जिनसे पड़े दिल पै तीर।

× × ×

कैद होने से कहीं बूए रियासत जाएगी
लाख गर्दिश आसमां को हो जमीं होता नहीं।

× × ×

दरे फ़ानी में इश्के हक बाक़ी
उसके नामों का है सबक़ बाकी

पान खा कर जमाई है मिस्सी
सरे शब है मगर शफ़क़ बाकी।

× × ×

सखावत क्या करूँगा दागहाये जिस्मे उरियां से
खजाने में वे मुहरे जमां हैं जो बंट नहीं सकती।
तवक़्क़ो सुबह होने की किसे होती है फुरक़त में
वह राहें हिज्र की हैं ऐ ख़ुदा हो कट नहीं सकती।

× × ×

यह शमा नहीं है कदे जानना है उसका
दिल सूरते परवाना है दीवाना है उसका।

× × ×

रगे गुले गुलशन को कभी याद न करना
ऐ मुर्गे क़फस शिकवए बेदाद न करना।
ऐ बादे सबा तुझको कसम दश्ते जुनूं की
खाके दिले पजमुर्दा को बरबाद न करना।
गुलशन में सरेगुल से न छू जायं तेरे पांव
यह बे अदबी बुलबुले नाशाद न करना।
दिल लेके मेरा कहने लगा वह शहे ख़ूबी
उजड़ा हुआ किश्वर है ये आबाद न करना।
ऐ दिल ये नसीहत किसी नासेह की है सुन ले
भूले जो उसे उसको भी तू याद न करना।

× × ×

नसीब फतह हो या हो मुझे शिकस्त अख्तर
ख़ुदा बचाये हुआ सामना मुहब्बत का।

× × ×

हमारी मोमदिली का असर नुमायाँ हो
बुतों के दिल को ख़ुदा दे मजा मुहब्बत का।

× × ×

सदमां न पहुंचे कोई मेरे जिस्मे जार पर
आहिस्ता फूल डालना मेरी मजार पर
लाग़र वह हूं समाता नहीं मजार पर
लाग़र वह हूं समाता नहीं चश्में यार में

मजनू को भी हसद है मेरे जिस्में ज़ार पर
हरचन्द खाक में थे मगर ता फ़लक गया
धोखा है आसमान का मेरे गुबार पर
खटका खिज़ां का बागे जहाँ में लगा रहा
देखा कभी न गुलशने दुनियां बहार पर
क्यों तूल इस गज़ल को दिया बुत खफ़ा हुए
"अख्तर" खुदा का शुक्र है इस इख़तिसार पर।

× × ×

उड़े बाग से बागबां कैसे कैसे
खिज़ा हो गये बोसतां क़ैसे कैसे।
खुदा के लिए अपनी ज़ुल्फ़ें उठाओ
यहाँ कैद हैं बेज़ुबां कैसे-कैसे।
बड़ी खाकसारी से इज्जत बसर की
जमीं पे मिले आसमां कैसे-क़ैसे।
वह चितवन, वह आबरू, वह क़द, याद सब है
सुनाऊं मैं गुजरे बयां कैसे-कैसे।
रहा इश्क से नाम मजनूँ का वरना
तहे खाक में बेनिशां कैसे-कैसे।
कलेजे में अख्तर फफोले पड़ें हैं
मेरे उठ गये कद्रदां कैसे-कैसे।

× × ×

रबिशें छानेंगी गुलशन में सबा मेरे बाद
बुलबुले भूलेंगी फूलों की दुआ मेरे बाद।
सर्व गड़ गड़ गए फव्वारे लहू रोते हैं
खाक उड़ी बाग में क्या क्या न हुआ मेरे बाद।
क़त्ल क्यों करते हैं वो दस्ते निगारी से मुझे
तेज होगा न कभी रंगे हिना मेरे बाद।
याद करना मुझे ऐ रश्को गुलो सर्वे चमन
बूए गुल से हों जिस वक्त जुदा मेरे बाद।
महफिले मेहर में क्या कोई चमक जाएगा
किसी अख्तर का लगेगा न पता मेरे बाद।

× × ×

उपरोक्त उद्धरणों से वाजिद अली शाह की काव्यात्मकता, भावाभिव्यक्ति और शैली को सुलभ रूप में स्पष्ट किया गया है।

वाजिद अली शाह को स्वयं तो लिखने का शौक था ही इसके अतिरिक्त वह अन्य शायरों का भी सम्मान करता था। उन्हें प्रोत्साहित करता रहता था। उसके दरबार में अनेक कवि और शायर प्रश्रय पाते थे। असीर, बर्क, ख्वाजा, असद, कलक, जकी, दरख्शां, कबूल, शफक, बेखुद, हुनर आदि उसके दरबार में रहते थे और उनको यथोचित सम्मान प्रदान किया जाता था।

वाजिद अली शाह ने अपनी "वनी" नामक पुस्तक में अपनी अन्य कविताओं के संग्रह "गुलदस्ता-ए-आश्कान" का वर्णन किया है। इस पुस्तक को १२५६ हिजरी में मुंशी मुहम्मद हुसैन ने मोहमदी से प्रकाशित किया। इस संग्रह में वाजिद अली शाह ने गजलों को बड़ी ही आकर्षक भाषा में लिखा है।

वाजिद अली शाह के काल में न केवल साहित्य को ही विशेष महत्व प्रदान हुआ परन्तु अन्य कलाओं जैसे नृत्य, संगीत आदि पर भी ध्यान दिया गया।

वाजिद अली शाह के काल में नृत्य बहुत लोकप्रिय था। वाजिद अली शाह को नृत्य के प्रति रुचि और आदर को व्यक्त करते हुए एक तत्कालीन नर्तकी का उल्लेख मिलता है जिसके अनुसार "साधारणतः जागीरदार अपनी वासना तृप्ति के लिए नर्तकियों को रखते थे परन्तु उनमें एक ऐसा व्यक्तित्व भी था जो वास्तव में कला का पुजारी था जिसने कथित नर्तकी की निर्मलता को स्थित रखने में पूरा योगदान किया वह था वाजिद अली शाह अख्तर।" वाजिद अली शाह ने स्वयं भी ठाकुर प्रसाद और दुर्गा प्रसाद से नृत्य कला को भली भाँति समझा था। स्वयं नृत्य निर्देशन भी करते थे। ठाकुर प्रसाद के दो पुत्र कालिका प्रसाद और बिन्दादीन ख्याति प्राप्त नर्तक थे। वाजिद अली शाह के संरक्षण में ही इन दोनों नर्तकों ने नृत्य की प्राचीन परम्परा को कायम रखा। परीखाने में और पदच्युत होने के बाद मटिया बुर्ज में भी वाजिद अली शाह ने परियों और बेगमों के लिए नृत्य प्रशिक्षण की सुचारु व्यवस्था की थी।

वाजिद अली शाह को संगीत का भी बहुत शौक था। उसने स्वयं भी सितार बजाना सीखा था। इसके अतिरिक्त मुहर्रम के अवसर पर स्वयं "ढोल ताशा" बजाना उसका प्रिय शौक था। संगीत के ज्ञान के कारण उसने ठुमरियां लिखकर उनका प्रचलन किया जो आज तक प्रचलित है।

वाजिद अली शाह को गायन बहुत अच्छा लगता था। यहाँ तक कि चाहे देखने में कितनी ही आकर्षक स्त्री हो वह तब तक उसको नहीं भाती थी जब तक उसे गाना न आता हो। वह उन परियों को ही अधिक महत्व प्रदान करता था जो श्रेष्ठ गायिकाएँ थीं और मधुर कण्ठ से गाया करती थीं।

वाजिद अली शाह के उत्तराधिकारी काल में मीर अहमद अली शाह व उसका पुत्र मीर गौहर अली नौकर हुए। दोनों ही ध्रुपद राग गाने में विशेष निपुणता रखते थे। गौहर अली संगीत में वाजिद अली शाह का शिष्य था, इसलिए उसकी महत्ता बढ़ती गयी। वाजिद अली शाह स्वयं लिखता है—

"...... धीरे-धीरे वह मेरे पास सबसे अधिक बैठने लगा और बेधड़क वह मेरे पास आ जाता था ।"

वाजिद अली शाह को नृत्य कला की रुचि इस हद तक थी कि उसने सदैव कलाकार की कला-प्रवीणता के आधार पर उसे सम्मान दिया । ख्वाजासराओं को संगीत के कारण विशेष पद और सम्मान प्राप्त हुआ । बहुत से ख्वाजा सराओं को प्रशासन और सेना में महत्वपूर्ण पद देकर उनका सम्मान किया । वाजिद अली शाह उन्हें बहुत योग्य और वफादार समझता था ।

वाजिद अली शाह का सितार गुरू कुतुब अली खान संगीत सम्राट तानसेन के परिवार से सम्बन्धित था । हैदर खान मुहम्मद, प्यारे खान आदि मशहूर संगीतिज्ञ थे । इनके अतिरिक्त न्यामत उल्लाह खान, निजाम उद्दीन, इहमऊ खान, मुहम्मद अहमद खान ने भी संगीत में अपनी निपुणता से ख्याति अर्जित कर रखी थी । मुख्य मंत्री की पुत्री नवाव मीनी आरा बेगम जल तरंग बजाने में बे-मिसाल थी । मोहम्मद तबला वादन में निपुण समझा जाता था । मृदंग और ढोल बजाने में पंडित भैरो दत्त दरियाबादी मशहूर था । पखावज में मेंहदी हसन खान्, सितार में गुलाम मुहम्मद खान् और सारंगी में शरी दरियाबादी सबका मन मोह लेते थे । कथा वादन में सूरज दीन बहुत निपुण या । इनके अतिरिक्त और भी गुणवान कलाकार थे । नृन्य में ऊपर वर्णित कलाकारों के अतिरिक्त बेनी प्रसाद, मुगल जान (महिला) खुदाबख्श (नर्तकी) आदि आश्चर्य चकित कर देने वाला नृत्य करते थे ।

वाजिद अली शाह ने नर्तकों और वादकों को महत्वपूर्ण कार्यों के लिए नियुक्त किया था । मीर मोहम्मद मेंहदी को अमीर उल उमराव की उपाधि दी गयी । शेख मुहम्मद बख्श को छोटे खां की सहायता के लिए नियुक्त किया गया था । भवन निर्माण पुरस्कार गुलाम रज़ा खां को दिया गया और उसकी सहायता के लिए, मसूद अली बेग को बाग के दरोगा के पद पर नियुक्त किया गया । हुसैन अली को अली नकी खान के माध्यमों से हुजूर बाग और मुबारिक बाग को दरोगा का पद दिया गया । छोटे खान को रास का दरोगा बनाया गया । इसी प्रकार सावत अली खान को रास मंजिल मकान आशकाने पसन्द, मकाने माशूक पसन्द आदि को दरोगा नियुक्त किया गया । सिकन्दर बाग के निर्माण कार्य के लिए भी सावत अली खान, गुलाम रजा खान और मुहम्मद मोतमद अली खान की सेवाएं प्राप्त की गई थीं ।

वाजिद अली शाह के समय में विभिन्न क्षेत्रों में निपुण एवं अनुभवी कलाकार थे । नृत्य, गायन, संगीत और काव्य के अतिरिक्त अनेक कलाओं के कलाकारों की उस काल में भरमार थी । प्रत्येक कला को प्रतिष्ठित और सम्मानित स्तर पर दिलाने में वाजिद अली शाह ने व्यक्तिगत रुचि ली । आम लोगों में इस रुचि के प्रति रुझान उत्पन्न करने का और उन्हें प्रोत्साहित करने का महत्वपूर्ण कार्य किया । लाठी डण्डा, तलवार, गोली आदि चलाने की कला ने भी उच्च कोटि के स्थान को प्राप्त किया । इनमें मीर जाफर, मोहम्मद अली, मुहम्मद मेंहदी, महाराजा दिग्विजय सिंह, मुहम्मद रशीद, नवाब

जहाँपनाह महल, मीर साहिब, मिर्जा अहमद बेग, मीर विलायत अली आदि ने विशेष ख्याति अर्जित की थी।

निशाने बाजी में मुहम्मद रशीद इतना निपुण था कि शीशे पर फूल रख कर निशाना लगाता था तो फूल उड़ जाता और शीशा ज्यों का त्यों बना रहता था।

शारीरिक शक्ति और शरीर सौष्ठव में मुर्तजा खान लखनवी, इमदाद हुसैन, कुदरत उल्ला बेग, रसीदा खानुम, साठका, अहमद हुसैन, शहंशा इत्यादि विख्यात थे। साठका नाम व्यक्ति एक दिन में १२० मील तक चला जाता था। साठका की टागें इतनी शक्तिशाली थीं और चलने की गति इतनी तीव्र थी कि वह दरियाबाद जाकर फिर लौट आता था। अहमद हुसैन नाम का व्यक्ति इतना शक्तिशाली था कि हाथी की दुम पकड़ लेता था तो उसे आगे नहीं बढ़ने देता था। जब वह हाथी की नाक पर घूंसा मारता तो वह चिंघाड़ने लगता था।

घुड़सवारी की कला पर वाजिद अली शाह के समय में विशेष ध्यान दिया जाता था। इस कला में प्रवीण कुछ व्यक्तियों के नाम इस प्रकार हैं :—पहाड़ खान, सादिक हुसैन, पूरन लखनवी, बब्बर अली, नवाब हुजूर आलम, हैदर खान बंगलिश, बन्दा अली खान आदि।

तैराकी और गोताखोरी में प्रवीण व्यक्तियों में मिर्जा मौलवी मेंहदी, मीर शब्बर अली, शेख बदलू आबिद अली आदि के नाम उल्लेखनीय थे।

वाजिद अली शाह के काल में चित्रकारी की कला की भी प्रगति हुई। इस कला को आगे बढ़ाने वालों में काशीराम, मीर मुहम्मद अली, मुशव्वर उद्दौला, काजिम हुसैन आदि मुख्य थे जो हर प्रकार का चित्रण करने में निपुण चित्रकार थे।

वाजिद अली शाह के समय में लेखन कला बहुत आकर्षक थी। ऐसा लगता था जैसे चित्रण किया गया हो। वाजिद अली शाह स्वयं भी बहुत अच्छे हरूफ लिखा करता था। हस्त लेख में तहरीर लिखने वाले व्यक्तियों में प्रमुख अहमद और सैयद वैतुल आबदीन खान आदि थे। जो अंग्रेजी, उर्दू, फारसी में इतनी तीव्र गति से लिख सकते थे कि १५ मिनट में १६ पेज तक लिख लिया करते थे।

रंग रेज, दर्जी इत्यादि और वस्त्रों की कढ़ाई के कलाकारों में शेख इलाही बख्श, शेख मुहम्मद आदि बहुत प्रसिद्ध हुए। चिकन की कढ़ाई व छापे आदि विशेष प्रसिद्ध थे।

उस समय के मिष्ठान बनाने वालों का भी विशेष उल्लेख मिलता है। रेबड़ी बनाने में कल्लू का नाम और मिठाइयाँ बनाने में अमीरन, सैयद महमूद हुसैन खान, शेख फिदा अली के नामों की चर्चा थी। इनकी मिठाई के लिए कहा जाता था कि इनकी मिठाइयाँ नारंगी की भाँति प्रतीत होती थीं। शेख हैदर बख्श, हुसैन अली, एकराम अली आदि भिन्न-२ प्रकार के भोजन और मिठाइयाँ तैयार करने के लिए मशहूर थे।

वाजिद अली शाह के समय में मिट्टी के खिलौने, गुड़िया आदि बनाने का विशेष प्रचलन था। लघु उद्योगों का महत्व और प्रचलन बढ़ने लगा था। लखनऊ के दस्तकार वहुत अच्छे और आकर्षक खिलौनों आदि का निर्माण करते थे। ऐसे ही फैजाबाद के खिलौने पूरे भारत में प्रसिद्धि प्राप्त कर चुके थे।

वाजिद अली शाह के काल में प्रारम्भ में (१८४८) ही लखनऊ में १२ छापेखाने, "लिथोग्राफी" के स्थित थे। इन छापेखानों में धार्मिक और अन्य प्रकार की सभी पुस्तकें छापी जाती थीं। वाजिद अली शाह के समय में लखनऊ में छपाई का काम बड़ी तेजी से चल रहा था। फारसी और अरवी के सैकड़ों धर्म ग्रंथ और पाठ्य पुस्तकें प्रतिवर्ष छपने लगी थीं।

छपाई के अतिरिक्त अखबारों का भी काफी प्रचलन हो गया था। १८५० ई० में इन छापेखानों से कई नवीन पत्र पत्रिकायें प्रकाशित होने लगी थीं। आगरा, बनारस और बरेली की भांति लखनऊ से भी तिलस्म, शह्रे सांवरी, अवध आदि अखबार निकलते थे।

पुस्तकालयों की भी स्थापना हो चुकी थी। वाजिद अली शाह के समय में कई पुस्तकालय लखनऊ में थे। आसकी पुस्तकालय में तो लगभग ३० हजार से अधिक पुस्तकें उपलब्ध थीं। अमीर उमरा तथा साहित्यिक अभिरुचि वालों के अपने पुस्तकालय भी थे। वाजिद अली शाह को स्वयं भी पुस्तकों में विशेष रुचि थी और उसके निजी पुस्तकालय में हजारों की संख्या में पुस्तकें उपलब्ध थीं।

वाजिद अली शाह यद्यपि एक राष्ट्रनायक के रूप में असफल रहा किन्तु उसे एक महान व्यक्तित्व के रूप में सदैव स्मरण किया जाएगा। उसके शासन काल में संगीत, साहित्य, कला, शिक्षा इत्यादि के क्षेत्र में पर्याप्त प्रगति हुई जो उस युग की सम्पन्नता का द्योतक है। बादशाह चाहे कितना ही कामुक क्यों न हो लेकिन उसके प्रेम-प्रसंग अपराध प्रवृत्ति पर निर्भर नहीं थे। उसने किसी भी लड़की से वासना पूर्ति के लिए न प्रेम किया न अनुचित सम्बन्ध रखा। वह अपनी प्रेमिकाओं से पवित्र प्रेम रखता था इसीलिए उसको भांति-भांति की उपाधियों और पदवियों से विभूषित किया करता था। इससे स्पष्ट होता है कि वह सौन्दर्य का उपासक था। उस समय की कला में उसकी यह प्रवृत्ति स्पष्ट झलकती है। वाजिद अली शाह ने जिस साहित्य और कला को प्रोत्साहित कर उत्कृष्ट स्तर पर पहुँचाया उस सम्वन्ध में, जोश मलियाबादी ने लिखा है—

"याद तो होगी वह मठिया बुर्ज की वह दास्तां,
अब भी जिसकी खाक से उठता है रह-रह कर धुंआ।
तुमने केसर बाग को देखा तो होगा बारहा,
आज भी आती है जिससे हाय अख्तर की सदा।

राजनैतिक दृष्टिकोण से भले ही वाजिद अली शाह को अक्षम और अयोग्य सिद्ध करने में इतिहासकारों को सफलता मिल जाती है पर उसके अपने १० वर्षों के

शासन-काल में अवध और विशेष रूप से लखनऊ में कला, सभ्यता और सांस्कृति को जो रूप प्रदान किया, उससे लखनऊ की सभ्यता, कला और संस्कृति विश्व में विख्यात हो गई। उसी की कला प्रियता के आकर्षण के कारण लखनऊ में बाहर से आ-आकर लोगों ने निवास करना प्रारंभ किया। इसी लखनऊ की आत्मीयता पर भाव विभोर होते हुए किसी कवि ने खूब कहा है—

"लखनऊ हम पर फिदा
और हम फिदाय लखनऊ
क्या है जुरअत आसमां की
जो छुड़ाए लखनऊ।"

जाने आलम लखनऊ के सबसे सदर आशिक माने जाते हैं। ये और बात है कि उनकी तकदीर में अपने माशूक शहर से जुदा होना ही लिखा था। कुछ भी हो इस पर छा जाने की उसकी अभिलाषा का एक सबूत यह है कि उसने अवध टकसाल के सिक्के को मछलीदार का नाम दिया था। साथ ही साथ लखनऊ को एक नया नाम देना चाहा था "अख्तर नगर"। प्रसिद्ध है 'अख्तर' वाजिद अली शाह का उपनाथ था और जिस नाम के सहारे उसने अपनी साहित्यिक योग्यता का अच्छा परिचय दिया।

हुगली के किनारे मटियाबुर्ज में आबाद होने पर भी वो कोई दिन न गया जिस दिन बादशाह ने अपने लखनऊ को और लखनऊ वालों को याद न किया हो :—

ये शबे तार के मानिन्द हमारे अहबाब।
छुप गये बादे फ़ना आँख से सारे अहबाब॥
वो वतन याद है गुरबत में सारे अहबाब।
हाय, कब मुझसे मिलेंगे मेरे प्यारे अहबाब॥
यही तशवीश शबो रोज है बंगाले में।
लखनऊ फिर भी दिखायेगा मुक़द्दर मेरा॥

———

अध्याय—८

अवध का प्रशासन

वाजिद अली शाह ने सिंहासनारूढ़ होते ही अवध प्रशासन में पर्याप्त सुधार करने का प्रयत्न किया परन्तु परिस्थितियाँ उसके प्रतिकूल थीं, जिन पर विजय पाना उसके लिए सम्भव नहीं था। वाजिद अली शाह ने जिस कड़े और निपुण ढंग से शासन आरम्भ किया था उसे अंग्रेज गले के नीचे न उतार पाए और फलस्वरूप वाजिद अली शाह को असफल बनाने के उपाय ढूंढने लगे। अँग्रेज रेजीडेन्ट ने पग-पग पर उसके कार्यों में हस्तक्षेप किया जिससे अवध प्रशासन में खलबली मची रही। उत्तरोत्तर रेजीडेन्ट द्वारा यह हस्तक्षेप इस सीमा तक बढ़ गया कि वाजिद अली शाह को अपने आदेशों को स्वयं निरस्त कर अपमानित होना पड़ा। यद्यपि बादशाह ने प्रशासन में आमूल परिवर्तन का प्रयास किया परन्तु कम्पनी सरकार के हस्तक्षेप से अवध प्रशासन, स्थानीय परम्पराओं, मुगल प्रशासन व अँग्रेजी सलाह पर किए फेर बदलों के मिश्रित प्रशासन का, एक हास्यास्पद नमूना बन कर रह गया।

वाजिद अली शाह ने सिंहासनारूढ़ होते ही प्रशासन में मूल भूत परिवर्तन करने का संकल्प सा लिया इसीलिए उसने प्रशासन के प्रत्येक क्षेत्र में नये-नये प्रयोग करना प्रारम्भ किये। सर्व प्रथम उसका ध्यान सिक्कों की ओर आकृष्ट हुआ। यद्यपि उस समय कई प्रकार के सिक्कों का प्रचलन था, परन्तु उसने एक नवीन प्रकार के सिक्कों का चलन किया। वाजिद अली शाह ने जो सिक्का चालू किया उस पर एक तरफ फारसी का यह शेर लिखा था :—

सिक्काज़द बरसीमोज़र अज फ़ज़्ले ताईदे इलाह।
ज़िल्ले हक वाजिद अली सुलताने आलम बादशाह ॥

सिक्के के दूसरी तरफ एक ताज है। उस पर एक छतरी है जिसके दोनों तरफ दो झंडियाँ खड़ी हैं। और दो अर्द्ध नारी मछलियों ने एक-एक हाथ से सहारा दे रखा है। उसके दूसरे हाथ में चंवर है और भुजाओं में पंख बने हुए हैं। इस ताज के तले एक किले की अलामत है और उनके तले में दो तलवारें खड़ी हैं जिनके कब्जे नीचे की ओर इस प्रकार कायम हैं जैसे त्रिभुज की भुजाएं। इन झंडियों के झंडे इतने लम्बे हैं कि झण्डा तलवार से मिलता हुआ नीचे की ओर अन्त तक चला गया है। हर एक छड़ी व तलवार से भी त्रिभुज की शक्ल बनती है। सिक्के के चारों ओर किनारे से सटी हुई यह इबारत लिखी है :

"ज़र्ब मुल्के अवध बेतुलसलतनत लखनऊ
सन् ४ जलूस मैमनत मानूस"

बादशाह ने अपना खुद नया साल शुरू किया था (वाजिद अली शाह के तख्त के जुलूस का साल) ऊपर जो इबारत लिखी है वह चौथे साल के सिक्के पर है। बादशाह ने वजीर और मस्लेह उल सुल्तान अन्जुमउद्दौला के नाम आदेश जारी किये कि १३ जीकाद १२७१ हिज़री से नया वर्ष आरम्भ होना चाहिए और सम्पूर्ण कार्यालयों में यह आदेश पहूँचा दें कि हिज़री वर्ष के अनुसार उसकी ईस्वीं के सन् लिख जाएं और माह के नाम इस प्रकार निर्धारित किए जायें।

१. माहे वाजिदी २. मुहम्मदी
३. अख्तरी ४. सिकन्दर
५, हुसैनी ६. अश्ना अशरी
७. अम्मानी ८. सनोवर
९. मरातिब १०. मन्सूरी
११. सुलेमान १२. नवी

मुगलों की भाँति अवध के नवाब भी दीवाने आम और दीवाने खास में कार्य करते थे जो बादशाह के अधिकार में थे। इनका प्रबन्ध दो विभिन्न अधिकारियों के अधीन था। दीवाने खास बादशाह के महल के पास स्थित था जिसमें मौखिक या लिखित परन्तु अति-आवश्यक आदेश ही दिये जाते थे और जिसके सम्बन्ध में तुरन्त कार्यवाही आवश्यक समझी जाती थी। शाही महल के प्रबन्ध का उत्तरदायित्व भी इसी दीवाने खास पर था। इसके वरिष्ठ अधिकारी को दीवानखानाये दरोगा के नाम से सम्बोधित किया जाता था।

दीवाने आम दीवाने खास की एक शाखा थी परन्तु उसका प्रबन्ध एक अन्य अधिकारी के हाथ में था जिसे दरोगाये दीवाने आम कहा जाता था जो शाही महल में ही कार्य करता था। जनता के हितों, महत्वपूर्ण मामले, प्रार्थना पत्र, आख्यायें, समाचार इत्यादि इसी विभाग के अर्न्तगत बादशाह के समक्ष आदेशों हेतु प्रस्तुत किये जाते थे। वाजिद अली शाह के काल में अन्जुमउद्दौला, मसलउल सुलतान उस विभाग का अध्यक्ष होता था। सभी पत्र हस्ताक्षर हेतु बादशाह का सचिव, मुजफ्फर अली जिसको तहवीर उद्दौला के नाम से सम्बोधित किया जाता था, के द्वारा प्रेषित किये जाते थे।

दीवाने आम और दीवाने खास के पश्चात मुख्य मंत्री (वजीर) का कार्यालय होता था जिसको दफतरे वजारत कहते थे। प्रत्येक सरकारी आदेशों पर इस कार्यांलय की मुहर लगी होती थी और यदि मुहर नहीं लगी होती तो उस आदेश को अमान्य समझा जाता था। वजीर को अपने विभाग में कर्मचारियों की नियुक्ति एवं पदच्युत करने का अधिकार था और उसके इस कार्य में सहायता के लिए नायब मुदार उल मुहाम, की उपाधि युक्त सर्फउद्दौला गुलाम रजा खान सहायक था। इसके अतिरिक्त कार्यालय के कार्य में सहायता करने के लिए एक दरोगा होता था जो वजीर के द्वारा पारित आदेशों पर मुहर लगाता था और उसे दरोगाये दीवानखानाये वजारत कहते थे। वजीर के

पास एक पेशकार होता था जिसके बहुत अधिकार होते थे और वह पर्यवेक्षक की अनुपस्थिति में सभी पत्रों का निस्तारण करता था। राजा ज्वाला प्रसाद वाजिद अली शाह के काल में वजीर का पेशकार था जो अवध सरकार में एक अनुभवी अधिकारी रहा था उसे ४००/- मासिक वेतन मिलता था।

राजस्व विभाग में दो अन्य सहायक, वजीर की सहायता के लिए थे अर्थात दीवान चन्दी सहाय और गुरुसहाय। इनका कार्य वजीर की ओर से ताल्लुकेदारों, जमीदारों इत्यादि के द्वारा अवध के राजस्व के सम्बन्ध में बन्दोवस्त करना था। वह जनपदों के आमिलों के द्वारा राजस्व ग्रहण का पर्यवेक्षण और राजस्व ग्रहण का लेखा जोखा और अवशेष भी तैयार करते थे। उनको यह भी अधिकार था कि वह राजस्व के गबन के भामलों का पर्यवेक्षण करें और अन्य राजस्व मामलों में भी जो वजीर के समक्ष रखे जाते थे पर्यवेक्षण कर सकते थे। यह संकट कालीन स्थिति में राजस्व की मुआफी एवं कटौती के सम्बन्ध में सिफारिश भी करते थे।

ब्रिटिश रेजीडेन्ट कर्नल स्लीमैन इन दो अधिकारियों को अनिष्ट समझता था। क्योंकि कुछ लोगों ने उन अधिकारियों के सम्बन्ध में उसे यह बताया था कि राजस्व विभाग में जो भ्रष्टाचार फैला हुआ था उसके लिए यह दो अधिकारी ही मूल कारण थे, इसलिए वह इनको अनिष्ट मानता था। क्योंकि वह अनुभवी अधिकारी थे इसी लिये बादशाह उन्हें पदच्युत करने के पक्ष में नहीं था। रेजीडेन्ट क्रुद्ध हो गया और उसने वजीर से भी भेंट करने से मना कर दिया। अली नकी खान ने रेजीडेन्ट के उस दृष्टि-कोण से भयभीत होकर उन पर अभियोग लगवाया कि बलरामपुर के राजा दिग्विजय सिंह से एक समझौता करने के लिए तैयार नहीं हुआ, इसीलिए बादशाह से उन दोनों को पदच्युत करवा कर उनको अपने निवास स्थान में नजरबन्द कर दिया। उनके सहायकों पूरन चन्द्र और शिवचरन लाल की उनके स्थान पर प्रोन्नति की गयी। राजस्व के मामलों में जो वित्त विभाग से सम्बन्धित थे उन्हें महाराजाधिराज बालकृष्ण के अधीन कार्य करना पड़ता था।

वाजिद अली शाह के काल में राज्य में कितने दफतर थे उनकी तालिका नीचे दी जाती है। बादशाह रोज हर महकमे का काम देखता था। इसी से पता चलता है कि राजकाज में उसको कितना परिश्रम करना पड़ता था तथा कितनी दिलचस्पी थी।

संख्या	मुहकमा	काम का विवरण
१.	दीवाने खास	वादशाह की लिखित या मौखिक आज्ञायें यहीं से जारी की जाती थीं। यह दफतर "दरे दौलत सुलतानी" पर था—यानी बादशाह के महल में था।
२.	दफतर बेतुलइंश	गुप्त विभाग तथा राजनैतिक सचिवालय यानी मुंशीखानये—सुलतानी।

३.	दीवाने आम	दीवाने खास दफतर का एक भाग—समाचार पत्रों को यहाँ से समाचार मिलते थे। इसे सूचना सचिवालय कहा जा सकता है।
४.	दफतर खजाना मसरिफ	'वित्त विभाग' आय-व्यय का दफतर। वेतन यहीं से बँटता था उसका आदेश पत्र बनता था।
५.	दफतर विजारत	यह प्रधान मंत्री का दफतर था। सरकारी कर्मचारियों की नियुक्तियाँ, काम से अलग करना, सरकारी खजानों तथा सरकारी हिसाब देखना और मुहर बन्द करना।
६.	सरिश्ते अखवार डयोढ़ियात	इसके हरकारे यानी सम्वाददाता हर जगह पहुँच कर, शाही महलों में भी जाकर खबरें लाते थे यहीं पर खबरें इकट्ठी होकर बादशाह के पास पहुँचायी जाती थीं।
७.	सरिश्ते अखबार कोटगश्ती	खबरों का प्रचार।
८.	सरिश्ते अखबार मुल्की	मुल्क की खबरें देने वाला महकमा।
९.	सरिश्ते रविन्द	नगरों के गश्त का महकमा।
१०.	सरिश्ते अखबार दफतराने बादशाही	शाही महल की खबरें देने वाला महकमा।
११.	दफतर बेतुल इजरा	महकमा मजहबी फरमान।
१२.	दफतर दीवानी	कार्यालय माल।
१३.	दफतर बख्शीगरी	महकमा बख्शी-उल-मुल्क, सैनिक विभाग।
१४.	मुहक्मा सहरे अमानत	दस्तावेजों की रजिस्ट्री का विभाग।
१५.	मुहक्मा अदालत आलिया	उच्चतम न्यायालय।
१६.	मुहक्मा कोतवाल	शहर भर के थाने इस कोतवाली के अन्तर्गत थे। यहीं पर मुकद्दमा फौजदारी के फैसले होते थे।
१७.	मुहक्मे मुराफियय	यह राज्य की सबसे बड़ी अदालत थी जिसके प्रधान न्यायाधीश और न्याय विभाग के अध्यक्ष को मुजतहिदुल-उल-अस कहते थे। राज्य के दान विभाग आदि के भी यही प्रधान होते थे।
१८.	मुंहकमा फ्रन्टिवर पुलिस	अवध सीमान्त पुलिस का महकमा।
१९.	मुहकमा तनकीह मुस्तगीसाने।	महकमा अर्जी सवाल।
२०.	मुहक्मा सद्र थानेदार	वरिष्ठ पुलिस अधिकारी का कार्यालय।
२१.	मुहक्मा जदीद	कर्जे के मुकद्दमों के लिए।
२२.	बेतुज्जर	सिक्के ढालना।

२३.	सरिश्तये नजूल	महकमा नजूल।
२४.	सरिश्तये गंजियात	ट्रान्सपोर्ट विभाग।
२५.	सरिश्तये दवाव	तोपखाना वगैरह।
२६.	सरिश्तये आबकारी	शराब फरोशों से टैक्स। (रईस अपने घर शराब बना सकते थे)

इस प्रकार कुल छब्बीस महकमें थे। इन सब महकमों में सबसे महत्वपूर्ण महकमा दीवाने खास व दफ्तर खजाना मसारिक तथा दफ्तर वजारत था। पर केवल एक ही विभाग ऐसा था जिसके प्रधान केवल अपनी योग्यता के बल पर अन्त तक अपने पद बने रहे। ब्रिट्रश हुकूमत में भी वे नहीं हटाये गये और गदर के जमाने में भी उसी पद पर रहे। गदर के बाद उनको ब्रिटिश सरकार से पेंशन मिली। उनका नाम था अलीरजा खां बेग बल्द मसीता बेग, कोतवाल। उनका बादशाह से अहदनामा था कि अगर किसी का माल चोरी जाये और न दिला सकूं तो उसकी कीमत अदा करूँगा। ये बड़े मुन्तजिम व नेक़ नाम अफसर थे। बादशाह ने उनके काम से खुश होकर उनको "मुन्तजमिस्सुलतान मुहम्मद अली रजा खां बहादुर" का खिताब दिया। अन्य सभी प्रधान बदलते गये महाराजा बालकृष्ण को छोड़कर।

उस समय के इतिहास "सलातीने अवध" में भी स्वीकार किया गया कि बादशाह सुबह तड़के उठकर नमाज पढ़ने के बाद दौलतखाना महल में अपनी माता मल्का किश्वर से मिलने जाते थे और शासन के अहम मसलों पर उस चतुर महिला से परामर्श करते थे। इसके बाद सीधे परेड भूमि जाते थे और अपनी पल्टनों की कवायद करते और देखते थे। कई इतिहासकारों ने कहा है कि बादशाह सूरज निकलने के पहले ही परेड भूमि में पहुँच जाते थे। दो घंटे तक क़वायद कराने के बाद वे दरबार में आते थे और मश गलये नौशरवानी यानी शिकायती पत्रों पर तुरन्त आदेश देते थे। जनता की शिकायतों पर तुरन्त कार्यवाही होती थी। दोपहर तक बादशाह अपने प्रधान कार्यालय अफजल मंजिल में काम करते थे।

वाजिद अली शाह पुरानी न्याय व्यवस्था में कोई नवीन सिद्धान्त लागू न कर सका तथा न्याय प्रशासन लगभग वैसा ही रहा जैसा पहले से चला आ रहा था। इस न्याय प्रशासन में कठोरता लाने का प्रयास वाजिद अली शाह ने रुचि के साथ किया। इसमें संदेह नहीं कि वह न्याय प्रेमी था। उसका न्याय तटस्थ व अनुकूल था। संवैधानिक रूप से वह न्याय का स्रोत था। अपने राज्य में वह उच्चतम न्यायाधीश था। मुख्य न्यायाधीशों के विरुद्ध वह कम अपीलें ही सुनता था। कभी-कभी वह खुली अदालत में मुकद्दमें सुनता था और वादी को न्याय प्रदान करता था। प्राणदण्ड के समस्त मुकदमें अन्तिम निर्णय लागू होने से पूर्व बादशाह के समक्ष प्रस्तुत किये जाते थे। वह सम-संतुलित न्याय देने की चेष्टा करता था। अवध में न्याय प्रशासन बहुत ही अच्छा था। प्रधान विचार पति को मुजतहीद उल अस्र कहते थे। मुस्लिम "शरियत" के अनुसार न्याय होता था। हर जिले में एक न्यायाधीश यानी मुजतहीद नियुक्त था। न्याय विभाग

का एक अलग शासकीय विभाग होता था जिसे मुहक्मा मराफा या मुराफिया कहते थे । हर कस्बे में एक मुकती मुंसिफ रहता था । कर्ज के मुकदमों के लिए अलग विभाग "मुहक्मा जदीद" था । न्याय विभाग का ही एक महत्वपूर्ण अंग था—"मुहक्मा तनकीह गुस्तग़ीसाने मुलाजिमाने सरकार कम्पनी सकनाये अवध ।"

वाजिद अली शाह के समय में न्यायालयों की स्थिति निम्नवत थी ।

१. मुजतहीद उल अस्र-धार्मिक एवं असैनिक मामलों की अपीलें सुनने का उच्चतम न्यायालय ।

२. अदालते इलाही-उच्च न्यायालय-मृत्यु, विवाह, सम्पत्ति सम्बन्धी कर आदि के निपटारों के लिए । न्याय इस्लामी कानून पर आधारित था ।

३. महकमा जदीद-ब्याज सम्बन्धी विवादों के निस्तारण हेतु ।

४. रहन और ऋण के वाद सुनने का न्यायालय-निवास स्थानों की सीमाओं के विवादों के निबटारे के लिए ।

५. सदर अमानत न्यायालय-चल अचल सम्पत्ति विशेष रूप से कृषि भूमि से सम्बन्धित विवादों के निबटारे के लिए ।

६ उप-मंडलीय न्यायालय-अवध को न्याय प्रशासन के लिए १२ उप मंडलों में विभाजित किया गया था । इनके न्यायाधीशों के नाम उनके अन्तर्गत उप-मंडल और उनका वेतन निम्नवत है ।

	नाम	स्थान	वेतन
१.	मीर हुसैन मुफती	प्रतापगढ़	१५०/-
२.	मीर अनवर अली	अल्दामऊ	१५०/-
३.	मीर मुजफ्फर अली	बिसबाड़ा	१५०/-
४.	मिर्जा मोहम्मद	गोंडा	१५०/-
५.	मीर मोहम्मद	खैराबाद	१५०/-
६.	मीर अकबर अली	बारी विसवा	१००/-
७.	मीर दिलदार हुसैन	नसीरावाद	१००/-
८.	मीर अली हसन	मोहमदी	६०/-
९.	मीर दामन अली	रसूलावाद	७०/-
१०.	मिर्जा अली नकी	दरियावाद	६०/-
११.	मीर मोहम्मद रजा	शाहवाद	६०/-
१२.	मीर अहमद हुसैन	संडीला	४०/-

नाजिम के अधीन न्यायालय उप मण्डलीय न्यायालयों के अन्तर्गत प्रत्येक नाजिम का अपना न्यायालय होता था जो साधारण वादों का निस्तारण कर अधिक दण्ड और कोड़ों की सजा दे सकता था ।

ताल्लुकेदार अपने ताल्लुकों के काश्तकारों पर संक्षिप्त प्रकार के न्याय का प्रशासन कर सकता था ।

अदालते इलाही के अधीन मण्डलीय न्यायालय जिनके अधीन अनेकों उप मण्डलीय न्यायालय होते थे जिनका अध्यक्ष नाजिम होता था। हत्या सम्बन्धी मुकद्दमा लखनऊ में अदालते इलाही के द्वारा सुना जाता था।

वाजिद अली शाह के शासन काल में न्यायालयों पर उच्च कुल के शिया मौलवियों का आधिपत्य था। इस आधिपत्य को समाप्त करने के लिए बादशाह की बग्घी के साथ संदूक जाता था जिसमें दो चाँदी के छोटे-छोटे ताले लगे होते थे। इस बन्द सन्दूक में लोग अपनी-अपनी शिकायतें लिखकर डालते थे। बदशाह खुले दरबार में इस सन्दूक को खोलता था और शिकायतों पर तुरन्त अपना निर्णय देता था।

इस प्रकार बादशाह ने प्रत्येक वादी से अपना व्यक्तिगत सम्पर्क बनाने का क्षणिक प्रयास किया जिसके कारण कुलीन वंश के लोगों का आधिपत्य शनैः शनैः समाप्त सा होने लगा जो उन्हें असहनीय था तथा इसके अलावा वादी अपनी शिकायतों का कच्चा चिट्ठा भी लिखने लगे थे। परिणाम स्वरूप अधिकारियों ने ऐसे लेख लिखना शुरू किये जो कि बादशाह के स्वयं विरोधी थे। अधिकारी वर्ग अपनी चाल में सफल भी रहा।

न्याय के सम्बन्ध में यह नवीन कार्यक्रम कई महीने तक जारी रहा। कुछ समय उपरान्त उसने यह पद्धति इसलिए समाप्त करदी कि वादियों के प्रार्थना पत्र से अनेकों अधिकारियों और शाही कुटुम्ब के व्यक्तियों का कच्चा चिठ्ठा खुलने लगा और कुछ लोगों ने बक्सों में ऐसे लेख डलवाना आरम्भ कर दिये जो वाजिद अली शाह के स्वभाव के बिपरीत थे।

चाँदी की शिकायती पेटी की व्यवस्था को समाप्त करने हेतु राजमहल के कर्मचारी और बेगमें दोनों ही उत्तरदायी हैं। इस पेटी में कभी-कभी बेगमों के द्वारा किये गये स्वामि-भक्ति रहित कार्यों का कच्चा चिठ्ठा बादशाह को प्राप्त होता था जो उसकी आशा एवं प्रतिष्ठा के प्रतिकूल था। वाजिद अली शाह ने स्वयं स्वीकार करते हुए कहा कि "इनमें बेगमों और राज महल की अनेकों ऐसी घटनाएं एकत्र थीं जो मेरे गुण, स्वभाव एवं स्तर के प्रतिकूल थीं। इन चाँदी के बक्सों को मैंने घुड़सवारों को दे दिया ताकि लोग अपनी शिकायतें इसमें डाल सकें। इसके उपरान्त यह सभी शिकायतें एकत्रित की जाएं और फिर मेरे सम्मुख लाई जाएं। लेकिन अचानक एक दिन मैंने एक बन्द लिफाफा खोलकर पढ़ा तो भौचक्का सा रह गया क्योंकि उसके अन्दर उमराव साहिबा एवं अन्य महल के सम्बन्ध में विस्मृत कर देने वाली घटनाएं थीं। यद्यपि इन घटनाओं के पढ़ने से मैं आनंद की अनुभूति करता था लेकिन फिर भी परिस्थिति वश इस शाही पद्धति को स्थगित कर दिया गया"।

अली नकी खान के कार्यों से वाजिद अली शाह पहले ही से प्रसन्न था जिसके कारण उसका प्रभाव बढ़ता गया और उसकी उन्नति होती गयी। बादशाह को उसके कार्यों में पूर्ण विश्वास था। कुछ दिनों उपरान्त ही अत्याचार ग्रस्त वादियों के प्रार्थना पत्र वजीर के माध्यम के बिना सीधे बादशाह के समक्ष आये। एक समाचार पत्र भी मुंशी मुजफ्फर अली केसीर के निर्देशन में जारी हुआ। वाजिद अली शाह प्रतिदिन समाचारों

को सुनता और अपने हाथों से आदेशों को जारी करता था। इससे स्पष्ट होता है कि बादशाह निष्पक्ष भाव से न्याय करने का प्रेमी था। निम्न घटनाएं उसकी मनोबृति का स्पष्ट साक्ष्य प्रस्तुत करती हैं।

१. एक दिन वाजिद अली शाह अपनी शाही सवारी पर बैठकर हुजूर बाग की ओर जा रहा था तो एक वृद्ध स्त्री उसके घोड़ों के आगे आकर खड़ी हो गयी। जब वाजिद अली शाह ने उससे कारण पूछा तो उसने बताया कि उसकी एक सुन्दर पुत्री है जिसको पड़ोस का जमींदार रात्रि के समय उठाकर ले गया और तब से वह उसी के पास है। उसने अपनी पुत्री को उसके पंजे से शीघ्र अतिशीघ्र मुक्त कराने की प्रार्थना की। वाजिद अली शाह ने अपने साथ उपस्थित सेवकों को आदेश दिया कि वह तुरन्त इस वृद्ध स्त्री के साथ जायें। अत्याचारी जमींदार को बन्दी बनाकर लायें और उसकी पुत्री को उसकी माता के पास भेज दिया जाये।

२. एक जनवरी, १८५१ ई० को वाजिद अली शाह को एक प्रार्थना-पत्र मिला जिसमें यह उल्लेख था कि वलवर के नवाब को निशात महल के एक सम्बन्धी ने, मीर मोहम्मद वाकर के आदेश से वध कर दिया है। प्रार्थी मृतक के शव के समय उपस्थित था। वाजिद अली शाह ने मुख्य मंत्री "वजीर" और दीवान खानाये दरोगा से पूँछ-ताछ की कि मीर मोहम्मद वाकर की निशात महल से रिश्तेदारी होने के कारण नम्रता क्यों बरती गयी। उन्होंने उस मामले में उचित कार्यवाही क्यों नहीं की। इसी मध्य में राजरानी ने भी वाजिद अली शाह से सिफारिश की कि इस मामले में सख्ती न बरती जाये क्योंकि मृतक एक हिन्दू था। परन्तु बादशाह ने उसकी एक न सुनी और आदेश दिया कि मीर मोहम्मद वाकर एक "राजीनामा" प्रेषित करें। मृतक के परिवार जनों के द्वारा वह राजीनामा प्रेषित किया गया और वह लिखित रूप में इसका साक्ष्य प्रस्तुत करें तथा प्रतिवादी भी लिखित रूप से यह वचन दें कि वह सदैव ऐसे कार्यों से अपने को दूर रखेगा और उसका दो महीने का वेतन आर्थिक दण्ड के रूप में उससे ले लिया जाये।

३. एक ग्राम के दो व्यक्ति इब्राहीम खान और जागीर खान एक बगीचे के स्वामी थे जिन्हें वाजिद अली शाह ने जागीर के रूप में नवाब खुर्द महल को प्रदान कर दिये थे। उसके दरोगा गुलाम हुसैन ने शक्ति का प्रयोग करके उपरोक्त दोनों स्वामियों से कब्बा ले लिया और अनेकों वृक्ष गिरवाकर उपयोग कर लिए इब्राहीम और जहाँगीर ने बड़े धैर्य से काम लिया और दरोगा से कुछ न कहा। यद्यपि उन्हें विश्वास था कि उच्च अधिकारी उनकी बात सुनेंगे परन्तु वह अपने पैतृक बाग को लेने में विफल रहे। अन्ततः उन्होंने एक दिन बादशाह की सवारी के प्रस्थान के समय वहाँ जाकर एक प्रार्थना-पत्र दिया। बादशाह ने गम्भीरता पूर्वक उनकी बात सुनी और उन्हें अपने साथ राज भवन में ले गया जहाँ उसने

उनकी सम्पूर्ण व्यथा फिर सुनी और तब उसने नवाब खुर्द के बार-बार विरोध करने पर भी उसकी एक न सुनी और दरोगा को आदेश दिया कि वह बाग को उसके स्वामी को पुनः लौटा दें। बादशाह की इस न्याय पद्यति से सभी न्यायाधिकारी सचेत हो गये और अपने कर्तव्यों का पालन तीव्र गति से करने लगे।

वाजिद अली शाह के द्वारा सैन्य प्रशासन में किये गये सुधार उसकी निपुणता, चातुर्य एवं अभिरुचि को अभिव्यक्त करते थे। उसने अपने शासन काल के प्रथम कुछ ही महीनों में सैन्य प्रशासन में प्रशंसनीय सुधार किए और अनुशासन तथा साज सज्जा पर विशेष बल दिया था। उसे अपने शासन के प्रारम्भ में ही यह आभास हो गया था कि अवध की सेना दुर्बल और क्षीण हो चुकी थी जिसके कारण जमींदार ताल्लुकेदार, भू-कुलीन आदि शक्तिशाली वर्ग दृढ़ हो गया था।

वाजिद अली शाह की सल्तनत की शुरुआत तो इस प्रकार हुई कि नौजवान बांके बादशाह को सेना सुधार में विशेष रुचि थी। उसने कई नयी रिसालें और पल्टनों की भर्ती की। रिसालों के नाम भी उसने अपने लेखन कौशल से बांका, तिरछा, घनघोर आदि रखे और पल्टनों के नाम अकबरी, नादरी आदि रखे थे। इस प्रकार तख्तनशीन होते ही वह अपनी फौज के संगठन में लग गया था। वाजिद अली शाह खुद घोड़े पर सवार होकर जाता और घंटों धूप में खड़े होकर ४-५ घंटे तक फौज की कवायद कराता था। इस प्रकार के कार्यक्रम अधिक समय तक नहीं चल पाये क्योंकि रेजीडेन्ट ने इस पर आपत्ति की। प्रारम्भ में छटनी करने के उपरान्त उसके सैनिकों की संख्या ५३-५४ हजार रह गयी थी। इन पर १८७३८३/- रु० छः आने वार्षिक व्यय होता था। उसने इस सेवा में बढ़ोतरी कर उसके सैनिकों की संख्या ५८२४५ कर दी थी जिस पर ४१७३२२० रु० आठ आना मात्र वार्षिक व्यय होता था। यह स्थिति १८५५ तक बनी रही जब एक रेजीमेन्ट की बढ़ोतरी की गयी। उसने महाराज्य पाल से शस्त्रास्त्र प्राप्त करने का प्रयास किया जिस पर कोई ध्यान न दिया गया। उसको गोला बारूद के लिए स्थानीय निर्माताओं पर निर्भर रहना पड़ता था। बारूद के परीक्षण होने पर पता चलता था कि उसमें शोरा व गन्धक की मात्रा कम होती थी। उच्च कोटि के शस्त्र अंग्रेजों की सीमाओं के अन्तर्गत कानपुर या कलकत्ते से प्राप्त किये जाते थे। ६०६ दुर्ग सैन्य तोपें थीं जो आमिलों के विभिन्न जनपदों में १५८ दुर्गों और १५० जिलों पर रखी जाती थीं।

मुख्य रूप से सैनिक ब्राह्मणों और क्षत्रियों राजपूतों में से भर्ती किये जाते थे। कुछ मुसलमानों की बटालियने भी होती थीं। सवारों की ९ टुकड़ियां हिन्दुस्तानी वस्त्र धारण किये हुए थीं जिनकी कमान मुसलमानों के हाथों में थी। सात तुर्क सवारों की अश्वरोही सैनिक टुकड़ियां अंग्रेजी पद्धति के अन्तर्गत थीं। जिनमें से दो कमाण्ड यूरोपियन अधिकारियों के अधीन और शेष ५ की कमान नपुंसकों और गायकों के अधीन थी। तिलंगों की १९ रेजीमेन्ट अंग्रेजी पद्धति से सुसज्जित थीं जिनमें ५ की कमाण्ड हिन्दू

अधिकारियों व ५ यूरोपियन अधिकारियों और शेष मुसलमान अधिकारियों के अधीन थी। ३३ नजीव रेजीमेन्टों में से २ की कमान हिन्दू अधिकारियों और शेष की मुसलमान के अधीन थी। अवध में १७ टुकड़ियाँ विभिन्न स्थिति की थीं जिनमें ६ हिन्दू अधिकारियों और शेष मुसलमान अधिकारियों के अधीन थीं। तीन हिन्दू अधिकारियों के अधीन रेजीमण्टों की प्रशंसा यूरोपियन अधिकारियों ने भी की है। जब कभी वेतन अदायगी में विलम्ब हो जाता था या अधिकारी गबन कर लेते तो सैनिक क्रुद्ध होकर विद्रोह करते थे और तब तक परेशान करते थे जब तक उनकी सुनवाई नहीं हो जाती थी।

वह सैनिक जो आमिलों के साथ संलग्न थे उनके अपने जनपदों के दुर्गों में निवास स्थान थे। प्रत्येक दुर्ग में सिपाहियों के लिए बैरेक होती थीं। लिपिकों और आमिलों के रहने के लिए पृथक निवास स्थान बने हुए थे। दुर्ग या तो किसी नदी के किनारे या घने जंगलों में बनाये जाते थे। कुछ किले भरतपुर के किले की भाँति मिट्टी के बने हुए थे और कुछ पत्थर और ईंट के बने हुए थे।

वाजिद अली शाह सेना के नित प्रति के अभ्यास से खुश होकर दक्ष सैनिकों को इनाम-उकराम देता था। उसने स्वयं एक मिलिट्री कोड, फ़ौजी कानून की सृष्टि की। बड़ी कड़ाई के साथ वह फौज के अनुशासन हीनता के सुधार में लग गया था। उसने प्राचीन सेनाओं के प्रशिक्षण क्रमबद्ध करके कई नवीन सेनाओं की वृद्धि की। सैनिकों को बोल चाल की भाषा में प्रशिक्षण दिया जाता था। उसने यह आदेश दे रखा था कि जो क्वायद में अनुपस्थित हो उस पर २०००/- रु० का जुर्माना कर उस धन को सैनिकों में बांट दिया जाये।

उत्तराधिकारी काल ही में ३० स्त्रियों और ५० तुर्क सैनिकों की टुकड़ी को अपने बनाये फारसी क्वायद के नियमों में प्रशिक्षिण दिया था। उन्होंने सेवा सम्बन्धी नियमों का विवेक के साथ पालन किया था। यहाँ यह बात उल्लेखनीय है कि इनमें से अनेक महिलाओं ने १८५७ की क्रान्ति में लखनऊ में अंग्रेजी सरकार के विरुद्ध संघर्ष किया था।

बादशाह ने सेना को सुगठित करने का कार्य भली-भाँति प्रारम्भ किया। इसके पूर्व अधिकतर व्यक्ति घूस देकर सेना में रख लिए जाते थे। वाजिद अली शाह ने सिंहासनारूढ़ होने के प्रथम वर्ष अर्थात १८४७ ई० के अन्त में ऐसे आदेश लागू किये कि यदि कोई सैनिक अधिकारी या बख्शी गिरि के कार्यालय के व्यक्ति ने, एक कौड़ी की भी घूंस ली तो उसे ऐसा दण्ड दिया जायेगा जो उसके लिए उदाहरण बन सके, इसके अलावा सैनिकों को नये रंगीन वस्त्र बनवाये गये और मखमल की वर्दियाँ प्रदान की गई। उनके शस्त्र शीशे की तरह चमकते थे।

वाजिद अली शाह ने अनेकों नवीन प्रकार की पलटनें और सैनिक टुकड़ियों की भर्ती की। १८४८ में जो सैनिक बटालियन इत्यादि थीं वे निम्न प्रकार हैं :—

रिसाला :—१८०० या १००० अश्वरोही सैनिकों की टुकड़ी :—

सुल्तानीगाजी, मंसूरी, गन्जन परी, अश्दी, दक्खिनी, बांका, तिरछा, हुसैनी, हैदरी, बादशाही, खाकानी, खुशरबी, रिसाला।

नजीबों की बटालियनें :—सेना के १००० सैनिकों की टुकड़ी :—

दाउदी, अब्बासी, जाफरी, जुल्फिकार, शमशीर, हुस्साम रफत, जफर, एनायत कसजमी, केसरी, फतेहगंज, अलीगोल, शबदरी, जरार, फतेहएश्या, नासिरी, भरमार, इत्यादि ।

तिलंगों की बटालियन :—जो अंग्रेजों सैनिकों के समान ही वर्दी पहनते थे ।

खास दिल, घनघोर, जां निसार, फतेह मुबारिक, सरवरी, जां वाज, अक्बरी, सिकन्दरी, खाकानी, सुलेमानी, जहांशा, गुलाबी, जफरे मुबारिक ।

तोपखाना—तोपखाना खुशरबी, तोपखाना कलां, तोपखाना बाग-बरादन, तोपखाना कसरे सुलेमान, तोपखाना वालिद खां, तोपखाना अनायती, तोपखाना जहानु-सुल्तानी इत्यादि ।

उपरोक्त वर्णन से हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि वाजिद अली शाह ने बड़े उत्साह के साथ सेना में व्यापक सुधार किए और उनमें अनुशासन की भावना का बीजारोपण किया । परन्तु उसकी व्यग्रता एवं सैन्य सुधारों को ब्रिटिश सरकार का विरोध, ही ऐसे कारण थे जिसके परिणाम स्वरूप चाहते हुए भी उसे अपने बढ़ते कदमों को रोकना पड़ा । ब्रिटिश सरकार ने इन सुधारों को निन्दनीय रूप में प्रकट किया और ब्रिटिश सरकार के रेजीडेण्ट ने भारत सरकार के रेजीडेण्ट को निर्देश दिये कि वह शाही सेवा में व्यय में कटौती कर बची धनराशि को पुलिस का बल बढ़ाने में व्यय करें । उसी समय जब वाजिद अली शाह ४००० अश्वरोही सैनिकों की सेना गठित करने के लिए योजना बना रहा था तो ब्रिटिश रेजीडेण्ट ने अपने पत्र द्वारा उसे निन्दापूर्ण झिड़की दी जिसका वाजिद अली शाह पर पूर्वजों की भाँति पर्याप्त प्रभाव पड़ा क्योंकि वह न तो ब्रिटिश रेजीडेण्ट और न ही भारत सरकार को अप्रसन्न रखना चाहता था । इसलिए उसने अपनी उस सेना के गठन में रुचि लेना बन्द कर दिया ।

पुलिस विभाग में प्रारम्भिक काल में जितने सुधार किये गये उसके बारे में बहुत कम जानकारी प्राप्त होती है । मौलवी फजल शेख को उस विभाग में नियुक्त किया गया और उसको यह कार्य सौंपा गया कि वह एक नियम संहिता तैयार करें ताकि पुलिस अपने कार्यों को संतोषजनक ढंग से सम्पादित कर सकें ।

शान्ति व्यवस्था बनाए रखना बजीर का एक मुख्य कर्तव्य था जो बड़े-बड़े नगरों में कोतवाल और छोटे कस्बों में थानेदार की नियुक्ति करता था ।

कोतवाल पुलिस अधिकारी, कार्यकारिणी, न्याय दण्ड अधिकारी एवं नायक के रूप में कार्य करता था । उसके कार्यों में सहायता के लिए एक नायब दरोगा होता था । प्रत्येक कोतवाली में एक छोटी सिपाहियों की टुकड़ी, चन्द चपरासी व कुछ सहायक (अटेन्डैंण्ट) रहते थे । वह अपने अधिक्षेत्र में फौजदारी मुकद्दमें सुनता था और चोरी, प्रबंचना, घरेलू विवाह, शारीरिक घाव, छोटी तस्करी, जल निर्वाह आदि के झगडे के अतिरिक्त आत्म हत्या, अप्राकृतिक मृत्यु, भागे हुए दासों को बन्दी बनाना, सती और ऐसे ही अन्य प्रकार के मामलों में जाँच कर आवश्यक कार्यवाही करता था ।

प्रत्येक कोतवाली के साथ सरिश्ताये रविन्द नाम का विभाग सम्बद्ध था जो एक दरोगा के अधीन होता था। इसका कार्य सिपाहियों की सहायता से निगरानी करना था। यह रात्रि के समय नगर में गश्त करते थे। संदेह युक्त व्यक्तियों एवं चोरों को बन्दी बनाते थे। जनता को रात्रि के समय शस्त्र लेकर चलना मना था। जो इन आदेशों का पालन नहीं करता था उसको बन्दी बना लिया जाता था।

छोटे कस्बों में शान्ति व्यवस्था बनाये रखने का उत्तरदायित्व थानेदार पर होता था। प्रत्येक थानेदार के अधीन एक मोहर्रिर, चपरासी, तुर्रेनवाज़ और चन्द सिपाही होते थे। बड़े थानों में एक नायब परगना नवीस व अर्जी नवीस होते थे। छोटे थानों में १० सिपाही होते थे जब कि बड़े थानों में २० से अधिक सिपाही भी हो सकते थे।

कारागार कोतवाली के अधीन होती थी। लखनऊ में एक केन्द्रीय कारागार था। प्रत्येक कोतवाली के साथ लगे हुए चन्द कक्ष होते थे जो स्थानीय कारागार के रूप में कार्य करते थे। संस्थागत बन्दियों के साथ ही हवालातियों को रखा जाता था।

संस्थागत पुलिस के अतिरिक्त सीमाओं पर पहरा देने के उद्देश्य से अमजद अली शाह ने ब्रिटिश रेजीडेन्ट के सुझाव पर सीमान्त पुलिस की स्थापना की थी। यह रेजीडेन्ट के अधीन कार्य करती थी। परन्तु इसका व्यय वाजिद अली शाह वहन करता था। इसका वास्तविक कार्य, कम्पनी सरकार के क्षेत्रों की सीमाओं से भाग कर, अवध के जंगलों में शरण लेने वाले, डाकुओं को गिरफ्तार करना था। वाजिद अली शाह के काल में इसमें ७५० सिपाही, १५० अश्वरोही थे। इस पर ७० हजार के लगभग वार्षिक व्यय होता था। अवध सीमान्त पुलिस कैप्टन हालिंग्स के अधीन थी। पश्चिमी सीमाओं पर कैप्टन हैयरसे और पूर्वी सीमाओं पर कैप्टन अलैक्जैण्डर, सहायक नियुक्त हुए। कैप्टन अलैक्जैण्डर, कैप्टन हैयरसे की अपेक्षा अधिक सफल रहा। अवध के अधिकारी बड़ी लगन के साथ प्रशासनिक सहायता करते थे। अवध सीमान्त पुलिस ने कैप्टन के अधीन जमीदारों और जनता का दमन भी किया और किसानों पर आक्रमण भी किया।

४ जुलाई, १८४७ ई० को बादशाह ने राजस्व प्रशासन के सुधार सम्बन्धी आदेश जारी किये जिसमें यह उल्लेख किया गया कि जनता (रैयत) के साथ मेल मिलाप बढ़ाना चाहिए और कृषि को प्रोत्साहन देना चाहिये। बैलों तथा कृषि यंत्रों को बेचना नहीं चाहिए। रेजीडेण्ट चाहता था कि राजस्व पद्धति को सुगंठित करना चाहिए। इसलिए उसने नये वजीर को अनुदेश दिया कि वह "अजारा" (ठेका) के स्थान पर अमानी पद्धति को अपनाये। इस पद्धति के अन्तर्गत अधिकारियों के साथ राजस्व वसूली करने की सहायता हेतु एक सैनिक टुकड़ी रहती थी।

वजीर ने परीक्षण हेतु अमानी पद्धति को अवध के कुछ ही भाग में लागू करने का निश्चय किया क्योंकि यह पद्धति गाजीउद्दीन हैदर व उसके उत्तराधिकारी के समय सफल नहीं हो पायी। रेजीडेन्ट ने उन सुधारों के सम्बन्ध में शंका प्रकट की एवं भारत सरकार के सचिव को सूचित किया।

१६ सितम्बर, १८४७ से ११ फरवरी, १८४८ तक ५ किश्तों में जो राजस्व की अदायगी की गयी वह लगभग ६५७०६३८/- रु० ३ आने ९ पाई अनुमानित थी लेकिन रेजीडेन्ट ने ३५८५३०३/- रु० ११ आने ६ पाई की ही धनराशि एकत्र करने की रिपोर्ट की। शेष धनराशि २९८५३३४ रु० ८ आने ३ पाई की धनराशि एकत्रित नहीं हो पायी।

रेजीडेन्ट ने राजस्व एकत्रित न होने के कारणों में यह उल्लेख किया कि कुछ बड़े आमिल (परगनाधिकारी) इतने शक्तिशाली हो चुके हैं जिनको वश मे करना बहुत कठिन है। उपरोक्त शोचनीय स्थिति में राजस्व न देने के कारण दोषियों ने लाभ उठाया और उन्होंने अवध सरकार के प्रति विद्रोहियों का सा व्यवहार करना प्रारम्भ कर दिया। अवध में जो अंग्रेजी सहायक सेना थी उसको उनके विरुद्ध प्रयोग करने के लिए नहीं रखा गया था बल्कि उसका प्रयोग केवल विद्रोही ताल्लुकेदारों के लिए किया गया था।

अवध में शान्ति की स्थापना एवं आततायी आमिलों से राजस्व की वसूली हेतु एक नवीन पद्धति को अपनाया गया। बादशाह ने नये आदेश जारी करके आमिलों को निर्देश दिये कि वे विभिन्न सैनिकों टुकड़ियों का शेष वेतन भुगतान राजस्व से एकत्रित धनराशि से करें तथा शेष राशि को शाही कोष में जमा करें। इस पद्धति के परिणाम भी द्विपक्षीय रहे। इससे कुछ समय के लिए राजस्व की वसूली होती रही लेकिन इसके साथ ही आमिलों की शक्ति में उत्तरोत्तर बढ़ोतरी भी होती गयी।

राजस्व एकत्रित करने के मुख्य रूप से तीन तरीके थे। हुजूर तहसील, इजारा और अमानी। हुजूर तहसीलों में ब्रिटिश अधिकारी नियुक्त किया जाता था जिसका कार्य उस स्थान के राजस्व को एकत्रित करना था क्योंकि वह स्थान किसी अन्य स्थानीय अधिकारी के अधीन नहीं होता था। अनेकों ताल्लुकेदारों के ताल्लुके हुजूर तहसील के अन्तर्गत रखे गये थे ताकि राजस्व एकत्रित करने में कोई परेशानी न हो सके।

इजारा या संविदा पद्धति में निश्चित अवधि के लिए निश्चित धनराशि की अदायगी की संविदा की जाती थी। अमानी पद्धति के अन्तर्गत सरकार प्रत्यक्ष रूप से आमिलों और उनकी सिफारिश पर अधीनस्थ कर्मचारियों की नियुक्त करती थी। इसमें प्रत्येक चकले में भूमि का अनुमानित आय का हिसाब लगा कर सरकारी भाग एक रु० में एक आने से दो आने तक निश्चित किया जाता था। इसमें वह धन जो जमींदार उपहार (नजर) के रूप में राजस्व अधिकारी को दिया करते थे उसका अभिलेखन नहीं किया जाता था। राजस्व अनुपातिक रूप में निश्चित किया जाता था।

वाजिद अली शाह ने इजारा पद्धति के स्थान पर अमानी पद्धति को ही अपनाया परन्तु रेजीडेन्ट उसमें निरन्तर हस्तक्षेप करता था। वाजिद अली शाह के द्वारा अपनायी गयी इस पद्धति को विफल बनाने के लिए निश्चित की गई धनराशि और निश्चित समय के फेर बदल पर बल देकर जमींदारों और ताल्लुकेदारों में असंतोष व्याप्त करने

का प्रयास किया गया। वास्तव में अमानी पद्धति राजस्व ग्रहण करने का सबसे अच्छा तरीका था। परन्तु नियंत्रण के अभाव और रेजीडेन्ट के हस्तक्षेप के कारण सफल न हो सकी। इसमें नियुक्त कर्मचारी बहुत भ्रष्ट थे और अपने कर्तव्यों का पालन नहीं करते थे। ताल्लुकेदार और किसानों के आपसी सम्बन्ध अच्छे थे क्योंकि बादशाह के कर्मचारियों से सुरक्षा के समय किसान उनका साथ देते थे और किसानों की समृद्धि ही ताल्लुकेदार की समृद्धि थी इसलिए प्रायः ताल्लुकेदारों का व्यवहार किसानों के प्रति अच्छा रहता था पर अवसर मिलते ही एक दूसरे की जमींदारी हड़पने में संकोच नही करते थे। नाजिम को घूस देकर भी यह कार्य करने का प्रयास होता था। कभी-कभी राज्य के विरुद्ध पर्यवेक्षण के आदेश दिये जाते थे।

वित्तीय वर्ष के प्रारम्भ होते ही ताल्लुकेदार या जमींदार अपनी जागीर का राजस्व तय करने के लिए नाजिम के सम्मुख उपस्थित होते थे। यह जमींदार नाजिम के सम्मुख जाने का तब तक साहस नहीं करते थे जब तक कि कोई सैनिक अधिकारी उसके सुरक्षित वापिस जाने की गारन्टी नहीं देता था। इस वापसी की गारन्टी को "भयागीरी" कहा जाता था। जब सरकारी राजस्व तय हो जाता था तो जमींदार उसकी अदायगी के लिए जमानत देता था और वह प्रतिभूति साधारणतः राजधानी में प्रभावशाली व्यक्ति अथवा राज्य उच्चाधिकारी या राज्य ताल्लुकेदार होते थे। अनेक जामिनों का यही व्यवसाय था।

कभी-कभी कुछ इलाकों में सिपाहियों के नियोजन के द्वारा राजस्व की अदायगी की जाती थी। इस पद्धति को कब्ज कहते थे। यह पद्धति विद्रोही किसानों के विरुद्ध ही अपनायी जाती थी। जमोग पद्धति के अन्तर्गत काश्तकार अपनी स्वतन्त्र इच्छा से एक सैनिक अधिकारी को किसी प्रभाव शाली व्यक्ति के अधीन लगान के संग्रह और राजस्व संग्रह भत्ता दिया जाता था जिससे अधिकारों की मान्यता रहती थी। इस भत्ते को "ननकार" कहते थे। यह दो प्रकार का होता था। "ननकार-ये-देही" जो जमींदार को दिया जाता था, दूसरा "ननकारे तनरू वाही" जो कानूनगो, चौधरियों और ग्राम के छोटे अधिकारियों को इनाम के रूप में इसलिये दिया जाता था कि वह राजस्व संग्रह में सहायता प्रदान करते थे।

लगभग ६० प्रतिशत अवध राज्य ताल्लुकेदारों के अधीन था जिसमें २०० से भी अधिक ताल्लुकेदार थे। यह जमीन जागीरों का प्रशासन अपने हाथ में रखते थे और इन्हें अपनी जागीर के अन्तर्गत मजिस्ट्रेट या कलेक्टर जैसी सम्पूर्ण शक्तियां प्राप्त थीं। उनके पास दुर्ग थे और वे लखनऊ के दरबार की भाँति ही अपना दरबार लगाते थे और आदेश जारी करते थे। इनमें से कुछ ताल्लुकेदार बहुत शक्तिशाली थे जिनके किलों पर तोपें चढ़ी रहती थीं। इनमें आपस में काफी संघर्ष भी था। मोहम्मदाबाद के ताल्लुकेदार के सम्बन्ध में उल्लेख मिलता है कि उसने विद्रोही अमीर अली के विरुद्ध सरकार की सहायता की थी। तिलोही का राजा अवध सरकार के प्रति बहुत वफादार था और अपने क्षेत्र में शान्ति व्यवस्था बनाये रखने में सफल रहता था।

ऐसे वफादार ताल्लुकेदार कम ही थे। इसके विपरीत अधिकतर ताल्लुकेदार विद्रोही थे जो न केवल आपस में लड़ते थे बल्कि अवसर मिलने पर अवध सरकार के विरुद्ध भी लड़ते थे। रेजीडेन्ट ने अपनी आख्या भेजते हुए लिखा कि अवध की सरकार दिन व दिन कमजोर होती जा रही है और ताल्लुकेदार दिन व दिन दृढ़ होते जा रहे हैं। विद्रोह करने के उपरान्त वे अवध सरकार को तब तक पीड़ित करते जब तक माफी नामा लेकर नहीं आता था।

कुछ ताल्लुकेदारों ने वाजिद अली शाह के काल में अत्यंत रक्त पात किया जिनमें पसिका का पृथ्वीपत, कासिमगंज का गंगाबक्स, तुलसीपुर का गिर्राजसिंह और नान पारा का नाम उल्लेखनीय है। वाजिद अली शाह द्वारा इनका दमन अँग्रेजी सेना की सहायता के बिना करना असंभव था। वजीर ने आन्तरिक रूप से रेजीडेन्ट से क्रोधित होते हुए भी अँग्रेजी सैनिक टुकड़ी की सहायता प्राप्त की थी। रेजीडेन्ट की शाही सेना द्वारा पृथ्वीपत को गिरफ्तार कर उसको मार दिया गया और उसके साथियों को छिन्न-भिन्न कर दिया गया। इसके पश्चात गंगा बक्स का पतन किया। अंग्रेजी सरकार के हितों में रेजीडेन्ट को आज्ञा दी गयी थी कि वह अपनी इच्छानुसार सेना का प्रयोग कर सकता है। इस प्रकार रेजीडेण्ट की सहायता के द्वारा ही अवध के विद्रोही ताल्लुकेदारों से मुकाबला कर उनको सबक सिखाया जाता था।

१८४६ ई० में सभी स्रोतों से राजस्व की अनुमानित आय १२३६८८४१/--रु० थी जबकि १८४८ में इसमें वृद्धि होकर एक करोड़ ४४ लाख ७३ हजार ३८३ रु० हो गयी। अवध के तत्कालीन रेजीडेन्ट कर्नल रिचमन्ड के अनुसार यह अनुमानित धनराशि कभी वसूल नहीं की जा सकी और बकाया १४ से २० लाख के बीच रहा जो कभी वसूल नहीं किया गया।

कर्नल स्लीमैन ने आय केवल ५० लाख रु० अनुमानित की है और व्यय के सम्बन्ध में लिखा है—"बादशाह" के मौजूदा खर्च के बारे में मेरा अनुमान है कि दीवानी और अन्य वित्तीय मद में ३८ लाख रुपया सेना तथा पुलिस पर ५५ लाख रु०, बादशाह के महलों पर खर्च ३० लाख रुपया कुल १२३ लाख रु० साल।

कैप्टन हैज ने कर्नल आउटम को १८५३ और १८५४ की वर्षों के लिए अनुमानित राजस्व के संग्रह को क्रमशः १२१६६·२१४ रु० और १२२०३०८२ रु० प्रेषित की थी। जिसमें से १८५३ में ४० लाख रु० और उसके द्वितीय वर्ष में ३६ लाख रु० कोषागार में जमा किया गया था। यहाँ यह तथ्य भी उल्लेखनीय है कि वजीर ने नाजिम को इस बात की आज्ञा दे रखी थी कि वह अपने जनपदों में से प्राप्त राजस्व, असैनिक न्यायालय और सैनिक व्यवस्था पर, व्यय कर सकता था और बकाया राजस्व व्यय की रसीदों सहित राजधानी भेज सकता था। इस पर कर्नल आउट्रम का तर्क था कि ३५ लाख रु० भी जनपदों का खर्च मान लिया जाये तो भी कुल राजस्व ८६ लाख रु० होता था। आउट्रम ने जनपदों के व्यय की राशि ३५ लाख रु० सिद्ध की है जो वस्तुतः मोहम्मद अली शाह के काल के अनुमानित आँकड़े थे। इसी प्रकार कैप्टेन हैज के आँकड़े भी असत्य

प्रतीत होते हैं। एक अज्ञात व्यक्ति जिसका यह दावा था कि वह दरबार के हिसाब देख सकता था, का कथन है कि हमेशा ही राज्य की आय १२० लाख रुपये से अधिक थी।

यदि कर्नल स्लीमैन का कथन सत्य है तो राज्य का सामान्य व्यय ७८६५५७१ रु० एक आना ६ पाई था और आउट्रम के अनुसार जनपदों का व्यय ३५ लाख रु० था। इस प्रकार राज्य का कुल व्यय १३० लाख से अधिक हुआ। इस प्रकार वार्षिक घाटा लगभग ४०,०००/- रु० का हो जाता है।

बादशाह के अन्तिम दिनों में राज्य की आय एक करोड़ ३५ लाख रुपया थी। एक अन्य लेखक ने राज्य की आमदनी एक करोड़ २६ लाख ४१ हजार ८१८ रुपये वतलाई है।

वाजिद अली शाह को पदच्युत करने के पश्चात लगभग ७ लाख रुपया अदा करने को रह गये थे। एक समकालीन पत्रकार, जो स्लीमैन के साथ पर्यटन कर रहा था, के अनुसार अवध सरकार की आय १०५०००००० रु० वार्षिक थी।

बादशाह के गद्दी से उतारे जाने के समय जनरल आउट्रम रेजीडेन्ट था। उसका आक्षेप था कि "अवध की हुकूमत पर कम से कम ५० लाख रु० कर्मचारियों का वेतन बाकी है। बादशाह को कर्ज नहीं मिलता है। इस पर बादशाह ने जबाव दिया कि "पिछले तीस साल में अवध की आय एक करोड़ ३५ लाख से बढ़कर एक करोड़ ७५ लाख रु० हो गयी है। जब १८५६ में राज्य पर कब्जा हुआ, रियासत पर कुल ४० लाख रु० कर्जा निकला, हमारे सब कर्मचारियों का वार्षिक वेतन ८ लाख रुपया था। अगर मालगुजारी का हिसाब करदें तो कुछ बाकी नहीं रहेगा।

वाजिद अली शाह के शासन काल को मुख्य रूप से दो भागों में विभाजित किया जा सकता है—

पहला तो उसके वजीर अमीनुद्दौला का समय जो १३ फरवरी, १८४७ से ८ जुलाई, १८४७ ई० तक है और दूसरा वजीर पद से हटना, हिन्दू मुस्लिम तनाव और बादशाह की हत्या का षडयंत्र था।

नवाब अमीनुद्दौला को सर्व प्रथम अमजद अली शाह ने १६ अगस्त, १८४२ में वजीर पद पर नियुक्त किया था। परन्तु दरबार में षडयंत्रों और पारस्परिक शत्रुता के कारण (जिसमें अमीनुद्दौला ने विशेष भूमिका अदा की थी) उसको डेढ़ वर्ष बाद पदच्युत कर दिया गया था। इसके पश्चात मुनव्वरुद्दौला को वजीर के पद पर नियुक्त किया गया था।

मुनव्वरुद्दौला के वजीर बनते ही दरबार में षडयंत्रों की स्थिति उत्पन्न हो गई और अंग्रेज रेजीडेन्ट जनरल पोलक की इच्छा न होते हुए भी ५ महीने की सेवाओं के उपरान्त उसे, २७ जून १८४४ को पदच्युत कर दिया गया और अमीनुद्दौला को पुनः वजीर नियुक्त किया था। रेजीडेन्ट ने इस नियुक्ति का अनुमोदन नहीं किया और उसके विरुद्ध भारत सरकार के सचिव (विदेश विभाग) को दृढ़तापूर्वक पत्र लिख कर

अपना विरोध प्रकट किया जिसमें शिकायत की गयी कि अमीनुद्दौला तथा सैयद उद्दौला दोनों की नियुक्तियाँ उसके परामर्श के बिल्कुल विरुद्ध थीं और यह आशंका एवं आपत्ति के योग्य व्यक्ति थे। अमीनुद्दौला और सईद उद्दौला को कुछ शर्तों के साथ अत्याधिक शक्तियाँ प्रदान की गई थी और उनके लिए उन शर्तों का पूरा करना अत्याधिक कठिन कार्य था। इस स्थिति से अवगत होकर रेजीडेन्ट ने उल्लेख किया कि यदि इस प्रकार के दो व्यक्ति मंत्रिमण्डल में रहेंगे तो राज्य की स्थिति शोचनीय हो जायेगी। रेजीडेन्ट ने महाराज्य पाल को सूचित किया कि अव्यवस्थित प्रबन्ध से बचने के लिए किसी अन्य व्यक्ति की नियुक्ति की जाये। अनेक चेतावनियों और धमकियों के बावजूद अमीनुद्दौला अपने पद पर बना रहा। प्रशासन के कार्यों के लिए उसमें कोई विशेष शक्ति नहीं थी और सईददुद्दौला को राज भवन के षडयंत्रों के कार्यो का समर्थन प्राप्त था। अमीनुद्दौला उत्साह हीन और वृद्ध होने के कारण, शाही समर्थन प्राप्त सईउद्दौला के कार्यों में हस्तक्षेप न कर सका।

तत्कालीन बादशाह ने सईदउद्दौला को पदच्युत कर कारावास में डाल दिया और तब अमीनुद्दौला ने प्रशासन में सुधार कार्य प्रारम्भ किये परन्तु उसे इसमें कोई विशेष सफलता प्राप्त न हो सकी। नवाब अमीनुद्दौला वृद्ध होने के कारण दुर्बल हो चुका था। उसके साथी महाराजाधिराज बालकृष्ण (वित्त मंत्री) जो केवल वाह्य रूप से उसके साथ थे महत्वपूर्ण समस्याओं के समाधान में उसके विरोधी हो गए। ऐसी ही स्थिति चल रही थी कि अमजद अली शाह का शासन समाप्त हो गया।

वाजिद अली शाह के सिंहासनारूढ़ होने के पश्चात अमीनुद्दौला ने बजीर के पद से त्याग पत्र देने की आज्ञा मांगी। इस समय अमीनुद्दौला को रेजीडेन्ट का समर्थन प्राप्त हो चुका था। अमीनुद्दौला ने रेजीडेन्ट के समक्ष स्पष्ट कहा "पिता का नौकर पुत्र के यहाँ कभी लोकप्रिय नहीं होता—बादशाह जिसे चाहें वजीर बना लें—" रेजीडेन्ट ने अमीनुद्दौला को इस कार्य के लिए रोका और बादशाह से उसके सम्बन्ध के बारे में मालूम किया।

उस समय तक सम्भवतः वाजिद अली शाह उनसे अप्रसन्न न थे। उन्होंने उनकी सेवा को स्वीकार किया और रेजीडेन्ट को विश्वास दिलाया कि वह अमीनुद्दौला को उसके पद से हटाकर किसी अन्य को नहीं रखना चाहता है। बादशाह ने अमीनुद्दौला से कहा भी कि वह एक शोचनीय समय पर जबकि अभी-अभी सिंहासनारूढ़ हुआ है अपना पद न छोड़े। बादशाह की दादी मलका आफाक तथा माँ मलका किश्वर ने भी रेजीडेन्ट को यही आश्वासन दिया।

दुर्भाग्यवश उस समय हिन्दू मुस्लिमों के मध्य खिचाव उत्पन्न हो गया। वाजिद अली शाह को १९ मार्च, १८४७ को यह सूचना प्राप्त हुई कि छोटे लाल नामक एक सर्राफ ने साठ वर्षीय ब्राह्मण के बेटे का गला काटकर उसे नव निर्मित पार्श्वनाथ के मन्दिर में भेंट चढ़ा दिया। सूचना पाने के उपरान्त वाजिद अली शाह ने मीर मेंहदी को निरीक्षण करने तथा आरोप की जाँच के लिए भेजा किन्तु उसने बिना निरीक्षण किये

ही, छज्जू खान, हैवत अली को कुछ बेलदारों सहित मंदिर के विध्वंस करने के लिए भेजा। क्रोधित होकर लगभग ५० सर्राफ उन अधिकारियों के विरुद्ध जिन्होंने बच्चे के भेंट की झूठी रिपोर्ट की थी, शिकायत करने के लिए शाही राज भवन की ओर गये। उनको अपने घरों को वापस जाने के लिए कहा गया और उन्हें विश्वास दिलाया गया कि मामले की पूरी जाँच होगी। इसी मध्य वाजिद अली शाह को इस मामले की पूरी जानकारी दी गई। अगले दिन छज्जू खां और हैवत अली ने तीन मन्दिर गिरवा दिये तथा उनमें जो कुछ सम्पत्ति मिली उसे राजभवन की ओर ले गये। एक अन्य फर्जन्द अली नामक व्यक्ति ने मीर मेंहदी के आदेशानुसार हिन्दुओं के अनेकों धर्म स्थलों को विध्वंस कर दिया।

नगर कोतवाल अली रजा इस बात का विचार करते हुए कि यह कृत्य छज्जू खान और उनके साथियों द्वारा किया गया हो सकता है, ने एक प्रार्थना पत्र वाजिद अली शाह के समक्ष भेजा जिसमें उल्लेख किया कि मृतक अमजद अली शाह ने अपने कार्यकाल में नव निर्मित उपरोक्त मन्दिरों से मूर्तियां हटाने का आदेश दिया था और इसी लिए यह कार्य किया गया तथा भवन वैसा ही रखा गया। उसी प्रार्थना पत्र पर उसने यह भी उल्लेख किया कि वर्तमान मामलों में कुछ सर्राफों ने इस घटना से तीन दिन पूर्व मन्दिर में एक घन्टा लगाने की चेष्टा की थी। परन्तु उसने उनको ऐसा करने से रोक दिया। उसने उसी प्रार्थना पत्र में यह भी अस्वीकार किया कि इस प्रकार के ब्राह्मण पुत्र की बलि दी गयी है। प्रार्थना पत्र के अन्दर यह भी उल्लेख किया गया कि इस बलि की सूचना देने वाले ठीक प्रमाण प्रस्तुत करें क्योंकि सर्राफ जाति के लोग एक कीड़े को भी नहीं मार सकते तो उनसे बालक की हत्या की आशा करना अतिश्योक्ति है।

जब एक ओर इस प्रकार का वाद विवाद चल रहा था तो दूसरी ओर आठ नौ सौ सर्राफों का समूह शाही राज भवन की ओर बढ़ने लगा। रेजीडेन्ट को जब यह सूचना प्राप्त हुई कि सर्राफों का एक मण्डल गुलाब राय के नेतृत्व में आ रहा है तो उसने यह उचित समझा कि इस सम्बन्ध में बादशाह से विचार विमर्श किया जाये। उसने २२ मार्च, १८४७ को वाजिद अली शाह से भेंट करके उसे संकेत दिया कि एक आम गड़बड़ी होने की सम्भावना है। रेजीडेन्ट ने इस सम्बन्ध में खेद भी प्रकट किया।

सर्वप्रथम वाजिद अली शाह को सर्राफों के सम्बन्ध में यह सब कुछ सुनकर आश्चर्य हुआ कि जो मनुष्य एक कीड़ा भी नहीं मार सकते बह किसी व्यक्ति का खून क्या कर सकता है। वजीर ने भी रेजीडेन्ट के मत का अनुमोदन किया परिणाम स्वरूप वाजिद अली शाह ने पुनः इस मामले की छानवीन करने के आदेश दिये और हरकारा (सन्देश वाहक) को दण्डित करने का निश्चय किया यदि उसने गलत सूचना देने का अपराध किया हो। उसने अमीनुद्दौला से जवाब माँगा कि उसने जनता के सम्बन्ध में नियमानुसार सूचित क्यों नहीं किया। वजीर ने अपने उत्तर में उल्लेख किया कि उन्हीं मामलों में उसे उत्तरदायी ठहराया जा सकता है जो उसी ने किये हों न कि उसमें जो दूसरों के द्वारा हुए हों। इस मामले से उसका कोई सम्बन्ध नहीं था।

अन्ततः वजीर ने उसी दिन सायंकाल निरीक्षण करवाया और उन सभी व्यक्तियों के लिए जो घबराहट में नगर छोड़कर सड़क के निकट के ग्रामों में शरण लिए हुए थे, को सुरक्षा का विश्वास दिलवाया। परिणाम स्वरूप अव्यवस्था बढ़ने से रुक गयी। वजीर ने हिन्दुओं को बतलाया कि वह अपनी दुकानें खोले। उनको जीवन रक्षा का विश्वास भी दिलाया। इसके अतिरिक्त उसने सुचारू रूप से कार्य करने का आह्वान किया। परिणाम स्वरूप कुछ हिन्दुओं ने अपना कारोबार आरम्भ किया।

जिस दिन हिन्दू मुसलमानों का खिचाव उत्पन्न हुआ था उसी दिन वाजिद अली शाह ने हजरत अब्बास की दरगाह के क्षेत्र में जाने की इच्छा प्रकट की जहाँ पर हिन्दुओं ने अपनी दुकानें बन्द करके विरोध प्रकट किया था। सर्फउद्दौला गुल रजा खान को आदेश दिया गया कि वह बाजार को सुसज्जित करे परन्तु दुकानें बन्द रहीं और उसे बाजार को आकृषित रूप से सुसज्जित करने में कठिनाई हुई। वजीर के द्वारा जो निरीक्षण किया गया उससे मीर मेंहदी अपराधी सिद्ध हुआ उसे अपने निवास स्थान पर ही नजरबन्द करके दण्डित किया गया।

बादशाह ने इन सम्पूर्ण मामलों पर खेद प्रकट किया और उसने उन मन्दिरों के विध्वंस होने से हुई क्षति की सम्पूर्ण सम्पत्ति हिन्दुओं को वापस दे दी। लेकिन अव्यवस्था की स्थिति कुछ और समय तक बनी रही। राजकुमार और कुलीन वर्ग दोनों ही शासन से असन्तुष्ट थे क्योंकि वाजिद अली शाह ने सिंहासनारूढ़ होते ही धन की बचत के लिए कुलीनों, राजकुमारों की पेंशन में कटौती के आदेश दिये। रेजीडेन्ट के मतानुसार यह कार्य अन्याय पूर्ण एवं अनुचित था जिसके कारण जागीरदारों और राजकुमारों को प्रोत्साहन मिला उन्होंने बादशाह के विरुद्ध षडयंत्र रचने आरम्भ कर दिये।

६ अप्रैल, १८४७ ई० को रात्रि के १० बजे सशस्त्र घुड़सवार जिनके साथ दो निहत्थे पैदल व्यक्ति थे मछली दरवाजा (द्वार) से प्रविष्ट होकर अन्य द्वारों में प्रवेश करते हुए महल के अन्दर पहुँचे। वहाँ से सिंहासन कक्ष के आंगन में गदाधारी ने उन्हें रोका क्योंकि किसी को घोड़े पर सवार होकर उस द्वार से प्रवेश करने का आदेश नहीं था। गदाधारी ने प्रहार कर उसके बाजू को काट दिया और फिर संघर्ष होने लगा। उपस्थित ३-४ सिपाहियों को घायल कर दिया। घुड़सवारों को मार दिया गया और साथियों को बन्दी बना लिया गया। घुड़सवारों की उपरोक्त घटना से प्रतीत होता है कि बादशाह के प्रति उनके दुर्विचार थे।

८ अप्रैल, १८४७ को मुख्य मंत्री (वजीर) नवाब अमीनुद्दौला के साथ एक भयंकर घटना घटित हुई। वह अपनी बग्घी में बैठकर बादशाह के समक्ष उपस्थित होने जा रहा था। उसी समय ४ आदमी अचानक ही आ गये और उसे रोक दिया। उनमें से एक तफज्जुल नामक व्यक्ति ने घोड़े के सर को पकड़ लिया तथा ऊँची आवाज से चिल्लाते हुए अपने वेतन की अदायगी का दावा किया। सर्वप्रथम अमीनुद्दौला ने सोचा कि सम्भवतः वे लोग राज्य के निष्कासित कर्मचारी होंगे जिनके वेतन बकाया रह गये होंगे इसी बीच और व्यक्ति बग्घी को दायीं ओर से घेरने के लिए आये जिनको वजीर

के रक्षक ने दृढ़ता से रोका। एक हमलावर ने उसे बन्दूक की गोली मारी जो उसे न लगी परन्तु दूसरी गोली एक दूसरे बदमाश फजल अली ने मारी तो रक्षक गिर गया और उसने गिरते-गिरते हैदर अली खान को अपनी तलवार से घायल कर दिया और अपने प्राण त्याग दिये।

इसके पश्चात हैदर अली खाँ दाहिने हाथ में छुरा लेकर बग्घी की ओर बढ़ा। वजीर उसके दाहिने हाथ को पकड़कर बग्घी के बाहर धकेलने लगा। वह धकेलने में तो सफल हो गया परन्तु स्वयं गिर गया। तफज्जुल जो अपने साथी की सहायता के लिए आगे बढ़ा उसको भी वजीर ने बायें हाथ से पकड़ लिया। इसी संघर्ष में उनके एक और साथी ने तलवार से वजीर के बायें कन्धे और बाजू को घायल कर दिया और उसे विवश करके भाग गये। वजीर इस समय तक यह न देख सका था कि उसका रक्षक अमीन अली सैयद घायल हुआ है लेकिन जब वह संभला तब उसे इस घटना का आभास हुआ। शाह अमीर एक अन्य कर्मचारी २० गज की दूरी पर खड़ा-खड़ा चिल्लाकर कह रहा था कि आतयाती वजीर को मार रहे हैं।

इस गम्भीर स्थिति में भी चार आततायी ने वजीर को घेर लिया लेकिन विश्वास दिलाया कि यदि रास्ते में चलने वाले उन पर आक्रमण नहीं करें तो वह उसे नहीं मारेंगे। यह कहकर वह अपनी कटारों को लेकर सड़क के किनारे खाई में गिरे हुए वजीर की छाती पर बैठ गये।

जब रेजीडेन्ट को वजीर पर आक्रमण होने का समाचार मिला तो उसने तुरन्त ही तोपें और एक सशस्त्र सैनिक टुकड़ी को छावनी से बुलाने के आदेश दिये। रेजीडेन्ट, लेफटीनेन्ट वर्ड अपने सहायकों के साथ घटना स्थल की ओर बढ़ने लगा और उसने देखा कि वजीर के निवास स्थान के समीप तंग सड़क में जन समूह था जिसको केवल दो बदमाश अपनी बन्दूकों से तितर बितर करने की चेष्टा कर रहे थे। परन्तु ठीक उसी समय लेफटीनेन्ट बर्ड उस स्थान पर पहुँच गया जिस स्थान पर वजीर घायल अवस्था में पड़ा हुआ था। उसे देखते ही बदमाशों ने कहा कि शिष्ट व्यक्ति सरकार के द्वारा नौकर क्यों नहीं रखे जाते। हमारी जीविका का साधन कुछ भी नहीं है और हमने इसीलिए इस कार्य को किया है। उन्होंने ५० हजार रुपये की वजीर से माँग की। वजीर ने लिखित रूप में उन्हें विश्वास दिलाया तथा बिना किसी दण्ड के कानपुर प्रस्थान करने की आज्ञा दे दी। परन्तु रेजीडेन्ट के उन बदमाशों के साथ लिखित समझौता करने से इन्कार कर दिया और कड़े स्वर में कहा कि यदि उन्होंने वजीर को मारने की कोशिश की तो उन्हें तुरन्त ही मार दिया जायेगा। ५० हजार रुपये के सम्बन्ध में भी कोई वचन न दिया। इसी बीच वजीर के तीन चार सम्बन्धी हाथियों पर ५० हजार रुपया लेकर आये। उस रुपये को रेजीडेन्सी भवन में लाकर रेजीडेन्सी कार्यालय के नीचे कुछ कमरों में रखा गया तथा साथ ही डा० लेगिन को घायल लोगों की चिकित्सा हेतु सहायता प्रदान करने का आदेश दिया गया। धनराशि की रक्षा हेतु रक्षकों को नियुक्त

किया गया जिससे उसकी रक्षा हो सके। इन आतताियियों का उद्देश्य वजीर को भयभीत करके पैसा ऐंठने का था।

उसी दिन दोपहर के समय रेजीडेन्ट ने वाजिद अली से भेंट की। बादशाह इस अशोभनीय घटना से क्रोधित हो चुका था तथा आततायियों को मृत्यु दण्ड देने का इच्छुक था। रेजीडेन्ट को इस बात का पता चला कि वजीर उनके जीवन के सम्बन्ध में विश्वास दिला चुका है इसलिए ऐसा नहीं करना चाहिए। अतः बादशाह उन्हें मृत्यु दण्ड नहीं दे सका जिसके लिए उसने हर सम्भव प्रयास किये। इसके पश्चात आततायियों को अवध सरकार के हवाले किया गया ताकि उन पर सुचारू रूप से मुकद्दमा चलाया जा सके। रेजीडेन्ट ने वाजिद अली शाह से वचन ले लिया कि उन्हें दण्ड नहीं दिया जायेगा।

मुंशी जहीर उद्दीन मौलवी, शैताव अली (अदालते मुफी) मुखालिश हुसैन अमीर और मुंसिफ उद्दौला को उन पर मुकद्दमा चलाने के लिए नियुक्त किया गया। घायल वजीर ने भी बादशाह को एक प्रार्थना पत्र लिखा कि बन्दियों के साथ किसी प्रकार का दुर्व्यवहार न किया जाये। मुकद्दमे के दौरान तफज्जुल हैदर खान एवं हैदर अली अपराधी पाये गये और उनको आजीवन कारावास दिया गया। चौथा आततायी अली अहमद जो पीलीभीत का निवासी था को भी वहीं रवाना किया गया जिसकी गति-विधियों पर सरकार की ओर से कड़ी निगरानी रखी गयी।

डा० लेगिन की चिकित्सा से नवाब अमीनुद्दौला एक मास के अन्दर ही पूर्ण रूप से स्वस्थ हो गया। जब १३ मार्च, १८४७ को बादशाह से भेंट करने के लिए गया तो उसको (खिलत) सम्मानित चोंगा भेंट कर हार्दिक रूप से स्वागत किया गया। डा० लेगिन भी उसके साथ था उसे भी उपहार स्वरूप (खिलत) और २,०००/- रुपये की धनराशि दी गयी इसके अतिरिक्त उसे वजीर ने भी उसी दिन एक हजार रुपया दिया। अन्य व्यक्ति जिन्हें उपहार दिये गये उनमें डा० मुरेरे भी थे जिनको २००/- रु० के मूल्य की हीरे की अँगूठी प्रदान की गयी क्योंकि उसने उसके उपचार के लिए परामर्श दिया था। सैयद इनायत हुसैन सहायक सर्जन को २००/- रुपये नकद तथा हवायट नामक एक अंग्रेज औषधि विक्रेता को १००/- रुपये, एक देशी हकीम शेख वहीद अली को ५०/- रुपये और डा० लेगिन के दो अर्दलियों को २५-२५ रुपये उपहार स्वरूप प्रदान किये गये।

यद्यपि वजीर के स्वस्थ होने के पश्चात बादशाह ने कृपा दृष्टि से भेंट की परन्तु वह निश्चय कर चुका था कि उसको वजीर के पद से हटा दिया जाये। अली नकी खान सभी प्रकार के सम्भव प्रयास कर रहा था जिससे अमीनुद्दौला का पतन हो सके। जिसका उल्लेख ३१ मई, १८४७ को रेजीडेन्ट के उस पत्र से स्पष्ट होता है जो उसने महाराज्यपाल को लिखा। उसमें उल्लेख किया गया था कि अली नकी खान दृढ़ता के साथ इस कार्य में सँलग्न है कि वजीर अमीनुद्दौला और उसके वकील को पदों से हटाया जाये और वजीर के स्थान पर उसे तथा वकील के पद पर अमीर हैदर को

नियुक्त किया जाये। इस कार्य के लिए कई लाख रुपया अली नकी खाँ ने विभिन्न अभिकर्ताओं को भेंट करने की चेष्टा की। रेजीडेन्ट ने यह भी उल्लेख किया कि इस प्रकार के भ्रष्टाचार सम्बन्धी कार्यों में वह सफल नहीं हो सका।

महाराज्यपाल ने रेजीडेन्ट के पत्र का उत्तर देते हुए उसे निर्देश दिये कि यदि वर्तमान वजीर अमीनुद्दौला को पदच्युत किया गया अथवा बादशाह के प्रिय पक्षपातियों के षडयन्त्र के द्वारा उसे त्याग पत्र देने को विवश किया जायेगा तो उससे अधिक अव्यवस्था फैलने की सम्भावना है इसलिए आपको अमीनुद्दौला को ही हर प्रकार से समर्थन देना चाहिए और यदि बादशाह कुछ दूसरे प्रकार से कार्य करें तो आपको वाजिद अली शाह से निजी रूप से भेंट करना चाहिए और उसको अवगत करा देना चाहिए कि ब्रिटिश सरकार पुरानी सन्धियों के अन्तर्गत ऐसे परामर्श दे सकती है जो उसे मान्य ही होना चाहिए। इसका परिणाम यह हुआ कि १८ जून, १८४७ को रेजीडेन्ट ने अपने पत्र के द्वारा बादशाह को सूचित किया कि वह अमीनुद्दौला को समर्थन प्रदान करता है। उसी पत्र में वह बादशाह के प्रिय पक्षपातियों के विरुद्ध जिन्हें शक्ति प्रदान की गयी थी, शिकायत करता था। जैसे हाजी अली शरीफ जो एक साधारण गायक था उसे सेनापति के पद पर नियुक्त किया गया। गुलाम रजा रसूल उद्दौला जो कि एक गायक था उसको एक सैनिक टुकड़ी का सिपहसालार बनाया गया। ऐसे ही कुतुब अली के सम्बन्ध में शिकायत की गयी थी और उसने उसको अवगत कराया कि ऐसा करके उसने वजीर के विरुद्ध कार्य किये हैं।

२६ जून, १८४७ ई० को बादशाह ने उपरोक्त व्यक्तियों के सम्बन्ध में अपनी सफाई प्रस्तुत करते हुए अपने वजीर के कार्यों से असंतुष्ट होने के सम्बन्ध में लिखा जिस पर रेजीडेन्ट को आश्चर्य हुआ। बादशाह ने कैप्टन जे० एस० शैक्सपियर और अपने पिता अमजद अली शाह के अनेकों पत्रों के विवरण से अवगत कराने की चेष्टा की कि अमीनुद्दौला अपने अतीत में शिथिलता, असावधानी आदि बरतता रहा। उसे मालगुजारी वसूली के अभाव, तहसीलदारों से घूस लेनी और सेना में जो विघटन उसके सम्बन्धियों रिश्तेदारों और आश्रितों के कारण हुआ आदि दोषों को दृष्टिगत कराते हुए वाजिद अली शाह ने अपने निर्णय से अवगत कराया कि उसको पदच्युत करने का निर्णय लिया है।

अमीनुद्दौला को पदच्युत करने के अन्य कारणों का भी उल्लेख मिलता है। एक बार रेजीडेन्ट नवाब वाजिद अली शाह को अवध की व्यवस्था सुधारने की सलाह दे रहा था, उस समय अमीनुद्दौला भी वहाँ था उसने रेजीडेन्ट से कहा कि अभी बादशाह को तख्तनशीन हुए दिन ही कितने हुए हैं। धीरे-धीरे जैसा आप चाहेंगे अवध का वैसा प्रबन्ध कर दिया जायेगा। इस पर रेजीडेन्ट चुप हो गया किन्तु बादशाह ने इससे यह समझा कि रेजीडेन्ट तथा वजीर की यह मिली साजिश सिर्फ मुझे बदनाम करने की है। भविष्य में फिर इस तरह की बातें न हों, इस लिए वाजिद अली शाह ने उनको पद से हटा दिया। दूसरा कारण जो प्रतीत होता है कि वजीर के ऊपर हमला

होने पर रेजीडेन्ट ने हमलावरों को रुपये का लालच देकर वजीर को छुड़वाया था, इस कारण भी वाजिद अली शाह अमीनुद्दौला पर रेजीडेन्ट के साथ मिला हुआ होने का शक करता था।

इन कारणों के अतिरिक्त यह भी विचार किया जाता है कि वास्तव में अमीनुद्दौला को हटाने में अँग्रेजों का ही हाथ था। वे नहीं चाहते थे कि शासन सुधारने जैसी चीज अवध में हो। अमीनुद्दौला ने अवध की स्थिति को सुधारने के लिए ज्यों ही प्रयास प्रारम्भ किए, अँग्रेजों को पसन्द नहीं आये तो उन्होंने उसे हटाने का कोई षडयन्त्र रचा। इसमें उन्हें सफलता मिली। इस विचार धारा की पुष्टि मेजर वर्ड के इस कथन से होती है कि अवध दरवार में जो व्यक्ति जितनी लगन से काम करता था, कम्पनी को वह उतना ही अप्रिय लगता था।

यहाँ यह बात उल्लेखनीय है कि साधारणतया बादशाह वजीर के कार्यों में हस्तक्षेप नहीं करता था इस कारण मालगुजारी की अदायगी करवाना और दूसरी त्रुटियों के लिए वजीर को जिम्मेदार नहीं ठहराना चाहिए था। अमीनुद्दौला एक वरिष्ठ और अनुभवी मंत्री था और बादशाह का बाल्याबस्था से ही शिक्षक रहा जिससे वह उसके स्वभाव से भलीभाँति परिचित था। सम्भवतः यह सम्पूर्ण प्रशासन को सुधारने के लिए प्रयत्नशील रहा। लेकिन आततताइयों के आक्रमण के कारण लगभग एक महीने के लिए कार्य करने में बिल्कुल असहाय हो गया। ऐसी स्थिति में उसके विरोधियों को एक अवसर प्राप्त हुआ जिसमें वृद्ध वजीर पर लांछन लगाये गये।

३ जुलाई, १८४७ को स्पष्ट हो चुका कि नवाब अमीनुद्दौला को पदच्युत कर दिया गया। परन्तु वृद्ध वजीर से सम्बन्धित जो अफवाहें उसके कानों तक पहुँची तब वह शाही राजभवन में साधारण रूप से गया। जहाँ महाराजधिराज बालकृष्ण और राजा कुन्दन लाल उसकी प्रतीक्षा कर रहे थे। कुछ समय के पश्चात मुसायब उद्दौला राजभवन से बाहर आया और महाराजा बाल कृष्ण और राजा कुन्दन लाल को सूचित किया कि बादशाह उनसे भेंट करना चाहता है लेकिन वे दोनों अमीनुद्दौला के बिना अन्दर जाने में हिचकिचाने लगे। जिस पर उन्हें दूसरी बार बुलाया गया वह अन्दर आये। अमीनुद्दौला को वहाँ से वापस जाने को आदेश दिया गया।

दोपहर के समय एक चोवदार दरोगा शेख अकबर अली के पास आया और उसको वजीर के पदच्युत होने के सम्बन्ध में सूचित किया गया। साथ ही यह भी बताया कि उन्हें घोड़े पर सवार होने के लिए मना कर दिया गया है। इसके अतिरिक्त वजीर के अन्य कार्यो में कोई अवरोध नहीं था बस वह बादशाह से नहीं मिल सकता है।

अमीनुद्दौला इज्जत और मान सम्मान के साथ अपने पद से हट गया। उसके हटते ही सम्भलती हुई प्रशासन व्यवस्था को आघात पहुँचा। अमीनुद्दौला के हटाये जाने पर वजीर पद के तीन दाबेदार खड़े हुए— मीर मेंहदी जो वाजिद अली शाह के उत्तराधिकारी काल में अपनी स्वामिभक्ति सिद्ध कर चुका था और वाजिद अली शाह

ने सिंहासनारूढ़ होते समय उसे अमीरुद्दौला को मिली उपाधि प्रदान की थी, नवाब शरफद्दौला तथा अली नकी खान। आरम्भ में इसमें सफलता अमीरुद्दौला को मिली और वह वजारत के पद पर नियुक्त हो गया। अमीरुद्दौला को सिंहासनारूढ़ होते ही उसकी स्वामिभक्ति को देखते हुए वजीर बनाने का विचार किया और अब जब अवसर मिला तो उसे वजीर नियुक्त किया।

उसी समय में मुसलमानों द्वारा एक मन्दिर खोदे जाने पर हिन्दू दुकानदारों ने अपनी दुकानें बन्द कर दीं। इसकी शिकायत रेजीडेन्सी पहुँची तो रेजीडेन्ट ने साहूकारों को बुलाया। बाद में अमीरुद्दौला पर अव्यवस्था का आरोप लगा कर उसे वजीर पद से हटा दिया गया।

अमीरुद्दौला के हटते ही शफुद्दौला ने प्रयत्न किया कि वह वजीर के पद पर नियुक्त हो जाये, किन्तु अँग्रेजों ने दीवान महाराजा बालकृष्ण की सहायता लेकर कूटनीतिक ढंग से बादशाह के खास व्यक्तियों रजीउद्दौला तथा कुतुबउद्दौला को ५६ हजार रुपया देकर बादशाह का मन शरफुद्दौला की ओर से फेर दिया।

बादशाह ने रेजीडेन्ट के सम्मुख अली नकी खाँ को नियुक्त करने का सुझाव रखा यद्यपि रेजीडेन्ट ने अली नकी खाँ का समर्थन तो किया परन्तु वाजिद अली शाह से उसकी स्थिति को सोच विचार कर महत्वपूर्ण कदम उठाने को कहा। बादशाह ने उत्तर दिया कि उसके लिए यह सम्भव नहीं कि पुनः इस मामले पर सोच विचार करे। इस पर रेजीडेन्ट ने बादशाह को चेतावनी दी कि इस प्रकार के कदम उठाने के जो दुष्परिणाम होंगे उसका वह स्वयं उत्तरदायी होगा और उसका अली नकी खाँ को नियुक्त करने के लिए आग्रह महाराज्यपाल की प्रतिक्रिया के विरुद्ध होगा।

जहाँ तक अली नकी खान को वजीर के पद पर नियुक्त करने का सम्बन्ध था अँग्रेजी रेजीडेन्ट यद्यपि वाजिद अली शाह को न रोक सका परन्तु रेजीडेन्ट के परामर्श से कुछ अन्य प्रकार के सुधार विभिन्न दिशाओं में किये गये जैसे मीर मेंहदी जिसने हिन्दुओं के मन्दिरों को विध्वंस करवाया था तथा नगर के सहायक फरजन्द अली दोनों को पदच्युत कर दिया गया। हिन्दुओं की सम्पत्ति पुनः उनको वापस की गयी। सेना में भी कड़े नियम बनाये गये।

५ अगस्त, १८४७ ई० को अली नकी खान वजीर नियुक्त हो गया। अली नकी खान ने राजकीय आदेशों के अनुसार वजीर के पद पर कार्यभार सम्भाला। परम्परागत रूप से उसी दिन रेजीडेन्ट ने अपना आभार व्यक्त किया। उसकी नियुक्ति से प्रशासन में अव्यवस्था और असंतोष की स्थिति इतनी बढ़ गयी कि दरबार और रेजीडेन्सी के मध्य अत्यधिक खिंचाव उत्पन्न हो गया जिसका अन्तिम परिणाम अवध के विलय में हुआ। वह ऐसा व्यक्ति था जिसे प्रशासनिक अनुभव बिल्कुल न था। बुद्धिमत्ता से कार्य न करने के कारण राज्य की स्थिति और भी अधिक बिगड़ी।

वजीर अमीनुद्दौला का निष्कासन अवध के इतिहास की ऐसी महत्वपूर्ण घटना है जहाँ से वाजिद अली शाह एवं रेजीडेन्ट के कटु सम्बन्धों की झांकी स्पष्ट दिखायी

पड़ती है। यद्यपि उसका निष्कासन एक आवश्यकता थी लेकिन चातुर्य और रेजीडेन्ट की संस्तुति के अभाव में यह मूर्खता बनकर रह गई जिसने अवध के विलय को तीव्रता प्रदान किया।

अली नकी खाँ की वाजिद अली शाह से भेंट वाजिद अली शाह के युवराजत्व काल में एक वेश्या के कोठे पर हुई थी। उसकी यौवन चंचलता ने युबराज वाजिद अली शाह को काफी प्रभावित किया था। फलतः तख्तनसीनी के पूर्व अपनी "आनन्द सभा" और भोग विलास के लिए जो वाग और महल "हुजूर वाग" बनाया था वह अली नक़ी खाँ के ही देख-रेख में बना था। अली नकी ख़ाँ वाजिद अली शाह का श्वसुर भी था।

अली नकी खाँ ने दरबार में नियुक्ति होते ही वड़ी कूटनीतिक ढंग से कार्य करना आरम्भ किया। एक ओर तो उसने रेजीडेन्ट को अपने पक्ष में किया और अँग्रेजों से मिलकर अपनी इच्छानुसार नवाव के विरुद्ध कुचक्र और षडयंत्र रचना आरम्भ किया, दूसरी ओर बादशाह से भी अपने सम्वन्ध मधुर बनाये रखने तथा उस पर अपना विश्वास जमाये रखने के लिए अपनी लड़की का विवाह उससे कर दिया, जिससे दरबार में उसका प्रभाव और बढ़ गया था।

जब राजकीय राजदूत की नियुक्ति करने की समस्या आयी तो नवाब अली नकी खान ने इत्तखार उद्दौला और महाराजा मेवा राम का नाम प्रस्तावित किया जिस पर रेजीडेन्ट ने आपत्ति व्यक्त की और कहा कि इस पद पर ऐसे व्यक्ति को नियुक्त करना चाहिए जो अँग्रेजों से सुसंस्कृत रूप से बातचीत करने की योग्यता रखता हो। राजा कुन्दन लाल ने वल पूर्वक मोहम्मद खान का नाम प्रस्तावित किया तब रेजीडेन्ट ने इसी बीच पूरी जानकारी करने के पश्चात स्वीकृति प्रदान की। यह शाही राजदूत कलकत्ते में रहता था।

इसके पश्चात अन्जूम उद्दौला को वकील नियुक्त किया गया। महाराजाधिराज वालकृष्ण को सम्मानित चोंगा देकर अपने पूर्व पद (वित्त मंत्री) पर ही रखा गया। अन्य अधिकारियों की भी नियुक्ति की गयी।

शासन प्रवन्ध का भार अपने मंत्रियों पर छोड़कर अब नवाव रास-रंग में डूबा रहता था। उसके समीप अब वजीर का नहीं, बल्कि मुसाहबीनों (हमेशा साथ रहने वालों) का प्रभाव बढ़ गया था। नवाब भी इन लोगों की बातों को अधिक महत्व देता था। अली नकी खां को यह बात अब सबसे अधिक खलती थी, इसलिए उसने बादशाह के इन मुसाहबीनों का प्रभाव दरबार से समाप्त करने में रेजीडेन्ट का सहारा लिया। कर्नल स्लीमैन जब दौरे पर थे, तब अली नकी खां ने स्थापन्न रेजीडेन्ट मेजर बर्ड के सहयोग से मुसाहबीनों को दरबार से निकलवाना आरम्भ कर दिया। कर्नल स्लीमैन को जब इस बात की सूचना मिली तो उसने मेजर बर्ड को एक पत्र लिखा कि वजीर हमारे द्वारा उन लोगों को इसलिए दरबार से हटाना चाहता है कि नवाब को उससे कोई शिकायत का मौका न मिले और मुसाहबीनों के हट जाने से वजीर का प्रभाव नवाब

के दरबार में बढ़ जाये। मेजर बर्ड को जब यह पत्र प्राप्त हुआ तो उसने वजीर की सलाह पर मुसाहबीनों को हटवाने में सहायता देना अस्वीकार कर दिया।

नवाब के समीप रहने वाले लोगों में रजीउद्दौला, कुतुबउद्दौला, साबितउद्दौला, बहाजुद्दौला, नजीबुद्दौला आदि लोग थे जो परस्पर एक दूसरे के भाई, पिता तथा रिश्तेदार भी थे। इन लोगों का प्रभाव नवाब पर इतना अधिक था कि वे जो कुछ उसे समझा देते थे, नवाब उस पर ध्यान अधिक देता था। अमीनुद्दौला तथा अली नकी खां जैसे वजीरों की तुलना में नवाब की दृष्टि में मुसाहबीनों का प्रस्थान प्रमुख था।

एक दिन बादशाह ने वजीर अली नकी खान से अवध राज्य की आय की स्थिति ज्ञात करने के लिए बुलाया। कुछ दिन पूर्व सम्पूर्ण लखनऊ नगर में यह फैल गया था कि बादशाह वर्षा ऋतु में बाग गऊघाट जो नदी के किनारे पर स्थित है, में निवास करेंगे। अकस्मात् उसी दिन सम्पूर्ण बस्तुएं इत्यादि एकत्र करने के लिए बादशाह के तहसीन गंज में स्थित निवास पर वजीर आया। कुछ आलोचकों ने यह अफवाह उड़ा दी कि वजीर को पदच्युत कर दिया गया है। परन्तु वास्तविकता यह थी कि बादशाह का वजीर के साथ कुछ खिचाव उत्पन्न हो गया था इसलिए वह चला गया और दिलकुशा में निवास करने लगा। उसने निश्चित आदेश दे दिया कि कोई उसके पास न आये। परन्तु बुन्दे अली खान कोचवान इस आदेश से वंचित था और आन्तरिक और वाह्य प्रबन्ध के लिए इस व्यवित को अधिकार था। केवल घोड़े की बग्घी बाहर से जाया करती थी और सीमा के अन्दर कोई बाहर से अन्दर प्रवेश नहीं करता था। वजीर अली नकी खां को भी अन्दर आने की अनुमति नहीं थी। इस अफवाह से अली नकी खान बहुत परेशान थे। अन्ततः मोहम्मद अली खान के माध्यम से दरोगा बुन्दे को अपनी स्थिति से अवगत कराया कि बादशाह अली नकी खान के सम्बन्ध में क्या धारणा रखता था।

बुन्दे अली और मोहम्मद अली खान के मध्य काफी परिचय था। इस समय बुन्दे अली खान शिविर पर पहुँचा और अश्व बाजक (सहीम) को कुछ रुपये देकर अपनी सूचना दिलवायी। वहाँ से उसे उत्तर प्राप्त हुआ कि कल तीन बजे भेंट होगी। अन्ततः जब भेंट हुई तो नवाब अली नकी खान की स्थिति का वर्णन किया। बुन्दे अली खान ने उसकी तस्दीक की और कहा कि अली नकी खान की बजह से ही दूर रहा हूँ। उसके समाधान के लिए बताया कि मैं कल गाड़ी उस तरफ से लाऊंगा तो नवाब अली नकी खान का सलाम हो जायेगा। इसी योजना के अन्तर्गत बग्घी उधर से निकली, अली नकी खान ने सलाम किया और उनके चरणों पर सिर झुकाया। बादशाह ने उसे क्रोधित दृष्टि से देखा और गाड़ी से उतरे तो बुन्दे अली खान से बहुत नाराज हो गये। उसने सौगन्ध खाकर अपने को मुक्त किया और कहा कि इसमें मेरा कोई दोष नहीं है।

उसी दिन बादशाह को यह दृष्टिगत हुआ कि कुछ सिपाही बन्दूकों के घोड़े चढ़ाये हुए घूम रहे हैं। बादशाह ने बुन्दे अली खान से पूछा कि यह कौन लोग हैं। उसने प्रार्थना की कि यह जंगल है, यहां बहुत से व्यक्ति घूमते फिरते हैं। यहां बागियों को

समाप्त करने एवं सुरक्षा हेतु सिपाही घूमते फिरते हैं। बादशाह बुन्दे अली खान की इस प्रकार की बातों को सुनकर बहुत भयभीत हुआ और उसी समय केसर बाग में प्रस्थान करने की इच्छा व्यक्त की परन्तु बुन्दे अली खान ने रात्रि के समय जाने को मना कर दिया।

अली नकी खान को बुन्दे खान ने कहला भेजा कि वह अगले दिन जब बादशाह को लेकर आयेगा तो आप उस समय बिल्कुल तैयार रहिए। अगले दिन बादशाह कुछ कागजात देखकर गाड़ी में सवार होकर चले तो कोचवान ने कैसर बाग के पास गाड़ी के पहिए इधर-उधर चढ़ा दिये, जिसके कारण गाड़ी रुक गयी। अली नकी खान वहीं खड़ा था। उसने बादशाह से प्रार्थना की हुजूर यहीं उतरिये और उन्हें सलाम किया। बादशाह ने उतर कर मस्जिद में प्रवेश किया और वजीर ने कुरान हाथ में लेकर अपनी सफाई की सौगन्ध खाई और अपनी स्वामिभक्ति का पूर्ण विश्वास दिलाया जिससे बादशाह उससे प्रसन्न हुआ। बादशाह ने बुन्दे अली खान कोचवान को सम्मानित करने के लिए वजीर से "खिलत" अर्थात शाही चोंगा मंगवाया। अली नकी खान ने कहा कि बुन्दे की नगर में बहुत अफवाह उड़ी है इसलिए उसकी उपाधि में परिवर्तन कर दिया जाये। बादशाह प्रसन्न हुआ और खिलत प्रदान की। हुजूर आलम बहादुर की उपाधि से भी विभूषित किया। प्रातः काल के समय सभी ने उसको भेंट प्रदान की। उपरोक्त वर्णन के आधार पर सिद्ध होता है कि बुन्दे अली खान का बादशाह पर कितना अधिक प्रभाव था और इसी कारण बादशाह और अली नकी खान के मध्य जो खिचाव था वह समाप्त हो गया।

वाजिद अली शाह के शासन काल में आंतरिक कारण व अंग्रेजी कुचक्रों से रंजित कुछ ऐसी घटनायें हुईं जिनको प्रशासनात्मक कमजोरी के रूप में प्रचारित कर प्रशासन को नाकारा सिद्ध करने का प्रयास किया गया। यद्यपि कम्पनी शासित अन्य क्षेत्रों में प्रशासनिक स्थिति और भी कमजोर थी पर जिन घटनाओं को वाजिद अली शाह के प्रशासन व्यवस्था की दुर्बलता कहा गया उनमें कुछ इस प्रकार हैं।

अंग्रेजी रेजीडेन्ट ने वाजिद अली शाह को समझाया कि कुतुबुद्दौला आदि डूमों को निष्कासित कर देना चाहिए जिस कारण वाजिद अली शाह ने रजीउद्दौला, नजीबुद्दौला, बहादुरउद्दौला और निसार अली खान को शीघ्र ही बन्दी बनाया और अस्तबल के अन्दर लौह सलाखों के कटघरों में बन्द कर दिया। सावत उद्दौला और वहा उद्दौला इत्यादि दो वर्ष पहले से बादशाह के क्रोध के शिकार थे परन्तु उन्हें वेतन मिलता था और वे वजीर के दरबार में उपस्थित रहते थे। राज्य के कुछ उच्चाधिकारियों ने ऐसी चालें चलीं कि इन लोगों को निष्कासित कर दिया गया। २ जून, १८५८ ई० को उपरोक्त बन्दी अपने परिवार सहित गाड़ियों पर सवार होकर तिलंगों की हिरासत में मीर मोहम्मद अकबर के कमाण्ड के संरक्षण में कानपुर रवाना हुए और निष्कासित होने से २ दिन पहले सम्पूर्ण नगर में मनादी कर दी गयी थी कि यदि इन व्यक्तियों से किसी का कोई झगड़ा है तो वह सरकार में नालिश करें। इनमें

से बहाउद्दौला और रजीउद्दौला को वेतन इत्यादि कुछ त्रुटियों के सम्बन्ध में रोक दिया गया शेष सभी को भेज दिया गया। तुर्क अश्वरोही सैनिकों का रिसालेदार अनायत उल्ला खान, रजीउद्दौला से विदाई लेकर अपने निवास स्थान गया वह भी बाद में आकर सम्मिलित हुआ था।

१५ फरवरी, १८५५ को बादशाह को एक और शोचनीय स्थिति का सामना करना पड़ा जब उसके सैनिकों ने कैप्टन बारलो की कमान्ड में सिकोरा स्थान पर विद्रोह कर दिया क्योंकि सिपाहियों के बकाया वेतन अदा नहीं किया जा रहा था। कैप्टन बारलों ने उन सैनिकों को अपने अनुभव हीन भ्राता के हाथ में छोड़कर लखनऊ की ओर प्रस्थान किया। विद्रोही सैनिकों ने उस पर अत्याचार करके बन्दी बना लिया।

रेजीडेन्ट को उपरोक्त सूचना प्राप्त हुई तो उसने बादशाह से प्रार्थना की कि वह गोंडा बहराइच जिलों के रेवेन्यू कलैक्टरों को तुरन्त आदेश दें ताकि (सिंकोरा उस जनपद में स्थित था) सैनिक टुकड़ियों की वेतन सम्बन्धी अदायगी की जा सके। उसके साथ ही ऊँट पर सवार होकर संदेश वाहक को शीघ्र ही भेजा जाए ताकि विद्रोहियों की गति विधियों की सूचना प्राप्त हो सके। बादशाह ने विद्रोही सिपाहियों को आदेश दिया कि वह तुरन्त ही अपने अधिकारियों से मुक्त होकर अपने आदमियों को अपनी माँगों के सम्बन्ध में दरबार में भेजें। इसी बीच रेजीडेन्ट ने स्वतः अपने आफीसर कमान्डिग से प्रार्थना की कि वह राजधानी की ओर विद्रोही सैनिकों को बढ़ते देख उनका सामना करने के लिए तत्पर रहें, ताकि उनका डटकर मुकाबला किया जा सके। इसी प्रकार के आदेश ६१ देशी पद्धति टुकड़ियों को भी दिये।

अगले दिन रेजीडेन्ट ने वाजिद अली शाह से भेंट की और उसके सैनिकों को जिन्हें छावनी में तैयार रहने के लिए आदेश दिये गये थे, प्रतिकूल आदेश देने के लिए कहा गया। ऐसा होने से नगर में अशान्ति एवं अव्यवस्था फैलने की आशंका हो सकती थी। रेजीडेन्ट ने बादशाह के आदेशों को स्वीकार किया लेकिन उसके साथ ही उसने बलपूर्वक कैप्टन बारलों का वहाँ पर भेजने की आवश्यकता पर बल दिया जिससे कि सम्बन्धित यूरोपियन अधिकारियों को मुक्ति दिलाया जा सके। वाजिद अली शाह ने उसे बताया कि वह कैप्टन बारलों को इससे पूर्व ही भेज देता, यदि वह अस्वस्थ न होता। जैसाकि उसके वजीर ने उसके अस्वस्थ होने की सूचना दी थी।

रेजीडेन्ट ने बादशाह और वजीर दोनों को ही सूचित किया कि जहाँ तक उसकी जानकारी का सम्बन्ध है, बारलो बिल्कुल अस्वस्थ नहीं था वह नगर में स्वस्थ की भाँति चल फिर सकता था। रेजीडेन्ट ने बादशाह से प्रार्थना की कि वह यूरोपियन अधिकारियों को हिंसात्मक रूप से प्रताड़ित होने से बचाये और वह यह आशा लेकर वहाँ से विदा हुआ कि कैप्टन बारलों को शीघ्र ही वहाँ (सिंकोरा) भेजा जाये लेकिन बारलों वास्तव में लखनऊ में ही रहा।

इसी मध्य में सीमा पुलिस के एक अधिकारी कैप्टन ने सीघ्र सिंकोरा की ओर प्रस्थान किया ताकि वह अपने भाई के बच्चों एवं पत्नी को लाकर फैजाबाद में शरण

दें लेकिन उसके भाई ने उसको यह कार्य करने के लिए रोका क्योंकि उसका विचार था कि ऐसा करने से संभवतः विद्रोही आवेश में कहीं बन्दी बनाये गये समस्त अधिकारियों का वध न करदें, इसके पश्चात वह विद्रोहियों के शिविर की ओर गया और अपने भ्राता और रेजीडेन्ट के दूसरे यूरोपियन अधिकारियों, जो नजरबन्द थे, के साथ चला गया।

६ मार्च, १८५३ को रेजीडेन्ट ने महाराज्यपाल को सूचित किया कि लखनऊ दरबार से प्रेषित होकर कैप्टन, उसके बच्चों और पत्नी को विद्रोहियों ने मुक्त कर दिया और वे सभी सुरक्षित लखनऊ पहुँच गये थे।

मौलवी मसीउद्दीन ने जो एक समकालीन लेखक होने के अतिरिक्त बादशाह का विश्वसनीय परामर्शदाता भी था, वाजिद अली शाह के सैनिकों के विद्रोह को विपरीत ढंग से प्रस्तुत किया है। वह उस विद्रोह का पूर्ण आरोप कैप्टन बारलों की नीति एवं गतिविधियों पर लगाते हुए उल्लेख करता है कि उसने अपनी रेजीमेन्ट के सैनिकों का वेतन राज्य कोष से गबन कर लिया। उस पर मुकद्दमा चलाने के उपरान्त ३५ हजार रुपये धनराशि का गबन सिद्धकर अपराधी ठहराया गया।

लार्ड डलहौजी जिस समय अवध के अपहरण की योजना में संलग्न हो रहा था, नवाब अवध रास-रंग में डूबा था। उसी समय अयोध्या के हनुमान गढ़ी में हिन्दू मुसलमानों के मध्य में संघर्ष उत्पन्न हो गया। संघर्ष की मूल स्थिति यह थी कि गुलाम हुसेन नामक एक सुन्नी फकीर हनुमान गढ़ी के महन्तों के यहाँ पलता था। किसी बात पर एक दिन महन्त से बिगड़कर उसने सुन्नी मुसलमानों को यह कहकर भड़काना शुरू किया कि हनुमान गढ़ी के भीतर औरंगजेब ने मस्जिद बनवा दी थी, जबकि औरंगजेब द्वारा अयोध्या में मस्जिद बनवाने की चर्चा किसी इतिहास ग्रंथ में नहीं मिलती, उसे बैरागियों ने गिरा दिया है। उसके इस कथन पर मुसलमानों ने हनुमान गढ़ी पर धावा बोल दिया। दोनों में जमकर संघर्ष हुआ जिसमें लगभग ११ हिन्दू और ७५ मुसलमान मारे गये। मुसलमानों को ठेल कर हनुमान गढी से बाहर कर दिया गया। तत्कालीन कोतवाल मिर्जा बेग ने स्थिति को सम्हालने का काफी प्रयत्न किया।

इसके उपरान्त मुसलमानों ने इस घटना की चर्चा विस्तार से वाजिद अली शाह से की। किन्तु नवाब ने इस घटना को तटस्थ भाव से स्वीकार किया और बिना जांच के किसी एक को दोषी ठहराना उचित नहीं समझा। मुसलमानों का जब उस पर पुनः दबाब पड़ा तो उसने एक अर्जी पर साफ-साफ लिख दिया "हम इश्क के बन्दे हैं मजहब से नहीं वाकिफ, गर काबा हुआ तो क्या, बुतखाना हुआ तो क्या।" इसके उपरान्त उसने इस घटना के लिए एक कमीशन नियुक्त किया, जिसमें मुसलमानों को दोषी ठहराते हुए हिन्दुओं को बरी कर दिया।

फिर भी मुसलमान इस निर्णय से संतुष्ट नहीं हुए। उन्होंने अमेठी निवासी मौलवी अमीर अली के नेतृत्व में पुन. अयोध्या पर आक्रमण करने का प्रयास किया।

उनकी इस प्रवृति को देखकर अंग्रेजों ने मौलवी अमीर अली को बागी करार दिया। वाजिद अली शाह ने भी मौलवी अमीर अली को विद्रोह न करने के लिए समझाया, किन्तु मौलवी अमीर अली पर इसका कुछ भी प्रभाव नहीं पड़ा। वह मुसलमानों की एक सेना संगठित कर अयोध्या की तरफ चल पड़ा। नवाब को जब यह सूचना मिली तो उसने संघर्ष रोकने के लिए अपनी भी एक सेना भेज दी। रुदौली के पास शुजागंज में मौलवी अमीर अली और नवाब की सेना में संघर्ष हुआ, जिसमें मौलवी अमीर अली मारा गया। इस तरह नवाब ने एक बड़े विद्रोह को शान्त किया।

भविष्य में पुनः अव्यवस्था न हो सके इसलिए वजीर ने सम्पूर्ण अधिकारियों को आदेशित किया कि कहीं भी १० व्यक्ति यदि एकत्रित हों तो उन्हें गिरफ्तार कर लिया जाये, हनुमान गढ़ी में आन्दोलन के विरुद्ध कोई भी अव्यवस्था करें उसे हिरासत में ले लिया जाये।

यद्यपि उपरोक्त प्रकार की अव्यवस्था ब्रिटिश सीमाओं के अन्दर भी होती रहती थीं और हिन्दु और मुसलमान साधारणतया आपस में लड़ते रहते थे, लेकिन अवध सभी प्रकार के विवादों से घिरा हुआ था और हनुमान गढ़ी में आकस्मिक रूप से विवाद हुआ करते थे। राज्य के तथाकथित कुशासन के साथ इसका कोई सम्बन्ध नहीं था। लेकिन फिर भी बादशाह को विवश किया गया और धमकी दी गयी कि वह इस प्रकार की अव्यवस्था को शीघ्र ही समाप्त करें। परन्तु वाजिद अभी शाह एक उलझन में था क्योंकि एक ओर अंग्रेज आलोचना कर रहे थे और दूसरी ओर विद्रोही खुले आम शत्रुता कर रहे थे। इतना होने पर भी यह उसके पक्ष में कहा जाता है कि उसने उस स्थिति का दृढ़ता से सामना किया। हिन्दुओं को सुरक्षित किया जिनका कि अवध क्षेत्र में बहुमत था।

————

अध्याय—९

ईस्ट इंडिया कम्पनी द्वारा प्रशासन में हस्तक्षेप

अवध की सीमाओं तक कम्पनी की विस्तारवादी और साम्राज्यवादी नीति का जाल वहाँ के बहादुर और चतुर नवाबों के कारण जितना अपेक्षित था, नहीं पहुँच सका था परन्तु नवाब शुजाउद्दौला के परास्त होने के साथ ही १७६४ ई० में अँग्रेजों का प्रभाव अवध के नवाबों और उनके उत्तराधिकारियों पर बढ़ता गया। परिणाम स्वरूप नवाबों के प्रशासन में भी ऐसा परिवर्तन होने लगा कि इसमें आधा मुगल और आधा अँग्रेजों का मिश्रण प्रतीत होने लगा। १८०१ की संधि के अनुसार नवाब के अधिकारों को अधिक सीमा तक नियन्त्रित किया गया और रेजीडेन्ट उसके निर्णयों के विरुद्ध कार्य करने का अधिकार प्राप्त कर चुका था। यदि रेजीडेन्ट चाहता तो वह आन्तरिक प्रशासन में भी समय-समय पर हस्तक्षेप कर सकता था। वाजिद अली शाह के शासन काल में उसके असैनिक प्रशासन में अँग्रेजों के हस्तक्षेप में इतनी अधिक वृद्धि हो गयी थी कि बिना अँग्रेजों के परामर्श के वह अपने पुराने वजीर अमीनुद्दौला को भी नहीं हटा सका था। अली नकी खान की वजीर के पद पर की गयी नियुक्ति में भी अँग्रेजों ने हस्तक्षेप किया।

लखनऊ के रेजीडेन्ट द्वारा निरन्तर अवध सरकार के विरोध में प्रतिकूल आख्यायें भेजने के कारण गवर्नर जनरल लार्ड हार्डिंग ने पंजाब के सिक्खों को परास्त कर कलकत्ता जाते समय लखनऊ के रेजीडेन्ट से भेंट करने का निश्चय किया। पंजाब से कलकत्ता जाते समय वह कानपुर रुका। वाजिद अली शाह ७ नवम्बर, १८४७ ई० को जनरल मिर्जा जावेद अली खान नवाब सरफराज उद्दौला, नवाब अली नकी खान, कैप्टन बर्ड और कर्नल बिलकीस के साथ महाराज्यपाल का स्वागत करने कानपुर पहुँचे। ८ ववम्बर को बादशाह की भेंट हुई और उसी समय उसने लखनऊ जाने का निमन्त्रण दिया। १० नवम्बर को वाजिद अली शाह लखनऊ आया ताकि स्वागत की तैयारी की जा सके। १५, नवम्बर को महाराज्यपाल लखनऊ पहुँचा। वाजिद अली शाह और रेजीडेन्ट ने उसका भव्य स्वागत किया। बादशाह ने उसे बहुमूल्य उपहार भी प्रदान किए। लखनऊ में ग्यारह दिन विश्राम करने के उपरान्त १२ वें दिन उसने प्रस्थान किया। अवध से चलते समय गवर्नर जनरल ने वाजिद अली शाह से हाथ मिलाया और उससे मित्रता के निष्ठापूर्ण निर्वाह का आश्वासन भी दिया, साथ ही यह चेतावनी भी दी कि यदि अवध की बिगड़ती स्थिति का सुधार दो वर्ष के भीतर न कर लिया गया तो कम्पनी की सेनाएँ अवध का प्रबन्ध अपने हाथ में सम्भाल लेंगी। वाजिद अली शाह ने दशा सुधारने का आश्वासन दिया।

यद्यपि महाराज्य पाल का अत्यन्त, मनोरंजन एवं सहृदयता पूर्ण सत्कार किया गया परन्तु महाराज्यपाल ने अपने एक पत्र के द्वारा २३ नवम्बर, १८४७ को सशक्त चेतावनी दी कि वाजिद अली शाह ने दो वर्ष के अन्दर स्थिति को सुधारने का प्रयास न किया तो १८३७ की सन्धि के अन्तर्गत ईस्ट इण्डिया कम्पनी अवध की सरकार को अपने अधिकार में ले लेगी। वाजिद अली शाह को इस प्रकार से अपनी सेना और सरकार के सम्बन्ध में नवीन सुधार करने के लिए जोर दिया। जबकि वास्तविकता यह थी कि न तो कम्पनी सरकार की ओर से सुधार करने का कोई सुझाव दिया गया था और न कोई योजना ही बतायी गयी थी। उल्टे बादशाह राज्य की व्यवस्था हेतु कोई आवश्यक कदम उठाता भी था, तो रेजीडेन्सी की तरफ से कोई न कोई अवरोध उत्पन्न कर दिया जाता था, जिससे अवध की स्थिति में सुधार न हो पाये।

वाजिद अली शाह गवर्नर जनरल का पत्र प्राप्त होते ही अपने मंत्री अली नकी खाँ के साथ अवध में सुव्यवस्थित शासन-प्रबन्ध के लिए एक नयी योजना बनाने की तैयारी में जुट गया। उसने जो योजना तैयार की उसके अनुसार नवाव ने नवाबी पद्धति से अवध की शासन व्यवस्था चलाने की तुलना में ब्रिटिश प्रणाली को अपनाने पर जोर दिया था। प्रयोग के रूप पर नवाव ने इसे उन क्षेत्रों पर लागू करने का निश्चय किया था जो ब्रिटिश सीमा से मिले हुए थे। उसने जब यह योजना रेजीडेन्ट कर्नल रिचमण्ड के सम्मुख रखी तो कर्नल से इसे मान लिया, किन्तु इस योजना पर सही सलाह लेने के लिए उसने अपने सहायक रेजीडेन्ट मेजर बर्ड के द्वारा उत्तरी-पश्चिमी अँग्रेजी सीमा के लेफ्टीनेन्ट गवर्नर थामसन के पास भेज दिया। थामसन ने नवाब द्वारा प्रस्तावित योजना को खूब ध्यान पूर्वक पढ़ा। काफी सोच-समझकर उसने इन प्रस्तावों पर कुछ टिप्पणियां भी दीं और इसके कार्यान्वयन के लिए कुछ आवश्यक मापदण्ड निर्धारित किया। मेजर बर्ड इसे आगरा से वापस लेकर लौटा और अली नकी खाँ को सौंप दिया। वाजिद अली शाह ने थामसन के सुझावों को स्वीकार करते हुए इस पर अपनी अन्तिम स्वीकृति भी दे दी परन्तु कर्नल रिचमण्ड से इसे सरकारी रूप देने के पूर्व गवर्नर जनरल की अनुमति लेने के लिए कलकत्ता भेज दिया। इस समय लार्ड हार्डिंग की जगह लार्ड डलहौजी गवर्नर जनरल बनकर आ गया था। उसकी नीति आरम्भ से ही बचे हुए राज्यों के हड़पने की थी। इसलिए उसने इसे बिना देखे ही अपने विदेश सचिव हेनरी इलियट को अस्वीकार करने का निर्देश दे दिया। हेनरी इलियट ने यह टिप्पणी लगादी कि यदि नवाब अपना सम्पूर्ण राज्य ब्रिटिश सरकार को सौंप दे तभी इस पर कुछ विचार किया जा सकता था। लेकिन राज्य के थोड़े से भाग के लिए इतनी परेशानी मोल लेना बेकार है और नवाव की योजना को वापस कर दिया। योजना के अस्वीकृत होने पर भी मेजर बर्ड ने इसे अपने पास दबाये रखा। नवम्बर, १८४८ ई० में कर्नल रिचमण्ड की जगह जब कर्नल स्लीमैन रेजीडेन्ट होकर लखनऊ आया तो मेजर बर्ड ने उसके सम्मुख नवाब की यह योजना रखी, किन्तु तब तक लार्ड डलहौजी के आरोपों का जवाब देने का समय निकल चुका था।

उस समय वाजिद अली शाह हृदय रोग से पीड़ित था। कर्नल स्लीमैन ने महाराज्यपाल के सचिव इलियट एवं स्वयं महाराज्यपाल लार्ड डलहोजी को अपने पत्रों के द्वारा वाजिद अली शाह के अस्वस्थ होने की सूचना दी। इसका संक्षिप्त सार इस प्रकार दिया जाता है। ३० जनवरी, १८४९ बनाम इलियट "बादशाह अब भी अत्यन्त बीमार हैं परन्तु किसी प्रकार के खतरे का भय नहीं है"। २० मार्च, १८४९ बनाम इलियट "बादशाह अब भी वैसा ही है जैसाकि मैंने पिछले पत्र में उल्लेख किया है।" इस पत्र में बादशाह की मृत्यु होने की दशा में महाराज्यपाल की इच्छा प्राप्त करने का और मृत्यु के पश्चात् का वर्णन है। २३ मार्च, १८४९ बनाम इलियट "बादशाह की स्थिति बुरी नहीं बल्कि बेहतर है।" ८ मई, १८४९ लार्ड डलहौजी को पत्र जिसमें यह उल्लेख था कि शारीरिक रूप से बादशाह आशा से अधिक स्वस्थ है, उसे हृदय की धड़कन का रोग है। ६ सितम्बर, १८४९ लार्ड डलहौजी के नाम एक पत्र आया जिसमें उल्लेख है कि बादशाह को शारीरिक पीड़ा नहीं है उनकी घबराहट और हृदय का धड़कना भी अधिक समय के लिए मूर्छित कर देता है।

१८४९ ई० का पूरा वर्ष हृदय रोग की पीड़ा में व्यतीत हुआ। एक दिन उसकी स्थिति इतनी गम्भीर हो गयी कि उसने अपने वस्त्र फाड़ डाले और उससे अगले दिन प्रातः काल से सायं काल तक नेत्र वन्द किये हुए मूर्छित अवस्था में पड़ा रहा। सभी बेगमें शोक से व्याकुल होकर रोने-चिल्लाने लगीं। १० मास व्यतीत होने के पश्चात भी शरीर कांपता था इतना भी साहस न था कि नमाज भी अदा कर सके। जब उपचार से कुछ लाभ न हुआ तो झाड़-फूंक तान्त्रिक उपचार होने लगा। आमिल, जोशी, पण्डित आने लगे और उन्होंने सब कुछ किया, परन्तु रोग बढ़ता गया।

जब उपरोक्त झाड़-फूंक से कोई लाभ न हुआ तो बादशाह के कुछ चन्द चापलूसी करने वाले पक्ष पातियों ने षडयन्त्र करके भूत-प्रेत एवं शाजिन्न की झूठी गाथा का आडम्बर प्रारम्भ कर दिया। एक कश्मीरी सादिक अली नामक व्यक्ति जो अमजद अली खान के कार्यालय में था, शाजिन्न बनाया गया। इस सम्बन्ध में इंतजार उद्दौला उल्लेख करते हैं कि "एक भवन का नक्खास में निर्माण करवा कर उसमें एक बुर्ज बनवाया और बीच में उसकी छत रिक्त रखी गयी। उस छत के अन्दर से दूसरे भवन में जाने का मार्ग बनाया गया। एक कश्मीरी सादिक अली नामक व्यक्ति को जिन्न बनाया और उसने उस बुर्ज की रिक्त छत में से दूसरे भवन में जाकर जिन्नों एवं प्रेतों की तरह बातें कीं। इस भवन के सम्बन्ध में एक और लेखक का उल्लेख है कि उपरोक्त भवन मोहल्ला सख्तम नगर में वाके था।

इस षडयन्त्र में ऐसे-ऐसे व्यक्ति सम्मिलित थे और छल कपट का जाल ऐसा बिछाया गया था कि चतुर से चतुर व्यक्ति उसमें फंस जाए।

अन्ततः २२ नवम्बर, १८४९ ई० को अशफाकउल सुल्तान उमराव बेगम ने इस षडयंत्र का भांडा भोड़ दिया। सादिक अली द्वारा अपराध की क्षमा याचना करवाकर २ दिसम्बर, १८४९ ई० को उसे बादशाह के समक्ष उपस्थित कर दिया गया। उसने

उस सम्पूर्ण कहानी का ब्यौरा दिया जिसमें कुछ षडयन्त्र कर्ताओं के नाम भी दिये। २५ मई, १८५० को बादशाह के आदेश के द्वारा स्त्री पुरुष मिलकर १४ व्यक्तियों को को बन्दी बनाया गया। उनमें कुछ व्यक्ति विशिष्ट चापलूस थे। इन १२ व्यक्तियों को २ जून, १८५० को और शेष दो व्यक्तियों को १३ जून, १८५० को नगर से निष्काषित कर दिया गया।

इस प्रकार १८४८ ई० के अन्तिम चरण से लेकर १८५० के प्रारम्भ तक लगभग डेढ़ वर्ष तक बादशाह का रोग ग्रसित अवस्था में व्यतीत हुआ। रुग्णावस्था के कारणों से वह प्रशासनिक कार्यों को देखने में असमर्थ हो गया था तथा प्रशासन का सम्पूर्ण कार्य वजीर पर आ गया था। बादशाह ने प्रशासन के सम्बन्ध में एक लिखित कानूनी संहिता जिसको "दस्तूरे वाजिदी" कहा जाता है, वजीर को दी। रेजीडेन्ट भी वजीर का सम्पूर्ण सहयोग देने के लिए इसलिए तैयार हो गया था क्योंकि उसे प्रशासन के सुधार करने की कुछ आशायें इस कारणवश मिल चुकी थी जिसमें बादशाह के प्रिय अनुकूल पक्षपातियों ने वजीर के कार्यों में अवरोध उत्पन्न न करते हुए उसको भारत सरकार के सचिव को सूचित किया कि वाजिद अली शाह कभी भी अपने राज्य के कार्यों में उपस्थित नहीं होता। वह अपना अधिकतर समय मनोरंजन के कार्यों में व्यतीत करता है उसने यह भी आशंका व्यक्त की कि संभवतः वजीर प्रशासन के मामलों में सुधार न कर पायेगा।

शासन के कार्य भार से मुक्ति पाकर वाजिद अली शाह पुनः इन्द्रिय सुख की ओर झुक गया और वह अपना अधिकांश समय संगीतिज्ञों, नृत्यकों, गायकों आदि के बीच में व्यतीत करने लगा।

इसका परिणाम यह हुआ कि इस प्रकार के व्यक्ति धन और शक्ति प्राप्त करने में संलग्न थे। रेजीडेन्ट को भी यह ज्ञात हो गया कि वजीर स्वयं एक गुप्त समझौते के अन्तर्गत इस बात को स्वीकार कर चुका है कि वह कभी भी उन गायकों, नृत्यकाओं आदि को पीड़ित नहीं करेगा। उन अयोग्य पक्षपातियों में से एक कुतुब अली को एक नवीन न्यायालय का न्यायाधीश बनाया गया। गुलाम रजा को घनघोर रिसाले का अधिकारी नियुक्त किया गया। इसी प्रकार से रजी तुरब अली, बहादुर सिंह और हाजी अशरफ को भी सेना में अधिकृत किया गया और मसी उद्दीन को रेजीडेन्सी भवनों का दरोगा नियुक्त किया गया।

रेजीडेन्ट ने स्वाभाविक रूप से इस प्रकार की नवीन नियुक्तियों पर अपना क्रोध प्रकट किया। उसने विशेष रूप से रेजीडेन्सी वकील अन्जुम उद्दौला पर एक आपत्ति की कि उसने उसका एक सन्देश तीन दिन के पश्चात बादशाह को पहुँचाया था, जबकि उसको तुरन्त ही पहुँचा देना चाहिए था। इसलिए उसने उसको पदच्युत करने की मांग की। बादशाह ने गुलाम रजा को हटाकर अस्थाई रूप से रेजीडेन्ट को प्रसन्न कर दिया। कुछ मास के पश्चात कुतुब अली ने एक अन्य उपकार किया। उसने सुल्तानपुर के इलाके के परगना प्रतापगढ़ के सुजाखुर ताल्लुकेदार बलभद्र सिंह को राजस्व कोष

से एक लाख रुपया गबन कर लेने का आरोप लगाकर पहले तो वन्दी बनाया परन्तु वाद में अब्दुल हादी खान रिसालदार के कहने पर मुक्त कर दिया । जब वाजिद अली शाह को इस घटना का पता चला तो उसने व्यथित होकर मंत्री को निर्देश दिए कि भविष्य में कुतुव अली सरकारी कार्यों में अपनी लेखनी का प्रयोग न करे ।

कुतुब अली के उपरोक्त व्यवहार से रेजीडेन्ट ने विवश होकर सभी गायकों, नृत्यकाओं, नपुंसकों, युवतियों आदि को निष्कासित कर दिया तथा अवध के उन सभी कर्मचारियों को निष्कासित कर दिया जो रेजीडेन्ट के मत के अनुसार अपराधी पाये गये ।

२२ जून, १८४८ को रेजीडेन्ट प्रातः काल के समय एक ऐसे समझौते की रूपरेखा अपने साथ लेकर आया जिसमें यह उल्लेख था कि नपुंसकों और गायकों को पदों पर रखना अथवा किसी प्रकार का पक्षपात करना निषेध है । वादशाह ने उस समझौते में दो एक परिवर्तन करने के बाद उस पर अपनी मोहर लगाने का आदेश दे दिया । उसके साथी हाजी तुरब अली और औराद अली जिन दोनों के चरित्र अत्यन्त संदिग्ध थे, को निष्कासित करने के आदेश दे दिये । उस लिखित समझौते में जो वादशाह और रेजीडेन्ट, लैफ्टीनेन्ट कर्नल आर० एच० रिचमण्ड के बीच हुआ था, में स्पष्ट रूप से यह उल्लेख था कि नपुंसक गायक या गायिकायें इत्यादि प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से सेना सम्बन्धी कार्यों में हस्तक्षेप नहीं करेंगे और न उन्हें सेना में रखा जाएगा, न पुलिस और कारावास सम्बन्धी कार्यों में भर्ती की जाएगी और न ही राजस्व वाले कार्यों में उन्हें रखा जाएगा ।

इस समझौते के अन्तर्गत शाही दरबार का आततातियों से छुटकारा हुआ और वजीर को प्रशासन में सुधार करने के लिए अवसर प्राप्त हुआ ।

डलहौजी दिल्ली से बहादुर शाह और अवध से वाजिद अली शाह का शासन हटा कर उस पर अंग्रेजी शासन लादना चाहता था। इसलिए उसने भारत पहुँचते ही सर्वप्रथम अवध के अपहरण की योजना बनाई और इसके लिए उसने कर्नल डब्लू० एच० स्लीमैन कर्नल रिचमण्ड के स्थान पर ११ जनवरी, १८४९ ई० को अवध का रेजीडेन्ट नियुक्त हुआ ।

अवध में आने से पूर्व कर्नल स्लीमैन अपराधियों का पता लगाने, ठगी, डकैती, हत्यायों का सफलता पूर्वक दमन कर चुका था और स्लीमैन की ख्याति एक योग्य, ईमानदार कर्मठ, साहसी एवं निष्पक्ष अधिकारी के रूप में थी । वह इस बात का इच्छुक था कि उसे कर्नल सदर लैण्ड के स्थान पर राजपूताना का रेजीडेन्ट नियुक्त किया जाए ।

लार्ड डलहौजी ने अवध के अपहरण के मूल साधन के रूप में कर्नल स्लीमैन का उपयोग किया । उसने कर्नल स्लीमैन को जो पत्र लिखा उससे सारी स्थिति स्पष्ट हो जाती है ।

"... प्रिय कर्नल स्लीमैन,—मुझे बड़ा दुख हुआ है कि मैं राजपूताना में कर्नल सदर लैण्ड के स्थान पर आपको नियुक्त किए जाने वाली आपकी इच्छा पूरी न कर पाया। लेकिन मैं अधिक समय तक दुखी नहीं रहूँगा। क्योंकि भाग्यवश मुझे ऐसा प्रबन्ध करने का अधिकार मिल गया है, जिसे आप भी बहुत पसन्द करेंगे। कर्नल रिचमण्ड लखनऊ में रेजीडेन्ट पद से त्याग पत्र देना चाहते हैं। १ अक्टूबर, १८४७ ई० में भूतपूर्व गर्वनर जनरल ने अवध के बादशाह से मिलकर साफ शब्दों में कह दिया कि यदि राज्य की दशा में दो वर्षों तक कुछ सुधार न कर लिया गया तो ब्रिटिश सरकार उसे अपने अधिकार में ले लेगी। यह आशा करना बिल्कुल व्यर्थ ही है कि सन् १८४८ ई० तक अवध में कोई विशेष सुधार हो सकेगा। आपने जो ख्याति और शासन का अनुभव प्राप्त किया है, वह किसी से छिपा नहीं है। इसलिए आपका नाम प्रस्तावित करते हुए बड़े गौरव का अनुभव कर रहा हूँ। आशा है कि आप लखनऊ में रेजीडेन्ट के पद का भार सम्हाल सकेंगे। आशा है आप इस प्रस्ताव को अस्वीकार नहीं करेंगे। साथ ही यह आशा भी कर रहा हूँ कि मैं स्वयं आपसे मिलूँ। आपका आभारी-डलहौजी।"

कर्नल स्लीमैन ने आते ही डलहौजी के निर्देशानुसार अवध में सीधा हस्तक्षेप प्रारम्भ कर दिया। उसने अवध के प्रशासन के सम्बन्ध में अनेकों आख्यायें प्रस्तुत कीं। उसने वाजिद अली शाह के विरुद्ध आक्षेप लगाया कि वह प्रशासन के कार्य में पूर्णतया अयोग्य है। अवध में प्रशासन नाम की कोई चीज़ नहीं है। बादशाह गायकों, नृत्यकाओं के अतिरिक्त किसी से नहीं मिलता है। वह जनता की समस्याओं से भी अनिभिज्ञ है, उसे उसकी कोई चिन्ता नहीं है। उसने वजीर के विरुद्ध उल्लेख किया कि वह तुच्छ बुद्धि का व्यक्ति है और कार्य भार सम्भालने के योग्य नहीं है।

कर्नल स्लीमैन ने बादशाह के दरबार में अपने मनोनुकूल मंत्रियों की नियुक्ति करके बादशाह की स्वतन्त्रता पर आघात करना आरम्भ कर दिया। अवध दरबार के जिन मंत्रियों को वह अपने अनुकूल नहीं समझता था और उन्हें बादशाह का निकटवर्ती जानता था, उन्हें उसने हटाना शुरू कर दिया। इस तरह वह अवध के कार्यों में सीधा हस्तक्षेप कर अवध की स्थिति को बदतर करने में पूरी तरह से जुट गया। वाजिद अली शाह के दूसरे बेटे मिर्जा वली अहद की मृत्यु की सूचना से उन्हें वंचित रखने, नवाब के एकदम निकट के व्यक्ति मिर्जा वसी अली खां को बरखास्त करने, कर्नल स्लीमैन द्वारा अपनी हत्या करने के षडयन्त्र की चर्चा सरेआम करने, मुंशी कुर्रन अहमद की नमक-हरामी पर वजीर दरबार से निकाले जाने पर कर्नल स्लीमैन का बादशाह से कड़ा विरोध प्रकट करने, बादशाह को नीचा दिखाने के लिए, उसे अपने नाम वाली मोहर से गाजी शब्द हटाने का आदेश देने, चतुर सिंह, हनुवंश सिंह, शरफुद्दौला जैसे नवाब विरोधी लोगों को कर्नल स्लीमैन द्वारा सहायता करने जैसे आदि अनेकों उदाहरण हैं जिससे नवाब को बदनाम करने तथा अवध की जनता में उसकी प्रतिष्ठा गिरा देने के लिए कर्नल स्लीमैन ने पूरी सक्रियता से काम किया। इसके अतिरिक्त बदमाशों द्वारा पूरे शाही खानदान को तंग करने, बादशाह की सेवा में जबरन अँग्रेजों को मुलाजिम

रखने, कम्पनी से निकाले हुए अँग्रेजों को बादशाह की सेवा में जबरन भेजने, शाही बेगमों को नवाब के प्रति नफरत पैदा करने, न्याय-व्यवस्था तथा राज्य कर वसूलने में बाधा डालने की इतनी कोशिश रेजीडेन्ट की तरफ से की जाती थी कि नवाब के लिए राज्य-संचालन करना कठिन हो गया और उसकी सामाजिक राजनीतिक स्थिति में काफी उथल-पुथल मच गयी।

नवाब के शासन को निकम्मा बनाने के लिए रेजीडेन्ट पूर्ण प्रयास करता था। वह इतना शक्तिशाली हो गया था कि नवाब के प्रधान न्यायाधीशों के फैसलों की अपीलें भी सुनने लगा। तहसीलदारों की नियुक्ति भी रेजीडेन्ट करने लगा। बादशाह जिसे दण्ड देता, रेजीडेन्ट उसे प्रश्रय देता। बादशाह जिसे नौकरी से निकाल देते, उनके लिए रेजीडेन्ट के द्वार खुले थे। नवाबी शासन में विघ्न डालने के लिए रेजीडेन्ट ने अपना पृथक दरबार लगाना आरम्भ कर दिया और जनता से प्रार्थना पत्र लेने लगा। बादशाह के दरबार से खारिज मुक़द्दमों की सुनवाई भी प्रारम्भ कर दी। कम्पनी के भक्त तहसीलदारों को प्रशंसा पत्र तथा उच्च पद दिये जाते। जिन ताल्लुकेदारों से नवाब अप्रसन्न हुए उससे स्लीमैन साहब घनिष्ठता बढ़ाने लगते, जिसे बादशाह बन्दी बनाना चाहता उसे रेजीडेन्ट प्रश्रय देते। बेगमें षडयंत्रों में भाग लेतीं। अनेक बेगमों को तो रेजीडेन्सी से पेंशन भी मिलने लगी थी। इस प्रकार वे कम्पनी की हिमायत और बादशाह का विरोध करने लगीं। कम्पनी ने कुछ ऐसे जासूस नियुक्त कर रखे थे, जो दरबार का भेद रेजीडेन्ट को लाकर देते थे। इस प्रकार बादशाह की बेचैनी बढ़ गयी थी।

उसने यह सुझाव दिया कि अवध का नया प्रशासनिक संगठन किया जाना चाहिए, जिसमें लखनऊ के ताल्लुकेदारों एवं कुछ देशी न्याय एवं राजस्व विभाग के जनपदों के अधिकारी जो ब्रिटिश सरकार की सेवा कर रहे थे, के सदस्यों सहित एक मिली जुली परिषद का निर्माण करना चाहिए। उसने आशा व्यक्त की कि ऐसा करने से वैसे ही सुरक्षा प्राप्त हो सकेगी जैसी कि अंग्रेजों को अपने प्रान्तों में थी। उसने यह भी कहा कि इसका परिणाम पीड़ित जनता को लाभान्वित करना होगा। इसमें किसी प्रकार की अव्यवस्था की आशंका भी नहीं थी परन्तु इस योजना को कुछ कारणवश कार्यान्वित रूप में नहीं लाया गया और स्लीमैन को आदेश दिये गये कि वह इस मामले में नवीन आदेशों की प्रतीक्षा करें।

स्लीमैन ने अपना व्यवहार बादशाह और वजीर के प्रति इस प्रकार का रक्खा कि जिससे उनमें पारस्परिक शत्रुता बढ़े। वह उस समय केवल "अवध में परिवर्तन" का अर्थ यह समझ रहा था कि बादशाह के हाथ से प्रशासन ले लिया जाए। वह उस समय तक अवध के सम्पूर्ण विलय के सम्बन्ध में विचार नहीं कर रहा था। उसने केवल बादशाह और वजीर को अपमानित करने के लिए कुछ कार्य किये जैसे बादशाह की शाही मोहर से गाजी की उपाधि मिटा दी। इसी प्रकार जब एक व्यक्ति ने एक असत्य रिपोर्ट "बिघारी" के जमींदार के सम्बन्ध में दी, कि उसके भाई छतर सिंह ने एक यात्री का सिर काट लिया है तो रेजीडेन्ट ने बिना बादशाह को अवगत कराये अंग्रेजी सैनिक

उसके विरुद्ध रवाना कर दिये ताकि उसे बन्दी बनाया जा सके और यदि वह मुकाबला करें तो उसके गांव को नष्ट कर दिया जाये। अंग्रेजी सैनिकों ने छतर सिंह को बन्दी बना लिया। छानबीन करने पर यह मालूम हुआ कि किसी का सिर नहीं काटा गया। रेजीडेन्ट के इस हस्तक्षेप से बादशाह बहुत क्रोधित हुआ। अपमानित होकर रेजीडेन्ट से शिकायत की जिससे वसी उद्दीन हैदर को वादी को देने का आदेश दिया।

उपरोक्त घटनाओं के चन्द महीनों के बाद वजीर नवाब अली खान ब्रिटिश छावनी की ओर से अपनी बग्घी में सवार होकर जा रहा था। एक अंग्रेजी सैनिक छाता लगाये अपना भोजन हाथ में लिये हुए जा रहा था। वजीर के कर्मचारियों ने उससे कहा कि वह तब तक अपना छाता बन्द रखे जब तक कि सवारी गुजर न जाये और यदि ऐसा नहीं करता है तो यह सभ्यता के प्रतिकूल है। सैनिक ने मना कर दिया और नवाब के कर्मचारियों ने बलपूर्वक उसके छाते को ले लिया। सैनिक ने उस बिवाद की शिकायत रेजीडेन्ट से की। उसने क्रोधित होकर आदेश दिये कि सैनिकों को अपने छाते लगाये रखने चाहिए। जब वजीर उस दिशा से गुजरे और जब कोई व्यक्ति छाता छीनने की कोशिश करे तो उसकी पिटाई की जाये। जब नवाब उपरोक्त आदेश से अवगत हुआ तो उसने उस मार्ग से निकलना बिल्कुल बन्द कर दिया और वह गोलागंज के मार्ग से जाने लगा।

यद्यपि तत्कालीन व्यवस्था के अनुसार रेजीडेन्ट को न्यायिक व्यवस्था में हस्तक्षेप करने का अधिकार नहीं था परन्तु इस ब्रिटिश रेजीडेन्ट ने ब्रिटिश रेजीडेन्सी को मुकद्दमा सुनने के लिए एक न्यायालय का रूप दिया तथा कभी-कभी मुख्य न्यायाधीश अथवा "मुज तहीद उन अस्र" के निर्णयों की याचिकायें भी इसमें सुनी जाती थीं जिससे इसने उच्चतम न्यायालय का रूप ले लिया था।

इस सम्बन्ध में काशी प्रसाद आमिल का मामला महत्वपूर्ण स्थान रखता है जिसे कर्नल स्लीमैन ने दो अंग्रेजों के वध करने के आरोप में कैप्टन हैज के न्यायालय में मुकद्दमा चलाकर दण्डित किया था। एक दूसरे मामले में मुहम्मद हसन तहसीलदार को दण्डित किया जिसने रामदत्त पाण्डे का वध किया था। उसका मुकद्दमा "मुजतहीद उन अस्र" के द्वारा चलाया गया और वह निर्दोष पाया गया परन्तु रेजीडेन्ट ने सरकार पर दबाव डाला कि उसे कत्ल के जुर्म में फांसी की सजा मिलनी चाहिए। अवध के उच्चतम न्यायालय में वाजिद अली शाह के द्वारा उसे फांसी की सजा नहीं दी गयी बल्कि उसको सेवा से पदच्युत करके कारागार में डाल दिया गया।

कर्नल स्लीमैन ने वाजिद अली शाह के प्रत्येक क्षेत्र को प्रभावित करना प्रारम्भ कर दिया। बादशाह के वजीर का सहायक वसी अली खान एक बुद्धिमान योग्य, कर्तव्यनिष्ठ तथा ईमानदार वरिष्ठ अधिकारी था जिसे अंग्रेजी का पर्याप्त ज्ञान था और जो बादशाह तथा रेजीडेन्ट के मध्य एक आवश्यक कड़ी थी जिसमें दोनों के पारस्परिक सम्बन्धों को समझने की क्षमता एवं योग्यता थी। कर्नल स्लीमैन को पूर्ण विश्वास था कि जब तक ऐसा व्यक्ति बादशाह के साथ रहेगा तब तक उसके प्रति कोई

भी विरोधी कार्य करना असंम्भव होगा तथा बादशाह के विरुद्ध कोई सूचना नहीं प्राप्त हो सकेगी । अतएव ऐसे व्यक्ति के निष्कासन की स्थिति पैदा करने की आवश्यकता थी । वसी अली खान के प्रति ईर्ष्या का भाव रखने वाले व्यक्ति भी दरबार में थे जिन्होंने बादशाह से उसके पदच्युत करने के साथ ही लखनऊ से निष्कासन की भी मांग की जिसे उस समय तक अस्वीकार कर दिया जब तक वसी अली के विरुद्ध कोई अपराध सिद्ध न हो सके । लेकिन स्लीमैन ने वाजिद अली शाह से यह कहा कि उसको पदच्युत करने के लिए उसके अपराधों को सिद्ध करने की आवश्यकता नहीं थी । वाजिद अली शाह को विवश होकर रेजीडेन्ट की मांग को पूरा करना पड़ा । १६ मार्च, १८४९ को वसी अली खान को लखनऊ छोड़ने के आदेश दे दिये गये ताकि रेजीडेन्ट को प्रसन्न किया जा सके । परन्तु वह अधिक समय तक लखनऊ से बाहर न रहा क्योंकि उसने भारत सरकार के विदेशी विभाग के सचिव सर एच०एम० इलियट को कुछ मूल्यवान पुस्तकें भेंट करके मोहित कर लिया । जिसने उसे लखनऊ वापस जाने की पुनः अनुमति दे दी लेकिन स्लीमैन उसे सदैव शंका की दृष्टि से देखता रहा ।

इसी प्रकार की एक अन्य घटना घटित हुई जिससे वाजिद अली शाह को अपमानित होना पड़ा । करीम अहमद नामक गायक एक ओर बादशाह के अधिकारियों के बीच कटुता का बीज रोप रहा था और दूसरी ओर रेजीडेन्ट के गुप्तचर का कार्य भी कर रहा था । बादशाह ने इसी अपराध के कारण उसे अपनी राज्य की सीमाओं से बाहर जाने का आदेश दिया जो पुनः स्लीमैन के हस्तक्षेप के कारण वापिस लेना पड़ा । साथ ही स्लीमैन ने एक कठोर चेतावनी दी कि भविष्य में इस प्रकार आदेश न दिया करें ।

कालाकांकर का राजा जसवंत सिंह अत्यन्त निम्न कोटि का व्यक्ति था जिसने राजस्व के भुगतान को स्पष्ट चुनौती दी तथा तहसीलदार का खुला विरोध कर अपनी सुरक्षा हेतु लखनऊ की ओर पलायन किया जहां रेजीडेन्ट की शरण में खुले रूप में रहने लगा । वाजिद अली शाह का छावनी क्षेत्र में कोई अधिकार न था । रेजीडेन्ट का वह कार्य १७९८ एवं १८०१ की सन्धियों की धाराओं के विरुद्ध था जिनमें यह स्पष्ट उल्लेख था कि ईस्ट इन्डिया कम्पनी उन सभी सीमाओं को, जो वजीर के अन्तर्गत आती थीं विदेशी-देशी शत्रुओं के बिरुद्ध सुरक्षा करेगी लेकिन इसके विपरीत रेजीडेन्ट ने एक भगोड़े ताल्लुकेदार को शरण देकर लखनऊ छावनी, एक ऐसे निवास पर रखा जहाँ किसी असैनिक को रहने की ही अनुमति नहीं थी । वाजिद अली शाह ने यद्यपि धीमी गति से उसका विरोध किया लेकिन कोई प्रभाव न पड़ा और न ही राजस्व की अदायगी की गयी ।

उपरोक्त से स्पष्ट है कि लार्ड डलहौजी ने जिस उद्देश्य से स्लीमैन को लखनऊ का रेजीडेन्ट नियुक्त किया था उसका निर्वाह करने का उसने पूरा प्रयास किया । उसने नवाब वाजिद अली शाह को पूर्णरूपेण निकम्मा बना देने का प्रयास किया और उसके गुणों को भी अवगुणों की तरह प्रस्तुत कर उसके शासन को प्रभाव हीन प्रचारित करने

में महत्वपूर्ण योगदान दिया। उस समय में जो विचार उसने नवाब और उसके प्रशासन के सम्बन्ध में व्यक्त किये उनसे अँग्रेजी सरकार को यह विचार बनाने में कि अवध का विलय कर लेना ही उचित है, काफी आधार मिला। स्लीमैन ने डलहौजी को जो पत्र लिखे उनमें से कुछ का सार प्रस्तुत है :—

२३ फरवरी, १८४६ को अवध की सामान्य स्थिति के सम्बन्ध में स्लीमैन ने उल्लेख किया है कि बादशाह शासन के कार्यभार को संभालने में अयोग्य है और उसके मंत्री में योग्यता, गरिमा, उच्च चरित्र का अभाव पाया जाता है। उसने यह भी उल्लेख किया कि विभिन्न पदों के अधिकारियों के मध्य जो राजस्व को एकत्रित करने के लिए रखे गये थे पारस्परिक मतभेद पाया जाता है और ताल्लुकेदारों की दरबार के साथ कोई सहानुभूति नहीं है। इस प्रकार से सम्पूर्ण स्थिति निराशाजनक है।

२० मार्च, १८४६ को उसने लिखा कि बादशाह की बीमारी पहले जैसी है। उन्होंने अभी तक किसी यूरोपियन डाक्टर को दिखाना अस्वीकार कर दिया है। यदि बादशाह मर गये तो नया अहदनामा किसके साथ होगा। एक रीजेन्सी कौन्सिल बनानी होगी जिसके हर एक सदस्य के कर्तव्य निश्चित करने होंगे। इस रीजेन्सी में कौन्सिल के सदस्य कौन हों, इस बारे में सबसे ठिकाने की सलाह राजमाता (मलका किश्वर) से मिल सकती है पर उसे या राज परिवार की किसी स्त्री को राज कार्य में जरा भी भाग लेने की अनुमति नहीं देना है। वर्तमान उच्च पदाधिकारियों को जितना वेतन मिलता है उसकी आधी रकम पेंशन कर दी जाये। रेजीडेन्ट रीजेन्सी कौन्सिल का अध्यक्ष हो। जब तक वली अहद बालिग न हो जाये बादशाह के भाई (मिर्जा सिकन्दर हश्मत) बहुत ही उम्दा आदमी हैं, उनसे भी सलाह ले लेनी चाहिए। बादशाह जब स्वस्थ थे तभी राजकाज में विशेष ध्यान नहीं देते थे। अतएव उनकी बीमारी का खास आय पर कोई असर नहीं है।

स्लीमैन ने अपने ८ मई, १८४६ के पत्र में लार्ड डलहौजी को स्पष्ट किया कि बादशाह ने स्वस्थ होने की अवस्था में भी कार्य नहीं किया। इसी कारण उसकी रोग ग्रस्तता को इतना अधिक महत्व नहीं दिया जा रहा है जितना काम करने की स्थिति में किया जाता था। सरकार का व्यय लगभग एक करोड़ रुपया वार्षिक है। लेकिन इस वर्ष बादशाह की बीमारी और खरीफ की फसल की खराबी के कारण राजस्व ६० लाख से अधिक प्राप्त नहीं हुआ है।

८ मई, १८४६ को उसने लिखा कि बादशाह अब तन्दुरुस्त है इसलिए जब तक वह गद्दी छोड़े नहीं, हम वली अहमद की नाबालिगी के नाम पर रीजेन्सी नहीं कायम कर सकते। वज़ीर दीवान, गवैये, हिजड़े इस समय सब कसम खाकर एक हो गये हैं पर ऐसी एकता ज्यादा दिन तक नहीं टिक सकती।

१८ अगस्त, १८४६ को लिखा गया कि अवध की भूमि भारत में सबसे ज्यादा उर्वर है। यहाँ के आदमी भारत में सबसे अच्छे हैं। हमारे शासन में यह चमन बन सकता है। बादशाह का भाई एक दम निकम्मा और किसी लायक नहीं है। किसी

जिम्मेदारी के योग्य नहीं है। वजीर में उनके पद के अनुकूल एक भी गुण नहीं है और बादशाह का दिमाग ही सही नहीं है।

स्लीमैन ने अपनी एक आख्या २४ सितम्बर, १८४६ के द्वारा स्थिति को अव्यवस्थित और असंतोषजनक वताया और यह भी उल्लेख किया कि ग्रामों, कस्बों, नदियों, सड़कों पर जीवन और संपत्ति की सुरक्षा का प्रवन्ध नहीं है। राजस्व की अदायगी वहुत कम हो गयी है। उसने अपनी आख्या में अनेकों उदाहरण सेना में भर्ती होने वालों के सम्बन्ध में दिये जो अपने निर्धारित मासिक वेतन पाने लगे थे। उसने उन त्रुटियों का भी उल्लेख किया जो असैनिक कार्यों में की गयी थीं। राजकीय सेवाओं में कितनी घूस खोरी पायी जाती थी। अखबार नवीसों की बुराइयों का ब्यौरा भी दिया।

६ दिसम्बर, १८४६ को लिखा कि मौजूदा बादशाह न तो कुछ जानते हैं और न ही कुछ परवाह करते हैं। अपने राज-काज की उन्हें जरा भी चिन्ता नहीं है।

१६ दिसम्बर, १८४६ को लिखा कि आत्म-सम्मान, सिद्धान्त तथा मानवता की भावना से शून्य पक्के लफंगों की शिक्षा दीक्षा के लिये अवध में इजारा के नाजिम (ठेके पर वसूली करने वाला) के स्थान से बढ़ कर संसार में और कोई पाठशाला नहीं है। जब तक हम अवध का पूरा शासन अपने हाथों में नहीं ले लेते, उसका शासन एक ऐसे बादशाह के हाथ में रहेगा जो अपनी प्रजा की भलाई सोचने के लिए तैयार नहीं किया जा सकता। पर बादशाह में सव दोष होते हुए भी लखनऊ की जनता स्नेह करती है, पसन्द करती है।

२२ दिसम्बर, १८४६ को स्लीमैन ने लिखा कि मौजूदा बादशाह न कभी कोई अर्जी पढ़ते हैं, या सुनते हैं या कोई रिपोर्ट देखते हैं। उन्हें अपने निजी हास्य विलास से अवकाश नहीं है। उनके पास बिना मन से उनके कुछ रिश्तेदार घुसे रहते हैं जो बादशाह की मूर्खतापूर्ण भड़ैतियों की वाह वाही करते रहते हैं।

१२ फरवरी, १८५० को लिखा कि बादशाह ने शासन सुधार के लिए या अपनी निजी विलासिता कम करने के लिए कुछ नहीं किया है। सार्वजनिक कार्यों में उन्होंने रत्ती भर भी ध्यान नहीं दिया है इसके पूर्व उन्होंने अपने पिता की नकल शुरू की थी। कुछ सार्वजनिक काम भी देखते थे। कभी-कभी शाही खानदान के लोगों से या कम से कम रईसों से मिल लिया करते थे। मुहकमों के प्रधानों से मिल लेते थे। पर इसमें भी उनको कष्ट होता था और उन्होंने शीघ्र ही इस व्यवस्था को भी समाप्त कर दिया। मेरा ख्याल है कि अपनी पीड़ित जनता के कामों में उनकी कोई रुचि नहीं है और न उसकी रत्ती भर परवाह है। उसके अनुसार एक मात्र उपाय यही है कि पूरे शासन को अपने हाथ में ले लिया जाये और शासन का खर्च काट कर जो कुछ बचे उसे बादशाह तथा शाही घराने में उनके आश्रित पेंशन भोगी लोगों को पेंशन दी जाये। दीवानी के महकमे में जहाँ तक हो अवध के पढ़े-लिखे लोगों को नौकरियां दी जायें।

स्लीमैन ने यहाँ तक लिखा कि हमारी सरकार किसी भी सूरत में मौजूदा हुकूमत का समर्थन नहीं कर सकती।

२४ नवम्बर, १८५१ को उसने अपने पत्र में लिखा कि लखनऊ की हालत ऐसी है कि हमें पूरे देश का शासन अपने हाथ में ले लेना चाहिए। श्रीमान को यह निश्चय करना है कि यह काम एक नयी सन्धि के द्वारा हो या केवल घोषणा मात्र से। सबसे अच्छा तरीका है घोषणा करना। इसमें मर्यादा भी बनी रहेगी। यहाँ तो खजाना खाली हो गया है। शाही परिवार की तथा कर्मचारियों की बकाया तनख्वाह चुकाने के लिए ही ५० लाख रुपया चाहिए। अब तो लोग चाहते हैं कि हमारा शासन हो जाए।

२ जनवरी, १८५२ के पत्र में लिखा कि वजीर कमजोर और नम्बरी लुच्चा है। न तो हमारे वर्तमान सम्बन्ध या प्रधान अधिकारी होने का दावा हमें ऐसा अधिकार देता है कि अवध को जब्त करलें और कब्जे में करलें। हमको अपने कर्जे के नाम पर हैदराबाद की रियासत को जब्त करने का अधिकार हो सकता है पर अवध पर हमारा एक पैसा भी ऋण नहीं है।

१२ जनवरी, १८५२ को उपरोक्त पत्र के सम्बन्ध में ही लिखा कि बादशाह इस योग्य हैं कि उनको गद्दी से हटा दिया जाये और ऐसी सूरत में हमारे सामने तीन ही रास्ते हैं—

१. वली अहद की उम्र इस समय ग्यारह साल की है। उनकी नाबालगी के जमाने में रेजीडेन्ट की सलाह से शासन करने के लिए रीजेन्सी नियुक्त की जाये।

२. सदा के लिये यूरोपीयनों के द्वारा शासन चलाया जाये और राज्य की आमदनी में खर्च काट कर जो बचे, वह बादशाह तथा उनके परिवार को दे दिया जाये।

३. अवध को जब्त कर लिया जाये और शाही खानदान की पेंशन मुकर्रर हो जाये।

पहला प्रस्ताव लार्ड हार्डिंग का था। दूसरा वही है जो हमने सन् १८१७ में नागपुर में किया है। तीसरे प्रस्ताव में एक विकट परिस्थिति पैदा होगी। अब गर्वनर जनरल साहब ही फैसला करें।

कर्नल स्लीमैन अवध राज्य का दौरा करके शासन व्यवस्था की स्थिति का अवलोकन करना चाहता था। यद्यपि रेजीडेन्ट का यह कार्य अब तक की हुई सन्धियों के विरुद्ध था। वाजिद अली शाह तथा ब्रिटिश सरकार ने भी इसका विरोध किया, किन्तु रेजीडेन्ट ने किसी की एक भी बात न सुनी। उसने पूरे राज्य का दौरा करके बड़े जोर-शोर से वाजिद अली शाह के विरुद्ध शिकायतों तथा अन्य प्रकार की सामग्रियों को जुटाने का प्रयत्न शुरू कर दिया। नवम्बर, १८४६ ई० से फरवरी १८५० ई० तक साढ़े तीन महीना के इस दौरे में कर्नल स्लीमैन ने बहराइच, बलरामपुर, प्रयागपुर, गोरखपुर, फैजाबाद, सुल्तानपुर, भदरी, रामपुर, सोती, सीतापुर, ओयल, महोबा, महमूदाबाद, फतेहपुर आदि स्थानों का भ्रमण किया और पूरी रिपोर्ट दो जिल्दों में तैयार करके गर्वनर जनरल के पास भेजी, जिसमें शाही प्रशासन की कमजोरी, जमीदारों की सरकशी एवं उनके आतंक और अत्याचार की झूठी कहानी, प्रजा की शिकायत, आदि बातें विस्तार से तथा काफी असत्य लिखी गयी थी। इस दौरे का मकसद बादशाह के खिलाफ

ऐसे वाकयात जमा करना था, जिससे सल्तनत अवध की जब्ती और बादशाह की माजूली की जा सके। इसी से बादशाह को भी इस दौरे के प्रति इख्तिलाफ था। अनेक घटनाएं तो वास्तविकता से प्राय: दूर थीं और वे नवाब को सिर्फ बदनाम करने वाली ही थीं। अवध में रेजिडेन्ट के निरन्तर हस्तक्षेप से अब अवध के शाही दरबारियों को भी धीरे-धीरे यह विश्वास होने लगा कि अवध के कर्मचारियों का वास्तविक हाकिम शाही दरबार नहीं है, वरन् अंग्रेजी रेजीडेन्ट है। अत: अब वे नवाब के पास जरूरी आदेशों के लिए भी न जाकर रेजीडेन्ट की शरण में जाना अधिक लाभदायक समझने लगे।

स्लीमैन ने प्रत्येक सामाजिक, राजनीतिक अथवा धार्मिक संस्थाओं के सम्बन्ध में अपने पर्यटन के उपरान्त राजकीय प्रशासन के सम्बन्ध में अनेकों विस्तृत आख्यायें भेजीं। उनकी बहुत सी सूचनायें झूठी एवं अतिशियोक्ति पूर्ण हो सकती हैं। अवध में ऐसे व्यक्तियों का अभाव नहीं था जो रेजीडेन्ट के मस्तिष्क में वाजिद अली शाह और उसकी सरकार के विरुद्ध विष वमन करने में असफल हो सकें।

रेजीडेन्ट ने अधिकतर आख्याएं अफवाहों पर निर्भर होकर लिखी। वह इतना सचेत एवं सावधान नहीं था जितना कि उसे होना चाहिये था। उसकी आख्याओं में कई स्थानों पर ऐसे उल्लेख मिलते हैं जिनमें पारस्परिक विरोध पाया जाता है। उदाहरण के लिए उसने २३ फरवरी, १८४९ को अवध की कृषि की स्थिति की कटु आलोचना की परन्तु ३ सप्ताह के पश्चात उसने अपने विचार परिवर्तन करके स्वीकार किया कि अवध का एक विशाल भाग जिसमें बहुमूल्य कृषि इतनी अधिक होती है जो कम्पनी की सीमाओं के किसी हिस्से में नहीं होती थी, परन्तु एक वर्ष के पश्चात उसने पुन: अपने विचार परिवर्तित किये और उपरोक्त वर्णन के विरुद्ध उल्लेख किया। इसी प्रकार से उसने पृथ्वीपति के खत का उल्लेख किया जो २ अप्रैल, १८५० को भारत सरकार के सचिव को भेजा गया वह उससे भिन्न था जो उसी व्यक्ति के सम्बन्ध में २४ दिन के बाद भेजा गया। इस प्रकार स्लीमैन ने नि:सन्देह ही जिस सामान्य स्थिति के सम्बन्ध में अत्यन्त विस्तार से ब्योरा दिया है वह उन तथ्यों पर आधारित थे जिनको कभी भी ठीक प्रकार से प्रमाणित नहीं किया गया था। जिस समय रेजीडेन्ट अपने पर्यटन पर था तो उसके प्रथम सहायक कैप्टन बर्ड ने वाजिद अली शाह को विवश करके उनके प्रिय पक्षपातियों, गायकों, नपुंसकों आदि को जो कभी-कभी अनुचित प्रकार से राज्य के कार्यों में हस्तक्षेप करते थे, पदच्युत करवा दिया। स्लीमैन ने अपने सहायक के कार्यों का अनुमोदन नहीं किया। वह चतुर था और उसे मालूम था कि मुख्यमंत्री (वजीर-ए आला) भी उन गायकों को हटाने के लिए इच्छुक था। परिणाम स्वरूप गायकों नपुंसकों को हटाने से प्रशासन के सुधार पर कोई विशेष प्रभाव न पड़ा। इसके अतिरिक्त वजीर का वाजिद अली शाह पर पूर्व की अपेक्षा अधिक प्रभाव पड़ने लगा।

दिसम्बर, १८५१ को लार्ड डलहौजी फतेहगढ़ की अंग्रेजी छावनी का निरीक्षण करने हेतु गया। वाजिद अली शाह ने उसे लखनऊ आने का निमन्त्रण दिया जिसको उसने अस्वीकार कर दिया। इसके पश्चात वाजिद अली शाह ने अपने उत्तराधिकारी

को उसके प्रति सम्मान प्रकट करने हेतु एवं कुछ महत्वपूर्ण मामलों के सम्बन्ध में भेंट करने की आज्ञा मांगी। परन्तु महाराज्यपाल ने पुनः उत्तराधिकारी एवं किसी दूत से भेंट करने के प्रार्थना पत्र को अस्वीकार कर दिया। इतने पर भी वाजिद अली शाह ने राजा बहुखत्यावर सिंह जो रेजीडेन्ट के साथ सेनापति के रूप में आया था, को एक शाही चोंगे से सम्मानित किया। वाजिद अली शाह ने अन्ततः हताश होकर एक पत्र २६ दिसम्बर, १८५१ को भेजकर स्पष्ट किया कि महाराज्यपाल को निमन्त्रित करने का उद्देश्य अवध के अन्दर हुए प्रशासनिक सुधारों से अवगत कराने के अलावा भविष्य में किये जाने वाले सम्भावित सुधारों की रूपरेखा एवं महाराज्यपाल के मस्तिष्क में व्याप्त शंकाओं का समाधान करना था। इसी पत्र में उसने यह भी स्पष्ट किया कि यदि महाराज्यपाल स्वयं नहीं आ सकते तो कम से कम उसे उत्तराधिकारी वजीर को किसी ऐसे स्थान पर जो फतेहगढ़ और लखनऊ के बीच हों, भेंट करने की अनुमति प्रदान कर वास्तविक स्थिति से अवगत कराने का अवसर तो दे सकते थे।

रेजीडेन्ट ने फतेहगढ़ के स्थान पर महाराज्यपाल से भेंट करने से पूर्व अवध के प्रशासन के सम्बन्ध में एक और आख्या भेजी जिसमें यह उल्लेख किया गया था कि बादशाह अपने व्यर्थ के प्रिय पक्षपातियों के द्वारा घिरा हुआ है और उसका सैनिक प्रबन्ध अव्यवस्थित हो चुका है। उसने आय और व्यय के सम्बन्ध में उल्लेख किया कि जब से (१३ फरवरी, १८४७) वाजिद अली शाह सिंहासनारूढ़ हुआ था उसने वह सभी अर्थ कोष (लगभग ६ लाख रुपया) जो उसके पिता ने आरक्षित धन के रूप में रखा था, के अलावा सम्पूर्ण राज्य का वर्तमान राजस्व भी व्यय कर दिया। यद्यपि उसके पदोचित होने के बाद लगभग साढ़े ४५ लाख रुपया का दावा किया जाता था उसमें अधिकतर ऋण के रूप में था जो असत्य था। सब लेखा जोखा मिलाया गया तो वास्तव में ७ लाख रुपया ही बिना ब्याज की किश्तों में अदा करना शेष रह गया था और उस कार्य के लिए मुंशी अमीर अली खान को बाद के आय-व्यय के लेखा जोखा तय करने हेतु भेजा गया था। उसका व्यय, आय से २२ लाख रुपया अधिक था। अब उसके पास कोई आरक्षित कोष नहीं है और उसे कोई ऋण देने को भी तैयार नहीं था। राज्य की १८५१ की उपरोक्त यह स्थिति रेजीडेन्ट के अनुसार थी, जो प्रमाणों पर आधारित नहीं थी।

यदि उपरोक्त रेजीडेन्ट की आख्या सत्य होती तो धन के अभाव के कारण वाजिद अली शाह अपने शासन को न चला सकता था। परन्तु उसने १८५६ तक लगभग आने वाले ५ वर्षों तक अपने शासन को सुचारु रूप से चलाया। उस मध्य में न तो किसी निजी साहूकारों या ब्रिटिश सरकार से अपना शेष बकाया धनराशि की अदायगी के लिए ऋण मांगा और न ही उसको पदच्युत करने के पश्चात कोई बड़ा शेष ऋण ही बाकी था।

दूसरी ओर वाजिद अली शाह ने विभिन्न व्यक्तियों के नाम पर रुपया २०५०६०००.०० शून्य आना शून्य पाई सरकारी ऋण पत्रों पर लाभ के निमित्त धन

प्राप्त करने के लिए लगाये और इसके अतिरिक्त ७ लाख रुपया मृतक बादशाह अमजद अली शाह की समाधि पर व्यय करने के लिये ब्रिटिश सरकार को देने हेतु निरन्तर ऋण के रूप में लगाया।

सुधारों के सम्बन्ध में वाजिद अली शाह ने जो उल्लेख किये थे वह निम्न प्रकार थे—

१. विभिन्न जनपदों में अजाहरा पद्धति के स्थान पर अमानी पद्धति का लागू करना।

२. सैनिकों की नियुक्ति करना जो मुख्य मार्गों पर चलते हुए यात्रियों की सुरक्षा कर सकें।

३. अवध के सीमावर्ती झगड़ों का निपटारा करना।

४. डाकुओं एवं आततायियों के गिरोह को बन्दी बनाकर दण्डित करना जो लूट रहे थे।

५. न्याय सम्बन्धी सहायक न्यायालयों का प्रबन्ध करना इत्यादि।

उपरोक्त सुधारों के सम्बन्ध में उसने महाराज्यपाल से इसलिए प्रार्थना की कि वह स्वयं आकर प्रशासन को देखे जिससे उसके मस्तिष्क में शासन के सम्बन्ध में शंकायें उत्पन्न हो चुकी हैं उनका निराकरण हो सके। परन्तु लार्ड डलहौजी ने निरंकुशतापूर्ण उसकी सब बातों को रद्द कर दिया और भेंट करने के लिए मना कर दिया।

जब बादशाह को रेजीडेन्ट की विपरीत आख्या के सम्बन्ध में संकेत मिला तो उसने अपने एक दूत अशफाक हुसेन नामक व्यक्ति के द्वारा अपनी समस्याओं को कलकत्ता में प्रेषित करने का निर्णय लिया। १४ अप्रैल, १८५३ को अशफाक हुसैन ने महाराज्यपाल से भेंट करने का असफल प्रयास किया जिसमें यह स्पष्ट किया गया कि बादशाह रेजीडेन्ट के द्वारा ही लिखा पढ़ी कर सकता है। अशफाक हुसेन खान ने उद्देश्य में विफल होने के पश्चात महाराज्यपाल के सचिव सी० एलन से भेंट करने का प्रयास किया परन्तु उसे कहीं से भी कलकत्ता के अंग्रेज अधिकारियों के द्वारा सहायता प्राप्त न हो सकी।

उपरोक्त घटना के उपरान्त बादशाह ने महाराज्यपाल से रेजीडेन्ट के माध्यम से भेंट करने के लिए एक वकील की नियुक्ति करने का निर्णय लिया। जून, १८५३ ई० को प्रमाण युक्त परिचय पत्र एवं पत्र रेजीडेन्ट के द्वारा महाराज्यपाल को देने लिए रवाना किया।

स्लीमैन ने बादशाह के पत्र को अग्रसारित करते हुए यह टिप्पणी लिखी कि अवध के बादशाह की ओर से वकील का महाराज्यपाल के समक्ष उपस्थित होने को कभी भी निषेध नहीं किया गया। गाजीउद्दीन हैदर से अपने समय में एक व्यक्ति की नियुक्ति की इच्छा व्यक्त की। नसीरुद्दीन हैदर ने भी जुलाई, १८३३ को अपनी ओर से वकील मौलवी करीम हुसैन को महाराज्यपाल से भेंट करने के लिए नियुक्त किया था। लेकिन ५ फरवरी, १८३५ को महाराज्यपाल ने एक दृढ़ता पूर्ण (डाट फटकार)

पत्र नसीरुद्दीन हैदर को लिखा था जिसमें उस पर आरोप लगाया गया था कि वह अपने शर्मनाक कार्यों को छोड़े। परिणाम स्वरूप उसके क्षेत्र में गड़बड़ी व्यापक रूप से हो गई और फिर १८३५ के पश्चात् बादशाह के प्रतिनिधित्व के लिए किसी वकील की नियुक्ति नहीं की गयी थी।

फजल उल रहीम की नियुक्ति के सम्बन्ध में रेजीडेन्ट ने स्पष्टीकरण दिया कि वाजिद अली शाह ने ऐसी नियुक्ति की है जिसकी कोई जानकारी नहीं है तथा उसकी जानकारी उस उसी समय हुई जबकि उसे बादशाह के द्वारा प्रेषित पत्र जो उसके माध्यम से महाराज्यपाल को प्रेषित करना था, प्राप्त हुआ। उसने शंका व्यक्त की कि सम्भवत: बादशाह को भी इस नियुक्ति के बारे में कोई जानकारी नहीं है। जो शायद वजीर और उसके पक्षपातियों के हित में लागू हो। ३१ मई, १८५३ को एक उर्दू पत्र "जामें जहाँ" जो कलकत्ता से प्रकाशित होता था, में फजल उल रहीम को अवध के वकील के रूप में उल्लेख किया गया। वह शायद कुछ कार्य के लिए सम्भवत: महारानी से मिलने इंग्लैण्ड जाये। रेजीडेन्ट ने उपरोक्त समाचार की ओर भी महाराज्यपाल का ध्यान आर्कषित किया।

इस प्रकार स्लीमैन, डलहौजी की आशाओं के अनुरूप अवध की छवि धूमिल करने में काफी सहायक सिद्ध हुआ था। परन्तु काम निकल जाने के बाद डलहौजी स्लीमैन को लखनऊ से हटाना चाहते थे। अस्वस्थता के कारण स्लीमैन ने अवकाश की चर्चा की। डलहौशी ने जनरल आउट्रम को अदन से बुला लिया। ५ दिसम्बर, १८५४ को आउट्रम ने लखनऊ के रेजीडेन्ट का चार्ज लिया।

कर्नल आउट्रम को रेजीडेन्ट का कार्य भार ग्रहण करने के पूर्व ही डलहौजी ने २१ नवम्बर, १८५४ की अपनी एक आख्या में पथ प्रदर्शन करने के लिए विशेष अनुदेश दिये।

उसने बताया कि यदि बादशाह की मृत्यु हो जाये तो उसके ज्येष्ठ पुत्र को सिंहासनारूढ़ कर देना चाहिए और अस्थाई रूप से प्रशासन वजीर चलाता रहे। १८०१ की सन्धि के प्राविधान के अन्तर्गत रेजीडेन्ट के अधीन वजीर प्रशासन चलाता रहे जब तक कि उसको मार्ग दर्शन हेतु भारत सरकार से नये अनुदेश न मिल जायें। यदि ऐसा प्रतीत हो कि बादशाह की मृत्यु की कोई सम्भावना नहीं है तो सभी कार्य बादशाह को उसी प्रकार से करना चाहिए जिस तरह कि वह पूर्व वर्षो से कर रहा हो। यथासंभव अवध के मामले में किसी भी प्रकार से हस्तक्षेप न किया जाये परन्तु इस तथ्य को न भुलाया जाये कि अवध की सरकार परीक्षण की स्थिति में है।

अन्तत: डलहोजी ने यह उल्लेख किया कि कर्नल आउट्रम लखनऊ पहुँचते ही वहाँ की वर्तमान स्थिति का निरीक्षण करें और निश्चय करें कि क्या स्थिति उसी प्रकार की है जैसा कि कर्नल स्लीमैन उल्लेख करता रहा था। क्या लार्ड हार्डिंग ने जो ७ वर्ष पूर्व १८०१ की सन्धि के अन्तर्गत बादशाह से सुधार करने के लिये कहा था, किये या

नहीं और क्या हमें उन पगों का उठाना आवश्यक है जिनसे अवध की त्रुटिपूर्ण स्थिति को सुधारा जा सके, जिसके अन्तर्गत अवध पर्याप्त समय से पीड़ित था।

२४ नवम्बर, १८५४ को भारत सरकार के सचिव एडमास्टोन ने कर्नल आउट्रम को एक पत्र के द्वारा आदेश दिये कि वह अवध की स्थिति का अन्वेषण करके उसकी आख्या प्रस्तुत करे। आउट्रम ने उस दिशा में कार्य करना प्रारम्भ कर दिया। उसने सीमावर्ती जनपदों, शाहजहांपुर, फतेहगढ़, कानपुर, फतेहपुर, आजमगढ़, जौनपुर, गोरखपुर और इलाहाबाद जो ब्रिटिश सीमाओं के अन्तर्गत थे, के दण्ड नायक अधिकारियों (मजिस्ट्रेटों) को लिखा और इस सम्बन्ध में अन्वेषण करने के लिए पूँछा कि क्या हत्या, लूटमार, पशुओं को बलपूर्वक ले जाना, और डकैतों के अपराध पिछले छः सात वर्षो के अन्तराल में बढ़े हैं या कम हुए हैं और यदि बढ़े हैं तो क्या सीमावर्ती अवध के स्थानीय अधिकारियों द्वारा सन्तोषजनक कार्य न करने के कारण ऐसा हुआ है।

फतेहपुर के मजिस्ट्रेटों (दण्डनायक) को छोड़कर सभी ने अवध के समस्त भारतीय नाजिमों की प्रशंसा की जिन्होने शान्ति और व्यवस्था और आदेशों को ठीक रखने में सदैव सहयोग दिया। उन्होंने यह भी उल्लेख किया था कि सीमावर्ती अपराधों में बढ़ोत्तरी नहीं हुई।

जनरल आउट्रम के आते ही उस पर कर्नल स्लीमैन द्वारा किए गये अधूरे कार्य को पूरा करने का कठिन भार आ पड़ा। उसने १५ दिन के भीतर कर्नल स्लीमैन द्वारा प्रस्तुत रिपोर्ट को निम्नलिखित शीर्षकों बादशाह, कर एवं आर्थिक स्थिति, अदालतें और पुलिस, सेना, सड़कों की दशा और जनहित के कार्य, अपराध, अत्याचार और निर्दयता में विभाजित कर अवध की अव्यवस्था तथा कु–प्रबन्ध का एक चित्र खींच दिया और उसे प्रस्तुत करते हुए उसने १५ मार्च, १८५५ को गर्वनर जनरल के सचिव को स्पष्ट शब्दों में लिखा कि मैंने यह विवरण अपने व्यक्तिगत अनुभव के आधार पर नहीं तैयार किया है, बल्कि रेजीडेन्सी के सुरक्षित आलेखों पर पूर्ण निर्भर रहा हूँ। इसमें पूर्व अधिकारियों से प्राप्त सामग्री की पुष्टि मात्र की गयी है। इसके पश्चात अपनी इस रिपोर्ट को लार्ड डलहौजी के सचिव के पास रवाना कर दिया।

महाराज्यपाल को जब यह सम्पूर्ण ब्यौरा प्राप्त हुआ तो उसने रेजीडेन्ट से कहा कि बादशाह को यह नियुक्ति रद्द करने के निर्देश दें और यदि अवध का बादशाह उसे रद्द नहीं करता है तो उसका यह अर्थ होगा कि वाजिद अली शाह खुले रूप में अतिक्रमण करने का इच्छुक है। इस प्रकार बादशाह पुनः अपमानित हुआ है और वह अपनी समस्याओं को प्रेषित न कर सका।

अध्याय—१०

अवध का विलय और अंग्रेजों के प्रति विद्रोह

अंग्रेजों ने शनैः शनैः हस्तक्षेप रूपी हथियार को अपना कर अवध में अपनी स्थिति सुदृढ़ करली। अंग्रेजों को अन्य राज्यों से भी किसी प्रकार की असुरक्षा की संभावना नहीं रही। अतएव अवध का एक स्वतन्त्र राजनैतिक इकाई के रूप में रहना असंभव हो गया था। कर्नल स्लीमैन ने समय-समय पर अपनी आख्याओं के द्वारा अवध प्रशासन की असत्य तथ्यों के आधार पर विकृत झांकी प्रस्तुत की जिससे महाराज्यपाल सन्तुष्ट हो गया कि इस समय अवध कुप्रशासन से ग्रस्त है। जनता को जाने आलम से कोई शिकायत नहीं थी, न वे निःसन्तान थे और न अंग्रेजों से बादशाह ने कोई दुश्मनी ही बरती थी। केवल कुप्रशासन के बहाने उससे शासन छीना जा सकता था। महाराज्यपाल ने उसी को आधार मानकर विरोध की उपेक्षा करते हुए अवध के विलय का कार्य सम्पन्न किया। वाजिद अली शाह की प्रार्थनाओं पर कोई ध्यान न देते हुए उसे पदच्युत कर दिया। वाजिद अली शाह को कलकत्ता प्रयाण करते समय लखनऊ की जनता ने भाव भीनी बिदाई दी जो वाजिद अली शाह के ऐतिहासिक व्यक्तित्व को उभारती है। कला, सौन्दर्य और साहित्य का प्रेमी लखनऊ छोड़ने के पूर्व नि-सन्देह एक ऐसी अमिट छाप छोड़ गया जिसका मात्र एक कण भी अमरत्व प्रदान करने को पर्याप्त है।

डलहौजी ने प्रारम्भ से ही अवध का अपहरण करने के प्रयास किये और उसके लिये आधार वनाने में लगा रहा। डलहौजी ने स्लीमैन की नियुक्ति ही अवध अपहरण के आधार को बनाने के लिए की थी। स्लीमैन की आख्याओं ने डलहौजी के कार्य को सुलभ करने में महत्वपूर्ण योगदान दिया। स्लीमैन के निरन्तर अवध प्रशासन में हस्तक्षेप से वाजिद अली शाह और उसके अधिकारियों में निष्क्रियता व्याप्त होने लगी। डलहौजी ने अपने कार्य को अधिक सबल और उचित प्रमाणित करने के लिए आउट्रम से भी अवध प्रशासन के सम्बन्ध में आख्या प्राप्त की जिसको उसने अपने उद्देश्यों की पूर्ति के अनुसार प्रस्तुत किया था। उसने दृढ़ निश्चय कर लिया था कि अवध का अपहरण वह शीघ्र से शीघ्र करलें।

आउट्रम जैसा ही अन्वेषण उन अंग्रेजी सैनिक अधिकारियों से भी कराया गया जो बादशाह की सेना में कार्य कर रहे थे। मेजर ट्राप, कैप्टन वनवरी, कैप्टन ओर, कैप्टन सिंकलेयर आदि ने अवध के अप्रवासन करने वाले व्यक्तियों के सम्बन्ध में अन्वेषण किया। मेजर ट्राप ने २७ सितम्बर, १८५४ को उत्तर भेजा कि संभवतः अवध के किसी निवासी ने अप्रवास नहीं किया यद्यपि वह कैसी भी वलात् दमन की स्थिति में रहे हों लेकिन अपने क्षेत्र से अनुलग्न थे। केवल कहार, लूम-लोधा, चमार और दूसरी प्रजातियों

के अनेकों व्यक्ति कंपनी के प्रान्तों में सेवा करते थे। लगभग सभी अपने परिवार जनों को देहातों में छोड़कर चले आते थे।

कैप्टन बनवरी ने अवगत कराया कि उसके जनपदों में राजस्व में किसी प्रकार की कमी नहीं हुई और न ही अपराधों में किसी प्रकार की वृद्धि हुई थी।

परन्तु कैप्टन ओर ने अपनी ५ जनवरी, १८५५ की एक आख्या में उल्लेख किया कि अपराध समान रूप से होते थे उसमें किसी प्रकार की कमी एवं बढ़ोतरी नहीं होती थी। इसमें कोई सन्देह नहीं कि बहुत से अपराधियों को हिरासत में नहीं लिया जाता था और न ही उनके सम्बन्ध में यह सुना गया कि उन्हें कोई दण्ड दिया गया हो। अवध की सीमान्त पुलिस के सहायक अधीक्षक कैप्टन अलैजेन्डर ओर ने भी अपनी विस्तृत आख्या में विभिन्न विभागों में जो भ्रष्टाचार फैला हुआ था, जिसके कारण उच्च अधिकारी अपने आपको धनी मानते थे, के अपराधों के सम्बन्ध में भी उल्लेख किया कि सभी प्रकार के अपराध, विशेष रूप से सुल्तानपुर, दरियाबाद, रुदौली जनपदों में जो अवध के अत्यन्त निकृष्ट भाग माने जाते थे, में किसी प्रकार की बढ़ोत्तरी नहीं हुई थी परन्तु लेफटीनेन्ट सिकलेयर ने अपनी आख्या में अपराधों के सम्बन्ध में उल्लेख नहीं किया था। उसने केवल तुलसी पुर के साहिब जी और उसके पिता के झगड़ों का उल्लेख किया था।

डलहौजी ने प्रस्तावित किया कि ईस्ट इण्डिया कम्पनी निम्नलिखित साधनों में से कोई साधन अपना सकती थी :—

१. बादशाह को अपनी राजसत्ता की शक्तियाँ जो कि उसने गलत प्रयोग की हैं, त्याग दे और अवध को ब्रिटिश "मुकुट" की सीमाओं में सम्मिलित करने की सम्मति दे।
२. बादशाह की अपनी शाही उपाधि और स्थिति को कायम रखने की आज्ञा दी जाये लेकिन सम्पूर्ण सैनिक और असैनिक सलाह के लिए कम्पनी को सौंप दे।
३. बादशाह से प्रार्थना की जाये कि कुछ समय के लिये वह अपना पूरा राज्य अंग्रेजी अधिकारियों के प्रबन्ध में दे दे।
४. बादशाह को इस बात का निमन्त्रण दिया जाये कि अवध का प्रबन्ध रेजीडेन्ट के हाथ में दे दिया जाये और जिसके निर्देशों के अन्तर्गत बादशाह अंग्रेज अधिकारियों के साथ प्रशासन चलाता रहे।

उपरोक्त चार माँगों में से डलहौजी ने प्रथम मार्ग को सबसे उचित समझा परन्तु उसको कार्यान्वित रूप में लाने के लिये इसलिये अधिक बल नहीं दिया क्योंकि अवध के बादशाह ने अतीत में ही अंग्रेजी सरकार की शक्ति के सम्मुख कोई अवहेलना नहीं की थी बल्कि उन्होंने हर प्रकार की सहायता प्रदान की थी। यह सुझाव जटिल भी था। चौथा सुझाव इसलिये त्रुटिपूर्ण था कि ऐसा करने से दोहरी सरकार बनायी जाती। तीसरा सुझाव इसलिए लागू नहीं किया जा सकता था क्योंकि यह अस्थाई प्रबन्ध था। इसलिए लार्ड डलहौजी ने दूसरे सुझाव को कार्यान्वित करने का निर्णय लिया लेकिन उस कार्य को करने के लिए यह सुझाव दिया कि रेजीडेन्ट को आदेश दिया जाये कि वह

१८०१ की सन्धि को निरस्त कर दे। यह नवीन सन्धि जो बादशाह के समक्ष रखी जायेगी उस पर वह सम्मति प्रकट न करे तो ब्रिटिश सेना जो ब्रिटिश सीमाओं के अन्तर्गत है, बुला लिया जाये। नवीन सन्धि की मुख्य विशेषतायें निम्नलिखित थीं :—

१. ब्रिटिश सरकार और अवध के मध्य जो भूतकाल में सन्धियाँ हुई थीं उनको निरस्त किया जाएगा और भविष्य में उन दोनों का आपस में पारस्परिक सम्बन्ध नवीन सन्धि के अन्तर्गत होगा।
२. ब्रिटिश सरकार अवध की क्रमशः उन सम्पूर्ण सीमाओं पर जो उनके अधिकार में अब हैं, पर राजसत्ता कायम रखेगी।
३. अवध का बादशाह अपने वर्तमान राज्य की राजसत्ता अपने पास रखते हुए भी उसका सम्पूर्ण सैनिक और असैनिक प्रशासन और सभी शक्तियाँ, अधिकार, दावे इत्यादि ईस्ट इण्डिया कम्पनी के हाथ में सौंप देगा।
४. ऐसा प्राविधान किया जायेगा जिसमें बादशाह का सम्मान कायम रहे और उसके लिये अवध के राजस्व से पर्याप्त वार्षिक धनराशि जो आपस में सहमति से तय होकर, वितरित की जायेगी जिसका उल्लेख सन्धि में किया जायेगा।
५. अवध के राजस्व से ही बादशाह के परिवार के सदस्यों के लिए उचित प्राविधान किया जायेगा। शासन कर चुके बादशाहों के बच्चों के लिये नहीं।
६. अवध के राजस्व को सर्वप्रथम प्रान्त के सैनिक और असैनिक प्रशासन के खर्चों की अदायगी के लिये व्यय किया जायेगा, उसके बाद बादशाह और उसके परिवार को पेंशन के रूप में भुगतान किया जायेगा, उसके पश्चात प्रान्त के लाभ के लिये रुपया व्यय किया जायेगा और इसके बाद जो राजस्व शेष बचेगा वह ईस्ट इण्डिया कम्पनी के पास रहेगा। अवध के बादशाह को अत्यधिक अतिरिक्त धन देना अन्यायपूर्ण होगा क्योंकि वह उस धन को बुराईयों, फिजूल खर्ची इत्यादि पर व्यय करेगा।

महाराज्यपाल ने विस्तृत ब्यौरा की आख्या को अपनी परिषद के सदस्यों का मत जानने के लिए परिषद में अग्रसारित किया। इसके पश्चात् रेजीडेन्ट की रिपोर्ट के साथ परिषद के सदस्यों के मतों को महाराज्यपाल ने अन्तिम आदेशों के लिये कोर्ट आफ डायरेक्टर्स को अग्रसारित किया। इस सम्बन्ध में यह बात भी उल्लेखनीय है कि सभी इस बात पर उत्सुक थे कि कम्पनी अवध शासन को अपने कब्जे में ले ले। कोर्ट आफ डायरेक्टर्स ने डलहौजी से ४ बार १८५०, ५१, एवं १८५२ में प्रार्थना की थी कि वह ऐसी योजना लागू करें कि जिससे उस देश को दुखित स्थिति से छुटकारा प्राप्त हो सके।

डलहौजी ने उपरोक्त मत का अपने प्रथम और चौथे सुझावों के सम्बन्ध में उल्लेख किया और यह विचार किया कि इस प्रकार की योजना (कोर्ट आफ डायरेक्टर्स) के पास भेजी गयी जिसको सम्भवतः निरस्त नहीं करेंगे। इस पर भी डलहौजी के मस्तिष्क में अपने सुझावों के सम्बन्ध में शंका थी कि ब्रिटिश सरकार उसे स्वीकृत करेगी या नहीं करेगी। १८५५ ई० में उसने यह शंका व्यक्त की थी कि उनके सुझावों को स्वीकृत करने का साहस है या नहीं। यहाँ यह उल्लेखनीय है कि डलहौजी ने अस्वस्थता के कारणों

को लेकर अवकाश ग्रहण करने की इच्छा प्रकट की थी परन्तु सर चार्ल्सवुड ने उसको उस पर स्थिर रहने की घोषणा की थी। अनेकों पत्र इस सम्बन्ध में लिखे गये और अन्त में डलहौजी भारत में इस शर्त पर रुकने के लिए सहमत हो गया कि अवध को ब्रिटिश राज्य में सम्मिलित करने का सम्मान उसे दिया जाये। विलय होने से दो वर्ष पूर्व यह माँग की गयी थी।

डलहौजी का प्रस्ताव ईस्ट इण्डिया कम्पनी के "सुप्रीम कौन्सिल" में पेश हुआ। बैठक में मि० वोरिन की राय थी कि बादशाह से उसका पद तथा उसका सम्मान छीन लिया जाये। मि० ग्रान्ट की राय थी कि बादशाह राजी हों या न हों, हमको जो करना है, वह कर डालें। केवल एक वकील सदस्य पीकॉक की सलाह थी कि बादशाह की बादशाहत बनी रहे और अवध से जो अतिरिक्त आमदनी बचे वह अवध की जनता के ही काम में लगायी जाये। सारांश यह कि बहुमत इस पक्ष में था कि बादशाह को पद से ही हटा दिया जाये। ३ जुलाई, १८५४ को लार्ड डलहौजी ने कम्पनी के बोर्ड आफ डायरेक्टर्स को पत्र लिखा कि "मैं अपना कर्तव्य निभाने के लिये तैयार हूँ।" २१ नवम्बर, १८५५ को बोर्ड की तरफ से गवर्नर जनरल को डायरेक्टरों के विचार भेजे गये और पत्र में लिखा गया कि "हम यह समूचा भार आप पर छोड़ते हैं। हम यह नहीं चाहते कि आपके निर्णय में कोई बन्धन लगायें।"

लार्ड डलहौजी ने निश्चय किया कि बादशाह को गद्दी से उतार दिया जाये। १८५५ ई० का साल समाप्त होते-होते कानपुर को आदेश पहुँच गया कि कानपुर में एक बड़ी ब्रिटिश पल्टन एकत्र करे। कानपुर में जो टुकड़ी थी, उसके अतिरिक्त १३००० सिपाही और जमा हो गये। रेजीडेन्ट को आदेश दिया गया कि जब वे सैनिक प्रबन्ध से संतुष्ट हो जायें तो सूचना दें। यद्यपि गवर्नर जनरल ने यह आदेश गोपनीय ढंग से दिये थे, किन्तु सेनाओं की बढ़ोत्तरी से अवध की सरकार कुछ चौकन्नी हो गयी। उसने सेनाओं की इस वृद्धि का पता लगाने की कोशिश की, परन्तु असफल रही। जनवरी, १८५६ ई० के प्रारम्भ में जनरल आउट्रम कलकत्ता गया और वहाँ से गवर्नर जनरल द्वारा अवध के अपहरण के आदेश लेकर शीघ्र लखनऊ लौट आया।

३० जनवरी, १८५६ ई० को अवध में शहीद दिवस की वर्षगाँठ मनायी जा रही थी। जनरल आउट्रम ने शाही दरबार के सभी मंत्रियों को रेजीडेन्सी में आमन्त्रित किया। मंत्रियों के वहाँ पहुँचने पर जनरल आउट्रम ने अली नकी खां को बुलाकर गवर्नर जनरल का आदेश बताया कि कम्पनी की सरकार ने अवध राज्य को अपने अधिकार में कर लेने का निश्चय कर लिया है। किसी प्रकार का उपद्रव न हो सके, इसके लिये सैनिकों के शक्तिशाली दस्ते को कानपुर से लखनऊ बढ़ने का आदेश दिया जा चुका है। इस नयी व्यवस्था के अनुसार अवध पर कम्पनी का शासन रहेगा और नवाब तथा उसके परिवार को १५ लाख रुपया की वार्षिक पेंशन मिलती रहेगी। वजीर इस सूचना को सुनकर हतप्रभ हो गया। जनरल आउट्रम ने अली नकी खां को विश्वास दिलाया कि नवाब भी इससे खुश होंगे, पर वजीर ने उत्तर दिया कि नवाब इस नयी सन्धि को

स्वीकार करने के लिए विल्कुल तैयार न होगा। उसने अव तक के नवाबों की वफादारी की चर्चा की, किन्तु जनरल आउट्रम ने बादशाह के पक्ष से सम्बन्धित किसी भी बात सुनने से अस्वीकार कर दिया। फलतः वजीर ने सारी स्थिति आकर वाजिद अली शाह से बतायी। वाजिद अली शाह कम्पनी के इस कार्य को सुनकर अत्यन्त हैरान व निराश हुआ। फिर भी उसने १ फरवरी १८५६ को रेजीडेन्ट के पास एक पत्र लिखकर अपनी स्थिति तथा अवध में सुधार की बात स्पष्ट करने का प्रयत्न किया किन्तु रेजीडेन्ट ने इस पर ध्यान नहीं दिया और इस नयी व्यवस्था को स्वीकार करने के लिये तीन दिन का समय दिया जो किसी भी शर्त पर आगे नहीं बढ़ाया जा सकता था।

जब आउट्रम किसी तरह नवाब से हस्ताक्षर लेने में सफल न हुआ तब उसने अली नकी खां को मठरेहटा कस्बा की एक लाख आय की जागीर देने का लालच देकर इस नयी व्यवस्था पर नवाब की स्वीकृति लाने का प्रयास किया। भूतपूर्व वजीर अमीनुद्दौला का भी आउट्रम ने इस कार्य में सहारा लिया। साथ ही उन्नीस हिदायतों की चेतावनी भी दी गयी कि यदि नवाब आसानी से हस्ताक्षर नहीं करेगा तो उसके तोपखाने पर कब्जा कर लिया जायेगा। उसके सारे शाही कर्मचारी बन्दी बना लिये जायेंगे। जमींदारों एवं जागीरदारों की भूमि जबरदस्ती छीन ली जायेगी। नवाब ने रेजीडेन्ट की यह चेतावनी भी अनसुनी कर दी, तो उसकी माता मल्का किश्वर को एक लाख रुपये वार्षिक पेंशन देने का लालच देकर उससे नवाब से नयी व्यवस्था पर हस्ताक्षर कराने का अनुरोध किया गया। किन्तु बेगम मल्का किश्वर ने भी इसे अस्वीकार कर दिया।

इस बीच नवाब की मंत्रणा से अली नकी खाँ ने अंग्रेजों को प्रसन्न रखने की दृष्टि से अवध की सेना को निःशस्त्र कर दिया। तोपों को महल से हटा दिया। नवाब ने अपने मातहतों को आदेश दिया कि वह अवध की ओर बढ़ती हुई कम्पनी की सेनाओं के साथ मित्रतापूर्ण व्यवहार प्रदर्शित करे। ऐसा इसलिये किया गया, जिससे कम्पनी को अन्यायपूर्ण कार्यों का कोई बहाना न मिल सके।

गवर्नर जनरल आउट्रम को कलकत्ता बुलाकर जो आदेश दिया था, वह बादशाह के लिये काफी कठोर था। उनका आदेश था कि :—

१. बादशाह तथा उनके निजी कर्मचारियों को १५ लाख रुपया सालाना पेंशन मिलेगी।
२. अगर बादशाह खुशी से आत्मसमर्पण नहीं करते हैं तो उनसे जवाब तलब किया जाये।
३. उनका तोपखाना पहले जब्त किया जाये।
४. वह चाहें तो दिल्ली या आगरा में रह सकते हैं, लेकिन जहाँ भी कहीं रहें, शहर में रहें जहाँ जिले के कलक्टर का दफ्तर हो।
५. अगर वह ग्वालियर जाना चाहें तो सोचकर जवाब दिया जायेगा।
६. उनके रिश्तेदार और दोस्तों को बादशाह के साथ जाने की इजाजत है पर शहर छोड़ देना होगा।

७. अवध में दो साल फौजी कानून यानी मार्शल ला लगाया जावेगा।
८. दो बरस तक बादशाह के रिश्तेदारों को कम्पनी की हुन्डियों में लगे हुए रुपये या उससे आमदनी की अदायगी नहीं की जायेगी।
९. सभी प्रमुख सरकारी कर्मचारी (अवध सरकार) गिरफ्तार कर लिये जायें।
१०. अवध से इस समय जो भी आमदनी हो उससे पहले फौज की तनख्वाह अदा की जाये।
११. अच्छे सरकारी कर्मचारी काम से न हटाये जायें।
१२. बादशाह जहाँ रहना चाहें, दो महीने में अपना सामान उठा ले जायें।
१३. बादशाह के रिश्तेदारों की छोटी जागीरें ले ली जायें।
१४. सब जमींदार दो साल तक अपनी जमींदारी से बेदखल कर दिये जायें।
१५. तहसीलदारों और चकलेदारों (हाकिम परगना) से जमानत लेकर काम पर रखा जाये।

आउट्रम ने बादशाह के पास आकर उसको समझाना शुरू किया। उससे कहा कि दिल्ली के बादशाह को हम सिर्फ एक लाख रुपया साल पेंशन दे रहे हैं पर आपको १२ लाख रुपया सालाना और तीन लाख रुपया नौकरों का खर्च दे रहे हैं। आप दिलकुशा की कोठी में रहें। आपको सात मकान दे रहे हैं। शाह मंजिल, मुबारक मंजिल, खुर्शीद मंजिल, सिकंदर बाग, बादशाह बाग, रमना कोठी और दिलकुशा। आपके खानदान की तनख्वाह कंपनी अपने ऊपर ले रही है। जब तक आप जिन्दा रहेंगे आपको बादशाह का खिताब रहेगा, उसके बाद यह खिताब समाप्त हो जायेगा। आपके उत्तराधिकारी की सिर्फ १२ लाख रुपया सालाना पेंशन रहेगी। ३ लाख रुपया नौकरों वाला नहीं मिलेगा। आपकी हुकूमत मौजा बीबापुर पर रहेगी पर फांसी की सजा नहीं दे सकेंगे।

बादशाह बड़े रप्त-जप्त से सब बातें सुनते रहे और बोले "मैं ऐसे जब्र जुल्मसरी पर राजी न हूंगा। अगर मुलाजिमों ने गड़बड़ की है तो उनको बदल सकते हैं। ताज्जुब है कि जो गड़बड़ी बाप-दादा के समय से होती चली आ रही है, वह मेरे सर पर लादी जा रही है। मैंने कभी पक्षपात नहीं किया—आपने आसफ़ुद्दौला से २२ लाख रुपया का मुल्क बनारस, जौनपुर, गाजीपुर, वगैरह लिया था···अमीरुद्दौला हैदरबेग कलकत्ता गये तो रियासत का आधा-आधा करा लिया...फौज का छः लाख रुपया हम पर लाद दिया...हमने कभी कोई ऐतराज नहीं किया।"

चिलमन की ओट से बैठी हुई मलका किश्वर बोलीं—हमने वफादारी की तो हमको यह इनाम मिल रहा है। इस तरह हाल के हौले से घर छीन लेना कहाँ तक मुनासिब है।

४ फरवरी, १८५६ को जनरल आउट्रम अपने सहायक कप्तान हैज तथा प्रधान सेनापति के साथ बड़ी सावधानी से सैनिक संरक्षण में आये और महल के फाटक पर बादशाह के पहरेदारों ने लाठी से सलामी दी तब उनको पता चला कि क्या बात

हुई है। कंपनी की ओर से शहर में जो अंग्रेजी बटालियन आ गयी थी उनके साथ तुर्क घुड़सवार तथा हिन्दुस्तानी बटालियन और १२ बड़ी तोपें भी थी। आलमबाग में वह ठहरे हुये थे। इनको हर तरह की लालच भी दी गयी थी तथा कह दिया गया था कि तीन घण्टे तक शहर की लूटमार की इजाजत दी जायेगी।

सेना को निशस्त्र करने के शाही निर्णय से जनरल आउट्रम बहुत परेशान हो गये थे। ४ फरवरी, १८५६ को जब वह बादशाह से मिलने गये और उन्होंने देखा कि बादशाह ने पूर्ववत् शिष्टाचार से उनका स्वागत किया पर राजमहल सूना हो रहा था, प्रहरी निशस्त्र सलामी दे रहे हैं, तो उन्हें पता चला कि सेना निशस्त्र करदी गई है।

४ फरवरी, १८५६ को जनरल आउट्रम जब सुबह ८ बजे बादशाह के सामने जर्द कोठी महल पहुँचा, उद्वेग तथा मानसिक वेदना से शाह की तबियत खराब थी। आउट्रम ने घोषणा की कि सन् १८०१ की सन्धि समाप्त हो गयी और ७ दफाओं की एक नयी सन्धि हाजिर है। इसके अनुसार बादशाह को १२ लाख रुपया, नौकर-चाकर के लिए तीन लाख रुपया, सात मकान वगैरह मिलेंगे। संधि के अनुसार समूचा दीवानी तथा सैनिक शासन सदैव के लिये ईस्ट इण्डिया कंपनी को सौंप दिया जायेगा।

इस राजीनामें या सुलहनामे के साथ गवर्नर जनरल का एक पत्र बादशाह के नाम था। वह निहायत बदतमीजी से भरा हुआ खत था। इसे पढ़ कर बादशाह ने ठंडी आह खींची और आसमान की ओर मुँह करके कहा—

"ऐ खुदावन्द, तू शाहिदे हाल है कि यह मुझ पर जफा और जब्र सरीह है और हीलये इन्तजाम से मेरा घर मुझसे छीना जा रहा है। मैं कभी गवारा नहीं करूँगा कि यह आबरू रेजी खान्दाने सलतनत की मेरी जेहद से हो।"
इस पर रेजीडेन्ट ने उत्तर दिया :—

"हम नहीं चाहते कि आपको ऐसे सदमये रुहानी में देखें। जब जनाब गवर्नर जनरल साहब ने यह हुक्म निकाला था, मेरा भी अजीब हाल हुआ था। बहरहाल, राजीनामा अंग्रेजी व फारसी दोनों जबानों में हाजिर है। ब-रजा व रगवत इस पर मुहर फ़रमाइए कि मैंने तजवीज़ मुमालिक मौरुमा सरकार कम्पनी अंग्रेज बहादुर को किया और मुशाहिरा मुजव्विजा बतौर खातिर विला इकराह कबूल किया।"

बादशाह ने उत्तर दिया—"अगर हुक्में सदर निस्बत बदअमली व बेइंतजामी और अदम जरे तहसील है तो तफवीजे मुल्क मुज़ायका नहीं। बरना अजराहे जब्र व तशद्दुद नहीं हो सकता।" राजीनामा या सन्धि के विषय में बादशाह ने कहा कि—"सन्धि बराबर वालों में होती है। मैं कौन हूँ जो ब्रिटिश सरकार के साथ सन्धि करूँ। सौ बरस तक हमने अवध पर हुकूमत की · अँग्रेज इसे चाहे बना, बिगाड़, बढ़ा या घटा सकते हैं। उनकी लेशमात्र भी आज्ञा का पालन होगा। मैं और मेरी प्रजा ब्रिटिश सरकार के सेवक हैं।"

रेजीडेन्ट—"सात मकान वसीहा उनके नाम हैं···बाकी हमारे अख्तयार में। उनमें अदालतें हमारी कायम होंगी। आज से तीन दिन तक आपको अख्तयार है। बाद इसके हमारे अहकाम जारी होंगे।

बादशाह—"तीन दिन की क्या बात है। आपको हर वक्त अख्तयार है। इकरारनामें पर जो मुहर है वह बादशाह की जरूर है पर मेरी मुहर कैसे लगी यह हमें मालूम भी नहीं है।"

रेजीडेन्ट—"अगर मेरा कहना मानकर चलो तो ठीक है, वरना लखनऊ के अलावा फैजाबाद में रहना होगा।"

मलका किश्वर—"इस घर की जो खराबी आपकी बदौलत होनी थी, वह तो हो चुकी। इससे बदतर और क्या होगा। अब शहर का कयाम या दूसरे का, जो चाहो, दोनों बराबर हैं।"

आउट्रम ने बड़ी चेष्टा की कि बादशाह सन्धि-पत्र पर हस्ताक्षर कर दें और स्वयं राज्य छोड़ दें ताकि संसार के सामने ब्रिटिश नैतिकता का ऊंचा आदर्श बना रहे। पर वह असफल रहा। ६ फरवरी, १८५६ को वजीर नकी खां को बुलाकर आउट्रम ने खूब डराया-धमकाया, पर वजीर भी अपना सब प्रयत्न कर चुके थे। बिना अनुमति के सन्धि पत्र पर बादशाह की मुहर तक लगा चुके थे। आउट्रम का ख्याल था कि बादशाह को भड़काने वालों में "ब्रैडेन" नामक एक शरारती अंग्रेज व्यापारी है जिसने उन्हें समझा दिया है कि इंगलैण्ड जाकर गद्दी वापस ले ली जायेगी। "ब्रैडन" के समाचार पत्र "सेन्ट्रल स्टार" ने भी सन्धि पर हस्ताक्षर न करने का बादशाह के निर्णय का स्वागत किया था।

आउट्रम को हिदायत थी कि गवर्नर जनरल के आदेश पत्र धारा १४ के अनुसार कि यदि बादशाह के १२ लाख रुपया की पेंशन पर राजी न हों तो पेंशन की रकम बढ़ा कर १५ लाख कर दी जाये। पर आउट्रम को आश्चर्य हो रहा था कि बादशाह ने एक बार भी रकम की कमी-बेशी की बात नहीं की। आउट्रम लिखता है—उनके दिमाग में चापलूसों ने यह भर दिया था कि जब वह लखनऊ छोड़कर चलेंगे तो पूरा शहर उनके पीछे-पीछे चलेगा तथा शहर खाली हो जायेगा। बादशाह के मन में ऐसी कोई इच्छा होती तो वह स्वयं यह आदेश न जारी करते कि उनके लखनऊ छोड़ने पर कोई उनका अनुकरण न करे। ५ फरवरी, १८५६ को उन्होंने कलकत्ता पत्र भेजा कि बादशाह ने ३ फरवरी को ही पल्टन का पूरा वेतन चुका कर सेना तोड़ देने का आदेश दे दिया है। नाकों से पुलिस हटा ली गयी। चूंकि वेतन का भुगतान हो गया था अतः सेना तोड़ी नहीं गयी पर निशस्त्र हो गयी है। आउट्रम ने बादशाह से कहला भेजा कि "सेना हटाने से नगर में लूटमार हो सकती है···शहर में कुछ हो जायेगा तो वह जिम्मेदार होंगे। बादशाह सेना तोड़ने पर अमादा था। उसने कहला भेजा कि सेना टूट गयी तो क्या पुलिस ज्यों की त्यों है और नगर की रक्षा कर रही।"

६ फरवरी, १८५६ की शाम को ४ बजे रेजीडेन्ट ने जब वजीर नकी खां को बुला भेजा था और उन्हें विश्वास दिलाया था कि यह खबर झूठ है कि उनको गिरफ्तार

किया जायेगा। वजीर ने कहा कि मैं काफी चेष्टा कर रहा हूँ कि बादशाह राजीनामा पर हस्ताक्षर करदें और इसी चेष्टा के कारण दरबार में उनके वहुत ज्यादा शत्रु पैदा हो गये हैं। उनको अपनी जान व माल का खतरा है। रेजीडेन्ट ने वजीर की सराहना की और कहा कि वह जानते हैं कि किस कठिनाई से काम कर रहे हैं। पर लाजिम है कि ७ तारीख को ६ बजे दिन तक जवाब मिल जाये।

७ फरवरी को सवेरे ८ बजे आउट्रम के पास बादशाह का एक पत्र पहुँचा कि वह सन्धि पर हस्ताक्षर नहीं करेंगे। उन्होंने दो घोषणायें एक के बाद दूसरी प्रसारित की। पहली घोषणा में था कि सबको मालूम होना चाहिए कि ब्रिटिश सरकार की आज्ञानुसार उनके कर्मचारी अवध का शासन करेंगे। अतएव हर एक को इत्तला दी जाती है कि उनके सब आदेशों को मानें, लगान आदि उनको दें तथा उनकी वफादार प्रजा बनें। किसी भी दशा में सेना को विद्रोह नहीं करना चाहिए वरना ब्रिटिश सरकार के कर्मचारी उन्हें दण्ड दे सकते हैं। बादशाह सलामत अपना मामला गवर्नर जनरल के सामने पेश करने के लिए कलकत्ता जायें और मलका मुअज्जमा के सामने पेश करने के लिए इंगलैण्ड जायें तो कोई भी व्यक्ति उनके साथ चलने या अनुकरण करने की चेष्टा न करें।

दूसरी घोषणा सेना के अफसरों के नाम है थी जिसमें आदेश दिया गया है कि तुम अपनी जगह पर तैनात रहोगे और पूर्ववत् अपने काम को करते रहोगे। किसी भी दशा में तुम हिंसात्मक या गैर कानूनी कार्य नहीं करोगे या कोई ऐसा काम नहीं करोगे जो सिपाही के आचरण के प्रतिकूल हो। तुम्हारा बकाया वेतन पेशगी दी हुई रकम वापिस करके, ईस्ट इण्डिया सरकार अदा कर देगी, कोई भी आदमी अपना काम न छोड़ें। हर एक को इन हिदायतों पर ध्यान देना चाहिये।

संसार के इतिहास में, इस प्रकार शान्ति तथा उदारता, दृढ़ता तथा निष्ठा, प्रजा के हितचिन्तन तथा आत्म-समर्पण की भावना से किसी भी नरेश ने अपना राज्य नहीं छोड़ा होगा। पर कम्पनी के कर्मचारियों के मन में बादशाह के हस्ताक्षर न करने पर इतना क्रोध था कि उन्हें उनका प्रत्येक कार्य शंकाजनक मालूम होता था।

बादशाह अगर लड़ना चाहता तो उनकी प्रजा उनका पूरा साथ देने को तैयार थी। कम से कम ५०,००० युवक उनके लिए प्राण देने को तैयार थे। उनकी सेना अपने सम्राट के लिए प्राण निछावर करने पर वचनबद्ध थी और हिन्दुस्तानी सिपाही जबान पर मर मिटना जानते थे। वजीर नकी खां ने यही नहीं किया कि स्वयं तथा अपने साथियों से बादशाह की सेना को निशस्त्र कर दिया बल्कि बादशाह की ओर से जनता को भी शान्त रहने की हिदायत भेज दी गयी। अंग्रेजों का यह कहना झूठ है कि सेना का वेतन बाकी था, अतएव वह कभी न लड़ती। जब कम्पनी की हुकूमत हो गयी और शाही सेना को तोड़ दिया गया और उसे लालच दी गयी कि जो लोग कम्पनी सेना में भरती हो जायेगा उनको बकाया तनख्वाह भी दे दी जायेगी और वह कम्पनी के सिपाही बन जायेंगे तब अधिकांश सिपाहियों ने एक स्वर से अस्वीकार कर दिया

और घोषणा की कि "हमारा वेतन कुछ भी बाकी नहीं है।" एक सूबेदार ने कहा— "४० वर्ष तक बादशाह की कुछ सेवा की है मेरा उनके ऊपर कुछ भी बकाया नहीं है।" नागरिकों को इतना क्षोभ तथा रोष था कि शहर भर में हलचल मची हुई थी। शहर कोतवाल आज्ञानुसार रेजीडेन्सी में मौजूद थे। वेलीगारद तक नागरिकों की भीड़ जमा थी। यह वाजिद अली शाह के व्यक्तित्व का ही प्रभाव था कि न तो कोई उपद्रव हुआ और न एक अंग्रेज के शरीर पर आँच आयी। लोग रो रहे थे, मातम मना रहे थे। तीन दिन तक किसी के घर चूल्हा नहीं जला था। समूचा नगर दुखी था। वह अपने बादशाह तथा अवध की देशी हुकूमत को चाहता था।

७ फरवरी, १८५६ को रेजीडेन्ट को बादशाह के सम्बन्ध में अवगत कराया गया कि वह प्रस्तावित सन्धि पर हस्ताक्षर नहीं करेगा। जैसे ही रेजीडेन्ट को उपरोक्त सूचना प्राप्त हुई तो वह मुख्य आयुक्त के रूप में नगर और सचिवालय का चार्ज लेने के लिए बढ़ा। नगर को बैंकरों के हवाले किया गया जिन्होंने तुरन्त ही कोतवाल की सहायता के साथ अपने कार्यालय के कार्यों को करना प्रारम्भ कर दिया। दोपहर १२ बजे अन्य विभाग जो मंत्रियों और राज्याधिकारियों के पास थे, अपने हाथ में ले लिया।

इस प्रकार बिना किसी अव्यवस्था के ब्रिटिश सरकार ने शान्तिपूर्ण रीति से विलय के कार्यों को सम्पूर्ण किया जिसको कर्नल स्लीमैन ने भी पृष्ठांकित किया। उसने उल्लेख किया कि भारत में उनकी ख्याति पर कलंक लगेगा जो हमारे लिये दर्जनों अवधों से भी मूल्यवान है। स्लीमैन ने एक अन्य स्थान पर उल्लेख किया है कि न तो हमारे सम्बन्धों और न ही हमारी महान शक्ति को देखते हुए कोई अधिकार प्राप्त है कि अवध की सीमाओं पर नियन्त्रण करलें और न ही उसका विलय। हमें सम्भवतः हैदराबाद के निजाम से सीमायें लेने का अधिकार है क्योंकि उसने हमारी शेष धन की अदायगी नहीं है लेकिन अवध से कोई धन नहीं लेना है इसलिये वहाँ की सीमाओं का स्वामित्य प्राप्त करने का कोई अधिकार नहीं है।

७ फरवरी, १८५६ को अंग्रेजों ने अवध का विलय किया जिसके कारण हजारों व्यक्ति जो बादशाह की सेवा में कार्य कर रहे थे, बेकार हो गये और उनके आय के श्रोत समाप्त हो गये। अव्यवस्था बढ़ने लगी और जितनी अव्यवस्था बढ़ती गयी उतनी ही पुलिस और ताल्लुकेदारों की शक्ति बढ़ने लगी। सम्पूर्ण पूर्वी क्षेत्र में जो सेना में थे उन पर भी प्रभाव पड़ा।

उस समय लखनऊ में दो पल्टनें (१९ वीं और ३४ वीं) स्थित थीं जिनको सरकार से वेतन मिलता था उन्होंने अवध के अनुचित प्रकार के विलय के सम्बन्ध में यह निश्चय किया कि अंग्रेजी राज्य पलट देने के लिये विद्रोह करना चाहिये। अवसर प्राप्त होने पर उपरोक्त दो पल्टनों में एक बैरामपुर और दूसरी बारकपुर भेजी गयी तो इन पल्टनों के हृदय में अँग्रेजों के विरुद्ध भाव उठ खड़े हुए। उन्होंने दूसरी पल्टनों के नाम पत्र रवाना किए। ३४ वीं पल्टन ने इस कार्य का शुभारम्भ किया। इन पत्रों में भारत के शाही परिवारों को अवगत कराया गया था कि अवध की सेना को भी मुक्त किया

गया । इसमें यह भी उल्लेख किया गया कि बहुत जल्दी ही और रियासतों का विलय कर लिया जाएगा और भविष्य में भारतियों को सेना में भर्ती नहीं किया जाएगा ।

यद्यपि लखनऊ नगर वाह्य रूप से कुछ असम्वन्धित प्रतीत होता था परन्तु प्रत्येक व्यक्ति दुर्भाग्यवश बादशाह के दुखः से भरा हुआ था । प्रत्येक दिशा में शोक और दुखः था । अमीर और गरीब जवान और बूढ़े सभी बादशाह के लिए व्याकुल हो रहे थे और उनके नेत्रों से आंसू बह रहे थे । लेकिन वह वजीर को बुरे-बुरे अपशब्द कह रहे थे । उनका विचार था कि कु-प्रशासन की जड़ वही था । कटु आलोचना की पंक्ति लिखी गयी और लखनऊ की गलियों में उसे गाया गया । यहाँ यह बात उल्लेखनीय है कि वजीर अली नकी खान के सम्बन्ध में कल्पना की जाती है कि वह एक ओर कड़ा प्रबन्धक था और दूसरी ओर जनता उसके कु-प्रशासन के कारण उसे ही उत्तरदायी ठहराती थी ।

अवध की जनता अपने क्षेत्र के विलय के लिए तैयार नहीं थी बल्कि इसके विरुद्ध १८ अगस्त, १८५५ को २०० प्रमुख व्यक्तियों की सभा हुई जिसमें अवध के प्रस्तावित विलय की आलोचना की गयी । इसके अतिरिक्त अवध के कुछ जमीदार एवं राजा अँग्रेजों से लड़ने के लिए तत्पर थे, यदि बादशाह के द्वारा उन्हें ऐसा करने के लिए आदेश दिया जाता । परन्तु वाजिद अली शाह ने बहुत धैर्य एवं निपुणता का प्रदर्शन किया । उसने जनता तथा किसी वर्ग अथवा सेना की ब्रिटिश सरकार के आदेशों की अवहेलना करने की आज्ञा नहीं दी और यदि वह ऐसा करता तो उसका परिणाम लूटमार, रक्तपात, अपराध आदि होता । उसे भली-भाँति मालूम था कि अंग्रेज सभी प्रकार की सम्भाव्य घटनाओं के लिए पूर्व से ही तैयार थे ।

अवध का विलय अँग्रेचों के लिए घोर विपत्ति सिद्ध हुआ, क्योंकि जनता ने ब्रिटिश प्रशासन पर अपना विश्वास खो दिया जिसके कारण १८५७ में जो केवल सिपाहियों के विद्रोह के नाम से संबोधित किया जाता है, उसको राष्ट्रीय उत्थान की भावना से युक्त समझा गया और इसी कारणवश भारत ने अँग्रेजी शासन की नींव को हिला दिया ।

१२ फरवरी, १८५६ को अंग्रेजी सेना बलपूर्वक अपना प्रभुत्व जमाने के लिए कानपुर से लखनऊ आ पहुँची । उस समय कार्य यह करना चाहिए था कि उस अत्याचार के प्रति डटकर मुकाबला किया जाता । परन्तु वाजिद अली शाह अपना शान्तिपूर्ण स्वभाव होने के कारण अथवा किसी अन्य कारण से खून का घूंट पीकर रह गया । उसने अपने मन में निश्चय कर लिया कि इस अत्याचार की प्रार्थना कलकत्ता से लन्दन जाकर महारानी विक्टोरिया से करेगा और शान्ति-पूर्ण संवैधानिक रूप से संघर्ष करके अपने राज्य को वापस लेगा ।

१८ फरवरी, १८५६ को जनरल आउट्रम ने यह आदेश जारी किया था कि बादशाह की निजी संपत्ति पर कोई हाथ न लगाये पर मेजर बैंक्स और कार्नेगी ने मनमानी कर ही डाली । कुछ लोगों ने चीफ कमिश्नर को एक अर्जी देकर सूचित किया

कि सेहतुद्दौला बहादुर ने महलात (बेगमात) को इत्तला दी कि "आप छत्तर मंजिल का मुआइना करने आयेंगे, ताकि उसे खाली कराया जाये···बेगमात ने प्रार्थना की कि यह भवन बादशाह की संपत्ति है, वह बाहर गये हैं···बरसात में दूसरा मकान खोजना मुश्किल है···हम शाही खानदान की परेशानी आपकी जानकारी में लाना चाहते हैं··· पर चीफ कमिश्नर ने बिना पढ़े ही अर्जी वापस करदी।

२३ फरवरी, १८५६ ताल्लुकेदारों को यह आदेश हो गया कि एक महीना के भीतर अपने कागजात तथा सनदें (अतीये) लाकर दिखायें ताकि निश्चय हो सके कि उनकी भावी सम्पत्ति किस प्रकार रह सकेगी। कम्पनी के कर्मचारियों ने मनमाना बन्दोबस्त शुरू कर दिया। आमदनी बढ़ाने के लिये आदेश हुआ कि पिछले ५ साल के लगान को न देखकर, रबी की फसल से ही लगान तय करलें।

अवध को अंग्रेजी साम्राज्य में लेने के उपरान्त कमिश्नर जनरल आउट्रम ने अवध की सेना के सभी आदमियों को कम्पनी की सेवा में नियुक्त करने का प्रयास किया, किन्तु सिपाहियों से लेकर उच्च अधिकारियों तक ने किसी की गुलामी करने से अस्वीकार कर दिया। उन्हें बड़े-बड़े प्रलोभन भी दिये गये पर वह टस से मस न हुए। उन लोगों ने बादशाह पर बकाया अपने पैसे लेने से भी मना कर दिया।

वाजिद अली शाह को अब भी ब्रिटिश सरकार की मित्रता पर भरोसा था। उसने न्याय के लिए ब्रिटिश प्रशासन को भी एक पत्र लिखा, जिस पर रेजीडेन्ट से अग्रसारित करवाने की आवश्यकता थी, किन्तु रेजीडेन्ट ने बड़ी सभ्यता से उसे अग्रसारित करने से अस्वीकार कर दिया। इसके उपरान्त अली नकी खां, दीवान महाराजा बालकृष्ण, पूर्णचन्द आदि को भी गिरफ्तार कर लिया गया। वाजिद अली शाह के शाही दरबार के सारे कागजात, विवरण जनहित के कार्यों का लेखा-जोखा भी जिनसे नवाब को अपनी पूर्व स्थिति प्राप्त करने में सहायता मिल सकती थी, अंग्रेजों द्वारा जब्त कर लिया गया। इसके अतिरिक्त नवाब के महलों, पार्कों, वस्त्रागारों, दुर्लभ वस्तुओं, शाही संग्रहालयों आदि छीन लिये गये। नवाब के अरबी, फारसी एवं विलायती घोड़ों, हाथियों, ऊँटों आदि को सार्वजनिक रूप से सस्ते दामों पर नीलाम कर दिया गया। शाही घराने की औरतों के साथ अत्यन्त कठोर और अमानुषिक अत्याचार किया गया। बेगमों को जबरदस्ती छतरमंजिल से निकाल दिया गया। उनकी इज्जत धूल में मिलाते हुए उन्हें सड़कों पर भटकने के लिए विवश कर दिया गया। उनके पास जो कुछ ज़र-ज़ेवरात थे, उन्हें छीन लिया गया। इस प्रकार अँग्रेजों द्वारा शाही घराने एवं शाही कर्मचारियों को जितना हो सकता था, परेशान किया गया।

वाजिद अली शाह को अवध से निष्कासित करने के पश्चात सर्वप्रथम अवध की जनता को भ्रान्ति उत्पन्न हुई। उसके बाद अवध में विदेशियों ने अपना दमन चक्र प्रारम्भ किया। तब जनता यह अनुभव करने लगी कि उनकी भूमि उनके हाथ से निकल चुकी है और उनका जीवन और सम्मान संकट में पड़ चुका है।

भारत की सीमाओं पर अँग्रेजों का बढ़ता हुआ प्रभुत्व दुर्भाग्यवश भारतीय जनता की सहायता से ही प्राप्त किया गया था। भारतीय सिपाही अपनी जीविका कमाने हेतु और उच्च प्रकार के कृत्यों को दिखाने के लिए अँग्रेजी सेना में भर्ती हुए थे। अँग्रेजों की "बंगाल सेना" में मुख्य रूप से अवध के और उसके समीप के क्षेत्रों से सैनिक भर्ती किये गये थे। वह सिपाही हिन्दू-मुसलमान सभी अपने विदेशी स्वामियों के इतने ही पक्षपाती थे जितने अपने धर्म के लिये थे। उन्होंने बिना विचार किए हुए अपनी ही जनता के विरुद्ध अँग्रेजों के साथ अनेकों युद्धों में भाग लिया था और जब अवध का ब्रिटिश सीमा में विलय किया गया तो वह अपने भविष्य की स्थिति के सम्बन्ध में दुखित हो गये। वह अँग्रेजों की योजनाओं को शंका से देखने लगे थे। दूसरी ओर कारतूसों के सम्बन्ध में कि उसमें गाय और सुअर की चर्बी की गाथाओं ने उनको और भी बेचैन कर दिया था। सिपाहियों की व्याकुलता एक खुले विद्रोह के रूप में उस समय उभर कर आयी जब एक सिपाही मंगल पाण्डे जो फैजाबाद का निवासी था और ३४वीं पदाति सेना में सेवा कर रहा था, ने सार्जेन्ट मेजर और लैफटीनेन्ट पर गोली चलाकर उनको गम्भीर रूप से घायल कर दिया। सिपाहियों की व्याकुलता एक खुले विद्रोह के रूप में प्रारम्भ हो गयी। अँग्रेजी अधिकारियों को छुड़ाने के लिए कोई भी सिपाही आगे न बढ़ा। यह घटना २९ मार्च, १८५७ ई० में बैरकपुर के स्थान पर हुई।

इस स्थिति को अँग्रेजी सेना के अधिकारियों की सहायता से नियन्त्रण में लाया गया और मंगल पाण्डे को फाँसी की सजा दी गयी। बंगाल आर्मी पूर्ण रूप से भंग करदी गयी। सेवा से मुक्त किए गये उन सिपाहियों ने अपना साहस नहीं छोड़ा। वह अपने घरों की ओर, अँग्रेजों के दमन कार्य जो उनकी भूमि जीवन और सम्मान से किया गया, उस समाचार का प्रचार करने लगे थे कि विदेशियों का उद्देश्य इस भारतीय जनता को ईसाई बनाना है। स्वयं ही खुले रूप से विद्रोह फूट पड़ा। विद्रोही सिपाहियों ने धन-कोष को लूटा और अँग्रेजी अधिकारियों को मारकर नगर से निष्कासित कर दिया। इस प्रकार वहाँ अँग्रेजों का प्रशासन समाप्त होने लगा और उत्तरी भारत में अँग्रेजी शासन की स्थिति डाँवाडोल होने लगी। वृद्ध जफर अली शाह को मुगल सम्राट के रूप में दिल्ली में सिंहासनारूढ़ किया गया। अवध के राज्य का पुनः संचालन किया गया। आशा रहित क्रोधित राजकुमारों एवं ताल्लुकेदारों आदि ने संघर्ष बढ़ाया।

अवध राज्य के विलय होने के पश्चात लखनऊ नगर में नौ माह तक रक्त-पात होता रहा जिसमें अँग्रेजी सेना के दमन के अतिरिक्त स्त्रियों ने अपनी लाशों से कुँये पाट दिये। उस समय वाजिद अली शाह स्वयं फोर्ट विलियम में बन्दी थे जहाँ उन्हें अनेकों कष्टों का सामना करना पड़ा।

अवध पर अँग्रेजी अधिकार ने क्षेत्र के हर वर्ग पर कठिनाइयाँ उत्पन्न करदी थीं और स्थिति यह हुई कि व्यवस्था और भी बिगड़ने लगी। अवध राज्य के जागीरदारों और सैनिक अधिकारियों ने विद्रोह कर दिया। उनके पास हथियार थे।

अवध के उच्चाधिकारी सर हैनरी लारेंस को नियुक्त किया गया जिसने स्थिति को शान्तिमय करने की कोशिश की। परन्तु अव्यवस्था और भी बढ़ती गयी और क्रान्तिकारियों का दल बढ़ने लगा। जब क्रान्तिकारियों को दिल्ली और मेरठ की क्रान्ति के सम्बन्ध में ज्ञान हुआ तो उन्होंने भी ब्रिटिश रेजीडेन्सी को घेर लिया। क्रान्तिकारियों ने वाजिद अली शाह के पुत्र बरजीश कदर को अपना संरक्षक एवं बादशाह स्वीकार किया।

अवध के शासन के पतन का समाचार सुनकर अवध के राजाओं और जमींदारों ने अनेकों प्रार्थनायें भेजी थीं कि जिनमें संकेत किया गया था कि यदि बादशाह हमें आदेश दें तो हम अँग्रेजों से युद्ध करके अपने कृत्यों को प्रदर्शित करें और किसी को गंगा के इस पार न आने दें। बादशाह ने जनता के रक्तपात के भय से उन्हें रोक दिया।

अँग्रेजी सेना के मुसलमान अधिकारी कहते थे कि हमें विश्वास था कि लखनऊ युद्ध के बिना हाथ नहीं आयेगा। हम उचित समय पर सम्मिलित होंगे क्योंकि लखनऊ "भारत का दीपक है" और इसके बुझने से सम्पूर्ण भारत में अंधेरा हो जाएगा। वाजिद अली शाह ने शासन की तबाही के कारण युद्ध नहीं किया और उसने कहा कि अंग्रेजों का विरोध न किया जाए। परन्तु अवध के निवासी विलय को शान्तिपूर्ण रीति से सहन कर सकें। वाजिद अली शाह के काल में विशेष रूप से राष्ट्रीय एकता का वातावरण उत्पन्न हो गया था। हिन्दू और मुसलमान परस्पर मिलकर वीरता पूर्वक लड़ें जिससे अंग्रेजों को समाप्त कर दिया जाए।

यह एक अवसर था कि जमींदार अधिक से अधिक भूमि का संग्रह कर लेते और परस्पर आवंटित कर लेते परन्तु उन्होंने इस प्रकार की कोई चेष्टा नहीं की बल्कि सभी लोग मिलकर ३ जुलाई, १८५७ को राजा जयपालसिंह पुत्र राजा दर्शनसिंह जो शाही दरबार के पुराने नौकर थे, के माध्यय से विद्रोही सैनिक हजरत महल की डियोढ़ी पर पहुँचे और मिर्जा बरजीश कदर को सिंहासनारूढ़ करने की प्रार्थना की। बेगम हज़रत महल को बड़ा आश्चर्य हुआ और ५ जुलाई, १८५७ ई० को वाजिद अली शाह ने नाबालिग पुत्र को अवध के सिंहासन पर बैठाया गया और एक प्रशासनिक सभा की स्थापना हुई जो बरजीश कदर के नाम से प्रशासन करती थी और उसकी शाही मोहर पर उसका नाम उल्लिखित कर दिया गया था।

बरजीश कदर हजरत महल के उदर से उत्पन्न हुआ था। अवध के आखरी बादशाह वाजिद अली शाह के फरजंद बरजिस कद्र हुजूर बाग की नगीने वाली बारादरी में पैदा हुए थे। इनके पैदा होते ही इनकी मां हजरत महल का रुतबा बढ़ा था। बिरजिस कद्र के दादा अमजद अली शाह ने ग्यारह तोपों की आवाज से शहर में इस पैदाइश का एलान किया था। लखनऊ शहर में किसी शहजादे के पैदा होने पर इतनी धूम-धाम नहीं हुई थी। ऐन रमजान के महीने में पैदा होने वाले इस बच्चे का नाम पहले रमजान अली रखा गया था, फिर दादा ने हजरत मिर्जा बरजिश कदर बहादुर नाम दिया। वाजिद अली शाह की कलम ने खुद इसका जिक्र किया है—

"गरज मुद्दते हम्ल आखिर हुई
ख़ुशी बाद नौ माह जाहिर हुई
वह तिफ़्ले ख़ुश एकबाल पैदा हुआ
कि जिस पर खुद इकबाल पैदा हुआ
खिताब उसका रोशन है मानिंद बदर
यह मिर्जा बहादुर है बिरजिस कदर

कहते हैं कि बिरजिस कद्र की पैदाइश पर इनकी दादी मलका किश्वर का हुक्का भरने वाली इलाही बेनम नाम की एक बूढ़ी महिला सैयदानी ने चेहरा पढ़ कर कह दिया था कि "माशा अल्लाह ताजो-तख्त का वारिस आया है। यह लड़का अपनी ग्यारवीं साल गिरह से पहले ही नवाब बन चुकेगा।" मौलवी गुलाम हजरत नहाबर ने इसे शिक्षा दीक्षा दी थी। हजरत महल का दरोगा हामिद खान और दीवान ठाकुर प्रसाद था। वाजिद अली शाह के पदच्युत होने के बाद हजरत महल और अन्य बेगमें वाजिद अली शाह के साथ कलकत्ता नहीं गयीं थीं। १८५७ में कारतूसों के सम्बन्ध में यह प्रचार किया गया था कि उनमें गाय और सूअर की चर्बी लगी हुई है और उनके खोल को दाँतों से ही काटा जा सकता है। इस प्रचार के कारण अंग्रेओं के विरुद्ध एक ज्वाला भड़क उठी। अन्य कारणों के साथ ही यह भी एक कारण था कि तिलंगों की कुछ पल्टनों की सेवायें समाप्त करदी गईं। विद्रोहियों की बागी सेना २३ जुलाई, १८५७ को लखनऊ पहुँची। वहाँ का अंग्रेज कमिश्नर उनके विरोध के लिए गया। चूँकि उनमें उत्तेजना थी और उनकी संख्या अधिक थी इसलिए वह वापस आया और विद्रोहियों की सेना ने "बेलीगारद" (मच्छी भवन) का घेरा डाल दिया। नगर में लूट मार का बाजार गर्म रहा और हजारों धनी और निर्धन लोगों की स्थिति और भी अधिक गम्भीर हो गयी।

अंग्रेजों की दमन और कूटनीति के कारण, वाजिद अली शाह के पदच्युत होने के बाद अवध की जनता परेशान थी, परन्तु अंग्रेज शक्तिशाली थे। अवध के निवासी और शाही परिवार दुर्बल थे। जैसा कि ऊपर उल्लेख किया जा चुका है कि अंग्रेज एक अवसर मिलने की चेष्टा कर रहे थे जिसने अवध का विध्वंश किया जाए। १८५७ को विद्रोह प्रारम्भ होते ही उन्हें अपनी चेष्टा का अन्तिम अवसर मिल गया परन्तु वह अवध पर अपना प्रभुत्व दृढ़ रूप से न कर सके।

कुछ इतिहासकारों ने बरजिश कद्र के सिंहासनारूढ़ होने के कारण त्रुटिपूर्ण ढंग से प्रकाशित किये हैं। जैसे नजमुलगनी उल्लेख करता है कि वाजिद अली शाह को पदच्युत करने के पश्चात अंग्रेजों ने अत्याचार किए तथा विद्रोह प्रारम्भ होने के पश्चात परिस्थितियों में ऐसा परिवर्तन हुआ कि विवशता के अतिरिक्त कोई विकल्प नहीं था। इसीलिए बरजिश कदर सिंहासनारूढ़ हुआ। इसी प्रकार से कमालुद्दीन हैदर भी उसको अपनी किताब में त्रुटिपूर्ण प्रकार से सिंहासनारूढ़ होना बताता है। वह उसकी शिया और सुन्नी बताने से नहीं हिचकिचाता है। उल्लेख करता है कि शाहजहां के बाद

(दिल्ली) में सुन्नी सम्प्रदायों के व्यक्ति अधिक थे और उसी सम्प्रदाय के कारण सम्मिलित हुए थे। लखनऊ में शिया सम्प्रदाय का बहुमत था इसलिए उनके सम्प्रदाय धर्मयुद्ध इमाम में करना अनुचित था। इसलिए वह क्यों सम्मिलित होते।

यह उपरोक्त प्रकार के मत व्यर्थ प्रतीत होते हैं क्योंकि लखनऊ की सम्पूर्ण धनी एवं निर्धन जनता ने स्वतन्त्रता के आन्दोलन में अपने सम्प्रदाय से हटकर परस्पर सम्मिलित होकर जो संघर्ष किया, वह अत्याचार के विरुद्ध था। यहाँ यह बात उल्लेखनीय है जैसे वाजिद अली शाह अपने काल में बादशाह की उपाधि से विभूषित था उसकी तुलना में बरजिश कदर को बादशाह नहीं बल्कि नवाब बजीर बनाया गया।

५ जुलाई, १८५७ को अहमद हुसेन के प्रस्ताव और नवाब मम्मूखान के अनुमोदन पर हजरत महल के पुत्र बरजिश कदर को सिंहासनारूढ़ किया गया। साहब उद्दीन और सैयद बरकान अहमद सालार ने शाही मुकुट को बरजिश कदर के सिर पर रखा। शाही तोपों की सलामी हुई, नगर में मनादी करादी गयी कि "खल्क खुदा को मुल्क शाह का आदेश बरजिस कदर का"। १६ जुलाई, १८५७ को नगर के पढ़े लिखे और पुराने व्यक्ति उपस्थित थे, उनको अपने पुराने पदों पर नियुक्त किया गया।

जो वो चौथा शहजादा है रश्के बद्र
उसे लोग कहते हैं बिरजीस कद्र
वो चौदह बरस का है कुछ शक नहीं
कहूँ क्या कि है वो कहीं का कहीं
मिलाऊं जो हजरत से लफ्जे 'महल'
तो नाम उसकी मां का खुले बरमहल
जो बिगड़ी थी आगे से अंग्रेजी फौज
उसे लै गई है जैसे दरिया की मौज
वो यह कब्जए मुफ़सिदा में है आह
बनाया है अपना उसे बादशाह—

(हुस्ने अखतर)

जब बरजिश कदर सिंहासनारूढ़ हुआ तो अराजकता लूटमार फैली हुई थी। प्रशासन लगभग डांवाडोल हो चुका था। तिलगे और सिपाही जनता को लूट रहे थे। बरजिश कदर ने सिंहासन पर बैठते ही सर्व प्रथम जो आदेश जारी किया, वह इस प्रकार का था—"अब कोई किसी को नगर में न लूटे, नहीं तो उसे दण्डित किया जाएगा।" जिसका बहुत अच्छा परिगाम हुआ। वास्तविकता यह थी कि उस स्वतन्त्रता के युद्ध में हिन्दू और मुसलमान, शिया और सुन्नी एक होकर सम्मिलित थे और जब उस नयी सरकार के पद विभाजित किए गये तो वह भी क्रमबद्ध सूची के अनुसार किये गये। जिनमें महत्वपूर्ण पद नवाब सर्फउद्दौला, महाराजा बालकृष्ण इत्यादि थे। अवध की हिन्दू जनता एवं कुछ सैनिकों ने अपनी स्वामिभक्ति इतने अच्छे ढंग से व्यक्त की कि उन्होंने हजरत महल से कहा जब तक "बेलीगारद" पर विजय प्राप्त न कर लेंगे वेतन

नहीं लेंगे। हमारे ब्राह्मण अपनी ज्योतिष विद्या के आधार पर कहते हैं कि बरजिश कदर का शासन कलकत्ता तक है। शुभ मुहूर्त में वह सिंहासनारूढ़ हुआ है।

अवध की नवीन सरकार वित्तीय रूप से कमजोर थी क्योंकि शहर में लूट-मार हो रही थी और वित्त कोष समाप्त हो चुका था। बरजिश कदर को जब इस लूटमार का आभास हुआ तो उसने एक दिन सब तिलंगों और अधिकारियों को बुलाया और उनको सम्बोधित किया ऐ वीरो हम तुमसे बहुत प्रसन्न हैं—परन्तु हमें एक बात का दु:ख है कि तुम नगर को लूट रहे हो, इसे समाप्त करदो अन्यथा सम्पूर्ण जनता बददुआयें देगी। अधिकारियों ने उत्तर दिया कि अब नगर नहीं लुटेगा।

जब अंग्रेजी सेना ने आक्रमण करके पुन: लखनऊ पर अधिकार कर लिया तो बरजिश कदर ने पलायन करके अपनी राजधानी बोंडी जिला बहराइच में स्थापित की। लगभग १० माह के पश्चात १८५८ में अंग्रेजी सेना बहराइच में भी प्रविष्ट हुई। इस संघर्ष में रक्तपात हुआ परन्तु अंग्रेज विजयी हुए और बरजिश कदर वहाँ से भागकर नेपाल की सीमा में आ गया। यहाँ यह तथ्य उल्लेखनीय है कि मिर्जा बरजिश कदर का पलायन करना कायरता नहीं थी बल्कि वह चाहता था कि उसे कुछ समय मिल जाए और वह पुन: अंग्रेजों से संघर्ष कर सके। उसके साथ लगभग एक लाख व्यक्तियों का समूह था। उन लोगों ने निश्चय किया कि हिमालय की घाटियों में शरण लें और अवसर प्राप्त होने पर पुन: आक्रमण करें। यदि विजयी हो तो अपने देश को वापस चलें और परास्त हों तो फिर घाटियों की शरण लें। नेपाल राज्य के राजा ने मिर्जा बरजिश कदर और उसकी माता को शरण तो दी परन्तु उनके साथ के समूह को आदेश दिया कि वह तुरन्त वापस जाये, बहुत से भाग निकले। मिर्जा बरजिश कदर और उसकी माता को नेपाल दरबार से एक मामूली वजीफा निर्धारित कर दिया गया और उनके साथ जो जवाहरात थे उन्होंने नेपाल सरकार को भेंट कर दिए।

लखनऊ छोड़कर बहुत सी बेगमें और महलें चली गयीं। परन्तु हजरत महल में जो परिवर्तन हुआ उससे सभी लोग आश्चर्य चकित हो गये। बादशाह की अनुपस्थिति में इन बेगमों को जीवन का वास्तविक परिचय हुआ। अवध प्रत्यक्ष रूप से अंग्रेजों के नियन्त्रण में आ गया लेकिन शीघ्र ही उसे प्रतिक्रिया का सामना करना पड़ा। ब्रिटिश सेना में दुखित-पीड़ित और क्रोधित सिपाही पहले से ही विद्रोह कर चुके थे। सम्पूर्ण अवध में संघर्षमय वातावरण छाया हुआ था। प्रत्येक दिशा से विजयी सिपाही लखनऊ की ओर त्वरित गति से आये। उस समय सर हैनरी लारेन्स, लखनऊ के ब्रिटिश शासन पर, अवध के मुख्य आयुक्त के रूप में कार्य कर रहा था। उसने आने वाले तूफान का अन्दाज लगा लिया और अपने कमाण्ड के सैनिकों को मच्छी भवन में एकत्रित किया। मच्छी भवन एक विशाल किले बन्दी के साथ उच्च स्थान पर बना हुआ था। रेजीडेन्सी में उसका निवास था जिसको आसिफउद्दौला ने अपने शासन काल में गोमती के किनारे एक ऊँचे टीले पर बनवाया था। सम्पूर्ण यूरोपियन स्त्री और बच्चे सुरक्षा हेतु रेजीडेन्सी

में एकत्रित कर लिये गये। इसी मध्य में विद्रोही सैनिक लखनऊ की ओर तीव्रगति से बढ़ रहे थे। सर हैनरी की स्थिति गम्भीर थी। दृढ़ और शीघ्र कार्य करना असम्भव था। वह शीघ्र ही इस बात का निर्णय न ले सका कि उन विद्रोही सिपाहियों के आगमन के पश्चात लखनऊ में उनके विरुद्ध लड़ना चाहिये। उसने अपने सैनिकों को आगे बढ़ाकर नगर के बाहर एक स्थान पर आक्रमण करने का निश्चय किया। हैनरी अपने सैनिकों को लेकर फैजाबाद मार्ग से चिनहट (लखनऊ से ६ मील की दूरी पर) तक मार्च कराते हुए ले गया। ३० जून, १८५७ ई० को उसके सैनिकों को तबाही का सामना करना पड़ा क्योंकि विद्रोही सैनिकों ने उन्हें खदेड़ दिया। सर हेनरी को विवश होकर यह निर्णय लेना पड़ा कि वह सैनिकों सहित रेजीडेन्सी वापस आ जाए। नगर को विद्रोही सैनिकों की दया पर छोड़ दिया। लखनऊ का पतन हुआ और लखनऊ पर अंग्रेजों का शासन लुप्त हो गया। सिपाहियों ने अपना उद्देश्य प्राप्त कर लिया। लेकिन वह नहीं जानते थे कि आगे क्या करना चाहिए। परिणामस्वरूप सिपाहियों ने अपनी अनियन्त्रित उत्तेजना के कारण नगर में लूटमार प्रारम्भ कर दी। इसके अतिरिक्त उनके पथ प्रदर्शन के लिए उन्हें एक नेता की आवश्यकता थी लेकिन वाजिद अली शाह जो उनका नेतृत्व कर सकता था वह कलकत्ता में बन्दी था। सिपाहियों ने वाजिद अली शाह की बेगमों और उनके पुत्रों को प्रोत्साहित किया परन्तु कोई हिम्मत नहीं बाँध रहा था और जब हजरत महल से कहा गया तो उसने अपने १० वर्षीय पुत्र को बादशाह बनाया और स्वयं एक संरक्षक के रूप में कार्य किया।

हजरत महल की विद्रोह के सम्बन्ध में भूमिका इतनी महत्वपूर्ण थी जैसी उसकी वाजिद अली शाह के निवास में महत्वपूर्ण भूमिका थी। उसने तीव्र गति के साथ विद्रोह में भाग लिया। इस बेगम ने महान योग्यता और शक्ति का प्रदर्शन किया। ताल्लुकेदारों ने उसके स्वामिभक्त होने के लिए सौगन्ध उठायी। बेगम ने अंग्रेजों के विरुद्ध अजेय युद्ध की घोषणा की।

रसेल ने बेगम हजरतमहल के बारे में लिखा :—

बेगम बड़ी ताकत और लियाकत वाली औरत है। उसने सदरे अवध को अपने तख्तनशीन बेटे का साथ देने के लिए तैयार कर लिया है और उसकी आवाज में के दम है कि फौजी सरदारों ने उसके बेटे की वफादारी में साथ निभाने और जान गंवाने की कसमें खाली है।

बेगम ने हमारे खिलाफ कभी न खत्म होने वाली लड़ाई का एलान किया है। वो सन्धि के शर्तनामे की शर्तो से सख्त नाराज है। उनके पुरखों ने अंग्रेजों पर जो एहसानात किए हैं और जो कर्जे कम्पनी सरकार को दिए हैं उसका ये सिला मिला है, इस बात का उन्हें बहुत मलाल और गुस्सा है।

बेगम ने अंग्रेज सरकार से पेंशन लेने से इन्कार कर दिया है। उनकी निगाह में पेंशन लेने का मतलब है कि वो अपने बेटे का हक छोड़ देना चाहती है।

बेगम हजरतमहल का वजूद उसके शौहर से कहीं अच्छा था। वह अपने बादशाह पति से अच्छी मर्द थी।''

एक अन्य इतिहासकार ने लिखा है :—

''अवध निवासियों की इस आजादी की लड़ाई में बेगम हजरत महल के अधीन अवध की अनेक स्त्रियों तक मरदाना वेष पहनकर हथियार बांधकर अपने अलग दल बनाकर लड़ रही थीं। वह जंगली बिल्लियों की तरह लड़ रही थी और उनकी मृत्यु हो जाने से पहले यह पता ही न चल सका कि वे औरत थी। बेगम हजरतमहल ने भी रानी लक्ष्मीबाई की तरह स्त्रियों का सैनिक संगठन बनाया था। बेगम हजरतमहल ने जी जान से सन् सत्तावन की आग को भड़काया।''

और यह सच है कि बेगम हजरतमहल हिन्दुस्तान की जंगे आजादी की प्रथम पंक्ति में अपना हक रखती है। इसलिए विक्टोरिया के एलान का जवाब देने वाली बेगम के स्मारक के लिए आजादी के बाद लखनऊ में मलका विक्टोरिया की यादगार चुनी गयी जो अब ''छतरी हजरतमहल'' कहीं जाती है।

हजरत महल ने क्रान्तिकारी नेताओं को पद दिये और एक ध्वजा के अन्तर्गत सिपाहियों के विभिन्न दलों का संग्रह कर संयुक्त मोर्चा बनाया। लगभग १९ माह तक उस क्रान्तिकारी सरकार ने जो बेगम के नेतृत्व से प्रेरणा ले रही थी लखनऊ नगर को अपने नियन्त्रण में रखा। बरजिश कदर की शाही मुद्रा के अन्तर्गत उसने सामान्य रूप से सामान्य जनता का और विशेष रूप से ताल्लुकेदारों और जमींदारों का आवाहन किया कि अंग्रेजों से युद्ध करने के लिए वह सरकार के झण्डे के अन्तर्गत एक हो जाए। उसने सम्पूर्ण प्रान्त का भ्रमण करने का प्रयास किया ताकि विदेशी शासकों के विरुद्ध लोगों को उत्तेजित किया जाए। उसने प्रत्यक्ष रूप से नाना साहब और कुछ अन्य महत्व-पूर्ण सम्मानित ताल्लुकेदारों और जमींदारों से सम्बन्ध बनाये रखा। उसने सक्रिय रूप से रेजीडेन्सी पर आक्रमण किया और बाद में लखनऊ के युद्धों में भी भाग लिया। उसने ५ लाख रुपया इस बात के लिए स्वीकृत किया कि लखनऊ नगर के चारों ओर अंग्रेजी सैनिकों को रोकने के लिए चाहरदीवारी का निर्माण करवाया जाए। जब उसे यह सूचना मिली कि नैपाल के राजा जंग बहादुर को अंग्रेजों ने गोरखपुर और अवध की सीमायें देने का वचन दिया है तो उसने शीघ्र ही अपनी ओर से राजा जंग बहादुर को गोरखपुर, आजमगढ़, आरा, छपरा और बनारस के प्रान्त देने का वचन दिया, यदि वह अंग्रेजों के विरुद्ध उसके साथ संगठित हो जाए। उसे समरतन्त्र सम्बन्धी योग्यताओं में निपुरणता थी। वह योग्य कूटनीतिज्ञ थी। उसने भारतीय सैनिक टुकड़ियों के अधिकारियों से जो कानपुर में अंग्रेजों की सेवा कर रहे थे, से सम्पर्क स्थापित किया और उनके साथ यह तय किया कि वह बारूद से उड़ा दें और उसके बाद यूरोपियन्स पर टूट पड़ें। वह स्वयं व्यक्तिगत रूप से २५ फरवरी, १८५८ को हाथी पर बैठकर अपने अधिकारियों के साथ आयी ताकि वह अच्छे ढंग से सुरक्षात्मक कार्य का निरीक्षण कर सके।

अंग्रेजों के लखनऊ पर अधिकार करने के बाद बेगम का नाम अंग्रेजों के सर्वप्रथम शत्रुओं में से था। अपने विशाल अनुयायिओं के साथ लखनऊ से बचकर घाघरा नदी को पार करके बोदी किले (बहराइच) में शरण ली। उसने उस किले पर भारी तोपें चढ़ा दीं और सशस्त्र सैनिकों को तैनात कर दिया। सम्भवतः उसके १६,००० अनुयायी थे। यह अनुयायी जमींदार और ताल्लुकेदार थे जिन्होंने १८५८ ई० में अंग्रेजों के विरुद्ध निरन्तर संघर्ष किया था। यह विदेशियों के साथ वीरता से लड़े थे जिससे यह प्रतीत होता है कि उनकी हजरत महल के साथ स्वामिभक्ति थी।

महारानी विक्टोरिया की घोषणा के पश्चात, अंग्रेज बेगम हजरत महल को क्षमा याचना, दया और पेंशन का प्रलोभन देकर अपनी ओर मिलाने का प्रयास कर रहे थे। परन्तु हजरत महल ने बरजिश कदर की मुद्रा के अन्तर्गत एक विपरीत घोषणा की जिसमें जनता को सचेत किया गया कि वह अंग्रेजों के झूठे वचनों से विचलित न हो। बेगम ने अपने घोषणा पत्र में कहा कि इस समय कुछ दुर्बल मस्तिष्क वाले और मूर्ख लोगों ने यह प्रचार फैला रखा है कि अंग्रेजों ने हिन्दुस्तान की जनता के अपराधों और त्रुटियों को क्षमा कर दिया है। यह बहुत आश्चर्य जनक प्रतीत होता है क्योंकि यह अंग्रेजों का निश्चित तरीका है कि वह किसी त्रुटि पर चाहे वह छोटी हो या बड़ी हो क्षमा नहीं करते। इतना ही नहीं यदि अनजाने में कोई छोटा अपराध कर बैठता है उसको भी माफ नहीं करते। इसलिए हमारी सरकार मानती है कि अवध की सरकार ही माता-पिता है। बहुत सोच विचार करने के पश्चात हम यह वर्तमान घोषणा इसलिए करते हैं कि मुख्य बातों के वास्तविक उद्देश्यों को उजागर किया जाए और हमारी जनता सतर्क रहे।

इस प्रकार बेगम हजरत महल अन्तिम समय तक अपने उद्देश्यों के लिए लड़ती रही। उसने यह निश्चय कर लिया था कि वह अंग्रेजों के हाथ न लगेगी। दिसम्बर, १८५८ ई० में "बोदी" जिले को छोड़कर हिमालय की तराई के घने जंगलों में कुछ स्वामिभक्त सिपाहियों जो निःशस्त्र बिना तोपखाने के अंग्रेजों को चकमा देकर निकल गये थे, के साथ रहने लगी। अन्ततः १८५९ ई० में नैपाल चली गयी। वहां पर नैपाल के राजा जंगबहादुर ने उसे शरण दी। यद्यपि अंग्रेज उसका विरोध ही करते रहे। १८७४ ई० के लगभग काठमांडू में उसकी मृत्यु हुई जहां पर एक साधारण व्यक्ति के रूप में अपने पुत्र के साथ रहती थी।

बरजिश कदर की गतिविधियों से वाजिद अली शाह का कोई सम्बन्ध न था और न कोई ताल्लुक था। लेकिन वाजिद अली शाह का हृदय बड़ा कोमल था, उसे अपनी सन्तान से बड़ा प्यार था। वाजिद अली शाह ने अपनी एक गाथा "हिजने अख्तर" में अपनी पत्नियों और बच्चों का उल्लेख किया है। उसमें बरजिश कदर का भी उल्लेख किया है कि वह एक दुखित एवं पीड़ायुक्त जीवन व्यतीत करता है।

हजरत महल के जीवन पर्यन्त बरजिश कदर नैपाल में जीवन की पीड़ाओं को सहता रहा और जब तक मां जीवित रही उसके प्यार से कभी अलग नहीं हुआ लेकिन

उसकी मृत्यु के पश्चात उसका जीवन और भी संकटमय हो गया। जब महारानी विक्टोरिया की "जुबली" के अवसर पर ब्रिटिश सरकार ने बरजिश कदर को क्षमादान किया और वापस आने का आदेश दिया तो वह कलकत्ता पहुँचा। वह अंग्रेजों से पेंशन याचना के लिए इंगलैण्ड जाने की तैयारी कर रहा था। उसी समय उसके परिवार वालों ने उसे निमन्त्रित किया और वहां से लौटते ही उसकी एवं सभी बच्चों को कै, दस्त होने के कारण एक ही दिन में मृत्यु हो गयी।

बरजिश कदर का अल्पकालीन शासन, वाजिद अली शाह के शासन का ही एक क्रम था जिसने अवध को एक बार फिर सुगठित रूप देने का प्रयत्न किया था। एक शक्तिशाली पदच्युत, कोमल हृदय बादशाह ने जनता से अगाध स्वामिभक्ति प्राप्त कर इतिहास में ऐसा स्थान प्राप्त किया है जिसके उदाहरण कोई-कोई ही होते हैं। वाजिद अली शाह के कलकत्ता प्रयाण के उपरान्त अवध के विद्रोहियों ने अंग्रेजों से जो संघर्ष किया वह उसकी इच्छा के प्रतिकूल था। अगर यह विद्रोह न होता तो लखनऊ के सम्मानित नागरिकों को फांसी न दी जाती। आकर्षक भवनों को विध्वंस कर जनता को प्रताड़ित न किया जाता।

बरजिश कदर और हजरत महल के नेतृत्व में अवध में जो स्वतन्त्रता प्राप्ति का आन्दोलन चला जिसने अंग्रेजों के विरुद्ध विद्रोह का रूप लिया और वहां की जनता को अत्याधिक प्रताड़ित किया गया जबकि इसके लिए बादशाह वाजिद अली शाह उत्तरदायी नहीं था क्योंकि वह कलकत्ता प्रयाण कर चुका था।

————

अध्याय—११

कलकत्ता प्रयाण

वाजिद अली शाह की रंग स्थली, उसकी प्रिय भूमि और वहां की चहेती जनता अब उससे छीन ली गयी थी। वह कुछ निर्णय करने की स्थिति में न था कि अब क्या किया जाय। अन्याय पूर्ण ऐसी चाल से वह हतप्रभ था। ऐसे में उसके सभी सलाहकारों की यही राय थी कि कलकत्ता तथा लंदन जाना जरूरी है। उसको एक दिन भी लखनऊ रहना बुरा लगता था। जनावे आलिया मल्का किश्वर, मुकद्दरे उजमा नवाब खास महल, सबकी राय थी कि लखनऊ छोड़ दिया जाये, बादशाह बहुत उदास थे। जब्ती के आदेश की जानकारी होने के बाद से ही उन्होंने सबसे मिलना-जुलना बन्द कर दिया था। कुछ खास लोगों से ही मिलते थे। बेगमात से मिलना एकदम बन्द था। १० फरवरी, १८५६ को नवाब खास महल पर्दा छोड़कर खुद उनके पास आयीं। बीवी हुजूर पहली बार ड्योढ़ी पार करके आयीं थीं।

बहुत कुछ लिखा-पढ़ी के बाद बादशाह को लखनऊ छोड़ने की अनुमति मिली। पर वे अपने साथ ५०० व्यक्तियों से अधिक नहीं ले जा सकते थे। मार्ग में हर जिलाधीश को हुक्म हुआ कि उनका स्वागत करें और जिले के बेहतरीन मकान में ठहरायें। बादशाह लखनऊ छोड़ने की तैयारी करने लगे। १६ मार्च, १८५६ को लार्ड डलहौजी भारत से लन्दन के लिए रवाना हो गये। उनके स्थान पर लार्ड कैनिंग गवर्नर जनरल हुए। उन्होंने बादशाह के पास मित्रता का पत्र भेजा।

बादशाह ने निश्चय कर लिया था कि लखनऊ नहीं रहेंगे। बेगमों को हुक्म हुआ कि जो चाहे वापस चली जायें। कई बेगमें चली गयीं पर कई ने पेंशन भी कबूल नहीं की। बहुत सी बेगमों ने अपना खर्च कम कर दिया। कलकत्ता को प्रस्थान करने से पूर्व बादशाह ने बेगमों को स्पष्ट शब्दों में आज्ञा दे दी कि जिन्हें उनके साथ नहीं रहना है वह अपने घर जा सकती हैं। इसलिए बहुत सी बेगमें चली गयीं और कुछ ऐसी भी थीं जिन्होंने बादशाह का साथ देना स्वीकार कर लिया और कैसर बाग में निवास करने लगीं। जिन बेगमों को तलाक देकर महर अदा किया गया उनमें अमीर महल और उमराव महल के नाम महत्वपूर्ण हैं। सैकड़ों नौकर-चाकर निकाल दिये गये। लखनऊ में हजारों आदमी औरतें बेकार घूमने लगे।

बिदाई के समय बादशाह ने सम्पूर्ण कर्मचारियों और जनता से कहा कि मैंने १० वर्ष शासन किया है। इस मध्य में मेरे द्वारा आप लोगों को जो दुख हुआ है उसके लिए मैं आप लोगों से क्षमा चाहता हूँ। इस समय मेरा हृदय अत्यन्त दुःखी है। मैं आपसे बिदा हो रहा हूँ। ईश्वर जाने जिन्दगी में फिर कभी मुलाकात हो या न हो। यह सुनकर सम्पूर्ण जनता रोने लगी।

नवाब वाजिद अली शाह ने १३ मार्च, १८५६ की रात ८ बजे लखनऊ को सलाम किया और चलते वक्त यह मशहूर नज्म कही थी।

दरो दीवार पे हसरत से नजर करते हैं
खुश रहो अहले वतन, हम तो सफर करते हैं

शनिवार का दिन था और वे कैसर बाग के उत्तरी फाटक से हवादार पर सवार हो रहे थे। कहते हैं, सवार होते-होते उन्हें एक ठोकर भी लगी थी। उस समय एक गवैया दर्दनाक शब्दों में गाने लगा और लोग रोने लगे।

"बालम मोरा नैहर छूटा जाये"

उस कठिन अवसर के सम्बन्ध में शायर सगीर ने लिखा है :—

यह सरकश दमें गिरियां नाले हुए।
कि लबरेज अश्कों से प्याले हुए।।
दरे बाग तक आये अहले हरम।
बहाते हुए चश्म से अश्के गम।।

वाजिद अली शाह ने पदच्युत होने के पश्चात् सर्वप्रथम कलकत्ता की ओर जाने का निश्चय किया और वहाँ से इंगलैण्ड जाने का निर्णय लिया था ताकि अपने मामले को महारानी के समक्ष प्रस्तुत कर सके। इसी योजना के अन्तर्गत लगभग १००० व्यक्तियों का शाही दल १३ मार्च, १८५६ को लखनऊ से कानपुर के मार्ग से कलकत्ता की ओर रवाना हुआ। उस विदाई का दृश्य बहुत करुणामय था। सम्पूर्ण नगर सूना और उदास था। प्रत्येक व्यक्ति रुदन के कारण व्याकुल हो रहा था। जब दुर्भाग्यवश बादशाह विदा हो रहे थे तो उस समय नागरिक असमर्थ और असहाय से प्रतीत होते थे और व्याकुल होकर (जिस प्रकार से मृतक के लिए विलाप किया जाता है) रुदन करने लगे। कैसर बाग परांगमुख सा प्रतीत होता था। जनता अपने वाहनों से अपने प्रिय बादशाह का साथ देने के लिए कानपुर की ओर जा रही थी। यद्यपि बादशाह के आदेश थे कि कोई भी उसके पीछे न आये।

जब शाही सवारी भीड़ के मध्य से गुजरी तो राह में चलने वाले भी रोने लगे और दुकानदारों की आँखों में भी आँसू भर आये। बिदा होते समय शोक के कारण अत्यन्त हाहाकार मच गया।

ईस्ट इण्डिया कम्पनी ने बादशाह को कलकत्ता जाने के सम्बन्ध में जो वचन दिये थे, उनको पूरा नहीं किया। बादशाह को रास्ते में अपने निवास का प्रबन्ध स्वयं करना पड़ा। कानपुर में अपने मित्र ब्रैंडन व्यापारी के तंग बंगले में ठहरे और अत्याधिक परेशानियों का सामना करना पड़ा। १४ मार्च, की सुबह वह कानपुर में थे, जहाँ बादशाह के वफादार दोस्त विरंडन (ब्रैंडन) साहब का बंगला था और बादशाह वहीं उतरा था। वहीं अगले रोज उसकी माँ जनाब आलिया मलका किश्वर साहिबा भी उससे जा मिली थीं।

बादशाह के कानपुर पहुँचने पर कम्पनी की फौज परेड के मैदान में सलामी के लिए इकट्ठी हुई। पर वह सलामी लेने खुद नहीं गया, इनाम भेज दिया। कानपुर में वह किसी से नहीं मिला। सिर्फ मेजर बर्ड और नवाब मुनवरुद्दौला को मिलने की इजाजत थी। बादशाह कानपुर एक महीने ठहरा। मेजर बर्ड को कलकत्ता रवाना कर दिया। अब बादशाह का दर्दनाक ब्यान उसी की जबानी सुनिए :—

दिला तर्क कर अपने गम का बयां।
सुना अपनी अव्वल से तू दास्ताँ॥
चलेंगे हम इस शहर से अब जरूर।
न है कुछ विरासत न है कुछ गरूर॥

कानपुर में ही नौरोज यानी शिया नव-वर्ष पड़ा। बादशाह शर्बत बंटवाना चाहता था। कानपुर भर में केवल १८ मन शक्कर मिली। एक हफ्ते के बाद शाहे अवध इलाहाबाद और गोपीगंज होते हुए बनारस पहुँचा। उस वक्त वहाँ के महाराजा ईश्वरी प्रसाद नारायण सिंह थे। महाराजा ने नवाब वाजिद अली शाह को शहर में बनी हुई दो मंजिला नदेसर कोठी में ठहराया।

काशी नरेश सफेद पोशाक पहन कर ताजदारे अवध का स्वागत करने आये। महाराजा ने ७,०००/- रुपया का नजराना दिया और रुपया ५००/- की खैरात मोहताजों में बाँटी। बादशाह की माता मलका किश्वर साहिबा को भी १०१ अशर्फियाँ भेंट की और कई थाल बनारसी सामान उपहार में दिये।

बादशाह के साथ उस वक्त शाही घराने से सम्बन्धित जितने लोग थे, उनमें मलका-ए अवध खास महल, आलम आरा बेगम, प्रिंस हामिद अली, माशूक महल साहिबा, मिर्जा फरीदूं कदर, नवाब आलिया मलका किश्वर और जनरैल सिकन्दर हशमत साहिब के नाम उल्लेखनीय हैं। बादशाह को नदेसर कोठी की ऊपरी मंजिल में ठहराया गया और उनकी वैसी ही आवभगत हुई, जैसी कि एक बादशाह के लिए मुनासिब थी।

इस संदर्भ में एक प्रसंग है—वह गर्मी का समय था और काशी नरेश ने नवाब के लिए एक खसखाना बनवाया था। तमाम नौकर खस के उन परदों पर पानी छिड़क कर उन्हें हमेशा तरोताजा रखते थे, लेकिन जाने-आलम ने खसखाने से निकलते वक्त अपने अजीज दोस्त महाराजा ईश्वरी प्रसाद नारायण सिंह जी को बताया कि उनके चालाक नौकरों ने नये खस की जगह पुराने और बासी खस के परदे बाँध दिये हैं, जिसे उन्होंने सिर्फ खुशबू से पहचान लिया। उसका असर यह हुआ कि नवाब को बाकायदा जुकाम हो गया। बेशक यह लखनऊ की नजाकत की एक बेहतरीन मिसाल थी।

कुछ दिनों तक नदेसर कोठी में विश्राम करने के बाद जाने से पहले जाने आलम ने विश्वनाथ मन्दिर जाकर वहाँ नित्य सुबह शहनाई बजवाने का प्रबन्ध किया और उसका खर्च अपने जिम्मे लिया।

बनारस से कलकत्ता तक की यात्रा मलका किश्वर और खास महल ने डाकगाड़ी से की और बाकी लोगों को लेकर मैकलायड स्टीमर द्वारा नवाब गंगा नदी के रास्ते रवाना हो गया।

कहा जाता है, काशी नरेश ने अवध-पतन के रंज में अपने नगर में उस वर्ष होली और दीवाली के त्योहार को धूमधाम से न मनाने की अपील की थी। जब लोगों ने उसका सबब पूछा तो उन्होंने बड़ी सादगी के साथ जवाब में यह शेर पढ़ दिया :—

शाद क्या खाक हो, किस से कहें किस गम में हैं।
अपनी सरकार के लूट जाने के मातम में हैं॥

बादशाह स्टीमर यान से गंगा नदी के मार्ग से कलकत्ता रवाना हुए। उनके साथ ११० आदमी थे। कलकत्ता नगर से ६ मील दूर मटिया बुर्ज में रुपया २,०००/- मासिक किराया पर महाराज वर्द्धवान की कोठी ली। १३ मई, १८५६ को बादशाह ने उसमें प्रवेश किया। स्टीमर की यात्रा में उसे इतनी परेशानी हुई कि उसने लन्दन जाने की योजना को स्थगित कर दिया। २६ जुलाई को कई जलपोत गोमती के मार्ग से बादशाह का सामान लेकर लखनऊ से कलकत्ता के लिए रवाना हुए। अंग्रेजों ने मार्ग में तलाशी ली और जब वह कलकत्ता पहुँचा तो उसने रुपया ५,०००/- रिश्वत देकर सामान उतरवाया।

बादशाह के साथ ५०० आदमी आकर मटिया बुर्ज में ठहरे थे। बादशाह के साथ कलकत्ता जाने वाले काफिले इतने पहुँचे कि मटिया बुर्ज की जनसंख्या ४०,००० तक पहुँच गयी थी और वह एक दूसरा लखनऊ बन गया था। इन दिनों लखनऊ नहीं रहा मटिया बुर्ज लखनऊ बन गया था। यहीं की चहल-पहल, यहीं की भाषा, यहीं की जनता, यहीं की सोहबत थी। लखनऊ की कोई ऐसी वस्तु नहीं जो पूर्ण रूप से वहाँ उपस्थित न हो। वाजिद अली शाह की कलकत्ता में मटिया बुर्ज के स्थान पर निर्वासित जीवन अत्यन्त रोचक प्रतीत होता था। उसने पुनः राज्य की प्राप्ति के लिए महारानी विक्टोरिया को एक पत्र लिखा।

१३ मई, १८५६ ई० को वह कलकत्ते पहुँचा और उसने पहुँचने का समाचार मैजीज के द्वारा महाराज्यपाल को पहुँचा दिया। लेकिन उसके आगमन पर तोपों की सलामी देने के लिए कोई आदेश नहीं दिये गये थे और वाजिद अली शाह ने स्वयं महाराज्यपाल से भेंट की। क्योंकि वाजिद अली शाह लखनऊ से कलकत्ते की लम्बी पीड़ा को सहन नहीं कर सका इसलिए वह कलकत्ता पहुँचते ही अस्वस्थ हो गया। परिणाम स्वरूप उसने लन्दन जाने का विचार छोड़ दिया और उसका छोटा भाई और उसकी माता एवं उत्तराधिकारी और मौलवी मसीउद्दीन शाही राजदूत के रूप में तथा कुछ आज्ञाकारी कर्मचारियों ने १८ जून, १८५६ को प्रस्थान किया। भूतपूर्व सहायक रेजीडेन्ट, मेजर बर्ड की सेवाओं का उपयोग किया गया। वह अपनी सेवाओं से त्यागपत्र देकर शाही दल के साथ लन्दन का समर्थन प्राप्त करने के लिए रवाना हुआ।

लन्दन में अवध के विलय को कामन्स सभा के उदारवादी गुट ने अप्रसन्नता की दृष्टि से देखा था इसलिए शाही दल को उसका समर्थन प्राप्त करने के सम्बन्ध में बड़ी आशायें थीं लेकिन १८५७ के विद्रोह की अकस्मात् घटना के कारण उनका समर्थन समाप्त हो गया और अवध वंश के भाग्य का सितारा सदैव के लिए डूब गया।

जब अवध में स्वतन्त्रता आन्दोलन के शोले भड़कने लगे तो अंग्रेज समझने लगे कि इसमें बादशाह का भी हाथ है। १५ जून, १८५७ को प्रातःकाल गोरे सिपाहियों की दो बटालियन और ४०० बरकन्दराज, १५-२० सिपाही कोठी को घेर कर खड़े हो गये। १२ तोपें फाटक पर लगा दी गयीं। नदी के किनारे स्टीमर पर भी तोपें लगा दी गयीं। रिवाल्वर में गोली भरकर मेजर ब्रैंड और मेजर कोनिया कोठी में घुस गये और बड़ी असभ्यता से बादशाह से कहा कि गवर्नर जनरल का आदेश है कि तुम कुछ दिन फोर्ट विलयम में रहो। बादशाह उस समय नमाज़ पढ़ रहा था। बादशाह ने कहा कि अवध में जो कुछ हो रहा है उससे मेरा कोई सम्बन्ध नहीं है, परन्तु उन्हें बन्दी बनाने वाले यह बातें कब सुनने को तैयार थे। यद्यपि बादशाह राजनीतिक बन्दी था परन्तु कैद में उसको किसी प्रकार की सुविधा नहीं दी गयी। ३२ घण्टे तक बादशाह ने खाना नहीं खाया था। बर्ड लार्ड साहब ने उसको खाना घर से मंगाने की आज्ञा दी तो उस भोजन की तलाशी के लिए एक गोरे ने उसमें हाथ डाल दिया। अतः बादशाह ने उस खाने को भी नहीं खाया।

फोर्ट विलियम में बादशाह को अत्यन्त गन्दी जगह पर रखा गया। वहाँ किले में आग नहीं जला सकते थे। इसलिए उसको खाना ठण्डा मिलता था। एक गोरा उनके कमरे में घुस आया और उसको गालियाँ देने लगा। बादशाह ने उसकी शिकायत की तो उसका स्थानान्तरण कर दिया गया। गोरे सिपाही रात को पहरा लगाते थे और इसी प्रकार की आवाजें लगाया करते थे कि "तुम साला है या मर गया।" ९ जुलाई, १८५९ को शनिवार के दिन दो साल का कठोर कारावास सहन करने के बाद वाजिद अली शाह मटिया बुर्ज में आ गया परन्तु उसका पारिवारिक जीवन पूर्ण रूप से दुखी हो गया था।

फोर्ट विलियम की यातनायें सहन करने के उपरान्त वाजिद अली शाह को पुनः मटिया बुर्ज में रहने की स्वतन्त्रता मिल गयी। सत्ता की प्राप्ति के समस्त उपाय व्यर्थ हो गये और इसी कारण उसकी प्राप्ति की आशा भी चकनाचूर हो गयी। प्रकृति का चक्र अपनी गति से चलता रहता है और उसमें जीवन सुख-दुख की आँख मिचौनी खेलता रहता है। वाजिद अली शाह भी आनन्द की अनुभूति के लिए पुनः अपने अतीत में गया जहाँ पर वही परियों का आकर्षक यौवन, वही नूपरों की ध्वनि एवं पायल की झंकार। यद्यपि यह सब चीज प्रत्यक्ष रूप से प्राप्त न हो सकी परन्तु उनकी स्मृति मात्र ही उसको अलौकिक सान्त्वना प्रदान करने में सक्षम सिद्ध हुई। पुनः बादशाह की विपत्तियों पर श्रृंगार ने विजय पायी और एक सफल प्रेमी की भाँति अपनी स्थिति का ध्यान न रखते हुए उसने अपनी प्रेमिकाओं को श्रृंगारिक भाषा में पत्र लिखे जिसमें उसके हृदय का प्रेम सागर उमड़ पड़ा। इतना ही नहीं अपनी *यथाशक्ति* उसने उपहार भी भेजे जो

सम्भवतः उसके प्रेम की वन्दना के उपहार थे। वाजिद अली शाह संकट ग्रस्त होने पर भी अपनी जनता को न भूल सका। यह उसके चरित्र की अनूठी विशेषता थी। मटिया बुर्ज से उसने प्रजा को भी प्रेम भरे पत्र लिखे।

वाजिद अली शाह की लगभग आधी जिन्दगी कलकत्ता के मटिया बुर्ज में बीती। कलकत्ता से तीन चार मील की दूरी पर दक्षिण की ओर हुगली नदी के किनारे एक शान्त मोहल्ला है "गार्डन रिज"। यहाँ की मिट्टी एक लौंदा सी है। इसीलिए यह मटिया बुर्ज के नाम से पुकारा जाने लगा। यहाँ कई आलीशान कोठियाँ थीं जिनकी जमीन दरिया के किनारे-किनारे लगभग दो-ढाई मील तक चली गयी है। वाजिद अली शाह जब कलकत्ता पहुँचे तो अंग्रेजी सरकार ने यह कोठियाँ उन्हें दे दीं। जो कोठियाँ दी गयीं उनमें दो खास बादशाह के लिए थीं। जिनके नाम बादशाह ने "सुल्तानखाना" और "असदमंजिल" रखे। एक नवाब खास महल के लिए कोठी थी। जिस पर बादशाह ने कब्जा कर लिया और उसका नाम "मुरस्सा मंजिल" रखा। अली नकी खां को भी एक कोठी दी गयी जो अन्त तक उसी के पास रही और उसके बाद उसकी औलाद अख्तर महल जो बादशाह की खास बीबी थी, के कब्जे में रही। इसके साथ ही जमीन का टुकड़ा जो नदी से करीब ही चौड़ाई में लगभग डेढ़ मील तक चला गया था और जिसका क्षेत्रफल लगभग छः-सात मील का था, बादशाह को अपने व अपने कर्मचारियों के निवास के लिए दिया गया। गदर के जमाने में बादशाह को दो साल तक फोर्ट विलियम में नजरबन्द रहना पड़ा। इस बीच लन्दन में उनकी ओर से जो मुकदमा पेश था वह इस कारण स्थगित कर दिया गया कि जिस देश के लिए यह दावा है वह अंग्रेज सरकार के कब्जे में नहीं है। जब ब्रिटिश सम्राज्य का अधिकार उस क्षेत्र पर हो जाएगा तब देखा जाएगा। उपद्रव शांत हो जाने के बाद मसीह उद्दीन खां ने जो लन्दन में बादशाह के मुख्तार-ए-आम थे फिर अपना दावा पेश किया। परन्तु इस बीच चाहे किसी बाहरी दबाव से या खुद अपने फायदे के ख्याल से एक साजिश हुई। सबने बादशाह को समझाना शुरू किया कि "जहाँपनहा, भला कभी किसी ने मुल्क लेकर वापिस दिया है।" होना हवाना कुछ नहीं है आप मुफ्त में तकलीफ उठा रहे हैं। मुनासिब होगा कि पैसे की इस तंगी से छुटकारा पाने के लिए बादशाह अंग्रेज सरकार के प्रस्तावों को स्वीकार करलें और पेंशन लेकर बेफिक्री से अपनी बेगमों और नौकरों के साथ जिन्दगी बसर करें। बादशाह को पैसे की तंगी थी, उनके सब साथी परेशान थे। अन्ततः वाजिद अली शाह ने वाइसराय को लिखा, "मुझे अंग्रेज सरकार की प्रस्तावित पेंशन स्वीकार है, लिहाज़ा मेरी इस वक्त तक की तनख्वा दी जाये और लन्दन में जो मुकदमा दायर है, खारिज किया जाये।" सरकार ने जवाब दिया आपको पिछले दिनों की पेंशन नहीं दी जायेगी। सिर्फ इस वक्त से पेंशन जारी होगी। दूसरे सिर्फ बारह लाख रुपया सालाना दिये जायेंगे और जो तीन लाख रुपये सालाना आपके मुलाजिमों के लिये तय किये गये थे अब उनको देने की जरूरत नहीं समझी जाती।" बादशाह को यह शर्त मन्जूर करनी पड़ी और उन्होंने इसे स्वीकार कर लिया। भारत सरकार ने इंगलैण्ड में इत्तला कर दी कि उसका मुकदमा

खारिज किया जाये। यह खबर जब लन्दन पहुँची तो मसीह उद्दीन के होश जाते रहे। बादशाह की माँ, उसके भाई और युवराज ने सिर पीट लिये। वह सब हैरत थे कि यह क्या गज़ब हो गया।

जेल से छूटने के बाद बादशाह के जीवन में कोई रस नहीं रह गया था। कुछ समय और बीतने पर माता, भाई तथा युवराज मर चुके थे। आधा परिवार लखनऊ की क्रान्ति में मिट गया था। जेल जीवन का दिल पर बुरा असर पड़ा। इस पर भी शुरू-शुरू की मटिया बुर्ज में वाजिद अली शाह की जिन्दगी बहुत सूझ-बूझ व होशियारी के साथ बीती। उसके चाटुकारों और वाह-वाह करने वाले चापलूसों का गुजारा मुश्किल से होने लगा। इसके लिये इन्हीं लोगों ने बादशाह को कुछ वाद्य यंत्र लाकर दे दिये। परिणाम स्वरूप "ऊंघते को ठेलते का बहाना" कहावत चरितार्थ हुई और आनन्द मण्डली वहाँ भी जमने लगी। हिन्दुस्तान के अच्छे-अच्छे गवैया आकर इकट्ठे हुए और मटिया बुर्ज में संगीतकारों का एक ऐसा जमघट हो गया जैसा और कहीं नहीं था। बादशाह की वास्तविक विलासिता कलकत्ता में ही प्रारम्भ हुई। सुन्दर स्त्रियों को एकत्र करने का वहाँ भी वैसा ही शौक, जैसा लखनऊ में सुना जाता था, बादशाह पर हॉवी हो गया। बादशाह शिया थे और शियों के धर्म में मुत्आ (एक निश्चित अवधि के लिए किया गया विवाह) बिना किसी रोक टोक के जायज है। इस मजहबी आजादी से फायदा उठाकर बादशाह जी भर के अपना शौक पूरा कर लेते और फायदा था कि बादशाह ऐसी औरत को जिसके साथ मुत्आ न हुआ हो, सूरत देखना भी पसन्द न करते थे। बादशाह की अय्याशी इस हद तक बढ़ गयी थी कि एक जवान भिश्तन जो बादशाह के सामने जनाने में पानी लाती थी उससे भी मुत्आ करके उसे "नवाब आबरसां बेगम" का खिताब दे दिया। एक जवान भंगन जो हुज़ूरी में आमदरफ्त रहती थी, उससे भी मुत्आ करके बेगमात में शामिल करके "नवाब मुसफ्फा बेगम" का खिताब दिया। यहाँ उनका संगीत का शौक मुत्आ शुदा औरतों तक ही सीमित था। शायद ही कभी उसने बाजारी वेश्या का मुजरा देखा हो। अब्दुल हलीम शर्रर ने बादशाह के विषय में जो कुछ लिखा उसका सारांश कुछ इस प्रकार है।

वेइत्तफाका व परेहजगारी, खुदातरसी और खुदापरस्ती की मुजस्समा तसवीर थे—बेगमात—अक्दे मुता के जरिए से हलाल करली गयी थी—इससे ममतूआत की तादाद बढ़ती गयी—नौकरानियों से कोई ताल्लुक नहीं था नौकरानियों की भी काफी इज्जत होती थी। भिश्तन तक को नवाब आबरसा बेगम कहते थे। अच्छा गाना तोबा तुड़वा दिया करता था। ज्यादातर मर्द गवैये थे।

मुत्आ शुदा बेगमों की नयी पार्टियाँ बना दी गयी थीं। जिन्हें विभिन्न प्रकार के नृत्य, गायन की शिक्षा दी जाती थी। बीसों गिरोह थे। जिनको नाच गाने की शिक्षा दी गयी और उन्हीं के गानों से उसका मन बहलता था। जिनसे मुत्आ हो गया था वह सभी बेगमें कहलाती थीं और यदि कोई कम उम्र व नाबालिग लड़कियाँ भी थीं जिनके साथ मुत्आ नहीं हुआ था तो वह इसलिए थीं कि उनके बालिग होने पर उनके साथ मुत्आ

कर लिया जायेगा। इनमें से अधिकतर बादशाह के पास सुल्तान खाने में रहती और कुछ दूसरी कोठियों में रहती थीं। मुत्आ शुदा औरतों में जिनके सन्तान हो जाती उनका "महल" का खिताब दिया जाता और रहने को अलग भवन मिलता तथा उनकी इज्जत व तनख्वा बढ़ा दी जाती। बादशाह घोर निराशा व पीड़ा के कारण व विलासिता में इतना नीचे उतर आया था कि जाफरी बेगम से उसके मुँह का कुचला हुआ पान अपने लिये मंगाया था।"

बादशाह को यहाँ भी इमारत का बड़ा शौक था। सुल्तान खाने के पास बीसियों महल सराय थी। सरकार से केवल सुल्तान खाना, असद मंजिल और मुरस्सा मंजिल मिली थी मगर बादशाह के शौक ने चन्द ही रोज में बीसियों कोठियाँ बनवा दीं। इन कोठियों के आस पास हरे भरे बागों का भी निर्माण करवाया। बादशाह के कब्जे में जो कोठियाँ थी उनका दक्षिण से उत्तर तक सिलसिलेवार वर्णन इस प्रकार है :—

सुल्तान खाना, शहंशाह मंजिल, मुरस्सा मंजिल, असद मंजिल, शाह मंजिल, नूर मंजिल, तफरही बख्श, बादामी आसमानी तहनियत मंजिल, हद्द-ए-सुल्तानी, सुद्द-ए-सुल्तानी, अदालत मंजिल आदि कई कोठियाँ भी थीं। इनके बागों और तालाबों को बहुत सुन्दर तरीके से सजाया गया था। हर कमरे में साफ सुथरा फर्श बिछा रहता था। सलीके से पलंगों पर बिस्तरे और बिछौने लगे होते। फर्नीचर और तस्वीरें बड़े आकर्षक ढंग से सजाये गये थे। आदमी को भौचक्का करने तथा आकर्षन उत्पन्न करने का सफल प्रयास किया गया था। मटिया बुर्ज में बढ़िया व खूबसूरत इमारतों का एक आकर्षक शहर सा बस गया था। मटिया बुर्ज अजीबो गरीब चीजों के कारण दुनिया की जन्नत की तरह लगता था। इन तमाम इमारतों, बगियों, कुंजों और विस्तृत हरी-भरी चरागाहों को बुलंद दीवारों के अहातों से घेरा गया था। म्यूनिस्पलिटी के आम रास्ते के किनारे-किनारे लगभग एक मील तक शानदार दुकानें थीं और उनमें वही निचले दर्जे के नौकर रह पाते थे जिन्हें अपना फर्ज पूरा करने के लिए वहाँ रहने की जरूरत थी। अन्दर आने जाने का रास्ता सिवाय फाटकों के, जिन पर पहरा रहता था किसी दुकान में नहीं रखा गया था। खास सुल्तान खाने के फाटक पर निहायत शानदार नौबतखाना था। नक्कारची नौबत बजाते और पुराने पहरों और घड़ियों के हिसाब से घड़ियाँ बजाया करते थे।

इमारत का काम मूनिस उद्दौला और रेहान उद्दौला के सुपुर्द था और इन्हें इसमें व्यय के लिए लगभग पच्चीस हजार रुपया माहवार मिला करते थे। हजार के करीब पहरे के सिपाही थे जिनकी तनख्वाहें छः रुपये महावार थी। जिनमें से कुछ को आठ या दस रुपया माहवार भी मिलते थे। लगभग इतनी ही तनख्वाहें मकानदारों की थी जो लगभग पाँच सौ थे। करीब अस्सी मुहर्रिर थे जिनकी तनख्वाह तीस रुपये माहवार थी। इनके अतिरिक्त प्रतिष्ठित मुसाहिबों और ऊँचे ओहदेदार जिनकी संख्या लगभग चालीस-पचास रहीं होगी अठ्ठासी रुपये माहवार पाते थे। सौ से ज्यादा कहार भी सेवाओं के लिये नियुक्त किये गये थे।

बीसियों छोटे-छोटे महकमें बने हुये थे जैसे बावर्ची खाना, आबदार खाना, भिडी खाना, खास खाना आदि। मुत्आ शुदा बेगमों के रिश्तेदारों और भाई बंधुओं को उनकी हैसियत के मुताबिक कुछ धनराशि तय करदी जाती थी। यह सभी कोठियों की बाहर की जमीन पर या उसके आस-पास ही मकान बनाकर रहते थे। उनकी आबादी लगभग चालीस हजार हो गयी थी। इन सभी का गुजारा बादशाह की पेंशन, एक लाख रुपये महावार पर ही निर्भर था। बंगाल में यह मशहूर हो गया था कि बादशाह के पास पारस पत्थर है। जब जरूरत होती है लोहे या तांबे को रगड़ कर सोना बना लिया करता है।

मटिया बुर्ज के दुकानदार और महाजन तक लखनऊ के थे। लखनऊ की कोई ऐसी चीज न थी ज़ो वहाँ उपलब्ध न हो। एक अजीब रौनक और चहल पहल नजर आती थी। लोग इतने मस्त और बेसुध थे कि उन्हें यह भी ध्यान न रहा कि इन सबका अंजाम क्या होगा। शाही इमारतों व चारागाहों के अन्दर लखनऊ वालों को घूमने फिरने की पूरी इजाजत थी।

बादशाह का साहित्यक प्रेम अगाध था। वाजिद अली शाह बहुत कठिन उर्दू के साथ-साथ बहुत सरल और मुहावरेदार लिखते थे। उनके संबोधन बड़े साहित्यक और रोचक हुआ करते थे। जैसे उन्होंने अपनी बेगमात को पत्रों में "मेवए बागे जवानी" "मेहरे सिपहेरे खबी" "माहे बुर्जे महबूबी" आदि से संबोधित किया है। बेगम मुमताज को उन्होंने एक पत्र लिखा--तुम्हारे खत को सीने पर रखा, छाती से लगाया, आंखों पर रखा, बहुत चूमा चाटा कि यहाँ तक हर्फ भी मिट गये। इस पर भी बे-जबाब लिखे तस्कीन न हुई।"

बादशाह की आम बोलचाल की भाषा बहुत ही मधुर थी। जिसके कुछ उदाहरण प्रस्तुत हैं :—

१. खुदा-खुदा करके कलकत्ते में पहुँचे।
२. काट फांस से एक लमहा भी चूकते।
३. गजब पेट से पांव निकले हैं।
४. घने-घने जंगल, काले-काले पहाड़।
   न कहीं साया, न कही आड़॥
५. क्या फलक की यही चालढाल होती।
   कि बिना मरे जिन्दगी बबाल होती॥
६. चेहरा अगबानी जाफरानी हैं।
   फरमोश सारी लन्तरानी है॥

मटिया बुर्ज में ही रहते हुए बादशाह ने अपने अधिकतर ग्रन्थों की रचना की है। इस सम्बन्ध में अब्दुल हमीद शर्रर कुछ इस प्रकार वर्णन करते हैं कि बादशाह को दो ही शौक थे, शायरी और मौसीकी (संगीत विद्या)। वह अरबी बहुत कम जानते थे। उन्हें

मेज पर बैठकर लिखने की आदत नहीं थी। पालती मारकर भी नहीं लिख सकते। लेट जाते तो दम भर में दो चार बन्द की नसरे लिख डालते। बहुत खुश-खत (सुन्दर अक्षर) लिखते थे। जब सवारी पर चलते तो दो कातिब (लिखने वाला) दोनों ओर चलते थे। दोनों को अलग-अलग चीजें लिखाते चलते थे। उन्होंने बहुत सी किताबें लिखी हैं। तुरन्त सोचते तुरन्त लिखते। शायरी में कभी-कभी लग्जिश भी हो जाती थी। पर उनमें लचक, एक खास अंदाज होता था। कभी किसी से सलाह मशविरा नहीं लेते थे। तब शायर इनको खुश करने के लिये इनको ही अपना उस्ताद बना लेते थे। जितने शायर दरबार में दाखिल किये जाते थे, उनको बादशाह एक मोहर देते थे। जिस पर लिखा रहता था "तलमीजुस्सुल्तान" यानि बादशाह के शागिर्द। बादशाह जब कुछ पढ़ते तो दरबारी खूब दाद देते। तारीफ है कि बादशाह की शायरी में कोई भी मिसरा बाहर से अलग नहीं है, अतुकान्त नहीं है। बादशाह ने जो कुछ लिखा है सब उनका अपना है। बातचीत में बादशाह, खिलाफ मुहावरा, लफज नहीं निकालते थे। बादशाह और उनकी महलात के बीच जो खतो किताबत होती थी उसे "तवद्दुरनामा" कहते थे। ऐसे खत रंगीन व पुरकशा कागज पर होते थे।

वाजिद अली शाह और उसकी बेगमों के पत्र और पत्रांश से उस समय की तसवीर प्रस्तुत करने में न केवल मदद मिलती है बल्कि सौतों की आपसी जलन के चित्र, वाजिद अली शाह की मनोभावनाएँ, रोमानियत का बहाव-इन पत्रों की विशेषता बन गई हैं, उनमें से कुछ नीचे दिए जाते हैं—

लखनऊ की स्थिति का विवरण—(नवाब फरखन्दा महल का खत जाने आलम के नाम सन् १२७३ हिजरी।)

आप वो चेहरये रौशन जो दिखादें बखुदा।
बेकरारी दिले बेताब हरगिज न रहे॥

मेहरो गुलजार, रैनाइये तदूर, कोहसारे बेवफाई यजाद-उल-हुसनऊ! यहाँ का अजीब हाल है। दिन दूनी रात बद अहवाल है। लखनऊ में ताजा रुहदाद हुई जिससे तबीयत कुछ-कुछ शाद हुई। आठवीं को इस महीने की यकशंबा दोपहर से फौजे फिरंगी तकसीम पर कारतूसों के बिगड़ गई। जंगोजदल की ठहर गई। सब फौज मूसाबाग में ईसाइयों के कत्ल को यकजा हुई। अव्वल हैवतों पर हैवत गालिबेसिवा हुई। कितना मलदेमा फौज को समझाया लेकिन लोगों के ख्याल में न आया। आखिर इन अहमकों ने कई सौ योरोपियन निकाले और करीब शाम कत्ल की सिम्त को रवाना किया। ऐशबाग में १५०० आदमी जमा हो चुके थे। वक्ते तहरीर अब तक मजमा बहुत कसीर है। उलमाये आलम मुहम्मदी उठाने को हैं देखिए क्या होती इसकी आखिर है। बेढब हुआ ये बिगाड़ है। अब तो ईसाइयों को मूसाबाग जाना पहाड़ है। इत्तिलान लिखा है, आगाह तुमको किया है, और ऐ जाने आलम, मालूम नहीं यहाँ के अखबार हर रोज तुमको मुताले से गुजरते हैं या अहलकार पोशीदा करते हैं। जैसा हो वैसा लिखो। हम

यहाँ से तहरीर क्या करें ? अखबार और हाल मुफस्सिल तहरीर करें । इजहार आपकी चहीती नवाब सरफराज बेगम भी यहाँ के हाल से आपको आगाह कर रही है ।

लखनऊ में हुए फसाद और उपद्रव के कारण वाजिद अली शाह पर बीती स्थिति का विवरण—(जाने आलम वाजिद अली शाह का खत बनाम शैदा बेगम साहबा) ।

मर्ग सूझे हैं आजकल मुझको ।
बेकली से नहीं है कल मुझको ।।

मेरे सिपहर, बेवफाइये माह, समाये-दिलरुबाई, गौहरे ताज, आश्नाइए जौहर, शमशीरे यकता, हमेशा खुश रहो ।

मालूम हो गया हमें लैलो निहार से ।
एक वजा पर नहीं है जमाने का तूर आह ।।

मालूम हुआ अवध में कुछ बलवाई लोग जमा हुए हैं और अँग्रेजी सरकार के खिलाफ हो गए हैं । कम्बख्तों से कहो, हम चुपचाप चले आए, तुम लोग काहे को दंगा मचा रहे हो ? मैं यहाँ बहुत बीमार था । सफरा की तिब ने दिक कर दिया था । आखिर तबरीद के बाद सेहत हुई । जिस कदर नजरों नियाज मानी थी की गई । जल्सा रात-भर रहा, नाच गाना होता ही रहा । कोई चार घड़ी रात बाकी थी, गुल पुकार होने लगा । हम गफलत में पड़े थे । आँख खुलते ही हक्का बक्का रह गए । देखा कि अँग्रेजी फौज दर मौज टिड्डी दल चारों तरफ से आ गई । मैंने पूछा ये क्या गुल है ? इनमें से एक ने कहा अली नकी कैद हो गए । मुझको गुस्ल की हाजत थी । मैं तो हम्माम में चला गया । नहाकर फारिग हुआ कि लाट साहब के सेक्रेटरी ओंमगटम साहब हाजिर हुए और कहने लगे, मेरे साथ चलिए । मैंने कहा आखिर कुछ सबब बताओ । कहने लगे गवरमेन्ट को कुछ शुन्हा हो गया है । मैंने कहा मेरी तरफ से शुबह बेकार है । मैं तो खुद ही झगड़ों से दूर भागता हूँ । इस कश्तो खून और खल्के खुदा के कत्लो गारत के सबब से तो मैंने सल्तनत से हाथ उठा लिया । मैं भला अब कलकत्ते में क्या फसाद करवा सकता हूँ ? उन्होंने कहा मैं सिर्फ इतना जानता हूँ कि कुछ लोग सल्तनत के शरीक होकर फसाद फैलाना चाहते हैं । मैंने कहा, अच्छा अगर इन्तजाम करना है तो मेरें चलने की क्या जरूरत है, मेरे ही मकान पर फौज मुकर्रर कर दो । उन्होंने कहा मुझको जैसा हुक्म मिला है वह मैंने अर्ज कर दिया । मैंने कहा, फिर आखिर में साथ-साथ चलने पर तैयार हूँ ।

बेगमों की बेबफाई का विवरण—(फरखन्दा महल का जाने आलम के नाम खत । १० रमज़ान सन् १२७३ हिजरी ।)

पहले तो खूं निकलता था अश्के सियाह से ।
अब लख्ते दिल ही आते हैं आँखों की आह से ।।

अक्से आईना, इखतिसासे नक्श, निगार खानए, इखरास मल्लाहे दरियाए आशनाई दिलबरीं खास लहजए वफा परवरी, महर गुस्तरी मादामे गौहर मुराद हमकनार वाद जाने आलम, तुम्हारा मुहब्बतनामा आया। पयामे उल्फत पाया।

नवाब खास महल के चले आने का मालूम हुआ। तुम्हारा हाथ वांध के समझाना मफऊत हुआ। वे तो ऐसी बेवफा नहीं थी। तुम पर हजार जान से फिदा थीं। अब बेसबब वो तुमको छोड़ती है बेवजह मुंह मोड़ती हैं। कुछ तो उन्होंने रंग पाया जो चला आना यहाँ का पसन्द किया। जो तुमने लिखा कि लानतुल्लाराहे अला (अहले हिन्दुस्तान पे लानत हो) इस लिखने के वक्त तुम्हारा ध्यान था कि सकाने हिन्द कैसे-कैसे और शहरों में लोग ऐसे-ऐसे हैं। अलल खुसूस लखनऊ में किस-किस तरह के दीनदार है। सदहा आलम आलिमो फाजिल और मुफ्ती व अब्रार है। हरचन्द बदकार भी बेशुमार है लेकिन उनमें कुछ अक्लमंद हैं कुछ होशियार हैं। बकोल शख्से "न हर जन जन अस्त, न हर मर्द मर्द, खुदा पंजे अंगुश्त यक सा न कर्द।" मगर इस मुकाम पर कतए सादी ने कतए कलाम किया। लिहाजा ये नामा इस पर तमाम किया।

चूअज कूमे यके बेदानिशी कर्द
नके राह मजिलत बाशद न महरा।
नमी बीनी कि गाव दर अल्फज़ार
बियाला यद हमा गामा दहे राह ॥

(अक्लमंद को भुनगा भी दिखाई देता है। मगर तुमको दरवाजे में आई हुई गाय भी दिखाई नहीं देती।)

लखनऊ में मच रही तबाही और बरबादी के द्रश्य तथा बिरजीस कदर की तखतनशीनी—(सरफराज बेगम का खत जाने जां बेगम के नाम।)

मजनूं का दिल हूँ महमिले लैला से हूँ जुदा
तनहा फिरू ँ दश्त में जों नारए बुका।

दवाए दर्दमंदा व इत्तिहाद शफाए मुस्तमिनदां हमेशा बा मुराद रहो। लखनऊ की हालत सुल्ताने आलम के वाद से तवाह व बरबाद हो रही है। नये-नये फितने उठ रहे हैं। लोग पागल हो रहे हैं। मुतवाहिश खबरें उड़ती हैं जिससे दिल हौल खाता है। देखिए क्या रंग फलक दिखाता है। लखनऊ में तिलंगों ने ऊधम मचा रक्खा है! यों समझिए फैजाबाद से मौलवी अहमद उल्ला शाह ने आकर लूटमार कम की है और जगह-जगह अपने चौकी पहरे विठा दिए हैं। बहुत से सिरफिरे इनके खैरख्वाह साथ हैं। उधर सुल्ताने आलम के खैरख्वाह ये चाहते हैं कि इनका तख्त खाली न रहे। मिर्जादार-उस-सितक्त को वादशाह बनाने की तजवीज है। तीन रात नजराना तलब किया था मगर दार-उस-सितक्त कहने लगे कि नवाब शुजाउद्दौला अंग्रेजों से मुकाबला न कर सके तो हम क्या कर सकते हैं। राजा जवाहर सिंह खल्फ दर्शनसिंह नवाव खासमहल की ड्योढ़ी पर आकर कहने लगे कि मिर्जा नौशेरवांकद्र को मसनद नशीं रियासत कर दें।

शमशेरुद्दौला दरोगा ने कहा वो लड़का सब तरह माजूर है और नवाब खासमहल और बादशाह की मंजूरी वगैर ये काम कैसे हो सकता है ? महमूदखां और शेख अहमद हुसैन ने राजा मानसिंह और जवाहर सिंह से मिर्जा बिरजीस कदर के वास्ते कहा तो उसने जवाब दिया, फौज को मंजूर है मगर बेगमाते महल शाही राजी हों तो अलबत्ता मुमकिन है। इस वक्त महमूदखां राजा को अपने साथ लाए। पीर वाजिद अली को बुलाया, सब बेगमात जमा हुईं। बाज ने कहा कि वाजिद अली शाह के होते हुए किसी को बादशाह बनाओ, ये शगुने बद है। सरफराज बेगम भी ये सुन रही थीं ! बाज बोली कि सुल्ताने आलम का बेटा उनके सामने तख्त पर बैठ रहा है और बाप को तख्तोताज दिलाने का सामान कर रहा है। हजरत महल ने सबसे हाथ जोड़कर कहा, ये लड़का तुम्हारा है जैसा तुम मुनासिब ख्याल करो, वैसा करो। नवाब खुर्द महल ने अजराह फरासत कहा कि अगर हम तुम्हारे राजी नामे पर मुहर कर दें, कलकत्ते में अंग्रेज नवाब वाजिद अली शाह को मार डालें तो क्या हो ? तब राजा रुखसत होके चला गया। हजरत महल मायूस हुईं मगर महमूद खां के तिल तलवों को लगी हुई थीं। उसने हजरत महल से फौज के सरदारों को खत लिखवा दिए। १२ जीकात बरोज यकशम्बा १२७३

जानेजां, जाने आलम नवाब शैदा बेगम साहबा हुस्नहा ए जमालहा। दो तशफिफए नामे तुम्हारे अंजमुलदौला वहादुर ने नवीं रबब को लाकर दिखाए। दिल शाद हुआ। तबीयत में कूवत आई। जान ताजा पाई। मगर ऐ जानी, अब हम वो नहीं रहे। हम अपना हाल लिखते हैं। इससे मालूम होगा कि हम पर क्या गुजर रही है। इश्को-आशिकी सब मफकूद है। रंज ने हाल तबाह की। हम किले फोर्ट विलियम में नजरबन्द हैं। लार्ड रंग का मेरे पास खत भी आया कि अफसरान आपके एजाज में फर्क न करेंगे। मगर मेरी जिन्दगी दुश्वार हो रही है। आठ दिन बाद, किले में एक कोठी है उसमें आए। अब सिर्फ २३ आदमी हमराह हैं। परिन्दा तक पर नहीं मार सकता। कैदखाने के दरवाजे बन्द कर लिए गए। हमारा दम घुटता है।

बेगमों को धैर्य दिलाते वाजिद अली शाह के जजबात—(वाजिद अली शाह का पत्र किसी गुमनाम बेगम के नाम)

आश्नाये दरयाये आशनाई, शनावर बहरे दिलरुबाई, गौहरे अकीर रिफाकते जौहर, जमीले सदाकत, महबूबये दिलनवाज, यगीदुल्लाह मुज्दहू,—

पलक ने तो इतना हंसाया न था,
कि जिसके एवज यूं रुलाने लगा।

तुम्हारा मुहब्बतनामा बदस्त मुहम्मद जान चोबदार से मिला। हम लोग अभी कलकत्ते में मुकीम हैं। अइज्ज़ा की जुदाई, सल्तनत जाने का सदमा, शहरोदयार का छुटना, १४ शव्वाल को जनाब वालिदा और वली अहद बहादुर और भाई को लन्दन रवाना करना, अब सिर्फ खास महल और चार बीबियाँ रह गई। अभी-अभी नवाब अली नकी खां और मुनव्वरुदौला मेरे पास आ गए। घबराओ नहीं, खुदा पर नजरे

हकीममत रक्खो, वो असबाब है। कोई सबब मिलाने का निकालेगा। बिरजीस कदर का ख्याल रखना। रकियाबानों को दुआ।

बदकिस्मत-अख्तर

जाने आलम की याद में तड़पती बेगमों की स्थिति का विवरण—(शैदा बेगम का खत जाने आलम के नाम)

ऐ शहंशाह शहरे हुस्नोजमाल, मांहेतावाने औज फजले कमाल, गुलशादाब गुलशन खूबी, सर्वेआजादे बागे महबूबी! हक सदा मेहरबां रहे तुम पर। और अली की अमां रहे तुम पर। दर्दे जिगर से काम तमाम हुआ, मरना अंजाम हुआ। गिरिया शोआरी है, आदत आहोजारी है। बहशत समाई, जुनू की भी चढ़ाई, दिल को इज्तराब है, जिगर कबाब हैं। न चश्मे ख्वाब है न दिल को ताब है।

तपे जुदाई से अब इस तरह नाजार हूँ मैं।
नजर में खल्क की रश्के खते गुबार हूँ मैं।।

कभी बुका है, कभी हँसी है, अजीब मुसीबत में तबीयत फँसी है। गमों अरम खुराक है वहशत के जोर में गरेबां चाक है। गला है और खंजरे फिराक है। मरने की खुशी से जीना शाक है।

बेताबिए दिल किसे सुनाएं,
ये दीदयेतर किसे दिखाएं।

जाने आलम, ख्वाब में भी नहीं आते। जबसे मालूम हुआ है कि किले में कयाम है दिल को बड़ी बेचैनी है।

एक वज़ा पर नहीं है जमाने का तौर आह,
मालूम हो गया हमें लैलो नहार से।

यहाँ नए गुल खिलाए जा रहे हैं। हजरत महल, आपकी महबूबा सरकार से जोड़-तोड़ करके बागियों की सरदार बनी हैं। नवाब मुहम्मद अली खाँ के बहकाने में आ गई है। शोरापुश्ती दिखा रही हैं। देखिए किस करवट ऊँट बैठे।

वो खुश होवें कि जिनको ताकतें परवाज़ है।

बेगमात वाजिद अली शाह से खैरियत का संदेश मांग रही हैं :—(यास्मीन महल का खत बनाम जाने आलम)

क्या लिखूं ओ बुते बेरहम तेरी दूरी से,
कौन सा दिन था कि मैं दीदए गिरियां न हुआ।

जौहरे तेगनाजो नियाज कतरए सब्ज गमजओ अंदाज हमेशा गुलसन खूबी शादाब जाने आलम, एक साल हो गया, सब चहीतों को नवाजा, मुझ निगोड़ी को कभी भूल के भी पुर्जए कागज से न किया खुश अफजा। यहां दिन-रात आतिशे फिराक में घुल रही हूँ। वहाँ बेखबरी वो हैं जो जान रही हूँ।

आतश भरी हुई है मेरे जिस्मेजार में।
पारे का है खवास दिले बेकरार में।।

हम हैं और गमें दिलदार है सीना है और आहे शररबार है। महलात में बिरजीस कदर को देख लेती हूँ, दिल शाद कर लेती हूँ। तुम्हारी फबन इसमें पूरी है। सूरत भी बाप की-सी गोरी है। अल्लाह हजरत महल की कोख को ठंडी रक्खो। मुझ पर वह मिहरबान है मुझको भी वह प्यारा दिलोजान है। कल उसकी ११ वीं सालगिरह थी, यह तो सुन ही लिया होगा कि अब तख्तनशीं है। तमाम लोग उसके फिदाकार है। सब में रक्सो पुरन की महफिल थी। एक तवायफ ने गजल पढ़ी, एक शेर याद है—

गैरते महताब है बिरजीस कदर।
गौरहे नायाब है बिरजीस कदर॥

खुदा नजरेबद से लाड़ले को बचाए, दुश्मन का मुंह काला हो जाए। सुनते हैं मौसमे खिजाँ जा चुका है अब बहार आई है। बुलबुलों ने गुलिस्तां में खुशी मचाई है। अपनी तो हालत है कि हूँ बुलबुले तस्वीर-परवाज की ताकत नहीं और या से चमन है। जाने आलम अपनी खैरियत से इत्तला कीजिए और सोजे महजूरी से निजात दीजिए।

मौत-सी अब तो जीस्त है कि बहुत
दर्दे दिल का इलाज कर देखा।
जीते जी मौत की सी लज्जत को
खूब देखा कि तुम पे मर देखा।

कलकत्ता प्रवास का विवरण—(जाने आलम का खत सरफराज महल पंजवारी (पांचवीं बीवी के नाम) शोलये वर्क दूरी नाइरें नार महजूरी आतिशे हुस्न दो बाला हो। जियो।

वह कौन है जो मुझ पे तअस्सुफ नही करता,
पर मेरा जिगर देख कि मैं उफ नहीं करता।

यहाँ का हाल क्या लिखूं ? दिल बेकरार है। सीना फतैंनाले से रश्के रुबाब है। लखनऊ से मेरे साथ ५०० आदमी आए थे। मोचीखोला में मुकीम है। वली अहद बहादुर की मां मलकये खास महल, जनरल की वालिदा मलकये मुश्क आली जनाब ताजुन्निसां बेगम, तीसरा महल महबूबा खास मल्कये आशिकनुमा जानेजां बेगम है। ये आजकल बीमार हैं। खुदा इसको शफा दे। महल चहरुम बड़ी बेगम आशिके सुल्तान मुमताजे आलम कैसर बेगम न मनकूला थीं न ममतूआ बल्कि सिर्फ दोस्ती में चली आई थीं। उसने खर्च को मांगा। ११ हजार रुपये दिए वो रुपये पाते ही कलकत्ते से चल दीं। पंजुम खस्तामहल, खिशुम ममतूआ जाफरी बेगम अजीब चुलबुली तबीयत नाजुक मिजाज खिलंदड़ी, चंचल, जंगजू, तुदखू, तेगजवान, दरिश्त कलाम हमको किले विलियम में अक्सर गिलौरियां भेज दिया करती थी। वह ऐसी महबूब थी कि एकदम हमारी नजर से जुदा न होती थी। अब महीनों से उसके फिराक में तड़पता हूँ। उनके गम में दिल पानी-पानी हो गया। गुंचये दिल कुम्हरा गया। दिल हजार सम्हाले नहीं सम्हलता। सबा भी हम कैदियों की पैगाम्बरी नहीं करती। हर तरफ पहरा है। दो रफीक हैं, एक

खौफ दूसरा हिरास। एक कैदखाने में हम पड़े हुए हैं चारों तरफ हिरासत है। हमारे साथ १२ आदमी मुसीबत झेल रहे हैं। हर एक अपने दीन से बेजार है कैद गम में गिरफ्तार है। भिश्ती व खाकरु आते हैं, उनके साथ एक-एक अंग्रेज भी आता है। मजाल क्या है जो मुंह से बोल सकें। कैदखाने की कोठी बहुत वसीह है, मगर अपने किस काम की ? हर वक्त दरवाजा बन्द, गरमी से दिल तंग परेशान हालते तबा हूँ। जब दरवाजे खुलते हैं तो धूप की शिद्दत से जान बेजार होती है। कई मर्तबा लाट साहब को भी शिकायती खुतूत भेजे मगर किसी का जवाब नहीं आया। तुम खुदा का शुक्र करो, आजाद हो। अपनी नींद सोती हो, कोई पूछने वाला नहीं। शैदा बेगम का खत आया उसका भी जवाब लिख दिया। उसको मिला भी होगा या नहीं।

बो बुलबुले मरदूदे बहार और खिज़ां हूँ,
जिसका कि ठिकाना न चमन में न कफस में।
किया है अख्तरे बे पर को उसने मक्र से कैद,
कहीं भी होता है ऐसा शिकार का असलूब ?

लखनऊ के वाकयातों का विवरण और बेगमों की गद्दारी—(सरफराज बेगम का खत बनाम अख्तर महल)

मालिक मुल्के खूबी, पुश्ते पनाह विलायते महबूबी, अकामुल्लाह जमालहा व इकबालहा। मेरी मल्कये आलम रफीके सुल्ताने आलम, मैं लखनऊ के वाकयाते हालतेज़ार जाने आलम के वास्ते लिख रही हूँ। यहाँ का हाल दिगरदूं है। देखा नहीं जाता। बुरा शगुन है। एक दिन मशहूर हुआ कि कल या परसों फौज बेलीगारद पर धावा करेगी। साहबाने महसूर को ज़ोरे तेग करेगी और वहाँ की जमीन को खोद कर बराबर कर देगी। ये खबर गोशजद साहबाते महल हुई। आपस में कहने लगीं कि जिस वक्त यहाँ सबको कत्ल किया तो जितने कलकत्ते में हैं उनकी जान काहे को रहेगी। एक ने कहा कि हम तुम ही न बचेंगे, इस वास्ते कि फिरंगियों का जाल निस्ल घास की जड़ के हैं, जितना काटो उतना ही बढ़ती है। गरज़ कि कई महल जमा होकर हजरत महल से कहने लगीं और नवाब खुर्दमहल और नवाब सुल्तानजहाँ इनकी शरीक थीं—कहा कि तुम सब तरह अच्छी रहो। तुम्हारा बेटा बादशाह हुआ, मुबारक हो। मगर हम सब बेवारिस हुए जाते हैं। कल फौज का ये इरादा सुना है अब तुम्हीं इंसाफ करो, फिर बादशाह और महलात बगैरह जो कलकत्ते में हैं ज़िन्दा बचेंगे या सब फाँसी दे दिए जायेंगे। तुम ऐसी सल्तनत को चूल्हे में डालो। जनाबे आलिया ने बरहम होकर जवाब दिया, मालूम हुआ तुम सब हमारा बुरा चाहती हो, बल्कि इस सल्तनत के होने से जलती हो। गरज कि जनाबे आलिया बिरजीसकदर को लेकर अन्दर दालान में चली गई। ये खबर अफसरों को लग गई। मुफताहुद्दौला वगैरह हजरतमहल के पास आए और कहा कि महलात जो फिरंगियों से मिली हुई हैं, उन्हें निकाल बाहर कर दो। तब बेगम बोलीं सब्र से काम लो। दूसरे दिन बेलीगारद पर हमला करने चले मगर पहले शहर पर हाथ साफ किया, लूटमार की। बिरजीसकदर ने खुद घोड़े पर बैठकर

तिलंगों को बुलवाकर कहा "बहादुरो हम तुमसे बहुत खुश हुए, खूब लड़ते हो, मगर अफसोस ये है कि तुम शहर लूटते हुए सब रिआया से बददुआ लेते हो।" सब अफसरों ने दस्तबस्ता अर्ज की कि जनाब अब शहर न लूटेगा और देहली सफीर रवाना किया कि हुजूर बादशाह से सनद मसनद नशीनी ली जाए। मैं नहीं समझती कि हजरतमहल ऐसी आफत का परकाला है, खुद हाथी पर बैठकर तिलंगों के आगे-आगे फिरंगियों से मुकाबिला करती है। आँख का पानी ढल गया है और इसको हिरास मुतलक नहीं है। गरज ये कि आलमबाग पर बड़ा मुकाबला रहा। अहमदुल्ला शाह से भी हजरतमहल ने मुलाकात की।

कैसरबाग के महलात पर गोले-बारूद गिरे। बेगमात भागीं। बड़ी इफरा तफरी थी। खुदा वो दिन दुश्मन को भी न दिखाए—पा बरहना सरसीमां परेशां हाल दामन बड़े पायचों के अपनी पतली कमरों से बाँधे हुए पायदान और बेशबहा कीमती चीजें साथ लिए भागती फिरती थीं। हज़रत महल ने मुसीबत उठाकर हिम्मत न हारी। २९ रजब को करीब शाम मय बिरजीस कदर के पीनस में सवार होकर नाका आलमबाग की तरफ से मय मम्मू खाँ, घोड़े पर सवार लखनऊ से रवाना हो गई। रास्ते में राजा मर्दन सिंह जमींदार तुमरदी से पेश आया। मौलवी बड़ी धूम और नक्कारा और निशान जलूस सवार से मिर्जा बंदा अलीबेग के इमामबाड़े में उतरा। राह में फंकरा के दो हजार रुपये खैरात किए। जब दाखिलये शहर हुई, तोपें सलामी की चलीं वहाँ से मशविरा हुआ कि बरेली को चलें। चुनांचे ये काफिला आगे को रवाना हो गया। मेरी छोकरी यासमीन साथ थी। वह लौट आई और उसने सब हाल कहा जो जाने आलम को सुनाने के लिए तुमको लिख रही हूँ। अब यहाँ फिरंगिथों का मामला मौलवी अहमदुल्ला शाह से हो रहा है। देखिए क्या अंजाम हो? मैं भी अपनी भांजी के यहाँ खैराबाद जा रही हूँ। देखूँ ये खत मेरा पहुँचता है या नहीं। युफताहुद्दौला के आदमी के हाथ भेजती हूँ वो यहाँ से भागकर कलकत्ते जा रहा है।

हजरत महल की बहादुरी का विवरण—(शैदा बेगम का खत बनाम जाने आलम, सफर १२७४ हिजरी।)

आपके जाने के एक साल के बाद वह-वह बलवाए आम हुए, वह-वह मुसीबतें आईं जो खुदा दुश्मन को भी नसीब न करे। हज़रतमहल ने ऐसी बहादुरी दिखाई कि दुश्मन के मुँह फिर गए, बड़ी जीदार औरत निकली, सुल्ताने आलम का नाम कर दिया कि जिसकी औरत ऐसी जो मरदानावार मुकाबला कर सकती है तो मर्द कैसा बहादुर और शुजा होगा, जब कि खोफ से हुजूर को आँखों आँखों में रक्खा। नवाब सरफराज महल ने मुफस्सल हालात लिख भेजे हैं तकरार लाहसिल है। जाने आलम फिरंगियों ने बड़ी बेदर्दी से हज़रत बाग पर गोले बरसाए हैं। महलात के साथ मैं भी जान बचाकर भागी, सब सामान हज़रत बाग छूट गया, और जो कुछ बचा था वह सब मुसाफिरत में लुट गया। अब सरेदस्त यह हाल पहुँचा है कि जब किसी से नहीं कर्ज़ा बहम पहुँचता है तो नौबत फाकाकशी की आती है। देखिए किस्मत क्या दिखाती है। खुदा के वास्ते जिस सूरत

बने हमको अपने पास बुलाओ और अगर नहीं तो जिस तरह होगा मैं खुद चली आऊँगी । यह सदमा कहाँ तक उठाऊँगी । ऐ जाने आलम, हाल मेरी वाल्दैन की गुरवत का तुम पर हुवेदा है, न वसीका है न बज़ीफा । मैं ही उनकी मदद कर देती हूँ ।

बेगमों का लखनऊ छोड़ना—(हूर बेगम का जाने आलम के नाम खत, दोम ज़ीकाद १२७३ हिजरी ।)

हाल गर्दिशे लैलो नहार से बहुत परेशान है, लबों पर जान है । जब से सब महलात के साथ निकली शाहजादी को लिए नंगे पाँव चली, रास्ते में सबसे मुफारकत हुई । बदुशवारिये तमाम सआदत गंज पहुँचने की नौबत हुई वहाँ बड़ी तलाश से एक मकान खाली पाया । उसमें दो दिन की बसर । तीसरे दिन बखौफे जानो आबरु वहाँ से सफर गर्ज़े कि यूँ एक दिन कहीं रही और दो दिन कहीं रही । इस आवारगी में ताकत जीने की भी नहीं रही । अपनाये राह में कभी खाना मिला और कभी फाका हुआ । एकदम भी न रंजी अलम से इफाका हुआ । आखिर को उफतां वा खेजां इफाका हुआ हर करियो कसबे में फिरती हुई अपने घर मआली खाँ की सरा में आई । शाहज़ानी रहीम आरा बेगम बीमार हुई, हमारी हालते दिलज़ार हुई, वह सदमा फिर किस मुँह से बयान करूँ कि राहते जान हमारी रमजान में कज़ा कर गई । खुदा शाहिद है कि मैं जीते जी मर गई । अब तक उसकी सूरत याद आती है, टुकड़े छाती हो जाती है, ऐ जाने आलम खुदा व रसूल गवाह है । सबसे ज्यादा मेरी हालत तबाह है । खाने पीने को हैरान हूँ । घर तक जाता रहा, बेमकान हूँ । हर घड़ी सदमा सहती हूँ । इस वक्त हमारा कोई पुरसाने हाल नहीं । किसी को हमारा ख्याल नहीं, हमको तबाह देखकर सबने मुँह मोड़ा ।

फिरंगियों के उत्पात—(पिया जाने आलम के नाम नवाब फक्रमहल का खत रमज़ान १२७४ हिजरी ।)

.... हर एक मकान बीरान है, कालों ने उधम मचाई है, गोरों ने मात खाई है । दो चार दिन में देखिए क्या हो.................?

...........फिरंगियों की बे एतनाई हद से ज़्यादा है । मेरे हालात जो साहिबाते महल तक पहुँचे होंगे, मसाय बर्क तफसील उससे हवेदा है ।

हैफ समझा है न वह कातिले नादां वरना ।
बेगुनह मारने के काबिल यह गुनहगार न था ।।

लखनऊ पर ढाहा कहर—(बनाम जाने आलम मेहरुन्निसां खानम का खत ।

.........लखनऊ पर खुदाई कहर नमूदार हुआ, हम सब का अजीब हाल हुआ, आतिश बारी की खानावीरानी, हर कस था मुब्तलाये हैरानी । गैर जगह का रुख करके वतन छोड़ा, बजन्नो इकराह घर से मुँह मोड़ा । बहाले तगाहों खस्ततो खराब कानपुर पहुँचे । बादिले मुज्तरब बेताब नावकिफों ने अजराहे करम बैठने की जगह दी । मैंने अपना किस्सए कुलफत सुनाया, हर एक का जी भर भर आया । जब कि उन्हें यह मालूम हुआ कि बादशाहे अवध की दीगर कनीजों में से एक कनीज़ होने का शर्फ रखती हूँ तो सबने आँखों पर बिठाया ।

बादशाह को जानवरों का भी बड़ा शौक था। इस शौक को उन्होंने ने इस दर्जे तक पहुँचा दिया था कि उनके जैसा शौक दुनियां में किसी दूसरे को नहीं हुआ होगा। नूर मंजिल के सामने लोहे के एक सुन्दर कटहरे से घेर कर एक लम्बा चौड़ा रास्ता बनाया गया था, जिसमें सैकड़ों की तादाद में हिरन, चीतल आदि जानवर घूमते रहते थे। उसी में एक संगमरमर का तालाब बनवाया गया था, जो हर समय पानी से भरा रहता था। इस तालाब में शतुर्गमुर्ग किशोरी। (एक तरह का छोटा पक्षी) फीस मुर्ग (मोर की जाति का पक्षी) काजे, वगुले, कटकटे, हंस, मोर, ककोर आदि पक्षी और कछुये छोड़ दिये गये थे। इस तालाव की सफाई के ऊपर वहुत ध्यान दिया जाता था। तालाब के एक ओर शेर के कटघरे थे। चरागाह के पास ही लकड़ी के सलाखेदार बड़े-बड़े खानों का एक सिलसिला दूर तक चला गया था जिसमें न जाने किस किस्म के बन्दर लाकर जमा किए गये थे। जो इन्सान को अपनी अजीव-अजीव हरकतों का तमाशा दिखाये बिना आगे न बढ़ने देते थे। अनेक स्थानों पर हौजो में मछलियाँ पाली गयी थीं, जो इशारे पर इकट्ठी हो जाया करती थी और खाने की चीज़ डालने पर मजेदार उछल कूद दिखाती थीं। शहंशाह मंजिल के ठीक सामने एक गहरा तालाव बनाकर उसके चारों तरफ के किनारों को चिकना करके आगे की तरफ झुका हुआ बीचों बीच एक क्रत्रिम पहाड़ बनाया गया था जिसके अन्दर सैकड़ों नालियाँ दौड़ाई गयीं थीं और ऊपर से दो एक जगह काट कर पानी का सोता भी वहा दिया गया था। उस पहाड़ी में हजारों बड़े-बड़े दो-दो तीन गज के साँप छोड़ दिये गये थे जो बरावर दौड़ते और रेंगते फिरते। वह पहाड़ की चोटी तक चढ़ जाते और फिर नीचे उतर जाते। मेंढकें छोड़ी जाती साँप उन्हें दौड़-दौड़ कर पकड़ते। पहाड़ के इर्द-गिर्द नहर की शान से एक नाली थी उसमें साँप लहरा-लहरा कर दौड़ते और मेंढकों का पीछा करते। उस पहाड़ के नीचे भी दो कटहरे थे जिनमें दो बड़े-बड़े चीते रखे गये थे। जिस वक्त मुर्ग लाकर छोड़ा जाता वे उसे झपट कर पकड़ते और पूरा का पूरा निगल जाते। साँपों के रखने का इन्तजाम इससे पहले शायद ही कहीं किया गया होगा। सम्भवतः यह वाजिद अली शाह का ही आविष्कार था जिसे यूरोप के पर्यटक आश्चर्य से देखते थे और उनकी तस्वीरें व ब्योरा लिखकर ले जाते थे।

जानवरों के अतिरिक्त हजारों पक्षियों को सुल्तानखाने में पीतल के पिंजरों में रखा गया था। सुल्तानखाने में बहुत से वड़े-बड़े हाल थे, जिन्हें लोहे के जाल से सुरक्षित कर दिया गया था। इनको गंज कहा जाता था। इन्हीं में भाँति-भाँति के पक्षी असंख्य संख्या में लाकर छोड़ दिये गये थे और उनके पालने का इन्तजाम कर दिया गया था। बादशाह की कोशिश थी कि जितनी किस्म के जानवर व परिंद मिल सकें सब जमा कर लिये जायें। इस प्रकार उसने जैसा जिन्दा चिड़ियाघर बनवाया उस समय संसार में वैसा शायद कोई चिड़ियाघर रहा होगा। जानवरों के जुटाने में बेझिझक व्यय किया जाता था। रेशम पेट कबूतर का जोड़ा चौबिस हजार रुपये में और सफेद मोर का जोड़ा ग्यारह हजार रुपये में मंगाया गया था। उसके चिड़ियाघर में अफरीका का अजीब

जानवर जिराफ का भी जोड़ा था। दो कोहान के बगदादी ऊंट भी बादशाह के यहाँ थे। एक हाथी भी था। सिर्फ इस ख्याल से कि कोई जानवर रह न जाये दो गदहे भी चरागाह में लाकर छोड़ दिये गये थे। शेर बबर, देशी शेर, चीते, तेंदुए, रीछ, सियाहगोश (कुत्ते की जाति का पशु) चरखे, भेड़िये सभी को कटघरों में बन्द कर उनकी देखभाल का उचित प्रबन्ध किया गया था। कबूतरों का इन्तजाम दूसरे जानवरों से अलग था। बादशाह की विभिन्न कोठियों में सब मिलाकर चौबीस-पच्चीस हजार कबूतर थे जिनके उड़ाने में कबूतर बाजों ने बड़े-बड़े कमाल दिखाये थे।

जानवरों के ऊपर जितना खर्च होता था उसका अन्दाजा नहीं लगाया जा सकता। इसके विवरण से अनुमान होता है कि आठ सौ से ज्यादा जानवरबाज़ थे, लगभग तीन सौ कबूतरबाज इतने ही मछली पालने वाले और तीस-चालीस साँप पालने वाले थे जिनको छः से दस रुपये के बीच वेतन दिया जाता था। अफसरों की तनख्वाहें बीस से तीस रुपये की बीच निश्चित की गई थीं। कबूतरों, साँपों और मछलियों के अलावा अन्य जानवरों के भोजन पर लगभग एक हजार रुपया प्रति माह खर्च किया जाता था।

बादशाह के रहने से कलकत्ता के पड़ौस में एक दूसरा नया लखनऊ ही आबाद हो गया था। लखनऊ तो मिट गया था, लेकिन वहाँ के चुने हुए लोग मटिया बुर्ज में आकर बस गये थे। सच तो यह है कि लखनऊ, लखनऊ नहीं रहा था। अब मटिया बुर्ज ही लखनऊ था। वही चहल-पहल, वही जबान, वही शायरी, वही महफिलें और वैसे ही मनोरंजन। लखनऊ जैसे ही विद्वान और संत, वैसे ही अमीर और गरीब, यहाँ तक कि जनता भी वही थी। किसी को महसूस भी नहीं होता था कि यह बंगाल है। पतंग बाजी, मुर्गबाजी, बटेरबाजी भी वैसी ही प्रचलित थी। अफीमची, दास्तान गाई (कथावाचक) ताजियादारी, मर्सियाख्वानी, वही इमामबाड़े और वही कर्बला थी। जिस शान शौकत के साथ बादशाह का ताजिया उठता था लखनऊ के बादशाहों के समय में शायद ही उठ सका होगा। कलकत्ते के हजारों लोग और अंग्रेज तक जियारत (दर्शन) के लिये मटिया बुर्ज आया करते थे।

यह सुन्दर और मन को मोहने वाला मटिया बुर्ज दृश्य मिटने के काबिल तो न था लेकिन समय के क्रूर हाथों ने उसे मिटा कर ही दम लिया और ऐसा मिटाया जैसे वह कभी था ही नहीं। तीन मोहर्रम हिजरी १३०५ नौ घड़ी रात गये बादशाह की आँखें मुँद गयीं और मालूम हुआ "ख्वाब था जो कुछ कि देखा, जो सुना अफसाना था।" एक तिलस्म था कि एकाएक टूट गया और इसके साथ ही मटिया बुर्ज मेट हो गया।

"ए गुल बतू खुर सनदम तू बुए कसे दारी।
ए फूल मैं तुझसे खुश हूँ तुझमें कैसी गंध है।"

अवध का विलय अंग्रेजों की दुर्नीति का प्रत्यक्ष प्रमाण है जिसे किसी भी दशा में न्यायोचित नहीं कहा जा सकता। बादशाह को सन्धियों के जाल में फाँसकर उन्होंने ऐसा घृणित कार्य किया, जो अक्षम्य है। निःसन्देह इस विलय में तीन ही पात्र हैं : डलहौजी स्लीमैन और आउट्रम जिन्होंने इस राजनैतिक कथानक की भूमिका तैयार की और

नैतिकता के समस्त आदर्शों व मूलभूत सिद्धान्तों को ताक में रखकर इस कार्य का संपादन किया। हिन्दू-मुस्लिम, शिया, सुन्नी और ताल्लुकेदारों के आपसी झगड़ों ने अंग्रेजों को हस्तक्षेप करने का अवसर बिना किसी अवरोध के प्रदान किया। प्रस्तुत अध्ययन से स्पष्ट होता है कि इस कार्य में जहाँ अंग्रेज अपनी हठधर्मी के लिए दोषी हैं वहाँ पर बादशाह भी दूरदर्शिता के अभाव के कारण कम दोषी नहीं। ऐसे समय में गोपी और कृष्ण की रास लीलाओं को त्यागकर प्राचीन इतिहास से एक सबक लेकर सजग होना चाहिए था जिसमें वह पूर्णतय: असफल रहा। इस प्रकार वाजिद अली शाह ने अपनी कामुकता के वशीभूत होकर अपना तथा अपनी जनता दोनों का ही अहित किया।

कुछ लोगों का कहना है कि वाजिद अली शाह के कलकत्ता प्रयाण के समय जो जन-समूह ने अश्रुपूर्ति नेत्रों से विदाई दी वह केवल दया थी, अन्यथा बादशाह स्वयं एक राजनैतिक व्यक्तित्व के रूप में असफल ही रहा।

———

अध्याय—१२

निष्कर्ष

अवध की नवाबी ने अठारहवीं सदी के मध्य से उन्नीसवीं सदी के मध्य तक ऐसी धूम मचायी कि 'नबाबी' शब्द सिर्फ एक शब्द ही नहीं रह गया, किसी अदब, किसी अन्दाज की परिभाषा भी बन गया। नवाबी के वो नमूनेदार किस्से आज भी लोगों का दिल बखूबी बहलाते हैं। यही कारण है कि नवाब वाजिद अली शाह इतिहास से अधिक किंवदंतियों के नायक बन गए।

अवध के इतिहास में वाजिद अली शाह का व्यक्तित्व एक पहेलीं की भांति उलझा हुआ सा है और जैसे-जैसे उसे सुलझाने का प्रयास किया गया वह और भी जटिल तथा उलझता ही चला गया। उसको सुलझाने के प्रयास में ऐसे-ऐसे तथ्य मिलने लगते हैं जो हर क्षण एक विपरीत और मिश्रित मानसिकताओं के रूप में उसकी छवि को प्रदर्शित करते हैं। सपाट अथवा व्यक्त इतिहास जिसके अन्तर्गत ऐतिहासिक तथ्य और स्पष्ट रूप से दिखाई देने वाली घटनायें हैं, समानान्तर इतिहास जिसमें उस काल से संबंधित छोटी-छोटी घटनायें, तथ्य, प्रसंग आदि छितरे पड़े हैं एवं वाजिद अली शाह की स्वरचित रचनायें जिनमें उसने अपने सम्बन्ध में स्पष्ट और निर्भीक उल्लेख किये हैं आदि में उसके व्यक्तित्व की झलकियां जिस रूप में मिलती हैं वह अवश्य ही इतिहासकारों को भ्रमित करती रही हैं। इन तथ्यों ने वाजिद अली शाह के सम्बन्ध में एक निश्चित विचारधारा बनाने में सदैव अड़चनें डाली हैं। ऐतिहासिक तथ्यों और राजनैतिक घटनाओं के परिणामों पर आधारित होकर ही उसे एक पक्षीय आरोपों से मढ़ दिया गया है। उसके तुलनात्मक अध्ययन का प्रयास जरूर हुआ पर स्पष्ट विवेचना के अभाव के कारण उसे अवध के पतन का उत्तरदायी ठहरा ही दिया गया। साथ ही उसे सांस्कृतिक, साहित्यक क्षेत्रों में प्रोत्साहन देने के लिए बधाई का पात्र भी समझा गया।

इतिहास के पन्नों में वाजिद अली शाह का चरित्र, घोर-विलासी, काल्पनिक संसार में विचरण करने वाला, अविवेकी, अदूरदर्शी, कायर, निष्क्रिय, कुशासक, अल्पबुद्धि आदि विशेषणों से युक्त पाया जाता है। वह एक ऐसा व्यक्ति था जो राग-रंग के रसास्वादन में ही लिप्त रहता था। ढोल मृदंगों आदि की संगीत लहरी, कामिनियों के पगों की थिरकन, नुपूरों की मदहोश ध्वनि, कवियों और शायरों के दरबार आदि में फंसा बादशाह वास्तविकता और उत्तरदायित्वों से कोसों दूर जा बैठा था। वास्तविकता कड़वी व कटु होती है, जिसका सामना करने का वह साहस न कर सका और उससे सदा कतराता रहा। उसका सारा समय विलासिता की उपासना में ही बीतता था यहाँ तक कि अवध की वस्तुस्थिति से पूर्णतया अनिभिज्ञ वाजिद अली शाह अपने मस्तिष्क की साधारण प्रतिभा का विस्तार करने में भी सफलता प्राप्त न सका। उसे केवल सुन्दर

युवतियों और नृत्यांगनाओं के चेहरे ही याद रहते थे जिन्हें सुसज्जित करने में ही उसका समय व ध्यान लगा रहता था। उसने अपनी ऐशो-इशरत की पूर्ति के लिए ही बागों और महलों का निर्माण करवाया। उसे अपने राज्य की वास्तविक तस्वीर देखने तक की कभी इच्छा जागृत नहीं हुई। तत्कालीन राजनैतिक घटनाओं और परिस्थितियों को समझ कर कोई भी बादशाह अपनी दूरदर्शिता और बुद्धि से कंपनी राज्य की चालों के उत्तर में, स्वयं को परिस्थिति के अनुकूल समायोजित कर सकता था एवं अवध की धूमिल होती हुई तस्वीर को चमका कर सुरक्षित रख सकता था। यह अवध का दुर्भाग्य ही था कि उसका भविष्य एक ऐसे विलासी बादशाह के हाथों में हस्तान्तरित हुआ जो दिन व दिन गर्त में चलता गया परिणाम स्वरूप अवध राज्य कंपनी राज्य के साम्राज्य-वादी जाल के शिकंजे में पूरी तरह जकड़ लिया गया।

वाजिद अली शाह का काल अवध के नवाबी दरवार का अंतिम पृष्ठ था और प्राचीन शोकगीत का अंतिम पद था। अवध के शासन का अंत उसी के समय में हुआ इसलिए अधिकतर समझ बूझ वाले लोगों के धिक्कार का भागी भी वही बना और लगभग सभी ने यह मान लिया कि सल्तनत के पतन का कारण वह ही था। वाजिद अली शाह के काल में देश की समस्त ताकतें टूट रही थीं। बुरी भली सब तरह की पुरानी हुकूमतें धीरे-धीरे मिटती जा रही थी। पंजाब में सिक्खों का और दक्षिण में मराठों का तख्त क्यों उल्टा, वह तो वहादुर, जवरदस्त और होशियार माने जाते थे। दिल्ली में मुगल शहंशाह और बंगाल में नवाब नाजिम का भी पतन होकर ही रहा जबकि उनमें भी ऐसा कोई ऐब नहीं था जिसे अवध के शासकों की बचकाना हरकतें कहा जाता है। उपर्युक्त चारों दरबारों में से कोई भी वाजिद अली शाह नहीं था फिर भी उनकी तबाही अवध की तबाही से किसी भी मायने में कम नहीं हुई।

इतिहासकारों ने उस पर अनेकों लांछन लगाये हैं, उसे हर प्रकार से अयोग्य सिद्ध करने का प्रयास किया है, परन्तु उपलब्ध समानान्तर इतिहास की तटस्थ विवेचना भी उसके व्यक्तित्व पर अमी परतों को हटा कर उजागर करने के लिए आवश्यक प्रतीत होती है। कुछ ऐसे चौंका देने वाले तथ्य सम्मुख आते हैं जो वाजिद अली शाह के संबंध में बनी हुई विचार धारा और छवि पर पुनः विचार करने के लिए बाध्य करते हैं। इन्हीं तथ्यों की विवेचना, उसके बाल्यकाल से लेकर व्यक्तित्व निर्माण की प्रक्रिया तक क्रमवद्ध रूप में प्रस्तुत अध्ययन में की गई है।

वाजिद अली शाह का जन्म १८२२ ई० में हुआ। उस समय पूरे लखनऊ में शुजाउद्दौला के काल से पनपने वाली विलासिता और कुलबुलाती भोग विलास की प्रवृत्ति, नसीरुद्दीन हैदर के समय में अपने पूरे शबाब पर पहुँच चुकी थी तथा जन-मानस में यह पूरी तरह समा चुकी थी। विलासिता के सुख के आकर्षण में न फँसने वाला संभवतः कोई बिरला ही लखनऊ में बच पाया होगा। वाजिद अली शाह के पितामह और पिता सूफी तबियत के थे। दादी मलका आफाक बहुत सजग और दूरदर्शी महिला थीं। माता मलका किश्वर बहुत ही साफ सुथरी, नजाकत सलीका पसन्द और संयमित

जीवन पर विश्वास करते हुए आलीशान ढंग से रहती थीं। स्वाभाविक है बालक वाजिद अली शाह पर सभी का मिला जुला प्रभाव पड़ा होगा। वह पिता के धर्मभीरु, साहित्य प्रियता और उदार विचारों से आकर्षित हुआ। माता से उसके सलीका नजाकत और सफाई पसंदगी को गृहण किया। दादी की सजगता और दूरदर्शिता ने उसकी विचार शक्ति को प्रभावित किया। इस सब के होते हुए भी उस समय के माहौल का उस पर प्रभाव पड़ना स्वाभाविक ही था। बाल्यकाल में ही विलासिता से ग्रसित महल की महिलाओं ने उसको उत्तेजित करना प्रारम्भ किया तथा जिनका शिकार होने से बालक वाजिद अली शाह बच न सका। इस प्रकार कामुकता का रोग उसे अपने पर्यावरण से मिला। पिता की धार्मिक शिक्षा के साथ ही अपनी संगीत और साहित्य के प्रति जन्मजात स्वाभाविक प्रवृत्ति को भी वह दबा न सका और संगीत में रुचि लेने लगा। इस समय तक उसे व उसके परिवार को कहीं से यह उम्मीद न थी कि अवध की बादशाहत उनके परिवार को भी मिल सकती है। नसीरुद्दीन हैदर अंग्रेजों के हाथ की कठपुतली बन चुका था जिसके परिणाम स्वरूप प्रशासन और जनता में अंग्रेजों का प्रभुत्व और अधिक बढ़ गया था। अवध का खजाना अंग्रेज दोनों हाथों से समेट रहे थे।

अकस्मात् इतिहास ने करवट बदली। नसीरुद्दीन हैदर की मृत्यु के उपरान्त अंग्रेजों ने उसके परिवार को अधिक शक्ति सम्पन्न न होने देने की दृष्टि से किसी अन्य व्यक्ति को अवध का शासक बनाने का निर्णय लिया और एक ही दिन में भीषण संघर्ष और अस्तव्यस्तता की हालत में मुहम्मद अली शाह को अवध के शासक के रूप में तख्तनशीन कर दिया। वाजिद अली शाह इस संघर्ष और गहमा-गहमी में अपने पितामह मुहम्मद अली शाह के साथ था। इस प्रकार उसे यह आभास हो गया था कि अवध के वास्तविक स्वामी अंग्रेज ही हैं और वह जिसे चाहेंगे तख्त पर बिठा देंगे तथा जिसे चाहेंगे उसे उतारने की शक्ति भी उन्हीं में निहित है। पितामह मुहम्मद अली और पिता अमजद अली, वाजिद अली शाह को होनहार और योग्य समझते थे। इसी योग्यता के कारण मुहम्मद अली शाह ने वाजिद अली शाह को "नसीरुद्दौला खुर्शीद हशमत" की उपाधि प्रदान की थी और पिता अमजद अली शाह ने उसके व्यक्तिगत व्यय के लिए वेतन भी निर्धारित किया था। वाजिद अली शाह ने राजकुमारों की भांति शस्त्र विद्या और घुड़सवारी में भी प्रशिक्षण प्राप्त किया। इसी अवधि में अधिक उम्र की महिलाएं वाजिद अली शाह की कामुकता को जागृत करने लगी थी और तरुण मानसिकता के अनुकूल ही वह उस ओर आकृष्ट होने लगा था। इस परिस्थति से छुटकारा दिलाने के लिए काफी सोच विचार कर उसका विवाह कर दिया गया। विवाह के उपरान्त वह कुछ समय तक अपनी पत्नी के साथ ही रमा रहा। वाजिद अली शाह की योग्यता और पारिवारिक घटनाओं, जिनकी पूरी जानकारी महल में काम करने वाली स्त्रियों को हो जाती थी, से यह निश्चित प्रतीत होने लगा था कि अमजद अली शाह अपने बड़े पुत्र के स्थान पर वाजिद अली शाह को ही अपना उत्तराधिकारी नियुक्त करेंगे। इसी लोभ ने

कि वाजिद अली शाह ही अवध का बादशाह होगा, स्त्रियां उसे तरह-तरह से रिझाने लगीं और नव युवक बादशाह सहज ही उनके माया जाल में फंस गया।

अमजद अली शाह ने सिंहासनारूढ़ होने के उपरान्त वाजिद अली शाह को अपना उत्तराधिकारी नियुक्त किया। उत्तराधिकारी के रूप में जो कार्य उसे सौंपे गये उनसे उसे राज्य की वास्तविक स्थिति के बारे में जानकारी होने लगी। वह सम्पूर्ण राजनैतिक, आर्थिक और सामाजिक जीवन में जो कुछ हो रहा उसका विश्लेषण करने लगा था उसकी कुशाग्र बुद्धि को यह समझने में देर न लगी कि प्रत्येक स्तर पर प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष रूप में अंग्रेजों का हस्तक्षेप है। अंग्रेज ही जनता और शासन दोनों पर अपना प्रभुत्व जमाए बैठे हैं। अवध की बादशाहत कंपनी सरकार की उचित अनुचित सन्धियों से इस प्रकार जकड़ी हुई है कि उसका शासक नाम मात्र और जनता को भुलाने में रखने के लिए अंग्रेजों के हाथ की मात्र कठपुतली बन कर रह गया है। जनता को रास रंग में विशेष रुचि है। उसने अपनी समझ और दूरदर्शिता का उपयोग करते हुए जनता में लोक प्रियता हासिल करने का प्रयास शुरू किया। आम जनता की अभिलाषाओं के अनुरूप वह रास-रंग को बढ़ावा देने लगा। उसने खुले रूप से मनोरंजक कार्यक्रमों का आयोजन करना प्रारम्भ कर दिया। इस कार्य में भी उसने बड़ी चतुराई दिखाई और संगीत, कला, नृत्य, गायन आदि के प्रशिक्षण का नियमित और पुख्ता प्रबन्ध किया। इस कार्य का उसने सार्वजनिक रूप से प्रदर्शन किया। जनता को इसमें आनन्द आने लगा। वाजिद अली शाह के द्वारा ऐसे कार्यक्रमों में स्वयं भाग लेने से वह दिन प्रतिदिन, अपनी योजना के अनुरूप लोकप्रिय होने लगा। उस समय अच्छी-अच्छी गायिकाएं, नृत्यांगनाएं, जो अपनी कला में निपुण थीं अथवा उनमें अद्भुत प्रतिभा थी वह कुछ अमीरों, जागीरदारों आदि की मात्र कामवासना पूर्ति करती थी और उनकी कला दब कर रह जाती थी। कला के पारखी वाजिद अली शाह ने इन्हें समुचित प्राश्रय दिया और प्रशिक्षण की व्यवस्था कर उनकी प्रतिभा के विकसित होने में अपना योगदान किया। इनकी कला का प्रदर्शन जब वह जनता के सम्मुख करता तो विलासी लोग वाह-वाह करने लगते और वाजिद अली शाह का गुण गान करते न अघाते। इन सबका लाभ अंग्रेज उठाने में नहीं चूके। अंग्रेज समझने लगे कि ऐसा विलासिता में लिप्त व्यक्ति सहजता से उनके हाथ की कठपुतली बन कर रहेगा और उसकी लोकप्रियता के कारण कोई विघ्न या अवरोध भी उत्पन्न नहीं होगा। बादशाह अमजद अली शाह यद्यपि उसकी इन हरकतों से नाराज हो जाया करते थे परन्तु वह उसकी योग्यताओं से भी प्रभावित थे जिसके कारण वह जीवन पर्यन्त उसके समर्थक बने रहे। युवराजत्व काल में ही जनता का चहेता वाजिद अली शाह बादशाह बन गया।

अमजद अली शाह की मृत्यु १३ फरवरी, १८४७ ई० को हुई। शहर भर में शोर मच गया था। राजमहल के फाटक पर भीड़ इकठ्ठा हो गयी थी। एक समकालीन इतिहासकार कमालुद्दीन हैदर को अंग्रेज रेजीडेन्ट समझते हुए भीड़ चिल्ला उठी "हुजूर हमारे नवाब वाजिद अली शाह को जायज वारिस मान लीजिए, गद्दी पर वह ही

बैठें।" इस समय वाजिद अली शाह शोकग्रस्त ही था कि अंग्रेजों ने पूर्व निर्धारित नीति के अनुसार वाजिद अली शाह को ही अपने हितों के अनुकूल समझते हुए सिंहासनारूढ़ करने का फैसला कर लिया। जनता भी यही चाहती थी। वाजिद अली शाह को रेजीडेन्ट ने बुलवा कर १३ फरवरी, १८४७ की रात में लगभग साढ़े नौ बजे सिंहासनारूढ़ कर दिया और उसको बादशाह घोषित कर दिया।

जब वाजिद अली शाह ने गद्दी पायी तब वह यौवन की प्रथम सीढ़ी पर था। शरीर में बल और हृदय में उत्साह दोनों प्रचुर मात्रा में विद्यमान थे। उससे पूर्व के अवध के शासकों में से शायद ही कोई ऐसा रहा हो जो वाजिद अली शाह जैसा गुणी और गरिमा का धनी हो। उसके पितामह के पूर्व के शासक विलासी और कम्पनी सरकार के हाथ की कठपुतली मात्र थे। वाजिद अली शाह के पितामह मुहम्मद अली शाह और पिता अमजद अली शाह दोनों ही अयोग्य शासक सिद्ध हुए क्योंकि वह अंग्रेजों के बढ़ते हुए प्रभाव को रोकने में असफल रहे थे, विशेषकर इसलिए कि अवध का शासन अंग्रेजों की कृपा से ही उन्हें मिला था। दूसरे जब वह गद्दी पर बैठे तब तक इतने वृद्ध हो चुके थे कि उनमें शारीरिक और बौद्धिक दोनों शक्तियों का ह्रास हो चुका था। वाजिद अली शाह के बादशाह होने के पूर्व कई अयोग्य शासकों के कारण अवध सल्तनत की जड़ें कमजोर हो चली थीं। जबकि इसके विपरीत अंग्रेजों ने प्रचुर मात्रा में शक्ति संचित कर ली थी। वाजिद अली शाह को जब शासन मिला तब वह अपनी पूरी योग्यता क्षमता, कर्मठता और दूरदर्शिता से शासन व्यवस्था को सुदृढ़ व सुचारु रूप देने में जुट गया। जनता के दिलों को वह पहले ही जीत चुका था।

नौजवान बाँके बादशाह वाजिद अली शाह ने न्याय और सेना के सुधार में विशेष रुचि ली। बादशाह प्रतिदिन सवारी पर निकलता और सवारी में आगे-आगे दो संदूकचे चलते थे, जिस किसी को कुछ भी शिकायत होती लिखकर उसमें डाल देता। कुंजी खुद बादशाह के पास रहती। महल में पहुँचकर वह उन पर्चियों को निकालता और उन पर अपने हाथ से हुक्म लिखता। सेना में उसने कई रिसाले और पल्टनों की भर्ती की। इस प्रकार तख्त नशीन होते ही वह अपनी फौज के संगठन में लग गया था। वाजिद अली शाह खुद घोड़े पर सवार होकर घंटों धूप में खड़ा रह कर फौज की कवायद और युद्ध कौशल के अभ्यास देखता था। साथ ही दक्ष सैनिकों को इनाम, इकराम देकर प्रोत्साहित करता था। उसने कवायद के लिए स्वयं फारसी भाषा में एक मिलट्री कोड का निर्माण कर लिया था। वह फौज की अनुशासनहीनता को दूर करने और अनुशासन को बढ़ाने हेतु कड़ाई से काम लेता था। उसने अपनी सेना को शस्त्रास्त्रों से सुसज्जित करने के प्रयास आरम्भ कर दिये और सिपाहियों की वर्दी पर ध्यान दिया। ऐसा किसी पूर्ववर्ती अवध के प्रशासक ने नहीं किया था। ईस्ट इण्डिया कम्पनी उसके इन कार्यों को बड़ी शंसकित दृष्टि से देखने लगी थी। वाजिद अली शाह ने जिस कड़े और निपुण ढंग से शासन करना आरम्भ किया था उसे अंग्रेज गले के नीचे न उतार पाये। फलस्वरूप वाजिद अली शाह को असफल बनाने के उपाय ढूंढने लगे। उसके कुशल प्रशासन और

लोकप्रियता से बढ़ती हुई शक्ति के कारण कम्पनी शासन को कुढ़न होने लगी । अंग्रेज येन-केन प्रकारेण उसको गद्दी से उतारने के प्रयत्नों में जुट गये ।

अंग्रेजों ने युवक बादशाह की तत्परता व सूझ-बूझ से शंकित होकर एक षडयंत्र रचा और उसके प्रमुख हकीम को फुसला लिया । इसका कारण यह भी था कि वह प्रशासन न्याय और सेना में अमूल सुधार कर अवध को शक्ति सम्पन्न बनाना चाहता था । रेजीडेन्सी की ओर से किए गये नये हस्तक्षेपों और उनके द्वारा दरबार में रचे गये षडयन्त्रों तथा कुचक्रों का दमन करने में वह व्यस्त था । हकीम के द्वारा राजमाता मलका किश्वर के मन में, जो स्वयं नाजुक मिजाज थीं, यह शंका उत्पन्न करादी कि इस कदर परिश्रम करने से बादशाह का स्वास्थ्य खराब हो जाएगा । वह हकीम के इस चकमें में आ गई और ममतावश उन्होंने अपने बेटे का रोज सुबह उठना, दो घंटे कवायद करवाना या दफ्तर में बैठकर कई घंटे काम करना बन्द करवा दिया । वाजिद अली शाह न चाहते हुए भी राजमाता के आदेशों की अवहेलना नहीं कर सका और उसका ध्यान नाच गाना आदि मनोरंजन की तरफ लगाने का प्रयास किया । यह भी प्रयास किया गया कि बादशाह शराब भी पीने लगें । परन्तु वाजिद अली शाह की चारित्रिक दृढ़ता के कारण यह सम्भव नहीं हो सका । वाजिद अली शाह ने जीवन पर्यन्त शराब को कभी हाथ नहीं लगाया । उसका मन मलका किश्वर के आदेशों के कारण व्याकुल हो गया और इसी व्याकुलता ने उसे रोगी बना दिया । वह स्वयं को बीमार समझने लगा । परिणाम यह हुआ कि अब वह राजकाज में ज्यादा समय नहीं दे पाता था । पर जितना कार्य वह करता बड़े कौशल से करता । हकीमों के द्वारा उसे दिल का बीमार घोषित करने का उस पर मनोवैज्ञानिक प्रभाव पड़ा । इस सम्बन्ध में उसने स्वयं लिखा है :—

एक मरज जाता रहा तो दूसरा पैदा हुआ ।
कल्ब के हिलने का मुझको आरजा पैदा हुआ ।।

अंग्रेजों का यह षडयन्त्र सफल हुआ तो उन्होंने राज्य के कार्यों में हस्तक्षेप करना प्रारम्भ कर दिया । उधर वजीर अमीन उद्दौला के खिलाफ षडयन्त्र रच कर उसे वजीर पद से वाजिद अली शाह के द्वारा ही हटवाया गया । अली नकी खान दूसरे वजीर नियुक्त हुए । जब वाजिद अली शाह ने राज्य कार्य करने कम कर दिये तो वजीर ने भी रेजीडेन्ट और बादशाह दोनों के साथ सन्तुलित व्यवहार करना प्रारम्भ कर दिया । वह दोनों को ही प्रसन्न रखने के उपाय ढूंढता रहता था ।

यद्यपि वाजिद अली शाह ने राज-काज के कार्यक्रम कम कर दिये थे पर वह सजग रहता था । प्रत्येक क्षेत्र में वह कोई न कोई नवीन सुधार करता रहता तथा हर प्रकार और हर स्तर के समाचार एकत्रित करने की व्यवस्था उसने कर रखी थी । वह अंग्रेजों के षडयन्त्रों और प्रशासन में व्याप्त भ्रष्टाचार को मिटाना चाहता था पर इतना समय राजकाज के लिए उसे देने की राजमाता द्वारा आज्ञा नहीं थी ।

लार्ड हार्डिंग को कानपुर से लखनऊ लाकर वाजिद अली शाह ने उसका भव्य स्वागत किया। परन्तु इस पर भी हार्डिंग ने उसे प्रशासन को सुधारने कीं चेतावनी दी। वाजिद अली शाह पहले से जानता था कि उसकी हुकूमत अंग्रेजों के रहमों करम पर है। वह उन्हें नाराज नहीं करना चाहता था। अभी उसने इतनी शक्ति भी संचित नहीं कर पायी थी कि वह कम्पनी सरकार का विरोध कर सके तथा कार्य न करने देने के कारण उसकी कुछ कर दिखाने की अभिलाषा भी दबने लगी थी।

लार्ड डलहौजी जब गवर्नर जनरल बनकर आया तो उसकी यह उत्कष्ट अभिलाषा थी कि किसी प्रकार वह अवध राज्य को हड़प कर कम्पनी शासन में मिला ले। इस कार्य की रूप रेखा तैयार करने के लिए उसने स्लीमैन को अवध का रेजीडेन्ट नियुक्त किया और अपने इरादे उसके पदग्रहण करने से पूर्व ही एक पत्र द्वारा स्पष्ट कर दिये। स्लीमैन ने अवध प्रशासन में अनुचित हस्तक्षेप करने प्रारम्भ कर दिये। वह वाजिद अली शाह की इच्छा के विरुद्ध अवध के भ्रमण पर निकला। इस भ्रमण का उद्देश्य केवल वाजिद अली शाह के विरुद्ध ताल्लुकेदारों और जमीदारों को भड़काना और अवध प्रशासन की कमियों को सत्य अथवा असत्य तथ्यों के आधारों पर प्रमाणिक सिद्ध करना था। स्लीमैन निरन्तर ही गर्वनर जनरल डलहौजी की इच्छानुसार वाजिद अली शाह के प्रशासन और व्यक्तिगत चरित्र के विरुद्ध मुक्त हस्त से आख्यायें भेजता रहा। उसकी आख्याओं का विवेचन करने से विदित होता है कि उनमें पक्षपात भरा पड़ा है, विरोधी बातें भी कही गयी हैं और कम्पनी राज्य की बेबसी का भी उल्लेख किया गया है।

वाजिद अली शाह रेजीडेन्ट स्लीमैन के हस्तक्षेपों और प्रशासन को निष्क्रय बना देने के कार्यों से परेशान व चिन्तित रहने लगा। उसे स्लीमैन के कार्यों से स्पष्ट दिखाई देने लगा कि अब कम्पनी सरकार उसके हाथ से बादशाहत छीनने पर आमादा है और केवल औपचारिकता के लिए यह भूमिका तैयार की जा रही है। स्लीमैन के हस्तक्षेपों से वाजिद अली शाह की प्रशासनिक व्यवस्था छिन्न-भिन्न होने लगी। वाजिद अली शाह मजबूर था। क्योंकि पूर्व शासकों के द्वारा कंपनी सरकार की यह सन्धि थी कि अवध की अपनी कोई सेना नहीं होगी। केवल सुरक्षा टुकड़ियाँ ही रखी जा सकती थीं। राज्य की सेना अंग्रेजों के अधीन होती थी। आन्तरिक सुरक्षा का बहाना लेकर जिस सैन्य संगठन को वाजिद अली शाह ने शक्ति सम्पन्न करना चाहा अंग्रेजों के षडयन्त्र से वह उसमें सफल न हो सका था। जनता में उसकी छवि धूमिल होती जा रही थी। प्रशासन भी उसके अनुकूल नहीं चल पा रहा था। उसने पुनः जनता में लोकप्रिय होने का पुराना दाव पेंच अजमाना प्रारम्भ किया। वैसे भी वह काम न कर पाने के कारण विवश हो अपना अधिकांश समय मनोरंजन में व्यतीत करता था। उसने उत्तराधिकार काल की भांति इसी को बढ़ावा दिया। जोगियों का मेला, रहस आदि अनेकानेक कार्यक्रम आयोजित किये जाने लगे और आम जनता को उनमें आमन्त्रित किया जाने लगा। अपनी विवशता की परेशानी को भुलाने के लिए वह संगीत आदि की कलाओं में व्यक्तिगत रूप से रुचि लेने लगा। भवन निर्माण के अपूर्व और अनठे उदाहरण प्रस्तुत

करने लगा। संगीत, नृत्य आदि कलाओं में उसने नवीन प्रयोग कर जनता के सम्मुख उनका प्रदर्शन किया। इस प्रकार उसने कला, साहित्य और संस्कृति के क्षेत्र में अपनी ख्याति अर्जित करली। अपने कौशल और प्रतिभा के प्रदर्शन से जनता को प्रभावित किया। केसरबाग और सिकन्दर बाग का निर्माण करवा कर उसने स्थापत्य कला के प्रति अपनी रुचि, प्रतिभा और कल्पना शक्ति का उदाहरण प्रस्तुत किया। नृत्य और संगीत के क्षेत्र में उसने नवीन प्रयोग किये। रहस का स्वयं निर्माण और निर्देशन कर उसने इस क्षेत्र में अपनी योग्यता को प्रमाणित किया। उसीने सर्व प्रथम नर्तकियों के द्वारा नाटक में भाग लेने का प्रचलन किया। संगीत में उसने ठुमरियों का निर्माण किया जो आज तक प्रचलित है। उसका यह लोकप्रिय होने का अप्रत्यक्ष प्रयास सफल हुआ, यह पुनः जनता में उतना ही लोकप्रिय हो गया जितना अपने उत्तराधिकार काल में था। स्लीमैन उसके प्रशासन को विफल कर जनता में उसे नाकारा तथा अप्रभावी सिद्ध करना चाहता था परन्तु वाजिद अली शाह ने अपनी कला प्रतिभा के द्वारा स्लीमैन के उन इरादों पर, कि जनता वाजिद अली शाह से निराश होने लगे, पानी फेर दिया। इस पर भी स्लीमैन अपने उद्देश्य में जुटा रहा।

लार्ड डलहौजी के निर्देशों के अनुसार वाजिद अली शाह ने मालगुजारी वसूली की प्राचीन पद्यति, इजारा पद्यति के स्थान पर अमानी पद्यति को प्रभावी ढंग से लागू किया। स्लीमैन यह आख्याएं भेजता ही रहा कि मालगुजारी की वसूली सही प्रकार नहीं हो पा रही है और प्रशासन के कर्मचारी भ्रष्ट हो गये हैं। परन्तु यहाँ विरोधी विवशता भी प्रकट की कि अवध शासन पर कंपनी सरकार का कोई ऋण नहीं है। यदि वसूली पूरी न हो पा रही होती तो शासन का व्यय चलना मुश्किल हो जाता। स्लीमैन की आख्याओं में उल्लेख किया गया कि ताल्लुकेदारों की शक्ति बढ़ती जा रही है। यह कंपनी सरकार के लिए ही हानिकारक थी परन्तु स्लीमैन इसे बादशाह की कमजोरी के रूप में प्रस्तुत करता था। ऐसा प्रतीत होता है कि वाजिद अली शाह को जब यह निश्चय हो गया कि किसी भी स्थिति में कंपनी सरकार अवध शासन के अन्तर्गत किसी केन्द्रित सैन्य संगठन को स्वीकार नहीं करेगी तो उसने बड़े ताल्लुकेदारों और जमींदारों को उनकी सुरक्षा की आड़ में सिपाहियों को रखने की अप्रत्यक्ष अनुमति दे दी थी। इसका एक अन्य लाभ यह भी था कि अवध की सेना के नाम पर शक्ति सम्पन्नता विकेन्द्रित ही सही, बढ़ने लगी थी। वाजिद अली शाह ने ताल्लुकेदारों की बढ़ती शक्ति का विशेष विरोध नहीं किया। इस स्थिति से अंग्रेजी शासन बेचैन हो गया।

डलहौजी कानपुर आकर रुका परन्तु बादशाह को नीचा दिखाने के लिए और उसमें मनोवैज्ञानिक हीन भावना उत्पन्न करने के उद्देश्य से लखनऊ नहीं आया। स्लीमैन ने कानपुर में ही उससे भेंट की। डलहौजी से भेंट के उपरान्त जब वह लखनऊ वापस आया तो उसने अवध प्रशासन को नेस्तनाबूत कर देने की गरज से सीधे हस्तक्षेप प्रारम्भ कर दिये। उसने बादशाह के विश्वास पात्र लोगों को परेशान कर उनमें अपना आतंक व्याप्त कर दिया। वह अवध के दरबार में मनोकूल मंत्रियों की नियुक्ति कराने

लगा । चकलेदारों तथा आमिलों की नियुक्ति भी वह स्वयं करने लगा । बादशाह जिसे दण्ड देता रेजीडेन्ट उसे अपने यहाँ आश्रय देता । बादशाह जिसे नौकरी से निकाल देता, रेजीडेन्ट उसे अपने यहाँ नौकरी देता । जो जमींदार व ताल्लुकेदार नवाब से अप्रसन्न हो जाता उससे रेजीडेन्ट घनिष्टता बढ़ाता । इस तरह स्लीमैन आर्थिक तथा राजनैतिक दृष्टि से अवध प्रशासन को पूरी तरह पंगु बनाने में जुट गया । नवाब के वफादार आदमियों की सरेआम बेइज्जती होने लगी और उसके बगावती सेवक की तारीफ । अवध दरबार कुचक्र और षडयन्त्र का अड्डा बन गया । बादशाह को विश्वास पात्र सेवक मिलने दूभर हो गये । अंग्रेज, बेगमें और दरबारी सभी शासन के शोषण में जुट गये । स्लीमैन की इस कार्य प्रणाली ने अवध प्रशासन को ठप्प करने का पूरा आधार बना लिया ।

अवध शासकों की पूर्व सन्धियों के आधार पर रेजीडेन्ट और कम्पनी सरकार को अवध शासन में बहुत से अधिकार प्राप्त थे । बिना रेजीडेन्ट और कम्पनी सरकार की इजाजत के बादशाह अपने व्यक्तिगत कार्य जैसे विवाह आदि भी नहीं कर सकता था । डलहौजी के इरादों के कारण स्लीमैन ने अवध प्रशासन के विभागों पर इतना व्यापक प्रभाव जमा लिया था कि राज्य के निम्न से निम्न कर्मचारी की यही चेष्टा रहती थी कि वह रेजीडेन्ट को प्रसन्न रखे । रेजीडेन्ट का यह साधारण सिपाही भी इतना पैसा कमाता था कि एक रियासत का अधिकारी उतना एकत्रित नहीं कर पाता था । रेजीडेन्ट की राजनैतिक स्थिति अवध के बादशाह से कम न होती थी । बादशाह या वजीर बिना रेजीडेन्ट की सहमति के कोई भी कार्य स्वतन्त्र होकर नहीं कर सकते थे । इन्हीं कारणों से अवध को किसी प्रकार स्वतन्त्र राज्य नहीं कहा जा सकता था । वाजिद अली शाह इस स्थिति को जानता था । वह रेजीडेन्ट के अनुचित हस्तक्षेपों से मन ही मन क्रोधित होता था । परन्तु विवश था । इसी विवशता और राजनैतिक उलझनों के कारण उसने अपना ध्यान बंटाने के उद्देश्य से बेगमों की एक भीड़ जमा करली थी । उन्हीं में वह अपना अधिकांश समय व्यतीत करने लगा था ।

वाजिद अली शाह ने जब स्लीमैन के हस्तक्षेप के इस रूप को देखा तो समझ गया कि चाहे कैसी भी परिस्थितियाँ क्यों न बनायी जायें, कम्पनी सरकार किसी भी स्तर तक गिर कर हर हाल में अवध का शासन उससे छीन लेने का निश्चय कर चुकी है । फलस्वरूप निराश हो वह अपनी बेगमों में लिप्त रहने लगा और अपने शासन काल के दिन गिनने लगा । सच यह है कि निराशा ने ही उसे विलासी बनने पर मजबूर किया । इस पर भी कहीं यह उल्लेख नहीं मिलता कि वह चरित्रहीन था, लम्बर था । उसने कभी किसी स्त्री को जबरन या स्त्री की इच्छा के विरुद्ध अपने पास नहीं रखा । किसी लड़की पर कुदृष्टि डालना, जबरदस्ती किसी स्त्री को अपनी पत्नी बना लेना या गैर मुस्लिम लड़की से सम्बन्ध रखना उसके उसूलों के खिलाफ था । वह स्वयं लिखता है :—

अजब हूँ मैं एक शायरे खस्ता हाल ।
सिवाए मुहब्बत के नहीं कुछ ख्याल ।।

इधर की हो दुनिया उधर गम नहीं।
कयामत जभी है कि जब हम नहीं ।।

वाजिद अली शाह स्वयं को आत्म नियन्त्रित करना भली भाँति जानता था। वह इतना सज्जन था कि कभी नौकरों के प्रति भी अपशब्द नहीं निकालता था। उसमें बादशाहत का घमंड छू तक नहीं गया था। प्रत्येक नमाज का वह जीवन पर्यन्त पाबन्द रहा। नमाज के समय तथा कुरान शरीफ पाठ के समय वह समय पर उपस्थित रहता। यहाँ तक कि घोर विरोधी होते हुए और सदैव विरोधी बातें ही वाजिद अली शाह के सम्बन्ध में लिखने वाले रेजीडेन्ट स्लीमैन ने भी अपनी दो अलग-अलग आख्याओं में जिनमें चार साल का अन्तर है लिखा है—"बादशाह न तो अत्याचारी है और न बेरहम। अवध की गद्दी पर दिल का इतना अच्छा और कटुता रहित और कोई नहीं बैठा।"

स्लीमैन के बाद डलहौजी ने जनरल आउट्रम को लखनऊ का रेजीडेन्ट नियुक्त किया। इसे डलहौजी द्वारा अवध को हड़प लेने के लिए ठोस आधार बनाने के उद्देश्य से लखनऊ भेजा गया था। उसे निर्देश दिया गया था कि वह अवध का निरीक्षण शीघ्रता से करने के उपरान्त प्रशासन के सम्बन्ध में आख्या भेजे। यह मात्र एक औपचारिकता को निभाने की तरह था। आउट्रम ने अवध की सीमाओं के निकटवर्ती जनपदों के जिलाधीशों की प्रशासन सम्बन्धी स्थिति भेजने का आदेश दिया। फतेहपुर के जिलाधीश के अतिरिक्त सभी ने स्वीकार किया कि पिछले छः वर्षों में हत्या, लूटमार, पशुओं की चोरी आदि अपराधों में वृद्धि नहीं हुई है वरन पर्याप्त गिरावट आई है। यह आख्यायें अंग्रेजी शासन के मनोकूल न थीं। इससे यह भी सिद्ध होता है कि वाजिद अली शाह का प्रशासन भले ही दरबारी स्तर पर रेजीडेन्ट के हस्तक्षेप के कारण अस्त व्यस्त होने लगा था परन्तु जनपदों में शान्ति व्यवस्था कायम थी। इसी आख्या में यह भी वर्णन किया गया था कि नाजिमों ने शान्ति व्यवस्था कायम रखने में सराहनीय योगदान दिया था। आउट्रम ने आख्या की माँग के साथ ही डलहौजी ने सैनिक अधिकारियों से भी आख्याएं माँगी थी जो इतनी असन्तोषजनक नहीं थी परन्तु उनमें पक्षपात पूर्ण अभियोग थोपे गये थे। आउट्रम ने स्लीमैन की जाँच को ही आधार बनाते हुए अवध प्रशासन और अवध के शासक वाजिद अली शाह के विरोध में अपनी आख्या भेज दी। डलहौजी का पूर्व नियोजित उद्देश्य पूरा हो गया। अब अवध का पूर्ण विलय करने की उसकी अपनी योजना क्रमबद्ध रूप में सफलता की ओर बढ़ रही थी।

इसी बीच अयोध्या में हनुमान गढ़ी के विवाद को लेकर हिन्दू मुस्लिम संघर्ष उत्पन्न हो गया। वाजिद अली शाह ने तटस्थता से विचार करते हुए हिन्दुओं का पक्ष लेकर उनकी सुरक्षा के उपाय किये। उपद्रव दबा दिया गया। यह वाजिद अली शाह की न्याय प्रियता और धार्मिक उदारता का प्रत्यक्ष उदाहरण है। इस पर भी कम्पनी सरकार ने उस पर अव्यवस्थता को न रोक सकने का लाँछन लगाया जबकि साम्प्रदायिक दंगे से प्रभावित क्षेत्र वाजिद अली शाह के राज्य के अन्तर्गत नहीं था। यद्यपि इस प्रकार

का दंगा अवध में नहीं हुआ था, जबकि कम्पनी शासित क्षेत्रों में ऐसे दंगे प्रायः होते रहते थे।

वाजिद अली शाह की सभी आशायें धूमिल हो चुकी थीं। उसे स्पष्ट दृष्टिगोचर हो रहा था कि किसी भी दिन अवध का शासन उसके हाथों से छीन लिया जाएगा। बेवसी में वह अपना समय रास-रंग में बिताने लगा और अपने पदच्युत होने का तमाशा देखने के लिये मानसिक रूप से स्वयं को तैयार करने लगा।

डलहौजी ने अवध के सम्बन्ध में प्रस्तुत आख्याओं का आधार लेते हुए अपनी इच्छानुकूल प्रस्ताव सलाहकार परिषद से स्वीकृत करवा लिया। वाजिद अली शाह को जब नवीन प्रस्तावित सन्धि के बारे में बताया गया तो उसने दृढ़ता के साथ ऐसे सन्धि पत्र पर हस्ताक्षर करने से इन्कार कर दिया। उसने पूरी सेना को निःशस्त्र कर दिया।

४ फरवरी, १८५६ ई० को आउट्रम वाजिद अली शाह से भेंट करने गया तो उसने सम्पूर्ण राजमहल को खाली सा पाया। इस व्यवहार से आउट्रम को बड़ा विचित्र सा लगा। जब आउट्रम ने सन्धि पत्र और उसके साथ गवर्नर जनरल का वाजिद अली शाह के नाम पत्र प्रस्तुत किया तो वाजिद अली शाह ने कहा "मेरा घर मुझसे छीना जा रहा है···सन्धि बराबर वालों में होती है। मैं कौन हूँ जो ब्रिटिश सरकार के साथ सन्धि करूँ। सौ बरस तक हमने अवध पर हुकूमत की · अंग्रेज इसे चाहें बनाए, बिगाड़ें, बढ़ाएं या घटाएं। उनकी लेशमात्र की आज्ञा का पालन होगा। मैं और मेरी प्रजा ब्रिटिश सरकार के सेवक है।"

आउट्रम तीन दिन तक इसी प्रयास में रहा कि वाजिद अली शाह के हस्ताक्षर हो जायें तथा कम्पनी सरकार की नेक नामी बनी रहे और ब्रिटिश शासन की नैतिकता का आदर्श ऊँचा रहे। पर बादशाह टस से मस न हुआ। आउट्रम को हिदायत थी कि यदि बादशाह १२ लाख रुपया की पेंशन पर राजी न हो तो उससे रकम बढ़ाने की बात भी तय करली जाये। आउट्रम ने आश्चर्य प्रकट किया है कि वाजिद अली शाह ने कभी पेंशन की रकम बढ़ाने का जिक्र तक नहीं किया। यह इस बात का प्रमाण है कि वाजिद अली शाह दृढ़ प्रतिज्ञ था। वह जानता था कि सन्धि पत्र पर हस्ताक्षर करवा कर अंग्रेजी हुकूमत अपनी नैतिकता की धाक कायम रखना चाहती है। उसने सन्धि पर हस्ताक्षर न कर अंग्रेजों की इन आशाओं पर पानी फेर दिया।

७ फरवरी, १८५६ को भी उसने स्पष्ट कहलवा दिया कि वह सन्धि पर हस्ताक्षर नहीं करेगा। इसके साथ ही उसने शान्ति व्यवस्था स्थापित रखने के उपाय भी कर दिये। इसी समय पर उसने दो घोषणायें की, प्रथम में जनता को अंग्रेजी शासन स्वीकार कर लेने तथा सैनिकों को विद्रोह न करने के लिये कहा गया था। दूसरी घोषणा सैनिक अधिकारियों के प्रति थी कि वह अपने कार्यो पर तैनात रहें और कोई काम न छोड़ें।

विश्व के इतिहास में प्रजा के हित चिन्तक, निष्ठा, उदारता दृढ़ता तथा शान्ति के साथ इस प्रकार के आत्म समर्पण की भावना से युक्त होकर किसी शासक ने अपना राज्य नहीं छोड़ा होगा। उसका यह कार्य भी अंग्रेजों को शंका जनक लगता था। इसी

दिन १२ वजे आउट्रम ने अवध के कर्मचारियों को बुलाकर अवध पर कंपनी का शासन कायम होने की घोषणा करदी और अवध के कंपनी शासन में पूर्ण विलय होने की औपचारिकता भी पूरी करदी ।

वाजिद अली शाह पर अभियोग है कि उसने अन्य तत्कालीन वहादुर शासकों की भाँति अंग्रेजों से डटकर युद्ध करने का साहस नहीं किया । वह कायर निकला, परन्तु अभियोग लगाने वाले भूल जाते हैं कि उनका परिणाम भी वाजिद अली शाह से कुछ भिन्न नहीं हुआ जिन्होंने युद्ध के रूप में वीरता पूर्वक विद्रोह किया । उनके राज्य भी एक-एक करके अंग्रेजी शासन में विलीन होते गये और जनता को भयंकर अत्याचारों द्वारा पीड़ित किया गया । वाजिद अली शाह कोमल हृदय व्यक्ति था वह अपनी जनता पर पाशविक अत्याचार नहीं देख सकता था । उसने जन मानस पर विशेष प्रभाव न पड़ने देने के उद्देश्य से स्वयं पदच्युत होना स्वीकार कर लिया । यदि वास्तव में वह कायर होता या उसमें विचार शक्ति का अभाव होता तो यह निश्चित समझ कर राज्य तो छिन ही जाना है, सन्धि पर हस्ताक्षर कर देता और अपनी पेंशन स्वीकार कर लेता । उसने ऐसा नहीं किया । वाजिद अली शाह जानता था कि सन्धि पर हस्ताक्षर करने का अर्थ है अंग्रेजों की वदनियती और बेईमानी भरी आकांक्षाओं पर नेक नामी की मुहर लगा देना । उसने इतिहास में वह पृष्ठ जोड़ दिया कि भारत का अंग्रेजी शासन दुष्कृत्यों से भरा हुआ था । परन्तु वह-अपने प्रत्येक दुष्कृत्य को छुपाने के लिये कोई न कोई बहाना ढूंढ लेते थे । वाजिद अली शाह ने उनकी इस बदनियती को उजागर कर देने का आश्चर्य जनक कार्य किया ।

अंग्रेज अवध का विलय करने के पश्चात अवध की जनता और विशेष कर राज परिवारों में लूट मार करने लने । उनके अत्याचारों से दुखी होने लगे और अवध में त्राहि-त्राहि मच गयी ।

वाजिद अली शाह अपनी चहेती जनता के लहू की कीमत पर अपनी नाम मात्र की बादशाहत नहीं चाहता था । उसने शान्ति-व्यवस्था को कायम रखने और अपनी अवाम के सामान्य जीवन को अस्तव्यस्त न होने देने की अभिलाषा से शान्तिपूर्ण रूप से पद-त्याग कर दिया । अंग्रेजी सैनिक अधिकारियों तथा अन्य लुटेरे प्रवृत्ति के लोगों ने शहर में लूटमार मचा दी और ब्रिटिश शासन उस पर नियन्त्रण रखने में असफल रहा । बादशाह के परिवार पर जुल्मों और मुसीबतों का पहाड़ आ पड़ा । वाजिद अली शाह व्याकुल हो गया पर उसने धैर्य नहीं गंवाया ।

बड़ी मुश्किलों से उसे लखनऊ छोड़ कर कलकत्ता जाने की अनुमति मिली ताकि वह महारानी विक्टोरिया के सम्मुख याचिका प्रस्तुत कर सके । जब वाजिद अली शाह लखनऊ से विदा लेने लगा तो लखनऊ के वाशिन्दों ने उसे अश्रुपूरित नेत्रों से विदाई दी । यह प्रमाणित करता है कि लखनऊ की जनता में वाजिद अली शाह के प्रति अगाध स्नेह था । लखनऊ की जनता वाजिद अली शाह के व्यक्तित्व की क़ायल थी । यदि वह घोर व्यसनी, कायर और कम समझ बूझ वाला व्यक्ति होता तो उसके पदच्युत होने के

वाद उसे जनता का इतना स्नेह न मिलता। मार्ग में उसे सरकारी सहायता के अभाव में परेशानियों का ही सामना करना पड़ा। कलकत्ता में मटिया बुर्ज में उसको निवास के लिये स्थान दिया गया। अपनी कला प्रियता के कारण उसने उस स्थान को भी लखनऊ की भांति ही सुसज्जित कर दिया। इसी बीच अवध में विद्रोह हो गया। शान्ति प्रिय वाजिद अली शाह पर अंग्रेजी अत्याचार का एक और सिलसिला प्रारम्भ हुआ। गदर के दौरान लगभग दो वर्ष तक ही अवधि के लिये उसे फोर्ट विलियम में कैद कर यातनायें दी गई। वह उन्हें भी धैर्य से सहता रहा। उसकी याचिका स्थगित कर दी गई। जिस पर मुफलिसी का दौर प्रारम्भ हो गया था। वाजिद अली शाह के सेवकों के लिये जीना दूभर हो गया। उन सेवकों की खातिर उसे अपनी जिद तोड़नी पड़ी और उसने अंग्रेजी सरकार से प्रार्थना की कि वह पेंशन लेना स्वीकार करता है और उसकी याचिका खारिज कर दी जाये। पेंशन मुकर्रर हो गयी लेकिन शर्तें अंग्रेजी सरकार की अपनी थीं। वाजिद अली शाह ने यह भी बर्दाश्त कर लिया। कुछ दिनों में उसकी मां, युवराज और भाई भी साथ छोड कर खुदा को प्यारे हो गये।

इस हादसे से बादशाह उदास रहने लगा। बस अब उसे जीवन काटने का बहाना चाहिये था। संगीत और साहित्य का शौक यहाँ उसके बहुत काम आया। वह अब घोर विलासिता में अपने गमों को भुलाता हुआ जिन्दगी के दिन काटने लगा था। यहीं उसकी विलासिता अपनी चरम सीमा पर पहुँची थी। इस पर भी उसने कभी बगैर विवाह किये किसी स्त्री का साथ नहीं किया। उसकी यह चारित्रिक विशेषता जीवन पर्यन्त बनी रही।

वाजिद अली शाह का काल सांस्कृतिक दृष्टि से अत्यन्त महत्वपूर्ण रहा जिसमें न केवल सभ्यता एवं संस्कृति में उन्नति हुई वरन् बोलचाल की भाषा में भी एक विशेषता उत्पन्न हुई। लखनऊ की अशिक्षित जनता भी ऐसी भाषा बोलने लगी थी कि शिक्षित व्यक्ति भी उसकी प्रशंसा किये बिना नहीं रहते थे। उस समय में न केवल पुरुषों में ही बल्कि घरों में कैद महिलाओं को भी साहित्य में रुचि उत्पन्न होने लगी थी। यहाँ की भाषा में हास्य, लोच एवं व्यंग का विशेष स्थान रहा।

वेश्याओं का प्रभाव भी सामाजिक जीवन में काफी हो चुका था। सांस्कृतिक रीतियों और वाह्य आचरण न केवल समान वर्ग के व्यक्ति बल्कि आम जनता भी उन्हीं की संगति से सीखती थी। यह बात प्रसिद्ध थी कि धनी व्यक्ति अपने पुत्रों को शिष्टाचार आचरण सिखाने के लिए वैश्याओं के यहाँ भेजते थे। वाजिद अली शाह के समय में वेश्या भी समाज में निर्भय होकर सम्मिलित होती थीं।

धार्मिक उत्सवों, पूर्वजों और सन्तों के नाम से मेले-तमाशे आदि मनोरंजन के साथ ही धार्मिक महत्व भी रखते थे। हिन्दू मुसलमान दोनों ही इन स्थानों पर हजारों की संख्या में एकत्रित होते थे। लखनऊ में हजरत अब्बास की दरगाह पर बहुत बड़ा मेला लगने लगा था। मुहर्रम के अवसर पर लाखों रुपया व्यय होता था इसमें वाजिद अली शाह स्वयं भी ढोल बजाने लगता था। धार्मिक उद्देश्यों की पूर्ति के साथ ही यह

उसका जनता के साथ घुल मिलकर जनता के अधिक समीप पहुँचने का सफल प्रयास सिद्ध हुआ। नवाब वाजिद अली शाह के वक्त में जितनी मस्जिदें बनी उतने ही मंदिर भी बने। तब ही तो उसकी महफिल में जब अंग्रेज़ों की साजिश के तहत अयोध्या की एक मस्जिद का विवाद खड़ा किया गया तो उसने बड़ी सादगी के साथ सिर्फ इतना ही कहा था—

हम इश्क के बन्दे हैं मज़हब से नहीं वाकिफ
गर काबा हुआ तो क्या, बुतखाना हुआ तो क्या।

साहित्य और संगीत के संगम से नवीन कला की उत्पत्ति वाजिद अली शाह ने ही की थी जिसको लखनऊ के वातावरण में सुसज्जित किया गया। जाने आलम ने जब अपनी साज ओ अदा की महफिल सजायी तो उसमें कृष्ण कन्हैया का रूप रखा या फिर कैसरबाग के जोगियाना मेले में मतवाला जोगी बनकर अलख जगाया। उसकी यह कला अन्य क्षेत्रों को भी आकर्षित किये बिना न रही। इसके अतिरिक्त वाजिद अली शाह ने उर्दू साहित्य के क्षेत्र को बहुत बढ़ावा दिया। लखनऊ में कवि सम्मेलन वहाँ के नागरिकों के जीवन के अभिन्न अंग बन गये थे जिस कारण लखनऊ को पूर्वी सभ्यता का नमूना भी कहा जाने लगा था।

अंग्रेजों ने अनेकानेक भारतीय राज्यों का विलय किया। परन्तु वाजिद अली शाह की यह विशेषता रही कि अवध का राज्य अंग्रेजी साम्राज्य को अपनी प्रतिष्ठा धूल धूसरित करने के उपरान्त ही मिल सका। वाजिद अली शाह भी अनेकानेक भारतीय बादशाहों की भाँति इतिहास के पृष्ठों में सिमट कर रह जाता पर ऐसा उसकी दूरदर्शिता के कारण ही नहीं हुआ। वह अपनी बहुमुखी प्रतिभाओं के कारण चिरस्मणीय व्यक्तित्व का धनी होकर अवध के क्षितिज पर सदैव सितारे की भाँति चमकता रहेगा। अव्यक्त और अप्रत्यक्ष रूप से उसने अंग्रेजी शासकों को अपनी चतुराई से सदैव बेचैन रखा। प्रशासन व्यवस्था में अल्प समय देने पर भी वह सजग और दूरदर्शी रहा। उसने सदैव जनता से सीधा सम्पर्क स्थापित रखने का सफल प्रयास किया। वह अवध राज्य का शासक होने के बजाय अवध की जनता के दिलों पर शासन करने में अधिक सफल रहा। वह यह तथ्य भली भाँति जान गया था कि तथाकथित बादशाह पद पूर्व सन्धियों द्वारा अंग्रेजी सरकार से इतना नियन्त्रित था कि बादशाह अंग्रेजी शासन की कठपुतली मात्र बन कर रह गया था।

उसने नृत्य, गायन, संगीत, स्थापत्य, साहित्य आदि क्षेत्रों में प्रगति का सफल प्रयास किया वही उसे महान सिद्ध करने में पर्याप्त है। वाजिद अली शाह का काल ललित कलाओं के विकास में अद्वितीय स्थान रखता है। लखनऊ में वाजिद अली शाह के वक्त में ललित कलाएँ अपने चरम उत्कर्ष पर पहुँच चुकी थी। जब नवाब को अवध से कलकत्ता पहुँचा दिया गया तब भी मौसकी का ये कारखाना हुगली के किनारे आबाद हो गया और वहाँ पर भी उसने संगीत की खिदमत में कोई कोताही नहीं बरती। उसने भारतीय संगीत के पक्ष अपने साहित्य में एक जगह लिखा है :—

सुरों की ऊपज हो तरन्नुम के साथ
हिलें होंठ मुतरिब के कुम कुम
खरज का बक़ार और सुरों की लकीर
वो ताने कि जिनसे पड़े दिल पे तीर ।।

डलहौजी की चाल का शिकार अवध विलय-वाजिद अली शाह की हार या कमजोरी नहीं थी, बल्कि अंग्रेजी संगीनों की नोक पर अंग्रेजों द्वारा खुली डकैती थीं जिसकी समता इतिहास में अन्यत्र नहीं मिलती तथा जो आज भी कृतघ्नता और अन्याय का जीवित उदाहरण बना हुआ है। वाजिद अली शाह के शासन काल में हुयी प्रत्येक क्षेत्र की असीमित प्रगति ने उसे इतिहास का एक ऐसा नायक बनाया जिसमें संस्कृति, सभ्यता, कला व साहित्य का सन्तुलन समन्वय विद्यमान था। बादशाह की निष्पक्षता धर्मनिर्पेक्षता, न्याय प्रियता, सुहृदता, उदारता और सरलता जैसे गुणों ने उसे इतिहास की आत्मा में स्थान देकर गौरान्वित किया है। वाजिद अली शाह में जनता जनार्दन का मन जीत लेने की अभूतपूर्व क्षमता थी। वास्तविक रूप में वह जनता के दिलों का शासक था। सल्तनत के शासक होने का दम उसने कभी भरा ही नहीं। किसी शासक की लोकप्रियता निःसन्देह उसे अमरत्व प्रदान करती हैं। वाजिद अली शाह अपने काल की जनता का प्रिय शासक था। इस तथ्य को नकारा नहीं जा सकता कि वह जनता का विश्वास प्राप्त, सफल व अपने किस्म का एक अलग ही प्रशासक था। उसने अवध राज्य के पृष्ठों पर अपनी प्रतिभा की अमिट छाप छोड़ी।

आखिर था वो ताजेदारे अवध
शाहे वाजिद अली वो बहारे अवध
फिर वो अन्दाजे गुफ़्तार न रहा
हाय वो शहर लखनऊ न रहा ।।

———

: सन्दर्भ–ग्रन्थ–सूची :

प्राथमिक स्रोत :

अप्रकाशित पुस्तकें :

(अ) वाजिद अली शाह की विभिन्न पाण्डुलिपियाँ एवं पुस्तकें—

: अफसाना इश्क
: तारीखे बदर, १२७६ हिजरी
: तारीखे जमशेदी, १२७६ हिजरी
: तारीखे फिराक, १२७६ हिजरी
: तारीखे नूर, १२७६ हिजरी
: बनी, १२९२-९३ हिजरी
: सब्रात-उल-कलूब, १३०४ हिजरी
: हुज़्ने अख्तर, १३०६ हिजरी
: रियाज-उल कलूब
: सुख्न अशरफ
: शेवा-ए-पैज़, १२७६ हिजरी
: सईफा-ए-सुल्तानिया, १२८६ हिजरी
: इश्म नामा
: गुलज़ार हुसैनी, १२९१ हिजरी
: मजमुआ-ए-वाजदिया, १२९१ हिजरी
: मर्सिया आफा, १२९१ हिजरी
: नाज़ो

प्रकाशित पुस्तकें :

: इरशाद साकानी, लखनऊ, १२६९ हिजरी
: अफसाना-ए-इश्क
: ईमान, कलकत्ता, १२८८ हिजरी
: बहरे उल्फत सुल्तानी, लखनऊ
. कहरे मुखतलिफ, कलकत्ता १२७७ हिजरी
: बहरे हिदायत, लखनऊ १२६७ हिजरी
: बनी, कलकत्ता, १८७७ ई०
: तारीखे गजाला, आगरा, १९१६ ई०
: तारीखे मुमताज, लाहौर, १९५२ ई०
: तोशा-ए-आसरित, कलकत्ता, १२९९ हिजरी
: जोहरे उरुज, कलकत्ता, १२९३ हिजरी
: हुज़्ने अख्तर, लखनऊ, १९२२ ई०
: दरिया-ए-ताइश्क, लखनऊ
: दफ्तरे ग़म ब बहरे अलम्, लखनऊ
: दुल्हन, कलकत्ता, १२९० हिजरी

: दीवाने मुबारिक
: रियाज-उल-कलूब, कलकत्ता, १३०२ हि०
: सुख्न-ए-अशरफ, लखनऊ
: शेवा-ए-पैज, १२७७ हिजरी
: सूत-उल-मुबारिक, लखनऊ, १२६६ हि०
: कुलियाते अख्तरी, कलकत्ता, १२७८ हि०
: गुलदस्ता-ए-आश्कान, लखनऊ, १२५६ हि०
: मजमुआ वाजदिया, लखनऊ, १२६७ हि०
: मिरासी, कलकत्ता
: नाज़ो, कलकत्ता, १२८६ हिजरी
: नशाहे अख्तरी, लखनऊ, १२७५ हिजरी
: नज़्म नामबर, कलकत्ता, १२८७ हिजरी

(ब) फारेन एवं पोलिटिकल विभाग के आवश्यक अभिलेख :
राष्ट्रीय अभिलेखागार, जनपथ, नई-दिल्ली—

1. : Foreign Deptt. Political Consultations.
2. : Foreign Deptt. Forgeign Consultations.
3. : Foreign Deptt. Secret Consultations.
4. : Political Dispatches—

A. : Political Dispatches from/for Court of Directors.
B. : Political Letters to/from Court of Directors.
C. : Governor General Dispatches to Secret Committee.
D. : Dispatches to Secret Committee.
E. : Political Consultations-Dispatches to Secretary.

(स) डा० कोकब कदर सज्जाद अली मिर्जा—

: वाजिद अली शाह की अदबी और सफाकती खिदमात, (पी० एच० डी० डिग्री हेतु प्रस्तुत शोधकार्य, १९६०), अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय, अलीगढ़, (अप्रकाशित)

द्वितीय स्रोत :

(अ) फारसी, उर्दू व हिन्दी भाषा की पुस्तकें :

अब्दुल रऊफ हश्रत : **तजकरा आबेबका, नामी प्रेस, लखनऊ, १९१८ ई०**
: **बेगमात शाहने अवध, दिल्ली**

: खुतूत आखिरी शाह अवध, लखनऊ

अब्दुल रज्जाक : याद-ए-अय्याम

अनीस फातमा बरेलवी : १८५७ का हीरो, अलीगढ़, १९६१ ई०

अब्दुल हलीम शरर : गुजिशताये लखनऊ (हिन्दुस्तान की मशरिकी तमद्दुन का आखिरी नमूना), मर्कन्टाई प्रेस, लाहौर

: पुराना लखनऊ (गुजिश्ता लखनऊ का नूर अब्बासी द्वारा अनुवाद), नेशनल बुक ट्रस्ट इण्डिया, नई दिल्ली, १९७१ ई०

: जान-ए-आलम, लाहौर, १९५१ ई०

अजमल अली नामी काकोसी : मुरक्कये खुसरबी (हस्त लिखित), मकबूल आलम लाइब्रेरी, पटना

अरशद खान : तलस्म उल्फत, लखनऊ, १२९६ हिजरी

अमजद अली खान : ताजदारे अवध

अहद अली : मुरक्काये अवध, लखनऊ, १९१२ ई०

इसन नियाज़ी : दिल्ली सल्तनत (भाग १ व २)

अमृतलाल नागर : गदर के फूल

: शतरंज के मोहरे

अजीव अहमद व डा० यूसुफ हुसैन : मकालात् गारसां दतासी, दिल्ली

आगा हज्जू शरफ : अफसानये लखनऊ (हस्त लिखित) टेगोर पुस्तकालय, लखनऊ विश्वविद्यालय

आगा हसन नामी : अहसान-उल-तवारीख, (भाग—२)

आनन्दनाथ वर्मा : नुकात-ए-आनन्द, दिल्ली, १९३१ ई०

आर्शीवादी लाल श्रीवास्तव : मुगल कालीन भारत

इल्ताफ हुसैन हाली : हयात-ए-जावेद, लाहौर, १९०७

इक्तेदारुद्दौला मोहम्मद : तवारीख-ए-इक्तेदारिया, १०७० हिजरी, (दो भागों में हस्त लिखित), निजाम लाइब्रेरी, हैदराबाद

अली खान बहादुर : तारीख-ए-अन्जमन हिन्द अवध, लखनऊ १९३७

सद्दीक अहमद

गास्मां दतासी : खुतबाह दसासी खुतबा हफतम

गोस्वामी तुलसीदास : रामचरितमानस

गुलाम हैदर सगीर लखनवी : आइने अख्तर, अवध प्रेस लखनऊ, १९१२

जगदीश सहाय, डा० : अवध में नवाबी शासन का इतिहास, अवध प्रकाशन, फैजाबाद, १९८२

जय गोपाल साकिब : जबदुत-उल-कवायफ (फारसी पाण्डुलिपि) १५५९, टैगोर पुस्तकालय, लखनऊ विश्वविद्यालय

: नादरात उल साकिब, १२६० हिजरी

जयदेव सिंह : कबीर वाणी पीयूष

जय बहादुर लाल : हिन्द सूफी मत, उद्‌भव और विकास

जगीम उल्ला (नवाब) : तारीखे केसरी, लखनऊ, १३०८ हिजरी

जियायुद्दीन बरनी : तारीख-ए-फिरोज शाही

तस्दीक हुसैन खान उर्फ नवाब मिर्जा शौक : बहार इश्क, १२७६ हिजरी

तहसीन सरवरी (अनुवादक) : परिखाना, रामपुर

पं० रामगोपाल पाण्डे "शरद" : राम जन्मभूमि का रक्त रंजित इतिहास, अयोध्या, १९८३

दीवान मुन्शी रोशनलाल : खुलासा तारीखे अवध, सीतापुर, १८९०

पं० देवी दत्त शुक्ल : अवध के गदर का इतिहास

पं० देवी प्रसाद : लतीफा-ए-फुरकत, लखनऊ, १२७३ हिजरी

परिपूर्णानन्द वर्मा : वाजिद अली शाह और अवध राज्य का पतन, सूचना विभाग उ० प्र०, १९५९

प्रवीन योगेश : दास्ताने अवध
: दास्ताने लखनऊ
: लखनऊ नामा
: बहारे अवध

फिदा अली खंजर : महलखाना शाही, निजामी प्रेस लखनऊ, १९३६

बुलाकी दास : गुलदस्ता-ए-अवध, मयूर प्रेस, दिल्ली, १९०७

नवाब सदर महले : बादशाह नामा, कलकत्ता, १२८८ हि०

नज्जात हुसैन खान आजीम आबादी : स्वानेह, लखनऊ

महबूब काजिम अली : मिरातुल अवदी, नवल किशोर प्रेस, १९२१
: हुस्ने अख्तर (अनुवाद), लखनऊ, १९५७

मिर्जा मोहम्मद तकी : तारीखे आफताबे अवध (उर्दू में हस्त लिखित), १८७४, लखनऊ विश्वविद्यालय

मिर्जा रुसवा हादी : उमराव जान अदा

मिर्जा रजब अली बेग सरवर : फसाना-ए-इबरत, किताब नगर, लखनऊ १९५७

मिनहाज उल सिराज : तबकात-ए-नासिरी

अमीर अहमद मीनाई : इन्तखाब यादगार, १२९७ हिजरी

मुफती इंतजाम उल्ला : बेगमात अवध के खुतूत, फारुकी प्रेस, दिल्ली १३६६ हि०

मुन्शी मोहम्मद कुदरत उल्ला कुदरत : हदीका-ए-कुदरत सुल्ताने आलम, आगरा १२८१ हिजरी

मुन्शी नवल किशोर : तवारीख नादर उल असर (तोहफा कर्नल एविट), नवल किशोर प्रेस, लखनऊ, १८६३

मुन्शी राधे लाल : तारीख फयमन्दान अवध. लखनऊ, १८७८ ई०

मुन्शी मोहम्मद जहीरुद्दीन खान : जहीर-उल-निसां. नवल किशोर प्रेस, लखनऊ

विलग्रामी : तारीखे लखनऊ

: असरारे वाजिद (फारसी भाषा में हस्त लिखित) १८६३,

: टैगोर पुस्तकालय, लखनऊ वि०वि०

मुन्शी राम सहाय तमन्ना : अफजुल-उल-तवारीख, मतवये तमन्नाई प्रेस लखनऊ, १८६३

: अहसान-उल-तवारीख, लखनऊ, १८७६

मुन्शी अमीर उल्ला तस्लीम : तवारीखे कामिल, १३०८ हिजरी

: सफर नामा-ए-खुशरवी

मुन्शी तोताराम : तिलस्मे हिन्द, १८७६ ई०

मुल्लाह मोहम्मद वाकर : हयात-उल-कलूब

मुहम्मद वाकिर, डा० : तारीखे मुमतात

मेंहदी अली खान : तारीखे इक्तेदारिया (पाण्डुलिपि) स्टेट सेन्टर लाइब्रेरी,

: हैदराबाद

मेढ़ी लाल : महारबाह-ए-गदर, गुलशने अवध प्रेस, लखनऊ, १८७१

मेजर आर० डब्लू० बर्ड : अवध की लूट (अनु० राजेन्द्र पाण्डे)

मोहम्मद वली जान : खाकान-ए-सरवर, लखनऊ, १३१७ हिजरी

मोहम्मद तकी अहमद डा० : आखिरी ताजदारे अवध, वाजिद अली शाह अदब उर्दू, लखनऊ, १९२५ दानिश महल, लखनऊ,

मिर्जा मोहम्मद तकी : आफताबे अवध, १८७५-७६, टैगोर लाइब्रेरी लखनऊ

: तारीख वादशाह बेगम

मोहम्मद हुसैन आजाद आतिश : आबे हयात

मौसन अली मोसन : सरापा-ए-सुखन, लखनऊ, १८७६ ई०

मोहम्मद नजमुल गनी : तारीखे अवध (५ भागों में), नवल किशोर प्रेस, लखनऊ, १९१९

: अखबार-उल-सनादीत, १९०० ई०

मोहम्मद अब्बास हुसैन होश : स्वाने उमरी, लखनऊ, १३०८ हिजरी

मोहम्मद जमीर अली खान अमीर : अमीरनामा, कलकत्ता, १८७० ई०

: वजीरनामा, कानपुर, १२९२ हिजरी

मोहम्मद रजा खान वर्क : दीवाने वर्क, लखनऊ, १२६९ हिजरी

मोहम्मद अहद अली : शवाबे लखनऊ, १९१२ ई०

मोती चन्द्र, डा० : काशी का इतिहास
मोहम्मद रफी रिजवी : तारीखे बनारस
मौलवी अब्दुल करीम : गुमदस्ताये अयोध्या, लखनऊ, १६२२
मौलवी अब्दुल्ला आशिक : बहारस्तान-ए-अवध, दिल्ली, १३६६ हिजरी
मौलवी अब्दुल हक : चन्द हम असर, लतीफी प्रेस, दिल्ली
मौलवी मिर्जा मुहम्मद हावी : तारीखे अब्बास, लखनऊ
मौलवी शाह मौहम्मद : आइना अवध, कानपुर, १८८०
मौहम्मद इम्त्याज अली खान : तोहफा-ए-सुल्तानी
: मगजन इस्दार सुल्तानी
रतन सिंह जख्मी : सुल्तान-उल-तवारीख (फारसी पाण्डुलिपि) टैगोर
: पुस्तकालय, लखनऊ वि० वि०
रिहानी सैयद : स्वानेह शाह अवध, मेरठ, १८८७ ई०
मौहम्मद सज्जाद हुसैन
रईस अहमद जाफरी : वाजिद अली शाह और उनका अहद
: रुक्कात बेगमात अवध, रजा लाइब्रेरी, रामपुर
राजा कुन्दन लाल अश्क : मुन्तखिब तफती-उल-अखवार, हाजी वली मौहम्मद, लखनऊ, १८५०
राजा दुर्गा प्रसाद : गुलिस्ताने हिन्द (फारसी भाषा में) भाग—३ क्वीन प्रेस. संडीला, १८६७
: वोस्ताने अवध (फारसी भाषा में) क्वीन प्रेस, संडीला, १८८८ (लखनऊ, १८६२)
राम वाबू सक्सेना : तारीख अवध उर्दू (अनुवादक-मिर्जा मौहम्मद अश्करी) लखनऊ, १६५२
लाल जी : मिरातुल अवधी (फारसी पाण्डुलिपि)
: सुल्तान उल हकायात, १२७० हिजरी
लाला सीताराम : अयोध्या का इतिहास
लाला देवी दयाल : फल, दिल्ली, १६०८
विलियम इरविन : तारीखे फरुखाबाद नवाबाने बन्गिश, (प्रथम भाग)
हामिद हुसैन कादरी : दास्तान तारीखे उर्दू, आगरा, १६६१
हाजी अब्बास अली : तवारीख मय तसावीर रजगार व ताल्लुकेदारान अवध,
: नवल किशोर प्रेस, लखनऊ, १८८०
हित प्रसाद : तवारीखे अवध भाग—२ (उर्दू भाषा में), दिलकुशा
: प्रेस, फतेहगढ़ १८७१
सज्जात हुसैन रिजवी : स्वानेह शाह अवध
श्री राम : समखाना-ए-जावेद (५ भागों में), दिल्ली

सिब्ते मौहम्मद नकवी : अमजद अली
सुरेन्द्र नाथ सैन : १८५७. सरस्वती प्रेस, कलकत्ता, १६५७
सैयद मौहम्मद अली अर्स : रुक्कात-ए-बदर, हैदराबाद, १३२३ हिजरी
सैयद कमालुद्दीन हैदर : कैसर उल तवारीख (भाग—२) नवल किशोर प्रेस, लखनऊ, १८७६ व १८६६
: इम्तानेहात सलातीने अवध (तृतीय सं०), नवल किशोर प्रेस, कानपुर, १६०७
: तकवीम-ए-सुल्तानी, लखनऊ, १२६५ हिजरी
सैयद इसरार हुसैन खान : कदीम हुनर व हुनर मंदान अवध, लखनऊ, १६३६
सैयद जलालुद्दीन हैदर उर्फ आगा हिज्जू शरक : शिकवा-ए-फरंग, १२६३ हिजरी
सैयद गुलाम अली खान : इमाद-उल-सआदत, लखनऊ, १८६४ ई०
सैयद मौहम्मद रफी : ताजों निशाल, मुरादाबाद, १३२१ हिजरी
सैयद इमाम अशरफ : तुजके शाही, अलवी प्रेस, लखनऊ, १८५४-५५, तहसीन गंज, लखनऊ, १६३६
सैयद मोहम्मद हादी : बजादारान-ए-अवध, १६०८
सैयद मसूद हसन रिज़वी : वाजिद अली शाह, आल इण्डिया मीर एकेडमी, लखनऊ, १६७७
सैयद मोहम्मद अज़मत अली अलवी नामी काकोखी : मुरक्का-ए-खसरवी, १२८६ हिजरी
सैयद मोहम्मद अमीर अली खान : वजीरनामा, निजामी प्रेस, कानपुर १२६३ हिजरी
सैयद तस्कीन काजिमी : मजमुआ-ए-रुक्कात-ए-बेगमात

(ब) अंग्रेजी भाषा की पुस्तकें :

Argyll, Duke of : India Under Delhausie and Canning, London, 1865
Aitchisen, Sir C. K. : Collection of Treaties, Engagements and Sunnuds, Calcutta, 1909
Ahmad, Shafi : British Aggression in Oudh, Lucknow, 1964
Ahmad, M. T. : Tarikh Badshah Begum Lucknow.
Basu, P. : Avadh & East India Co., IInd. Ed.
Basu, Major B. D. : Rise of the Christian Power in India, Calcutta, 1931.
Baird, J. G. A. (Edt.) : Private Letters of the Marquess of Delhausie, London, 1911.

Beneridge, H. : A Comprehensive History of India (Vol. III), London, 1867.

Bell, Major Evans : Retrespects and Perspects of Indian Policy, London, 1867.

Bhatnagar, G. D. : Awadh Under Wajid Ali Shah, Bhartiya Vidha Prakashan, Varanasi, 1968.

Bird, R. W. : Dacoities In Excelsis (Second Edition), London.

Butter, D. : Outlines of the Topography and Statistics of the Southern Districts of Oudh & the Contonment of Sultanpur Oudh, Calcutta, 1839.

Blumhardt, J. F. : Catalogue of Hindustani Printing Books in the Library of British Museum, London, 1889, Its Supplement in 1909.

Brown, C. F. : The Coins of India, Calcutta, 1922.

Camphell, Sir George : History of Modern India, London, 1952.

Crook, W. : The Tribes and Castes of the North-Western Provinces and Oudh (4 Vol.) Calcutta, 1891.

Chand, T. P. : The Administration of Auvadh.

Chand, S. N. : Eighteen Fifty Seven (1857) Some Untold : Stories, Sterrling Publishers, New Delhi, : 1976.

Davies, C. C. : Warrwn Hastings and Oudh, London, 1938.

Davies, A. M. : Warrwn Hastings, 1935.

Dodwell, H. H. (Ed.) : Cambridge History of India (Vol. V & VI) Cambridge, 1929.

Dayal, P. : Catalogue of the Coins of the Kings of Oudh, Allahabad, 1939.

Dodd, G. : The HIstory of Indian Revolt, London, 1859.

Enish, Major : Lucknow & Awadh in Mutiny.

Ervin, W. : Later Mughals (2 Vols., 1921-22)

Ervin, H. C. : The Garden of India, 1880

Farbas, Martichiles, W. : Reminiscences of the Great Mutiny (1857-59)

Fayrer, Sir Joseph : Recollections of My Life, London, 1900.

Gubbins, M. R. : Mutihies in Oudh, London, 1859.

Gupta, N. N. : Reflections & Reminiecences, Bombay, 1947.

Haji Abbas ali : An Illustrated Album of Talluquedars of Awadh, (Raza Library, Rampur).

Hasan Ameer : Palace Cutture of Lucknow

Hocy, W. : History of Asafuddoulah, Oudh, Govt, Press, 1885.

: Memories of Delhi and Faizabad, (2 Volumes), 1888-89.

Hedgas, W. : Travels in India, 1793.

Hay, Sidney : Historic Lucknow, 1939.

Hunter, W. W. : The Marquess of Dalhousie, Oxford, 1880.

Hober, D. D. : Narrative of a Journey Through the Upper Provinces of India (1824-25), London, 1829.

Kidwai Ikrammuddin : Lucknow, Its Past & Present, Lucknow, 1851.

Kidwai, I. & Ganungo, K. R. : Lucknow-Past & Present, Lucknow 1951.

Knighton, W. : The Private Life of an Eastern King, London, 1921.

Lewin, Malcolm : Has Oudh been Worse Governed ? London, 1857.

Ludlow, J. M. : British India, Its Races & Its History (2 Volumes), Cambridge, 1958.

Lawrence, Sir H. M. : Essays on Indian Army & Oudh, Serampore, 1859.

Masihuddin : Oudh, Its Princes & Its Govt. Vindicated, London, 1857.

Mill James : The History of British India, (10 Volumes). 5th, Ed., London 1886.

Mishre, A. S. : Nana Saheb Peshawa & Fight for Freedom.

Marshman, J. C. : Historn of India (3 Volumes), London, 1867.

Malleson, C.S. & Kaye, J. W. : History of Indian Mutiny of 1857-58 (6 Volumes), 1906.

Matcalfe, C. T. : Two Native Narratives of the Mutiny in Delhi, 1898.

Napier, Sir William : The Life and Opinions of General Sir Charles Napier (Vol. 4), London, 1857.

Oudh Pansion Papers : Printed by B.S. Press, Calcutta, 1913.

Parkes, F. : Wanderings of a Pilgrin in Search of the Picturesque etc. (2 Vols.), London, 1850.

Perry, Sir E. : Bird's Eye View of India, London, 1855.

Palmer, Julian : Sovereignty & Paramountacy in India, London, 1930.

Paton, Capt. J. : The British Govt. aud the Kingdom of Oudh, 1765 to 1835; Allahabad, 1944.

Rizvi, A.A. : Freedom Struggle in Uttar Pradesh, Lucknow (6 Volumes).

Russell, Sir W. H. : My Diary in India in the year 1858-59, (2 Vols.) London, 1860.

Semuel Lucus : The Spoilation of Awadh.

Sarkar, J. M. : Mughal Administration.

Sarkar, J. N. : The Fall of Mughal Empire, (Part I & II).

Spear, T.G.P. : The Nababs, London, 1932.

Saran, P. : The Provincial Govt. of the Mughals.

Sen, S.N. : Eighteen Fifty Seven (1857), Publication Division, 1958.

Sharar : Lucknow the last Phase of an Ouintal Cutture.

Shore, Hon'ble F. J. : Notes on Indian Affairs, London, 1937.

Spenger, A. : Report on the Researcnes into the Mohammadan Libraries of Lucknow, Calcutta, 1896.

Sleeman, W.H. : A Journey Through The Kingdom of Oudh (2 Vols), London, 1858.

: Report on Budhuk Alias Bagres Dacoits and other Gang Robbers by Heriditary Profession and on the Measures Adopted by the Govt. of India for their Suppression (Part I & II), Calcutta, 1849.

Srivastava, A.N. : First Two Nawabs of Oudh, Lucknow, 1933.

: Shujaauddaula, Part I & II Lahore, 1945.

Wali Abdul : Sorrows of Akhtar, Calcutta, 1924.

Whita Capt. : Mirza Kaiwan Jah, London, 1838.

Some Other Books

Gazetteer :

1. Gazetteer of the Province of Oudh (3 Volumes), Allahabad, 1877.
2. Imperial Gazetteer of India (Provincial Series from. U. P., Agra & Oudh), 2 Volumes, Calcutta, 1908.
3. Lucknow Gazetteer, (H. R. Neville), 1908.

(स) पत्र, पत्रिकायें, विशेषांक आदि :

अवकाश — ५ अप्रैल, १९७९
आजकल (उर्दू संस्करण) — सन् १९६५ ई०
कादम्बनी (मासिक) — अप्रैल, १९७५
— अगस्त, १९७६
— अक्टूबर, १९७८
— जून, १९७९
कोहनूर अखबार — ११ मार्च, १८५६
— ८ अप्रैल, १८५६
— ६ अक्टूबर, १८६०
कौमी आवाज (उर्दू अखबार) — २६ जनवरी, १९७३
दिल्ली अखबार (उर्दू) — जिल्द १९, नं० ३१, २ अगस्त, १८५७
धर्मयुग (साप्ताहिक) — १० मई, १९७०
— ३ सितम्बर, १९७८
— ४ मार्च, १९७९
— २० मई, १९७९

— २७ मई, १६७६
— १६ दिसम्बर, १६७६
— २५ अप्रैल, १६८२
नया दौर (मासिक) — अगस्त, १६७०
नवनीत (मासिक) — जुलाई, १६७०
— सितम्बर, १६७७
लखनऊ महोत्सव (सोविनियर) — १६७६ से १६८७
स्वतन्त्र भारत (दैनिक) लखनऊ — २८ मई, १६६५
— १० दिसम्बर, १६७८
— १६ सितम्बर, १६७६
— १५ मार्च, १६८१
— ४ मार्च, १६८४
सुमन (मासिक) — अप्रैल, १६७६
— मई, १६७६
Asiatic Journal — 1 July, 1847
Englishman — 5 October, 1857
Hindu Intelligence — 4 May, 1857
Illustrated Weekly of India — 9 January, to 27 Febuary, 1972 (Every Issue in between), 31 Dec. 1978
Indian Freedom Struggle Centenary, 1857 — Sovinier, New Delhi, 1957
London Times — 9 Febuary, 1853
Pamphlets on Oudh by Malcon Lewis, Late Second Judge, Sudar Court, Madras.
The Friend of India — 16 April, 1857
The Statesman — 1 Febuary, 1959

———